श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

मद्भागवतमहापुराण

चित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्

द्वितीयः खण्डः

(द्वितीयः स्कन्धः तृतीयः स्कन्धश्च)

टीकाकर्त्री

श्रीमती दयाकान्ति देवी

धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद, २११००२

प्रकाशक दयालोक प्रकाशन संस्थान, १८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद

विक्रमसंवत् २०४४, प्रथम संस्करण १०००

प्राप्ति-स्थान
दयालोक प्रकाशन संस्थान
१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद—२११००२

मूल्य : १२०-०० रुपए मात्र

मुद्रक—
शाकुन्तल मुद्रणालय
३४, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद

सम्पादिका—श्रीमती दयाकान्ति देवी

नम्र निवेदन

भक्त पाठको,

भक्त, भक्ति, भगवान् और भागवत — इन शब्दों में एक ही भज् धातु उसी प्रकार ओत-प्रोत है जिस प्रकार एक ही सूत्र पुष्पादि की लंबी माला में अनुस्यूत रहता है। भज् धातु का अर्थ है— सेवा (भज् सेवायाम्-पाणिनि धातुपाठ)। अतएव भक्त का अर्थ हुआ 'सेवक'। भक्ति का अर्थ है— 'सेवा'। भगवान् का अर्थ है—'सेव्य (षडैश्वर्य सम्पन्न)'। और भागवत का अर्थ है—'भगवान् का स्वरूप या विग्रह। तभी तो पद्मपुराणान्तर्गत श्रीमद्भागवत के माहात्म्य-अध्याय— ३, श्लोक ६१—६२ में स्पष्ट रूप से श्रीमद्भागवत को भगवान् का श्रीविग्रह घोषित किया है—

'स्वकीयं यद्भवेत्तेजस्तच्च भागवतेऽदधात्।
तिरोधाय प्रविष्टोऽयं श्रीमद्भागवतार्णवम्॥
तेनेयं वाङ्मयी मूर्तिः प्रत्यक्षा वर्तते हरेः।
सेवनाच्छ्रवणात्पाठाद्दर्शनात्पापनाशिनी॥'
(दे० हमारे संस्करण प्र० ख० पृ० ११०)

यही कारण है कि आस्तिक समाज में श्रीमद्भागवत पुस्तक की पूजा के बाद ही उसका पारायण होता है। यों तो विष्णु भक्ति से सम्बद्ध होने के कारण विष्णु, नारद, भागवत, गरुड, पद्म और वाराह ये ६ पुराण सात्त्विक माने गये हैं। किन्तु इनमें भागवत पुराण सबसे अग्रणी है। क्योंकि इसके विषय में पाणिनि के सूत्र 'यावदवधारणे' २।१।८। के उदाहरण में 'यावच्छ्लोकम्' प्रयोग आया है। इसका अर्थ प्राचीन परम्परा से यह किया जाता है—यावन्तः श्लोकास्तावन्तोऽच्युतप्रणामाः'— भागवत के जितने श्लोक हैं, उतने विष्णु के प्रणाम के द्योतक हैं अर्थात् भागवत के सभी श्लोकों से प्रकट होता है कि विष्णु प्रणम्य हैं।

ऐसे भागवत ग्रन्थ पर अनेकानेक टीकायें लिखी गई हैं। किन्तु वे सब विद्वानों के लिए ही उपादेय हैं, सर्वसाधारण के लिए नहीं। इसलिए सर्वसाधारण भी भागवत के अर्थों का हृदयंगम करे इस विचार को आदर्श मानकर मैं इस महापुराण के टीका-लेखन कार्य में प्रवृत्त हुई हूँ। आठ खण्डों में प्रकाशित होने वाले संस्करणों का प्रथम खण्ड संवत् २०४१ में प्रकाशित हो चुका है, जिसमें श्रीमद्भागवत-माहात्म्य सहित प्रथम स्कन्ध मुद्रित है। उस संस्करण का सहृदय पाठकों ने स्वागत किया है। उससे प्रोत्साहित होकर मैं यह द्वितीय खण्ड भी पाठकों के हाथ में समर्पित कर रही हूँ। इस खण्ड में द्वितीय तथा तृतीय स्कन्ध मुद्रित हैं। द्वितीय स्कन्ध में भगवान् के विराट् स्वरूप से लेकर भागवत के दश लक्षण तक वर्णित हैं। तृतीय स्कन्ध में उद्धव और विदुर की भेंट वार्ता से लेकर कर्दम ऋषि की पत्नी देवहूति के मोक्षपद प्राप्ति का वृत्तान्त कहा गया है।

प्रथम खण्ड में पूजन सामग्री, हवन सामग्री तथा श्रीमद्भागवत महापुराण के पूजन एवं पाठ की संक्षिप्त विधि आदि विषय लिखे जा चुके हैं। इसके लिए जिज्ञासु को प्रथम खण्ड देखना चाहिए।

अन्त में मैं इस खण्ड के प्रकाशन में सहयोग करने वाले पं० श्री आजाद मिश्र, श्री कमलनयन शर्मा तथा आचार्य श्री तारिणीश झा जी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

रामनवमी
सं० २०४४, कलि सं० ५०८८, श्रीकृष्ण संवत् ५११२
७ अप्रैल, १९८७

निवेदिका
दयाकान्ति देवी अग्रवाल

सूचना—इस खण्ड में फा० नं० गलत हो जाने से पृष्ठ संख्या ५१२ के बाद ५२१ छप गई है, किन्तु श्लोकसंख्या सर्वत्र सही है। पाठकगण इस त्रुटि के लिए क्षमा करेंगे। पुस्तक में पृष्ठों की संख्या ८३२ है। कागज एवं पृष्ठ संख्या अधिक होने के कारण, इस पुस्तक का मूल्य विवश होकर रु० १२०.०० रखना पड़ रहा है।

श्रीहरिः

विषय सूची

द्वितीय स्कन्ध

विषय

तृतीय स्कन्ध

चित्र-सूची

(रंगीन)

रेखाचित्र

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

द्वितीयः स्कन्धः

यन्नामस्मृतिमात्रेण निःशेषक्लेशसंक्षयः ।
जायते तत्क्षणादेव तं श्रीकृष्णं नमाम्यहम् ॥
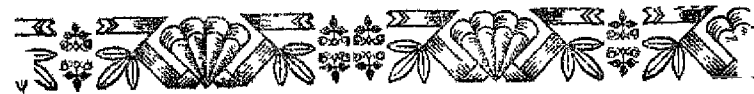
श्री मद्भागवत की आरती

आरती अति पावन पुराण की ।
धर्म भक्ति विज्ञान खान की ॥ आ० ॥

महापुराण भागवत निर्मल ।
शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल ।
परमानन्द-सुधा-रसमय कल ।
लीला-रति-रस रस-निधान की ॥ आ० ॥

कलि-मल-मथनि त्रिताप-निवारिनि ।
जन्म-मृत्युमय भव-भय-हारिनि ।
सेवत सतत सकल सुख कारिनि ।
सु महौषधि हरि-चरित-गान की ॥ आ० ॥

विषय-विलास-विमोह-विनाशिनि ।
विमल विराग विवेक विकाशिनि ।
भगवत्तत्त्व-रहस्य प्रकाशिनि ।
परम ज्योति परमात्म-ज्ञान की ॥ आ० ॥

परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनि ।
रसिक-हृदय-रस-रास विलासिनि ।
भुक्ति मुक्ति रति प्रेम सुवासिनि ।
कथा अकिञ्चन प्रिय सुजान की ॥ आ० ॥
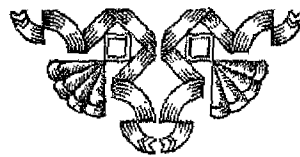
ॐ तत्सत्

श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ प्रथमः अध्यायः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप ।
आत्मवित्संमतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः ।।१।।

पदच्छेद—

वरीयान् एषः ते प्रश्नः, कृतः लोक हितम् नृप ।
आत्मवित् सम्मतः पुंसाम्, श्रोतव्य आदिषु यः परः ।।

शब्दार्थ—

वरीयान्	७.	बहुत उत्तम (है)	आत्मवित्	९.	आत्मज्ञानियों से
एषः	५.	यह	सम्मतः	१०.	मान्य (एवं)
ते	४.	आपका	पुंसाम्	११.	मनुष्यों के
प्रश्नः	६.	प्रश्न	श्रोतव्य	१२.	श्रवण
कृतः	३.	किया गया	आदिषु	१३.	स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में
लोक, हितम्	२.	संसार के, कल्याण के लिए	यः	८.	यह
नृप ।	१.	हे राजन् !	परः ।।	१४.	सर्वश्रेष्ठ (है)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार के कल्याण के लिए किया गया आपका यह प्रश्न बहुत उत्तम है। यह आत्मज्ञानियों से मान्य एवं मनुष्यों के श्रवण स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में सर्वश्रेष्ठ है।

द्वितीयः श्लोकः

श्रोतव्यादीनि राजेन्द्र नृणां सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यतामात्मतत्त्वं गृहेषु गृहमेधिनाम् ॥२॥

पदच्छेद—

श्रोतव्य आदीनि राजेन्द्र, नृणाम् सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यताम् आत्म तत्त्वम्, गृहेषु गृह मेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

श्रोतव्य	७.	सुनने (और)	सहस्रशः ।	९.	हजारों (बातें)
आदीनि	८.	स्मरण, कीर्तनादि के योग्य	अपश्यताम्	४.	न जानने वाले
राजेन्द्र	१.	हे राजन् !	आत्म तत्त्वम्	३.	आत्मा के स्वरूप को
नृणाम्	६.	मनुष्यों के	गृहेषु	२.	घर में (उलझे हुए तथा)
सन्ति	१०.	हैं	गृहमेधिनाम् ॥	५.	गृहस्थ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! घर में उलझे हुए तथा आत्मा के स्वरूप को न जानने वाले गृहस्थ मनुष्यों के सुनने और स्मरण, कीर्तनादि के योग्य हजारों बातें हैं।

तृतीयः श्लोकः

निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्बभरणेन वा ॥३॥

पदच्छेद—

निद्रया ह्रियते नक्तम्, व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा च अर्थ ईहया राजन्, कुटुम्ब भरणेन वा ॥

शब्दार्थ—

निद्रया	२.	नींद से	दिवा	११.	दिन
ह्रियते	१४.	बिता देते हैं	च	१२.	इस प्रकार
नक्तम्	५.	रात	अर्थ, ईहया	७.	धन की, इच्छा से
व्यवायेन	४.	स्त्री प्रसंग से	राजन्	१.	हे राजन् ! (मनुष्य)
च	६.	और	कुटुम्ब	९.	परिवार के
वा	३.	अथवा	भरणेन	१०.	पालन-पोषण से
वयः ।	१३.	(सारी) आयु	वा ॥	८.	अथवा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मनुष्य नींद से अथवा स्त्री-प्रसंग से रात और धन की इच्छा से अथवा परिवार के पालन-पोषण से दिन इस प्रकार सारी आयु बिता देते हैं।

चतुर्थः श्लोकः

देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि ।
तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ।।४।।

देह अपत्य कलत्र आदिषु, आत्म सैन्येषु असत्सु अपि ।
तेषाम् प्रमत्तः निधनम्, पश्यन् अपि न पश्यति ।।

१	शरीर	तेषाम्	९.	उनकी
२	सन्तान	प्रमत्तः	८.	पागल हुआ
३	स्त्री	निधनम्	१०.	मृत्यु को
४.	इत्यादि	पश्यन्	११.	देखता हुआ
५	अपने सम्बन्धियों के	अपि	१२.	भी
६	असत् होने पर	न	१३.	नहीं
७	भी (उनके मोह में)	पश्यति ।।	१४.	देखता है

शरीर, सन्तान, स्त्री इत्यादि अपने सम्बन्धियों के असत् होने पर भी उ
हुआ मनुष्य उनकी मृत्यु को देखता हुआ भी नहीं देखता है ।

पञ्चमः श्लोकः

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ।।५।।

तस्मात् भारत सर्व आत्मा, भगवान् ईश्वरः हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मतव्यः च इच्छता अभयम् ।।

१.	इसलिए	श्रोतव्यः	१२.	श्रवण
२.	हे परीक्षित् !	कीर्तितव्यः	११.	कीर्तन
५.	सब की	च	१३.	और
६.	आत्मा (एवं)	स्मर्तव्यः	१४.	स्मरण क
८.	भगवान्	च	१०.	ही
७.	सर्वशक्तिमान्	इच्छता	४.	चाहने वाल
९.	श्री हरि की (लीलाओं का)	अभयम् ।।	३.	अभयपद

–इसलिए हे परीक्षित् ! अभयपद चाहने वाले प्राणियों को सबकी आ
भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का ही कीर्तन, श्रवण और स्मरण करना

षष्ठः श्लोकः

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया ।
जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

एतावान् सांख्य योगाभ्याम्, स्व धर्म परिनिष्ठया ।
जन्म लाभः परः पुंसाम्, अन्ते नारायण स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	३	यही	**लाभः**	५.	फल (है कि)
सांख्य	७.	ज्ञान	**परः**	४.	सर्वोत्तम
योगाभ्याम्	८.	भक्ति (तथा)	**पुंसाम्**	१.	मनुष्यों के
स्व, धर्म	९.	अपने, धर्म में	**अन्ते**	६.	मृत्यु के समय
परिनिष्ठया।	१०.	श्रद्धा के कारण	**नारायण**	११.	भगवान् नारायण का
जन्म	२.	शरीर धारण का	**स्मृतिः ॥**	१२	स्मरण रहे

श्लोकार्थ—मनुष्यों के शरीर धारण का यही सर्वोत्तम फल है कि मृत्यु के समय ज्ञान, भक्ति तथा अपने धर्म में श्रद्धा के कारण भगवान् नारायण का स्मरण रहे ।

सप्तमः श्लोकः

प्रायेण मुनयो राजन्निवृत्ता विधिषेधतः ।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रायेण मुनयः राजन्, निवृत्ताः विधि षेधतः ।
नैर्गुण्यस्थाः रमन्ते स्म, गुण अनुकथने हरेः ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	६.	अधिकतर	**नैर्गुण्यस्थाः**	५.	निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर(भी)
मुनयः	४.	मुनिजन	**रमन्ते स्म**	१०.	रमे रहते हैं
राजन्	१.	हे परीक्षित् !	**गुण**	८	अनन्त लीलाओं के
निवृत्ताः	३.	संन्यास लिए हुए	**अनुकथने**	९.	कीर्तन में
विधि, षेधतः।	२.	(शास्त्रीय) विधि, और निषेध से	**हरेः ॥**	७	श्री हरि की

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! शास्त्रीय विधि और निषेध से संन्यास लिए हुए मुनिजन निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर भी अधिकतर श्री हरि की अनन्त लीलाओं के कीर्तन में रमे रहते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
अधीतवान् द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥८॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
अधीतवान द्वापर आदौ, पितुः द्वैपायनात् अहम् ॥

शब्दार्थ—

इदम्	६.	इस	अधीतवान्	१२.	पढ़ा था
भागवतम्	४.	श्रीमद्भागवत	द्वापर	१०.	द्वापर युग के
नाम	५.	नाम के	आदौ	११.	प्रारम्भ में
पुराणम्	७.	पुराण को	पितुः	८.	पिता
ब्रह्म	२.	वेद के	द्वैपायनात्	९.	वेदव्यास जी से
सम्मितम् ।	३.	समान ही	अहम् ॥	१.	मैंने

श्लोकार्थ—मैंने वेद के समान ही श्रीमद्भागवत नाम के इस पुराण को पिता वेदव्यास जी से द्वापर युग के प्रारम्भ में पढ़ा था ।

नवमः श्लोकः

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तमश्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥९॥

पदच्छेद—

परिनिष्ठितः अपि नैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेताः राजर्षे, आख्यानम् यत् अधीतवान् ॥

शब्दार्थ—

परिनिष्ठितः	३	श्रद्धा होने पर	गृहीत	८.	खिंच जाने से
अपि	४.	भी	चेताः	७	हृदय के
नैर्गुण्ये	२.	निर्गुण ब्रह्म में	राजर्षे	१.	हे राजन् !
उत्तम श्लोक	५.	पवित्र कीर्ति (श्री कृष्ण की)	आख्यानम्	१०.	कथा
लीलया ।	६.	लीलाओं में	यत्	९.	(मैंने) जो
			अधीतवान् ॥	११.	पढ़ी थी (उसे कहूँगा)

श्लोकार्थ--हे राजन् ! निर्गुण ब्रह्म में श्रद्धा होने पर भी पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में हृदय के खिंच जाने से मैंने जो कथा पढ़ी थी उसे कहूँगा ।

दशमः श्लोकः

तदहं तेऽभिधास्यामि महापौरुषिको भवान् ।
यस्य श्रद्दधतामाशु स्यान्मुकुन्दे मतिः सती ।।१०।।

पदच्छेद—

तद् अहम् ते अभिधास्यामि, महापौरुषिकः भवान् ।
यस्य श्रद्दधताम् आशु, स्यात् मुकुन्दे मतिः सती ।।

शब्दार्थ—

तद्	५.	वह (कथा)	श्रद्दधताम्	८.	श्रद्धा रखने वाले (प्राणियों) की
अहम्	३.	मैं	आशु	१२.	तत्काल
ते	४.	आपको	स्यात्	१३.	लग जाती है
अभिधास्यामि	६.	सुनाऊँगा	मुकुन्दे	११.	भगवान् श्रीकृष्ण में
महापौरुषिकः	२.	परम भक्त (हैं अतः)	मतिः	१०.	बुद्धि
भवान् ।	१.	आप	सती ।।	९.	उत्तम
यस्य	७.	जिस पर			

श्लोकार्थ— आप परम भक्त हैं; अतः मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा, जिस पर श्रद्धा रखने वाले प्राणियों की उत्तम बुद्धि भगवान् श्रीकृष्ण में तत्काल लग जाती है ।

एकादशः श्लोकः

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ।।११।।

पदच्छेद—

एतद् निर्विद्यमानानाम्, इच्छताम् अकुतोभयम् ।
योगिनाम् नृप निर्णीतम्, हरेः नाम अनुकीर्तनम् ।।

शब्दार्थ—

एतद्	२	सांसारिक विषयों से	नृप	१.	हे राजन् !
निर्विद्यमानानाम्	३.	विरक्त (तथा)	निर्णीतम्	१०.	निश्चित किया गया है
इच्छताम्	५.	इच्छुक	हरेः	७.	श्रीहरि के
अकुतोभयम् ।	४.	अभयपद के	नाम	८.	नाम का
योगिनाम्	६.	योगियों के लिए	अनुकीर्तनम् ।।	९.	कीर्तन

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सांसारिक विषयों से विरक्त तथा अभयपद के इच्छुक योगियों के लिए श्रीहरि के नाम का कीर्तन निश्चित किया गया है ।

द्वादशः श्लोकः

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्त्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ॥१२॥

किम् प्रमत्तस्य बहुभिः, परोक्षैः हायनैः इह ।
वरम् मुहूर्त्तम् विदितम्, घटेत श्रेयसे यतः ॥

६	क्या (लाभ ? इसके विपरीत)	वरम्	९.	उत्तम (है)
२	असावधान (प्राणियों) को	मुहूर्त्तम्	८	एक क्षण (भी)
४	अनेकों	विदितम्	७.	ज्ञान-पूर्वक बिताया न
३	अज्ञान में बीतने वाले	घटेत	१२.	प्रयास किया जाता
५.	वर्षों से	श्रेयसे	११.	परम कल्याण के लि
१.	इस संसार में	यतः ॥	१०.	जिसमें

ससार में असावधान प्राणियों को अज्ञान में बीतने वाले अनेकों वर्षों से क्या लाभ रीत, ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ एक क्षण भी उत्तम है, जिसमें परम कल्याण के स किया जाता है।

त्रयोदशः श्लोकः

खट्वाङ्गो नाम राजर्षिर्ज्ञात्वेयत्तामिहायुषः ।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम् ॥१३॥

खट्वाङ्गः नाम राजर्षिः, ज्ञात्वा इयत्ताम् इह आयुषः ।
मुहूर्त्तात् सर्वम् उत्सृज्य, गतवान अभयम् हरिम् ॥

१.	खट्वाङ्ग	मुहूर्तात्	७.	दो घड़ी में (ही)
२.	नाम के, राजा ने	सर्वम्	८.	सबका
६.	जानने के पश्चात्	उत्सृज्य	९.	त्याग कर
५.	अवधि को	गतवान्	१२.	प्राप्त कर लिया था
३	संसार में	अभयम्	११.	धाम को
४.	(अपनी) आयु की	हरिम् ॥	१०.	श्रीहरि के

ाङ्ग नाम के राजा ने संसार में अपनी आयु की अवधि को जानने के पश्चात् दो सबका त्याग कर श्रीहरि के धाम को प्राप्त कर लिया था ।

चतुर्दशः श्लोकः

तवाप्येतर्हि कौरव्य सप्ताहं जीवितावधिः ।
उपकल्पय तत्सर्वं तावद्यत्सांपरायिकम् ॥१४॥

पदच्छेद—

तव अपि एतर्हि कौरव्य, सप्ताहम् जीवित अवधिः ।
उपकल्पय तत् सर्वम्, तावत् यत् सांपरायिकम् ॥

शब्दार्थ—

तव अपि	२.	तुम्हारे तो	उपकल्पय	१०.	कर लो
एतर्हि	५.	अभी	तत्	८.	वह
कौरव्य	१.	हे कुरु नन्दन परीक्षित्	सर्वम्	९.	सब
सप्ताहम्	६.	सात दिनों की (है)	तावत्	७.	इस बीच (तुम)
जीवित	३.	जीवन की	यत्	११.	जो
अवधिः ।	४.	अवधि	सांपरायिकम् ॥	१२.	परम कल्याण को देने वाला (है)

श्लोकार्थ—हे कुरु नन्दन परीक्षित् ! तुम्हारे तो जीवन की अवधि अभी सात दिनों की है । इस बीच तुम वह सब कर लो, जो परम कल्याण को देने वाला है ।

पञ्चदशः श्लोकः

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः ।
छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम् ॥१५॥

पदच्छेद—

अन्तकाले तु पुरुषः, आगते गत साध्वसः ।
छिन्द्यात् असङ्ग शस्त्रेण, स्पृहाम् देहे अनु ये च तम् ॥

शब्दार्थ—

अन्तकाले	२.	अन्त काल	शस्त्रेण	७.	शस्त्र से
तु	१.	तथा	स्पृहाम्	१३.	ममता-बन्धन को
पुरुषः	४.	मनुष्य को	देहे	८.	शरीर के
आगते	३.	आने पर	अनु	११.	सम्बन्धी (हैं)
गत साध्वसः ।	५.	निडर होकर	ये	१०.	जो
छिन्द्यात्	१४.	काट देना चाहिए	च	९.	और
असङ्ग	६.	वैराग्य रूप	तम् ॥	१२.	उनके (भी)

श्लोकार्थ—तथा अन्त काल आने पर मनुष्य को निडर होकर वैराग्य रूप शस्त्र से शरीर के और जो सम्बन्धी हैं, उनके भी ममता-बन्धन को काट देना चाहिए ।

षोडशः श्लोकः

गृहात् प्रव्रजितो धीरः पुण्यतीर्थजलाप्लुतः ।
शुचौ विविक्त आसीनो विधिवत्कल्पितासने ॥१६॥

पदच्छेद—

गृहात् प्रव्रजितः धीरः, पुण्य तीर्थ जल आप्लुतः ।
शुचौ विविक्ते आसीनः, विधिवत् कल्पित आसने ॥

शब्दार्थ—

गृहात्	२.	(उस समय) घर से	शुचौ	७	शुद्ध
प्रव्रजितः	३.	संन्यास लेकर (तथा)	विविक्ते	८.	एकान्त स्थान में
धीरः	१.	स्थिर-चित्त (मनुष्य)	आसीनः	१२.	बैठे
पुण्य, तीर्थ	४.	पवित्र, तीर्थ के	विधिवत्	९.	विधान पूर्वक
जल	५.	जल में	कल्पित	१०.	लगाये हुए
आप्लुतः ।	६.	स्नान करके	आसने ॥	११.	आसन पर

श्लोकार्थ —स्थिर-चित्त मनुष्य उस समय घर से संन्यास लेकर तथा पवित्र तीर्थ के जल में स्नान करके शुद्ध एकान्त स्थान में विधान-पूर्वक लगाये हुए आसन पर बैठे ।

सप्तदशः श्लोकः

अभ्यसेन्मनसा शुद्धं त्रिवृद्ब्रह्माक्षरं परम् ।
मनो यच्छेज्जितश्वासो ब्रह्मबीजमविस्मरन् ॥१७॥

पदच्छेद—

अभ्यसेत् मनसा शुद्धम्, त्रिवृत् ब्रह्म अक्षरम् परम् ।
मनः यच्छेत् जित श्वासः, ब्रह्म बीजम् अविस्मरन् ॥

शब्दार्थ—

अभ्यसेत्	७	जप करे	परम् ।	३.	सर्वोत्तम
मनसा	६	मन से	मनः	९.	मन को
शुद्धम्	२.	पवित्र (एवम्)	यच्छेत्	१०.	वश में करे (तथा)
त्रिवृत्	१	अ उ म तीन मात्राओं वाले	जित श्वासः	८.	प्राणवायु को जीतकर
ब्रह्म	४.	ॐ कार	ब्रह्म बीजम्	११.	प्रणव मन्त्र को
अक्षरम्	५.	मन्त्र का	अविस्मरन् ॥	१२.	न भूले

श्लोकार्थ—'अ उ म' तीन मात्राओं वाले पवित्र एवं सर्वोत्तम ॐ कार मन्त्र का मन से जप करे, प्राणवायु को जीतकर मन को वश में करे तथा प्रणव-मन्त्र को न भूले ।

अष्टादशः श्लोकः

नियच्छेद्विषयेभ्योऽक्षान्मनसा बुद्धिसारथिः ।
मनः कर्मभिराक्षिप्तं शुभार्थे धारयेद्धिया ॥१८॥

नियच्छेत् विषयेभ्यः अक्षान्, मनसा बुद्धि सारथिः ।
मनः कर्मभिः आक्षिप्तम्, शुभ अर्थे धारयेत् धिया ॥

६.	अलग करे (तथा)	मनः	९	मन को
५.	विषयों से	कर्मभिः	७.	कर्मों से
४.	इन्द्रियों को	आक्षिप्तम्	८.	घबड़ाये हुए
३.	मन के द्वारा	शुभ अर्थे	११.	मंगलमय श्रीहरि
१.	बुद्धि को	धारयेत्	१२.	लगावे
२.	सारथि बनाकर (मनुष्य)	धिया ॥	१०.	बुद्धि के सहारे

[बुद्धि] को सारथि बनाकर मनुष्य मन के द्वारा इन्द्रियों को विषयों से अलग करे [तथा घब]ड़ाये हुए मन को बुद्धि के सहारे मंगलमय श्रीहरि के ध्यान में लगावे ।

एकोनविंशः श्लोकः

तत्रैकावयवं ध्यायेदव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनो निर्विषयं युक्त्वा ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदं तत्परमं विष्णोर्मनो यत्र प्रसीदति ॥१९॥

तत्र एक अवयवम् ध्यायेत्, अव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनः निर्विषयम् युक्त्वा, ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदम् तत् परमम् विष्णोः, मनः यत्र प्रसीदति ॥

१.	भगवान् के श्रीविग्रह में से	ततः	६.	तदनन्तर
२.	किसी एक, अंग का	किञ्चन	१०.	कुछ भी
५	ध्यान करे	न स्मरेत् ।	११.	स्मरण न करे
३.	स्थिर	पदम्	१६.	धाम है
४.	चित्त से	तत, परमम्	१५.	वही, परम
८.	मन को (ईश्वर में)	विष्णोः	१४	भगवान् विष्णु
७.	विषयों से रहित	मनः, यत्र	१२.	मन, जहाँ
९.	लगाकर	प्रसीदति ॥	१३.	आनन्द मग्न हो

[भग]वान् के श्रीविग्रह में से किसी एक अंग का स्थिर चित्त से ध्यान करे । त[दनन्तर विषयों से] रहित मन को ईश्वर में लगाकर कुछ भी स्मरण न करे । जहाँ मन आनन्द-[मग्न हो] भगवान् विष्णु का वही परम धाम है ।

विंश: श्लोक:

रजस्तमोभ्यामाक्षिप्तं विमूढं मन आत्मनः ।
यच्छेद्धारणया धीरो हन्ति या तत्कृतं मलम् ।।२०।।

रजः तमोभ्याम् आक्षिप्तम्, विमूढम् मनः आत्मनः ।
यच्छेत् धारणया धीरः, हन्ति या तत् कृतम् मलम् ।।

२	रजोगुण और तमोगुण से	धारणया	६.	धारणा शक्ति से
३	चंचल (तथा)	धीरः	१.	धैर्यशाली (मनुष्य)
४	अज्ञानी	हन्ति	१२.	नष्ट कर देती है
५	मन को	या	९.	जो (धारणा शक्ति)
७	अपने	तत्कृतम्	१०.	रजोगुण और तमोगुण
८	वश में करे	मलम् ।।	११.	दोषों को

ाली मनुष्य रजोगुण और तमोगुण से चंचल तथा अज्ञानी मन को धारणा शक्ति
में करे, जो धारणा शक्ति रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न दोषों को नष्ट कर दे

एकविंश: श्लोक:

यस्यां संधार्यमाणायां योगिनो भक्तिलक्षणः ।
आशु संपद्यते योग आश्रयं भद्रमीक्षतः ।।२१।।

यस्याम् संधार्यमाणायाम्, योगिनः भक्ति लक्षणः ।
आशु संपद्यते योगः, आश्रयम् भद्रम् ईक्षतः ।।

१	जिस (धारणा शक्ति) के	संपद्यते	१०.	प्राप्त कर लेते हैं
२	उत्पन्न हो जाने पर	योगः	९.	भक्तियोग को
३.	योगिजन	आश्रयम्	५.	भगवान् का
८.	भक्ति स्वरूप वाले	भद्रम्	४.	मंगलमय
७.	तत्काल	ईक्षतः ।।	६.	ध्यान करते हुए

धारणा शक्ति के उत्पन्न हो जाने पर योगिजन मंगलमय भगवान् का ध्यान
ाल भक्ति स्वरूप वाले भक्तियोग को प्राप्त कर लेते हैं ।

द्वाविंशः श्लोकः

राजोवाच—

यथा सधार्यते ब्रह्मन् धारणा यत्र सम्मता।
यादृशी वा हरेदाशु पुरुषस्य मनोमलम् ॥२२॥

पदच्छेद—

यथा संधार्यते ब्रह्मन्, धारणा यत्र सम्मता।
यादृशी वा हरेत् आशु, पुरुषस्य मनोमलम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	५.	किस साधन से	**यादृशी**	८.	किस प्रकार
संधार्यते	६.	की जाती है	**वा**	७.	तथा
ब्रह्मन्	१.	हे शुकदेव जी !	**हरेत्**	१२.	दूर करती है
धारणा	२.	धारणा शक्ति	**आशु**	११.	शीघ्र
यत्र	३.	किसमें	**पुरुषस्य**	९	पुरुष के
सम्मता।	४	मानी गयी है (और)	**मनोमलम् ॥**	१०.	मन के दोषों को

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! धारणा शक्ति किसमें मानी गयी है और किस साधन से की जाती है तथा किस प्रकार पुरुष के मन के दोषों को शीघ्र दूर करती है ?

त्रयोविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

जितासनो जितश्वासो जितसङ्गो जितेन्द्रियः।
स्थूले भगवतो रूपे मनः संधारयेद् धिया ॥२३॥

पदच्छेद—

जित आसनः जित श्वासः, जित सङ्गः जित इन्द्रियः।
स्थूले भगवतः रूपे, मनः संधारयेत् धिया ॥

शब्दार्थ—

जित	२.	जीतकर	**स्थूले**	११.	विराट्
आसनः	१.	आसन को	**भगवतः**	१०.	भगवान् के
जित	४.	रोककर	**रूपे**	१२.	रूप में
श्वासः	३.	प्राणवायु को	**मनः**	९	मन को
जित	६.	त्याग कर (तथा)	**संधारयेत्**	१३.	लगावे
सङ्गः	५.	आसक्ति को	**धिया ॥**	८	बुद्धि के द्वारा
जित इन्द्रियः।	७	इन्द्रियों पर विजय करके (मनुष्य)			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आसन को जीतकर, प्राणवायु को रोककर, आसक्ति को त्याग कर तथा इन्द्रियों पर विजय करके मनुष्य बुद्धि के द्वारा मन को भगवान् के विराट रूप में लगावे।

चतुर्विंशः श्लोकः

विशेषस्तस्य देहोऽयं स्थविष्ठश्च स्थवीयसाम् ।
यत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतं भव्यं भवच्च सत् ।।२४।।

पदच्छेद—

विशेषः तस्य देहः अयम्, स्थविष्ठः च स्थवीयसाम् ।
यत्र इदम् दृश्यते विश्वम्, भूतम् भव्यम् भवत् च सत् ।।

शब्दार्थ—

विशेषः	३	विराट्	**इदम्**	१३.	यह
तस्य	१.	उस (भगवान्) का	**दृश्यते**	१६.	दिखलाई देता है
देहः	४	शरीर	**विश्वम्**	१४.	संसार
अयम्	२	यह	**भूतम्**	९.	बीता हुआ
स्थविष्ठः	७	स्थूल (है)	**भव्यम्**	१०.	आने वाला
च	६.	भी	**भवत्**	१२.	वर्तमान
स्थवीयसाम् ।	५.	स्थूलों मे	**च**	११	और
यत्र	८.	जिसमें	**सत् ।।**	१५.	सत्यरूप में

श्लोकार्थ—उस भगवान् का यह विराट् शरीर स्थूलों में भी स्थूल है; जिसमें बीता हुआ, आने वाला और वर्तमान यह संसार सत्यरूप में दिखलाई देता है।

पञ्चविंशः श्लोकः

आण्डकोशे शरीरेऽस्मिन् सप्तावरणसंयुते ।
वैराजः पुरुषो योऽसौ भगवान् धारणाश्रयः ।।२५।।

पदच्छेद—

आण्डकोशे शरीरे अस्मिन्, सप्त आवरण संयुते ।
वैराजः पुरुषः यः असौ, भगवान् धारणा आश्रयः ।।

शब्दार्थ—

आण्डकोशे	४.	ब्रह्माण्ड	**वैराजः**	७	विराट्
शरीरे	५.	शरीर में	**पुरुषः**	८.	पुरुष
अस्मिन्	३.	इस	**यः**	६	जो
सप्त आवरण	१.	सात आवरणों से	**असौ**	१०.	उन्हीं की
संयुते ।	२.	घिरे हुए	**भगवान्**	९.	भगवान् श्रीहरि (हैं)
			धारणा आश्रयः ।।	११.	धारणा की जाती है

श्लोकार्थ—सात आवरणों से घिरे हुए इस ब्रह्माण्ड शरीर में जो विराट् पुरुष भगवान् श्री हरि हैं, उन्हीं की धारणा की जाती है।

षड्विंश: श्लोक:

पातालमेतस्य हि पादमूलं, पठन्ति पार्ष्णिप्रपदे रसातलम् ।
महातलं विश्वसृजोऽथ गुल्फौ, तलातलं वै पुरुषस्य जङ्घे ॥२६॥

पातालम् एतस्य हि पाद मूलम्, पठन्ति पार्ष्णि प्रपदे रसातलम् ।
महातलम् विश्वसृजः अथ गुल्फौ, तलातलम् वै पुरुषष्य जङ्घे ॥

६. पाताल लोक		महातलम्	११.	महातल लोक
२. इस		विश्वसृजः	१.	विश्व के रचयिता
५. ही		अथ	१२.	तथा
४. पैर का, तलवा		गुल्फौ,	१०.	एड़ी के ऊपर की
१६. बताई गयी हैं		तलातलम्	१५.	तलातल लोक
७. एड़ी और		वै	१४	ही
८. पंजे		पुरुषस्य	३.	विराट् पुरुष के
९. रसातल लोक		जङ्घे ॥	१३.	पिंडलियाँ

विश्व के रचयिता इस विराट् पुरुष के पैर का तलवा ही पाताल लोक, एड़ी और प
लोक, एड़ी के ऊपर की गाँठे महातल लोक तथा पिंडलियाँ ही तलातल लोक बता

सप्तविंश: श्लोक:

द्वे जानुनी सुतलं विश्वमूर्त्ते-रूरुद्वयं वितलं चातलं च ।
महीतलं तज्जधनं महीपते, नभस्तलं नाभिसरो गृणन्ति ॥२७॥

द्वे जानुनी सुतलम् विश्वमूर्त्तेः, ऊरुद्वयम् वितलम् च अतलम् च ।
महीतलम् तद् जघनम् महीपते, नभस्तलम् नाभि सरः गृणन्ति ॥

३. दोनों, घुटने	महीतलम्	१२.	भू लोक (और)
४. सुतल लोक	तद्	१०.	उसका
२. विराट् पुरुष के	जघलम्	११.	नितम्ब
५. दोनों जाँघे	महीपते,	१.	हे राजन् !
६. वितल	नभस्तलम्	१५.	आकाश मण्डल
७. और	नाभि	१३.	नाभि रूप
८. अतल लोक	सरः	१४.	सरोवर को
९. तथा	गृणन्ति ॥	१६.	कहते हैं

हे राजन् ! विराट् पुरुष के दोनों घुटने सुतल लोक, दोनों जाँघे वितल और अतल
उसका नितम्ब भूलोक और नाभिरूप सरोवर को आकाश मण्डल कहते हैं ।

अष्टाविंशः श्लोकः

उरःस्थलं ज्योतिरनीकमस्य, ग्रीवा महर्वदनं वै जनोऽस्य ।
तपो रराटीं विदुरादिपुंसः, सत्यं तु शीर्षाणि सहस्रशीर्ष्णः ॥२८

उरःस्थलम् ज्योतिः अनीकम् अस्य, ग्रीवा महः वदनम् वै जनः अस्य ।
तपः रराटीम् विदुः आदि पुंसः, सत्यम् तु शीर्षाणि सहस्र शीर्ष्णः ॥

क्रम्	२. वक्षस्थल	तपः	१४. तपोलोक
	३. स्वर्गलोक (एवं)	रराटीम्	१३. ललाट को
	१. इस (भगवान्) का	विदुः	१८. कहते हैं
	४ गर्दन	आदि पुंसः,	१०. आदि पुरुष के
	५. महर्लोक (है)	सत्यम्	१७. सत्यलोक
	११. मुखमण्डल को	तु	१५. और
	६. इसी प्रकार	शीर्षाणि	१६. मस्तक को
	१२. जनलोक	सहस्र	७. हजार
	९. इस	शीर्ष्णः ॥	८. सिरों वाले

इस भगवान् का वक्षस्थल स्वर्गलोक एवं गर्दन महर्लोक है। इसी प्रकार हजा इस आदि पुरुष के मुखमण्डल को जनलोक, ललाट को तपोलोक और मस्तक कहते हैं।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

इन्द्रादयो बाहव आहुरुस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रममुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणोऽस्य गन्धो मुखमग्निरिद्धः ॥२९

इन्द्र आदयः बाहवः आहुः उस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रम् अमुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणः अस्य गन्धः मुखम् अग्निः इद्धः ॥

३	इन्द्र इत्यादि	नासत्यदस्रौ	११. अश्विनीकुमार
२.	भुजायें	परमस्य, नासे,	१०. परम पुरुष के,
८.	कहे गये हैं (इसी प्रकार)	घ्राणः	१२. घ्राणेन्द्रिय
४.	देवता	अस्य	९. इस
५.	कान, दिशायें (और)	गन्धः	१३. गन्ध (और)
६.	श्रवणेन्द्रिय	मुखम्	१४. मुख
१.	इस (विराट् पुरुष) की	अग्निः	१६. आग (है)
७.	शब्द	इद्धः ॥	१५. धधकती हुई

इस विराट् पुरुष की भुजायें इन्द्र इत्यादि देवता, कान दिशायें और श्रवणेन्द्रिय है। इसी प्रकार इस परम पुरुष के नासिका छिद्र अश्विनीकुमार, घ्राणेन्द्रिय ग धधकती हुई आग है।

त्रिशः श्लोकः

द्यौरक्षिणी चक्षुरभूत्पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोरहनी उभे च ।
तद्भ्रूविजृम्भः परमेष्ठिधिष्ण्य-मापोऽस्य तालू रस एव जिह्वा ।।३०।।

पदच्छेद — **द्यौः अक्षिणी चक्षुः अभूत् पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोः अहनी उभे च ।**
तद् भ्रू विजृम्भः परमेष्ठि धिष्ण्यम्, आपः अस्य तालुः रसः एव जिह्वा ।।

शब्दार्थ—

द्यौः	१.	आकाश			
अक्षिणी	३.	दोनों आँखें	**तद् भ्रू, विजृम्भः**	११.	उनके भौहों का, विल
चक्षुः	५.	आँखों की पुतली	**परमेष्ठि, धिष्ण्यम्,**	१०.	ब्रह्मा का, धाम
अभूत्	८.	हैं	**आपः**	१२.	जल
पतङ्गः,	४.	सूर्य	**अस्य**	१३.	इस का
पक्ष्माणि	८.	पलकें	**तालुः**	१४.	तालु भाग
विष्णोः	२.	विराट् पुरुष की	**रसः**	१६.	रस
अहनी, उभे	७.	दिन और रात, दोनों	**एव**	१५.	और
च ।	६.	तथा	**जिह्वा ।।**	१७	रसना इन्द्रिय (है)

श्लोकार्थ—आकाश विराट् पुरुष की दोनों आँखें, सूर्य आँखों की पुतली तथा दिन और रात र पलकें हैं। ब्रह्मा का धाम उनके भौहों का विलास, जल इसका तालुभाग और रस र इन्द्रिय है।

एकत्रिंशः श्लोकः

छन्दांस्यनन्तस्य शिरो गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेहकला द्विजानि ।
हासो जनोन्मादकरी च माया, दुरन्तसर्गो यदपाङ्गमोक्षः ।।३१।।

पदच्छेद— **छन्दांसि अनन्तस्य शिरः गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेह कला द्विजानि ।**
हासः जन उन्मादकरी च माया, दुरन्त सर्गः यद् अपाङ्ग मोक्षः ।।

शब्दार्थ—

छन्दांसि	१.	वेद को	**हासः**	११.	मुस्कान (है)
अनन्तस्य	२.	विराट् पुरुष का	**जन उन्मादकरी**	९.	लोगों को पागल बनाने
शिरः	३.	मस्तक	**च**	१२.	तथा
गृणन्ति,	८.	कहा गया है	**माया,**	१०.	मायाशक्ति
दंष्ट्रा	५.	डाढ़ (तथा)	**दुरन्त**	१३.	अनन्त
यमः	४.	यमराज को	**सर्गः**	१४.	सृष्टि
स्नेह कला	६.	प्रेम और कलाओं को	**यद्**	१५.	जिनकी
द्विजानि ।	७.	दाँत	**अपाङ्ग मोक्षः ।।**	१६.	तिरछी नजर (है)

श्लोकार्थ - वेद को विराट् पुरुष का मस्तक, यमराज को डाढ़ तथा प्रेम और कलाओं को दाँत कहा है। लोगों को पागल बनाने वाली मायाशक्ति मुस्कान है तथा अनन्त सृष्टि जिनकी ति नजर है।

कस्तस्य मेढ्रं वृषणौ च मित्रौ कुक्षि समुद्रा गिरयोऽस्थिसंघा ।३२॥

व्रीडा उत्तरोष्ठः अधरः एव लोभः, धर्मः स्तनः अधर्मपथः अस्य पृष्ठम् ।
कः तस्य मेढ्रम् वृषणौ च मित्रौ, कुक्षिः समुद्राः गिरयः अस्थि संघाः ॥

१. लज्जा		कः	१०. ब्रह्मा
४ ऊपर का होठ		तस्य, मेढ्रम्	११. उस (पुरुष) की, जनने
६ नीचे का होठ		वृषणौ	१३. अण्डकोश
२. ही		च	१६. तथा
५ लोभ		मित्रौ,	१२. मित्र और वरुण देवता
७ धर्म स्तन (और)		कुक्षिः	१५. कोख
८. अन्याय मार्ग		समुद्राः	१४. समुद्र
३. इस (पुरुष) के		गिरयः	१७. पर्वत
९ पीठ (है)		अस्थि, संघाः ।	१८. हड्डियों का, समूह (है)

ज्जा ही इस पुरुष के ऊपर का होठ, लोभ नीचे का होठ, धर्म स्तन और अन्याय-मार्ग । ब्रह्मा उस पुरुष की जननेन्द्रिय, मित्र और वरुण देवता अण्डकोश, समुद्र कोख तथा ड्डियों का समूह है ।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

नद्योऽस्य नाड्योऽथ तनूरुहाणि, महीरुहा विश्वतनोर्नृपेन्द्र ।
अनन्तवीर्यः श्वसितं मातरिश्वा, गतिर्वयः कर्म गुणप्रवाहः ॥३३॥

नद्यः अस्य नाड्यः अथ तनूरुहाणि, महीरुहाः विश्वतनोः नृपेन्द्र ।
अनन्त वीर्यः श्वसितम् मातरिश्वा, गतिः वयः कर्म गुण प्रवाहः ॥

२. नदियाँ, इस	अनन्त वीर्यः	८. अपार शक्तिशाली
४. नाड़ियाँ	श्वसितम्	१०. (उसका) स्वास
५. तथा	मातरिश्वा,	९ वायु
७. रोमावलियाँ (हैं)	गतिः, वयः	११. चाल, आयु (और)
६. वृक्ष	कर्म	१४. कर्म है
३. विराट् पुरुष की	गुण	१२. सत्त्व, रज एवं तम की
१. हे राजेन्द्र !	प्रवाहः ॥	१३. अविरल धारा

राजेन्द्र ! नदियाँ इस विराट् पुरुष की नाड़ियाँ तथा वृक्ष रोमावलियाँ हैं । अपार श ाली वायु उसका श्वास; चाल आयु और सत्त्व, रज एवं तम की अविरल धारा कर्म

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ईशस्य केशान् विदुरम्बुवाहान्, वासस्तु संध्यां कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तमाहुर्हृदयं मनश्च, स चन्द्रमाः सर्वविकारकोशः ।।३४

पदच्छेद—

ईशस्य केशान् विदुः अम्बुवाहान्, वासः तु संध्याम् कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तम् आहुः हृदयम् मनः च, सः चन्द्रमाः सर्व विकार कोशः ।।

शब्दार्थ—

ईशस्य, केशान्	४.	पुरुष का, केश	**अव्यक्तम्**	८.	प्रकृति को
विदुः	७.	समझा जाता है	**आहुः**	१०.	कहते हैं
अम्बुवाहान्,	२.	बादलों को	**हृदयम्**	९.	अन्तःकरण
वासः	६.	वस्त्र	**मनः**	१४.	मन है
तु, संध्याम्	५	तथा, संध्या को	**च,**	११.	और
कुरुवर्य	१.	हे राजन् !	**सः चन्द्रमाः**	१३.	वह चन्द्रमा (उस
भूम्नः ।	३.	विराट्	**सर्व विकार कोशः ।।**	१२.	सभी विकारों का

श्लोकार्थ— हे राजन् ! बादलों को विराट् पुरुष का केश तथा संध्या को वस्त्र समझा जाता है। प्र अन्तःकरण कहते हैं और सभी विकारों का भण्डार वह चन्द्रमा उसका मन है।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

विज्ञानशक्तिं महिमामनन्ति, सर्वात्मनोऽन्तःकरणं गिरित्रम् ।
अश्वाश्वतर्युष्ट्रगजा नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणिदेशे ।।३५।

पदच्छेद—

विज्ञान शक्तिम् महिमा आमनन्ति, सर्व आत्मनः अन्तःकरणम् गिरित्रम् ।
अश्व अश्वतरी उष्ट्र गजाः नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणि देशे ।।

शब्दार्थ—

विज्ञान शक्तिम्	१.	महत्तत्त्व को	**अवश्तरी**	८.	खच्चर
महिमा	५.	अहंकार	**उष्ट्र गजाः**	९.	ऊँट और हाथी
आमनन्ति,	६.	मानते हैं	**नखानि,**	१०.	(उनके) नख हैं (तथा)
सर्व आत्मनः	२.	विराट् पुरुष का	**सर्वे**	११.	सभी
अन्तःकरणम्	३.	चित्त और	**मृगाः**	१२.	जंगली
गिरित्रम् ।	४.	रुद्र को	**पशवः**	१३.	पशु
अश्व	७.	घोड़े	**श्रोणिदेशे ।।**	१४.	(उनके) कटिभाग मे (

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व को विराट् पुरुष का चित्त और रुद्र को अहंकार मानते हैं। घोड़े, खच्च और हाथी उनके नख हैं तथा सभी जंगली पशु उनके कटिभाग में स्थित हैं।

षट्त्रिंशः श्लोकः

वयांसि तद्व्याकरणं विचित्रं, मनुर्मनीषा मनुजो निवासः ।
गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरः-स्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः ॥३६॥

वयांसि तद् व्याकरणम् विचित्रम्, मनुः मनीषा मनुजः निवासः ।
गन्धर्व विद्याधर चारण अप्सरः, स्वर स्मृतीः असुर अनीक वीर्यः ॥

१	पक्षी गण	गन्धर्व, विद्याधर	९.	गन्धर्व, विद्याधर
२	उस (विराट् पुरुष) की	चारण	१०	चारण और
४	रचना (है)	अप्सरः,	११.	अप्सरायें
३	अद्भुत	स्वर	१२.	षड्जादि सातों स्वरों
५	वैवस्वत मनु	स्मृतीः	१३.	लय और तानें (हैं त
६	बुद्धि (और)	असुर	१४.	दैत्यों का
७.	मनुष्य	अनीक	१५.	समूह
८	निवास स्थान (हैं)	वीर्यः ॥	१६.	पराक्रम (है)

पक्षीगण उस विराट् पुरुष की अद्भुत रचना है, वैवस्वत मनु बुद्धि और मनुष्य नि
स्थान हैं । गन्धर्व, विद्याधर, चारण और अप्सरायें षड्ज इत्यादि सातों स्वरों की लय
तानें हैं तथा दैत्यों का समूह पराक्रम है ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्माननं क्षत्रभुजो महात्मा, विडूरुरङ्घ्रिश्रितकृष्णवर्णः ।
नानाभिधाभीज्यगणोपपन्नो, द्रव्यात्मकः कर्म वितानयोगः ॥३७॥

ब्रह्म आननम् क्षत्रभुजः महात्मा, विड् ऊरुः अङ्घ्रि श्रित कृष्णवर्णः ।
नाना अभिधा अभीज्य गण उपपन्नः, द्रव्य आत्मकः कर्म वितान योगः ॥

१.	ब्राह्मण	नाना अभिधा	१०.	अनेक नामों वाले
३.	मुख (हैं)	अभीज्य	११.	यज्ञों के
४.	क्षत्रिय बाहु (हैं)	गण	१२.	समूह का
२.	विराट् पुरुष के	उपपन्नः,	९.	सम्पन्न होने वाले
५.	वैश्य जंघा (तथा)	द्रव्य आत्मकः	८.	होमादि द्रव्यों के द्वारा
७.	चरणों में स्थित (हैं)	कर्म	१४.	कर्म (हैं)
६.	शूद्र	वितानयोगः ॥	१३.	विस्तार (उनके)

—ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख हैं, क्षत्रिय बाहु हैं, वैश्य जंघा तथा शूद्र चरणों में स्थित
होमादि द्रव्यों के द्वारा सम्पन्न होने वाले तथा अनेक नामों वाले यज्ञों के समूह का वि
उनके कर्म हैं ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

इयानसावीश्वरविग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितो मया ते ।
संधार्यतेऽस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्वबुद्धया न यतोऽस्ति किंचित् ॥३८॥

पदच्छेद— इयान् असौ ईश्वर विग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितः मया ते ।
संधार्यते अस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्व बुद्धया न यतः अस्ति किंचित् ॥

शब्दार्थ—

इयान्	७.	इतना बड़ा (है)	अस्मिन्	८.	इसी
असौ	६.	वह	वपुषि	१०.	शरीर में
ईश्वर विग्रहस्य,	१.	विराट् पुरुष के शरीर का	स्थविष्ठे,	९.	विराट्
यः संनिवेशः	२.	जो आकार	मनः स्व बुद्धया	११.	मन को अपनी बुद्धि से
कथितः	५.	बताया है	न	१५.	नहीं
मया	३.	मैंने	यतः	१३.	क्योंकि (इससे भिन्न)
ते ।	४.	आपको	अस्ति	१६.	है
संधार्यते	१२.	धारण करते हैं	किंचित् ॥	१४.	कोई (धारणा का आश्रय)

श्लोकार्थः—विराट् पुरुष के शरीर का जो आकार मैंने आपको बताया है, वह इतना बड़ा है। इसी विराट् शरीर में अपनी बुद्धि से मन को धारण करते हैं; क्योंकि इससे भिन्न कोई धारणा का आश्रय नहीं है।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

स सर्वधीवृत्त्यनुभूतसर्व, आत्मा यथा स्वप्नजनेक्षितैकः ।
तं सत्यमानन्दनिधिं भजेत, नान्यत्र सज्जेद् यत आत्मपातः ॥३९॥

पदच्छेद— सः सर्व धी वृत्ति अनुभूत सर्वः, आत्मा यथा स्वप्न जन ईक्षित एकः ।
तम् सत्यम् आनन्द निधिम् भजेत, न अन्यत्र सज्जेत् यतः आत्मपातः ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	वह	तम् सत्यम्	९.	उस सत्यस्वरूप
सर्व धी वृत्ति	५.	सभी बुद्धि व्यवहारों से	आनन्द निधिम्	१०.	आनन्द के सागर
अनुभूत सर्वः	६.	सबका अनुभव करने वाला	भजेत,	११.	भजन करना चाहिए
आत्मा	८.	परमात्मा (एक है)	न	१३.	नहीं
यथा	१.	जिस प्रकार	अन्यत्र	१२.	दूसरी वस्तुओं में
स्वप्न जन	२.	स्वप्न में मनुष्य	सज्जेत्	१४.	आसक्त होना चाहिए
ईक्षित	४.	देखता है	यतः	१५.	क्योंकि (उससे)
एकः ।	३.	एक अपने को ही	आत्मपातः ॥	१६.	जीवात्मा का पतन (होता है)

श्लोकार्थः—जिस प्रकार स्वप्न में मनुष्य एक अपने को ही देखता है, उसी प्रकार सब रूपों में सभी बुद्धि व्यवहारों से सबका अनुभव करने वाला वह परमात्मा एक है। उस सत्यस्वरूप आनन्द के सागर परमात्मा का भजन करना चाहिए। दूसरी वस्तुओं में आसक्त नहीं होना चाहिए। क्योंकि उससे जीवात्मा का पतन होता है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
महापुरुषसंस्थानुवर्णने प्रथम अध्याय —१

द्वितीयः स्कन्धः

अथ द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

एवं पुरा धारणयाऽऽत्मयोनि-र्नष्टां स्मृतिं प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।
तथा ससर्जेदममोघदृष्टि-र्यथाप्ययात् प्राग्व्यवसायबुद्धिः ॥१॥

एवम् पुरा धारणया आत्मयोनिः, नष्टाम् स्मृतिम् प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।
तथा ससर्ज इदम् अमोघ दृष्टिः, यथा अपि अयात् प्राग् व्यवसाय बुद्धिः ॥

२	इस प्रकार की	ससर्ज	१३.	सृष्टि की
१	सृष्टि के प्रारम्भ में	इदम्	११.	इस (संसार) की
३	धारण के द्वारा	अमोघ दृष्टिः,	८.	सफल दर्शन और
७	ब्रह्माजी ने	यथा अपि	१४.	जैसी कि
५	खोई हुई स्मरण शक्ति को	अयात्	१६.	थी
६	पाकर	प्राग्	१५.	(प्रलय से) पहले
४	प्रसन्न किये गये (भगवान्) से	व्यवसाय	९.	निश्चयात्मक
१२	वैसी ही	बुद्धिः ॥	१०.	ज्ञान के द्वारा

ट के प्रारम्भ में इस प्रकार की धारणा के द्वारा प्रसन्न किये गये भगवान्
ण शक्ति को पाकर ब्रह्माजी ने सफल दर्शन और निश्चयात्मक ज्ञान के द्वारा
वैसी ही सृष्टि की, जैसी कि प्रलय से पहले थी ।

द्वितीयः श्लोकः

शाब्दस्य हि ब्रह्मण एष पन्था, यन्नामभिर्ध्यायति धीरपार्थैः ।
परिभ्रमंस्तत्र न विन्दतेऽर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥२॥

शाब्दस्य हि ब्रह्मणः एषः पन्थाः, यत् नामभिः ध्यायति धीः अपार्थैः ।
परिभ्रमन् तत्र न विन्दते अर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥

१	शब्द	अपार्थैः ।	८.	झूठे
४	ही	परिभ्रमन्	१५.	भटकता हुआ
२.	ब्रह्म वेद का	तत्र	१४.	उन (लोकों) में
३.	यह	न	१७.	नहीं
५	मार्ग (है)	विन्दते	१८.	पाता है
६	कि	अर्थान्,	१६.	सच्चे सुख को
९.	नामों के	मायामये	१३.	माया से निर्मित
१०	चक्कर में पड़ जाती है	वासनया	११.	वासना से
७	बुद्धि	शयानः ॥	१२.	सोया हुआ (मनु

-ब्रह्म वेद का यही मार्ग है कि बुद्धि झूठे नामों के चक्कर में पड़ जाती है;
ना से सोया हुआ मनुष्य माया से निर्मित उन लोकों में भटकता हुआ सच्चे सु
ा है

तृतीयः श्लोकः

अतः कविर्नामसु यावदर्थः, स्यादप्रमत्तो व्यवसायबुद्धिः।
सिद्धेऽन्यथार्थे न यतेत तत्र, परिश्रमं तत्र समीक्षमाणः ॥३॥

पदच्छेद—

अतः कविः नामसु यावद् अर्थः, स्यात् अप्रमत्तः व्यवसाय बुद्धिः।
सिद्धे अन्यथा अर्थे न यतेत तत्र, परिश्रमम् तत्र समीक्षमाणः॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	सिद्धे	११.	प्राप्त हो जाय (तो)
कविः	२.	विद्वान् को (चाहिए कि)	अन्यथा	१०.	दूसरे प्रकार से
नामसु	३.	(उन) नामों में	अर्थे	९.	(यदि) प्रयोजन
यावद् अर्थः,	४.	जितने से प्रयोजन	न यतेत	१६.	प्रयत्न न करे
स्यात्	५.	हो	तत्र,	१५.	उस विषय में
अप्रमत्तः	६.	सावधान होकर	परिश्रमम्	१३.	श्रम को
व्यवसाय	७.	निश्चयात्मक	तत्र	१२.	उसमें
बुद्धिः।	८.	ज्ञान से (उतना ही कर्म करे)	समीक्षमाणः॥	१४.	व्यर्थ जानकर

श्लोकार्थ—इसलिये विद्वान् को चाहिए कि उन नामों में जितने से प्रयोजन हो, सावधान होकर नि त्मक ज्ञान से उतना ही कर्म करे। यदि वह प्रयोजन दूसरे प्रकार से प्राप्त हो जाय तो श्रम को व्यर्थ जानकर उस विषय में प्रयत्न न करे।

चतुर्थः श्लोकः

सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासै-र्बाहौ स्वसिद्धे ह्युपबर्हणैः किम्।
सत्यञ्जलौ किं पुरुधान्नपात्र्या, दिग्वल्कलादौ सति किं दुकूलैः ॥४॥

पदच्छेद—

सत्याम् क्षितौ किम् कशिपोः प्रयासैः, बाहौ स्व सिद्धे हि उपबर्हणैः किम्।
सति अञ्जलौ किम् पुरुधा अन्नपात्र्या, दिग् वल्कल आदौ सति किम् दुकूलैः॥

शब्दार्थ—

सत्याम्	२.	रहते	सति	९.	रहते
क्षितौ	१.	पृथ्वी के	अञ्जलौ	८.	अँजुली के
किम्	४.	क्या (लाभ है)	किम्	११.	क्या (जरूरत है)
कशिपोः,प्रयासैः,	३.	पलंग के लिए, प्रयत्न करने से	पुरुधा, अन्नपात्र्या,	१०.	बहुत से, बर्तनों की
बाहौ, स्वसिद्धे	५.	बाहुओं के, अपने पास रहते	दिग् वल्कल	१३.	आकाश और वृक्षों
हि	१२.	तथा	आदौ सति	१४.	इत्यादि के रहते
उपबर्हणैः	६.	तकियों की	किम्	१६.	क्या (काम है ?)
किम्।	७.	क्या (आवश्यकता है)	दुकूलैः॥	१५.	वस्त्रों का

श्लोकार्थ—पृथ्वी के रहते पलंग के लिए प्रयत्न करने से क्या लाभ है, बाहुओं के अपने पास रहते त की क्या आवश्यकता है, अँजुली के रहते बहुत से बर्तनों की क्या जरूरत है तथा अ और वृक्षों की छाल इत्यादि के रहते वस्त्रों का क्या काम है ?

पञ्चमः श्लोकः

चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां,
नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः सरितोऽप्यशुष्यन् ।
रुद्धा गुहाः किमजितोऽवति नोपसन्नान्,
कस्माद् भजन्ति कवयो धनदुर्मदान्धान् ॥५॥

पदच्छेद—

चीराणि किम् पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षाम्,
न एव अङ्घ्रिपाः परभृतः सरितः अपि अशुष्यन् ।
रुद्धाः गुहाः किम् अजितः अवति न उपसन्नान्,
कस्मात् भजन्ति कवयः धन दुर्मद अन्धान् ॥

शब्दार्थ—

चीराणि	३.	फटे-पुराने चीथड़े	रुद्धाः	१६.	बन्द कर दी गयी हैं ? (तथा क्या)
किम्	१.	क्या (पहनने के लिए)	गुहाः	१५.	गुफायें
पथि	२.	रास्ते में	किम्	१४.	क्या (निवास के लिए)
न	४.	नहीं	अजितः	१७.	भगवान् अजित
सन्ति	५.	पड़े हैं ? (क्या)	अवति	२०.	रक्षा करते हैं (फिर)
दिशन्ति	१०.	देते हैं ? (क्या)	न	१९.	नहीं
भिक्षाम्,	८.	फलरूप भीख	उपसन्नान्,	१८.	शरणागत जनों की
न एव	९.	नहीं	कस्मात्	२१.	क्यों
अङ्घ्रिपाः	७.	वृक्ष (खाने के लिए)	भजन्ति	२६.	चापलूसी करते हैं
परभृतः	६.	दूसरों के पोषक	कवयः	२२.	विद्वान् लोग
सरितः	११.	नदियाँ	धन	२३.	धन के
अपि	१२.	भी	दुर्मद	२४.	घमण्ड में
अशुष्यन् ।	१३.	सूख गयी हैं ?	अन्धान् ॥	२५	अन्धे (लोगों) की

श्लोकार्थ—क्या पहिनने के लिए रास्ते में फटे-पुराने चीथड़े नहीं पड़े हैं ? क्या दूसरों के पोषक वृक्ष खाने के लिए फलरूप भीख नहीं देते हैं ? क्या नदियाँ भी सूख गयी हैं ? क्या निवास के लिए गुफायें बन्द कर दी गयी हैं ? तथा क्या भगवान् अजित शरणागत जनों की रक्षा नहीं करते हैं ? फिर क्यों विद्वान लोग धन के घमण्ड में अन्धे लोगों की चापलूसी करते हैं ?

षष्ठः श्लोकः

एवं स्वचित्ते स्वत एव सिद्ध, आत्मा प्रियोऽर्थो भगवाननन्तः ।
तं निर्वृतो नियतार्थो भजेत, संसारहेतूपरमश्च यत्र ॥६॥

एवम् स्व चित्ते स्वतः एव सिद्धः, आत्मा प्रियः अर्थः भगवान् अनन्तः ।
तम् निर्वृतः नियतार्थः भजेत, संसार हेतु उपरमः च यत्र ॥

१. इस प्रकार (धारणा से)		तम्	११. उनका
२. अपने हृदय में		निर्वृतः	९. आनन्द-मग्न (मनुष्य)
७. अपने आप ही		नियतार्थः	१०. दृढ़ निश्चय करके
८. विराजमान हो जाते हैं		भजेत,	१२. भजन करना चाहिए
४. परमात्मा		संसार हेतु	१५ जन्म-मरण के कारण
३. प्रिय मनोरथ		उपरमः	१६. नाश हो जाता है
५. भगवान्		च	१३ क्योंकि
६. श्री हरि		यत्र ॥	१४. इस (भजन) से

इस प्रकार धारणा करने से अपने हृदय में प्रिय मनोरथ परमात्मा भगवान् श्री हरि आप ही विराजमान हो जाते हैं। आनन्द-मग्न मनुष्य को दृढ़ निश्चय करके उनका करना चाहिए; क्योंकि इस भजन से जन्म-मरण के कारण का नाश हो जाता है।

सप्तमः श्लोकः

कस्तां त्वनादृत्य परानुचिन्ता—मृते पशूनसतीं नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यञ्जनं पतितं वैतरण्यां, स्वकर्मजान् परितापाञ्जुषाणम् ॥७॥

कः ताम् तु अनादृत्य पर अनुचिन्ताम्, ऋते पशून् असतीम् नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यन् जनम् पतितम् वैतरण्याम्, स्व कर्मजान् परितापान् जुषाणम् ॥

१२. कौन (व्यक्ति), उस		युञ्ज्यात् ।	१६. आसक्त रहेगा
३. तथा		पश्यन्	८. देखता हुआ
१४. अनादर करके		जनम्	७. लोगों को
नाम् १३. परमात्मा के, चिन्तन का		पतितम्	२. गिरे हुए
१०. छोड़कर		वैतरण्याम्,	१. वैतरणी में
९. पशुओं को		स्वकर्मजान्	४. अपने कर्मों से उत्पन्न
१५. असत् विषयों में		परितापान्	५. दुःखों को
११. भला		जुषाणम् ॥	६. भोगते हुए

-वैतरणी में गिरे हुए तथा अपने कर्मों से उपत्न्न दुःखों को भोगते हुए लोगों को देखत पशुओं को छोड़कर भला कौन व्यक्ति उस परमात्मा के चिन्तन का अनादर करके विषयों में आसक्त रहेगा ?

अष्टमः श्लोकः

केचित् स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे, प्रादेशमात्रं पुरुषं वसन्तम् ।
चतुर्भुजं कञ्जरथाङ्गशङ्ख—गदाधरं धारणया स्मरन्ति ॥८॥

केचित् स्व देह अन्तर् हृदय अवकाशे, प्रादेशमात्रम् पुरुषम् वसन्तम् ।
चतुर्भुजम् कञ्ज रथाङ्ग शङ्ख, गदाधरम् धारणया स्मरन्ति ॥

१	कुछ लोग	चतुर्भुजम्	११.	चार भुजाधारी
२	अपने शरीर के	कञ्ज	७.	कमल
३	अन्दर हृदय के	रथाङ्ग	८.	चक्र
५	देश में	शङ्ख,	६.	शंख (और)
४	वित्ता-भर	गदाधरम्	१०.	गदा धारण करनेवाले
१२.	परम-पुरुष का	धारणया	१३.	धारणा के द्वारा
६	निवास करने वाले (तथा)	स्मरन्ति ॥	१४.	ध्यान करते हैं

लोग अपने शरीर के अन्दर हृदय के वित्ता-भर देश में निवास करने वाले तथा
, शख और गदा धारण करनेवाले चार भुजाधारी परम-पुरुष का धारणा के द्वारा
ते है ।

नवमः श्लोकः

प्रसन्नवक्त्रं नलिनायतेक्षणं, कदम्बकिञ्जल्कपिशङ्गवाससम् ।
लसन्महारत्नहिरण्मयाङ्गदं, स्फुरन्महारत्नकिरीटकुण्डलम् ॥९॥

प्रसन्न वक्त्रम् नलिन आयत ईक्षणम्, कदम्ब किञ्जल्क पिशङ्ग वाससम् ।
लसत् महारत्न हिरण्मय अङ्गदम्, स्फुरत् महारत्न किरीट कुण्डलम् ॥

१	प्रसन्न मुख	लसत्	१२.	सुशोभित (तथा)
२	कमल के समान	महारत्न	९.	श्रेष्ठ रत्नों से जड़े हुए
३	विशाल	हिरण्मय	१०.	सुवर्ण के
४.	नेत्र	अङ्गदम्,	११.	बाजूबन्द से
५.	कदम्ब पुष्प के	स्फुरत्	१३.	चमकीले
६	पराग के समान	महारत्न	१४.	मणियों से जड़े हुए
७	पीले	किरीट	१५.	मुकुट और
८	वस्त्र (और)	कुण्डलम् ॥	१६.	कुण्डलों से युक्त (भग

हृदय में दर्शन

-मुख, कमल के समान विशाल नेत्र, कदम्ब पुष्प के पराग के समान पीले वस्त्र औ
ों से जड़े हुए सुवर्ण के बाजूबन्द से सुशोभित तथा चमकीले मणियों से जड़े हुए
र कुण्डलो से युक्त का हृदय में दर्शन करें

उन्निद्र हृत् पङ्कज कर्णिकालये, योगेश्वर आस्थापित पाद पल्लवम् ।
श्रीलक्ष्मणम् कौस्तुभ रत्न कन्धरम्, अम्लान लक्ष्म्या वनमालया आचितम् ।।

४. खिले हुए	श्रीलक्ष्मणम्	१०.	श्रीवत्स की सुनहली
५. हृदय	कौस्तुभ	११.	कौस्तुभ
६. कमल की	रत्न	१२.	मणि (और)
७. पंखुड़ियों पर	कन्धरम्,	९.	(उनका) वक्षःस्थल
३. योगिराजों के	अम्लान	१३.	सदाबहार
८. विराजमान हैं	लक्ष्म्या	१४.	शोभावाली
१. (श्री हरि के) चरण	वनमालया	१५.	वनमाला से
२. कमल	आचितम् ।।	१६.	सुशोभित है

हरि के चरण-कमल योगिराजों के खिले हुए हृदय-कमल की पंखुड़ियों पर विराज
का वक्षःस्थल श्रीवत्स की सुनहली रेखा, कौस्तुभ मणि और सदाबहार शोभावा
ला से सुशोभित है ।

एकादशः श्लोकः

विभूषितं मेखलयाङ्गुलीयकै-र्महाधनैर्नूपुरकङ्कणादिभिः ।
स्निग्धामलाकुञ्चितनीलकुन्तलै-र्विरोचमानाननहासपेशलम् ।।११।।

विभूषितम् मेखलया अङ्गुलीयकैः, महाधनैः नूपुर कङ्कण आदिभिः ।
स्निग्ध अमल आकुञ्चित नील कुन्तलैः, विरोचमान आनन हास पेशलम् ।।

७. सुशोभित हैं	स्निग्ध	९.	चिकने
१ (श्री हरि) करधनी	अमल	१०.	कोमल और
२. अँगूठी	आकुञ्चित	११.	घुँघराले (हैं तथा वे)
३. बहुमूल्य	नील कुन्तलैः,	८.	(उनके) काले बाल
४. पाजेब और	विरोचमान	१२.	दमकते
५. कंगन	आनन हास	१३.	मुख एवं मुसकान से
६. आदि आभूषणों से	पेशलम् ।।	१४.	सुन्दर (लगते हैं)

हरि करधनी, अँगूठी, बहुमूल्य पाजेब और कंगन आदि आभूषणों से सुशो
के काले बाल चिकने, कोमल और घुँघराले हैं तथा वे दमकते मुख एवं मुसकान
ते हैं ।

द्वादशः श्लोकः

अदीनलीलाहसितेक्षणोल्लसद्—भ्रूभङ्गसंसूचितभूर्यनुग्रहम् ।
ईक्षेत चिन्तामयमेनमीश्वरं, यावन्मनो धारणयावतिष्ठते ॥१२॥

पदच्छेद— **अदीन लीला हसित ईक्षण उल्लसत्, भ्रू भङ्ग संसूचित भूरि अनुग्रहम् ।**
ईक्षेत चिन्तामयम् एनम् ईश्वरम्, यावत् मनः धारणया अवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

अदीन	२.	खुली	**ईक्षेत**	१२.	दर्शन करे
लीला	१.	लीला से पूर्ण	**चिन्तामयम्**	९.	ध्यान में स्थित
हसित	३.	हँसी और	**एनम्**	१०.	इस
ईक्षण	४.	चितवन से	**ईश्वरम्,**	११.	भगवान् का (तबतक)
उल्लसत्,	५.	शोभित	**यावत्**	१३.	जबतक
भ्रू भङ्ग	६.	तिरछी भौहों से	**मनः**	१४.	मन
संसूचित	८.	वर्षा करने वाले	**धारणया**	१५.	धारणा शक्ति से (उनमें)
भूरि अनुग्रहम् ।	७.	अनन्त कृपा की	**अवतिष्ठते ॥**	१६.	स्थिर रहे

श्लोकार्थ—लीला से पूर्ण खुली हँसी और चितवन से शोभित तिरछी भौहों से अनन्त कृपा की वर्षा कर वाले, ध्यान में स्थित इस भगवान् का तब तक दर्शन करे, जब तक मन धारणा शक्ति उनमें स्थिर रहे ।

त्रयोदशः श्लोकः

एकैकशोऽङ्गानि धियानुभावयेत्, पादादि यावद्धसितं गदाभृतः ।
जितं जितं स्थानमपोह्य धारयेत्, परं परं शुद्ध्यति धीर्यथा यथा ॥१३॥

पदच्छेद— **एकैकशः अङ्गानि धिया अनुभावयेत्, पाद आदि यावत् हसितं गदाभृतः ।**
जितम् जितम् स्थानम् अपोह्य धारयेत्, परम् परम् शुद्ध्यति धीः यथा यथा ॥

शब्दार्थ—

एकैकशः	७.	एक-एक करके	**जितम् जितम्**	९.	(तदनन्तर) ध्यान किये हुए
अङ्गानि	५	सभी अंगों का	**स्थानम्**	१०.	अंगों को
धिया	६.	बुद्धि से	**अपोह्य**	११.	छोड़कर
अनुभावयेत्,	८.	ध्यान करे	**धारयेत्,**	१३.	ध्यान करे (उस समय)
पाद आदि	२.	पैर से लेकर	**परम् परम्**	१२.	दूसरे-दूसरे अंगों का
यावत्	४.	तक	**शुद्ध्यति**	१६.	निर्मल होगी (चित्त स्थिर हो
हसितम्	३.	मुख	**धीः**	१५.	बुद्धि
गदाभृतः ।	१.	गदाधारी श्री हरि के	**यथा यथा ॥**	१४.	जैसे-जैसे

श्लोकार्थ—गदाधारी श्रीहरि के पैर से लेकर मुख तक सभी अंगों का बुद्धि से एक-एक करके ध्यान करे तदनन्तर ध्यान किए हुए अंगों को छोड़कर दूसरे-दूसरे अंगों का ध्यान करे । उस समय जै जैसे बुद्धि निर्मल होगी, चित्त स्थिर होगा ।

चतुर्दशः श्लोकः

यावन्न जायेत परावरेऽस्मिन्, विश्वेश्वरे द्रष्टरि भक्तियोगः ।
तावत्स्थवीयः पुरुषस्य रूपं, क्रियावसाने प्रयतः स्मरेत ।।१४।।

पदच्छेद— यावत् न जायेत पर अवरे अस्मिन्, विश्व ईश्वरे द्रष्टरि भक्ति योगः ।
तावत् स्थवीयः पुरुषस्य रूपम्, क्रिया अवसाने प्रयतः स्मरेत ।।

शब्दार्थ—

यावत्	५. जब तक		तावत्	९. तब तक
न	७. नहीं		स्थवीयः	१३ विराट्
जायेत	८. उत्पन्न हो जाय		पुरुषस्य	१२. आदि पुरुष के
पर अवरे	१ परात्पर		रूपम्,	१४. रूप का
अस्मिन्,	३ इस		क्रिया	१०. (नित्य नैमित्तिक) क
विश्व ईश्वरे	४. जगदीश में		अवसाने	११. अन्त में
द्रष्टरि	२. द्रष्टा रूप		प्रयतः	१५. नियम से
भक्ति योगः ।	६. भक्ति योग		स्मरेत ।।	१६ स्मरण करना चाहिए

श्लोकार्थ—परात्पर द्रष्टारूप इस जगदीश में जब तक भक्ति-योग उत्पन्न नहीं हो जाय, त नित्य-नैमित्तिक कर्म के अन्त में आदि पुरुष के विराट् रूप का नियम से स्मरण चाहिए ।

पञ्चदशः श्लोकः

स्थिरं सुखं चासनमाश्रितो यति—र्यदा जिहासुरिममङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनो न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेन्मनसा जितासुः ।।१५।।

पदच्छेद— स्थिरम् सुखम् च आसनम् आश्रितः यतिः, यदा जिहासुः इमम् अङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनः न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेत् मनसा जित असुः ।।

शब्दार्थ—

स्थिरम् सुखम् च	७. स्थायी और सुखदायी		काले च देशे	१०. काल और देश मे
आसनम्	८. आसन पर		च	१३. तथा
आश्रितः	९. बैठकर		मनः	११. मन को
यतिः,	२. साधक		न सज्जयेत्	१२. आसक्त न करे
यदा	३. जब		प्राणान्	१७. प्राणों को
जिहासुः	६. छोड़ना चाहे (तब)		नियच्छेत्	१८. वश में करे
इमम्	४. इस		मनसा	१४ मन से
अङ्ग	१. हे परीक्षित् !		जित	१६. जीतकर
लोकम् ।	५. संसार को		असुः ।।	१५. इन्द्रियों को

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! साधक जब इस संसार को छोड़ना चाहे, तब स्थायी और सुखदायी आस बैठकर काल और देश में मन को आसक्त न करे तथा मन से इन्द्रियों को जीतकर को वश में करे ।

आत्मानमात्मन्यवरुध्य धीरो, लब्धोपशान्तिर्विरमेत कृत्यात । १६ ।

पदच्छद मन स्व बुद्ध्या अमलया नियम्य क्षेत्रज्ञ एताम् निनयेत तम आत्मनि ।
आत्मानम आत्मनि अवरुध्य धीर लब्ध उपशान्ति विरमेत कृत्यात ॥

शब्दार्थ—

मनः	४.	मन को	आत्मानम्	१०.	अन्तरात्मा को
स्व	१.	अपनी	आत्मनि	११.	परमात्मा में
बुद्ध्या	३.	बुद्धि से	अवरुध्य	१२.	लीन करके
अमलया	२.	निर्मल	धीरः,	१५.	(वह)धीर पुरुष
नियम्य,	५.	वश में करके	लब्ध	१४.	पाया हुआ
क्षेत्रज्ञे	७.	क्षेत्रज्ञ में (तथा)	उपशान्तिः	१३.	परम शान्ति को
एताम्	६.	(मन से युक्त) इस बुद्धि को	विरमेत	१७.	छोड़ देवे
निनयेत्	९.	लीन करे (तदनन्तर)	कृत्यात् ॥	१६.	सांसारिक कर्मों को
तम् आत्मनि ।	८.	उस (क्षेत्रज्ञ) को अन्तरात्मा में			

श्लोकार्थ—अपनी निर्मल बुद्धि से मन को वश में करके मन से युक्त इस बुद्धि को क्षेत्रज्ञ में तथ क्षेत्रज्ञ को अन्तरात्मा में लीन करे । तदनन्तर अन्तरात्मा को परमात्मा में लीन कर शान्ति को पाया हुआ वह धीर पुरुष सांसारिक कर्मों को छोड़ देवे ।

सप्तदशः श्लोकः

न यत्र कालोऽनिमिषां परः प्रभुः, कुतो नु देवा जगतां य ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वं न रजस्तमश्च, न वै विकारो न महान् प्रधानम्॥१७॥

पदच्छेदः— न यत्र कालः अनिमिषाम् परः प्रभुः, कुतः नु देवाः जगताम् ये ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वम् न रजः तमः च, न वै विकारः न महान् प्रधानम् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं है	ये	८.	जो
यत्र	१.	जहाँ	ईशिरे ।	१०.	शासन करते हैं (वे)
कालः	५.	काल	न यत्र सत्त्वम्	१३.	न जहाँ सत्त्वगुण (है)
अनिमिषाम्	२.	देवताओं पर	न रजः	१४.	न रजोगुण (है)
परः	४.	महान्	तमः	१६	तमोगुण (है)
प्रभुः,	३.	शासन करने वाला	च,	१५.	और (न)
कुतः	१२.	कैसे (रह सकते हैं ?)	न	१७.	न (वहाँ)
नु	७.	फिर	वै	२०.	और (वहाँ)
देवाः	११.	देवता (वहाँ)	विकारः	१८.	अहंकार है
जगताम्	९.	संसार के प्राणियों पर	न महान्	१९.	न महत्तत्त्व (है)
			प्रधानम् ॥	२१.	प्रकृति (भी नहीं है)

श्लोकार्थ—जहाँ देवताओं पर शासन करने वाला महान् काल नहीं है, फिर जो संसार के प्राणि शासन करते हैं, वे देवता वहाँ कैसे रह सकते हैं ? न जहाँ सत्त्वगुण है, न रजोगुण है तमोगुण है । न वहाँ अहंकार है, न महत्तत्त्व है और वहाँ प्रकृति भी नहीं है ।

अष्टादशः श्लोकः

परं पदं वैष्णवमामनन्ति तद्, यन्नेति नेतीत्यतदुत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यमनन्यसौहृदा, हृदोपगुह्यार्हपदं पदे पदे ॥१८॥
परम् पदम् वैष्णवम् आमनन्ति तद्, यद् न इति न इति इति अतद् उत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यम् अनन्य सौहृदा, हृदा उपगुह्य अर्हं पदम् पदे पदे ॥

१७.	परम धाम	उत्सिसृक्षवः ।	५.	छोड़ने की इच्छा रखने वाले
१६.	भगवान् विष्णु का	विसृज्य	७.	त्याग करके (तथा)
१८.	कहते हैं	दौरात्म्यम्	६.	शरीरादि में आत्मबुद्धि का
१५.	उसको	अनन्य	१३	अनुपम
८.	जिस	सौहृदा,	१४.	प्रेम से परिपूर्ण (रहते है)
१.	यह नहीं है	हृदा	११.	हृदय से
२.	यह नहीं है	उपगुह्य	१२.	आलिङ्गन करके
३.	इस प्रकार	अर्हं पदम्	९.	पूज्य स्वरूप का
४.	(परमात्मा से)भिन्न वस्तुओं को	पदे पदे ॥	१०	पग पग पर

–"यह नहीं है, यह नहीं है" इस प्रकार परमात्मा से भिन्न वस्तुओं को छोड़ने की इच्छा रखने वाले योगीजन शरीरादि में आत्मबुद्धि का त्याग करके तथा जिस पूज्य स्वरूप का पग-पग पर हृदय से आलिङ्गन करके अनुपम प्रेम से परिपूर्ण रहते हैं, उसको भगवान् विष्णु का परम धाम कहते हैं ।

एकोनविंशः श्लोकः

इत्थं मुनिस्तूपरमेद् व्यवस्थितो, विज्ञानदृग्वीर्यसुरन्धिताशयः ।
स्वपार्ष्णिनाऽऽपीड्य गुदं ततोऽनिलं, स्थानेषु षट्सून्नमयेज्जितक्लमः ॥१९॥
इत्थम् मुनिः तु उपरमेत् व्यवस्थितः, विज्ञान दृक् वीर्य सुरन्धित आशयः ।
स्व पार्ष्णिना आपीडच गुदम् ततः अनिलम्, स्थानेषु षट्सु उन्नमयेत् जित क्लमः ॥

८.	इस प्रकार	स्व पार्ष्णिना	१०	(वह पहले) अपनी एड़ी से
७.	योगी को तो	आपीडच	१२	दबा लेवे
९.	शरीर त्यागना चाहिए	गुदम्	११.	गुदा को
६.	ब्रह्मनिष्ठ	ततः	१३.	तदनन्तर
१	ज्ञान	अनिलम्,	१५	प्राणवायु को
२.	दृष्टि के	स्थानेषु	१७.	स्थानों से
३.	बल से	षट्सु	१६	छहों
५.	नष्ट किये हुए	उन्नमयेत्	१८.	ऊपर ले जावे
४.	वासनाओं को	जित क्लमः ॥	१४.	बिना घबराहट के

–ज्ञान-दृष्टि के बल से वासनाओं को नष्ट किये हुए ब्रह्मनिष्ठ योगी को तो इस प्रकार शरीर त्यागना चाहिए – वह पहले अपनी एड़ी से गुदा को दबा लेवे, तदनन्तर बिना घबराहट के प्राणवायु को छहों स्थानों से ऊपर ले जावे ।

ततोऽनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्वतालुमूल शनकैर्नयेत ।२०।

ध्याम स्थितम हृदि अधिरोप्य तस्मात, उदान गत्या उरसि तम नयेत मुनि ।
त अनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्व तालु मूलम शनक नयेत ॥

२. नाभिचक्र (मणिपूरक) में	मुनिः ।	१.	योगिपुरुष
३. विद्यमान (प्राणवायु) को	ततः	११.	उसके बाद
४. हृदय (अनाहत चक्र) में	अनुसन्धाय	१४	सोच-समझकर
५. रोक कर	धिया	१३.	बुद्धि से
६. वहाँ से	मनस्वी,	१२.	बुद्धिमान् योगी
८. उदान वायु के द्वारा	स्व	१६.	अपने
९. कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में	तालु मूलम्	१७.	विशुद्ध चक्र के अग्रभाग
७. उसे	शनकैः	१५.	धीरे से (उस वायु को)
१०. ले जावे	नयेत ॥	१८.	चढ़ा देवे

ोगिपुरुष नाभिचक्र (मणिपूरक) में विद्यमान प्राणवायु को हृदय (अनाहत चक्र) में रोक
ाहाँ से उसे उदान वायु के द्वारा कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में ले जावे। उसके बाद बुद्धिमान्
ुद्धि से सोच-समझकर धीरे से उस वायु को अपने विशुद्ध चक्र के अग्रभाग में चढ़ा देवे।

एकविंशः श्लोकः

तस्माद् भ्रुवोरन्तरमुन्नयेत, निरुद्धसप्तायतनोऽनपेक्षः ।
स्थित्वा मुहूर्तार्धमकुण्ठदृष्टि—र्निभिद्य मूर्धन् विसृजेत्परं गतः ॥२१॥
तस्मात् भ्रुवोः अन्तरम् उन्नयेत, निरुद्ध सप्त आयतनः अनपेक्षः ।
स्थित्वा मुहूर्त अर्धम् अकुण्ठ दृष्टिः, निर्भिद्य मूर्धन् विसृजेत् परम् गतः ॥

५. वहाँ से	मुहूर्त	१४.	घड़ी
६. भौहों के	अर्धम्	१३.	एक
७. मध्य (आज्ञा चक्र) में	अकुण्ठ	९.	विशुद्ध
८. ले जावे (वहाँ)	दृष्टिः,	१०.	ज्ञान-दृष्टि से
४. बन्द करके (उस प्राणवायु को)	निर्भिद्य	१७.	भेदन कर (शरीर को)
२. (इन) सातों	मूर्धन्	१६.	ब्रह्मरन्ध्र का
३. छिद्रों को	विसृजेत्	१८.	छोड़ देवे
१. इच्छा-रहित (वह योगी)	परम्	११.	परमात्मा में
१५. विश्राम करके (तदनन्तर)	गतः ॥	१२.	स्थित हुआ (योगी)

च्छा-रहित वह योगी दो आँख, दो कान, दो नासा छिद्र और एक मुख इन सातों
ो बन्द करके उस प्राणवायु को वहाँ से भौहों के मध्य आज्ञा चक्र में ले जावे। वहाँ ि
ान-दृष्टि से परमात्मा में स्थित हुआ योगी एक घड़ी विश्राम करके तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र
ेदन कर शरीर को छोड़ देवे।

द्वाविंशः श्लोकः

यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यं, वैहायसानामुत यद् विहारम् ।
अष्टाधिपत्यं गुणसन्निवाये, सहैव गच्छेन्मनसेन्द्रियैश्च ॥२२॥

पदच्छेदः— **यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यम्, वैहायसानाम् उत यद् विहारम् ।**
अष्ट आधिपत्यम् गुण सन्निवाये, सह एव गच्छेत् मनसा इन्द्रियैः च ॥

शब्दार्थ—

यदि	२.	यदि (योगिपुरुष)	**आधिपत्यम्**	९.	स्वामी होकर
प्रयास्यन्	४.	जाने की इच्छा करता है	**गुण**	६.	सत्त्व, रजस् और तमोगुण
नृप	१.	हे राजन् !	**सन्निवाये,**	७.	समूह रूप ब्रह्माण्ड में
पारमेष्ठ्यम्,	३.	ब्रह्मलोक में	**सह**	१६.	साथ लेकर
वैहायसानाम्	१०.	आकाशचारी सिद्धों के	**एव**	१७.	ही
उत	५.	अथवा	**गच्छेत्**	१८.	(शरीर से) निकले
यद्	११.	प्रसिद्ध	**मनसा**	१३.	मन
विहारम् ।	१२.	आनन्द को	**इन्द्रियैः**	१५.	इन्द्रियों को
अष्ट	८.	आठों सिद्धियों का	**च ॥**	१४.	और

श्लोकार्थ :—हे राजन् ! यदि योगिपुरुष ब्रह्मलोक में जाने की इच्छा करता है अथवा सत्त्व, रजस् अ तमोगुण का समूह रूप ब्रह्माण्ड में आठों सिद्धियों का स्वामी होकर आकाशचारी सिद्धो प्रसिद्ध आनन्द को पाना चाहता है तो वह मन और इन्द्रियों को साथ लेकर ही शरीर निकले ।

त्रयोविंशः श्लोकः

योगेश्वराणां गतिमाहुरन्त-र्बहिस्त्रिलोक्याः पवनान्तरात्मनाम् ।
न कर्मभिस्तां गतिमाप्नुवन्ति, विद्यातपोयोगसमाधिभाजाम् ॥२३॥

पदच्छेदः— **योगेश्वराणाम् गतिम् आहुः अन्तर्, बहिः त्रिलोक्याः पवन अन्तरात्मनाम् ।**
न कर्मभिः ताम् गतिम् आप्नुवन्ति, विद्या तपः योग समाधि भाजाम् ॥

शब्दार्थ—

योगेश्वराणाम्	६.	योगिराजों को	**न**	१५.	नहीं
गतिम्	१०.	विचरण का	**कर्मभिः**	१२.	(मनुष्य) केवल कर्मों के द्व
आहुः	११.	अधिकार है (किन्तु)	**ताम्**	१३.	उस
अन्तर्,	८.	अन्दर और	**गतिम्**	१४.	गति को
बहिः	९	बाहर	**आप्नुवन्ति,**	१६.	पा सकते हैं
त्रिलोक्याः	७.	त्रिलोकी के	**विद्या तपः**	१.	ज्ञान तपस्या
पवन	४.	वायु के (समान सूक्ष्म)	**योग समाधि**	२.	योग और समाधि का
अन्तरात्मनाम् ।	५.	आत्मावाले	**भाजाम् ॥**	३.	सेवन करने वाले (तथा)

श्लोकार्थ :—ज्ञान, तपस्या, योग और समाधि का सेवन करने वाले तथा वायु के समान सूक्ष्म आत्मावा योगिराजों को त्रिलोकी के अन्दर और बाहर विचरण का अधिकार है; किन्तु मनुष्य के कर्मों के द्वारा उस गति को नहीं पा सकते हैं

चतुर्विंश: श्लोक:

वैश्वानरं याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा ।
विधूतकल्कोऽथ हरेरुदस्तात्, प्रयाति चक्रं नृप शैशुमारम् ॥२४॥

वैश्वानरम् याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा ।
विधूत कल्कः अथ हरेः उदस्तात्, प्रयाति चक्रम् नृप शैशुमारम् ॥

७.	अग्निलोक में	कल्कः	९.	पापों को
८.	जाता है (वहाँ)	अथ	११.	उसके बाद
६.	आकाश मार्ग से	हरेः	१३.	भगवान् विष्णु के
५.	जाता हुआ (योगी)	उदस्तात्,	१२.	ऊपर स्थित
२.	सुषुम्णा के द्वारा	प्रयाति	१६.	पहुँचता है
४.	ब्रह्म लोक को	चक्रम्	१५.	लोक में
३.	ज्योतिर्मय	नृप	१.	हे राजन् !
१०.	समाप्त करके	शैशुमारम् ॥	१४.	शिशुमार

राजन् ! सुषुम्णा के द्वारा ज्योतिर्मय ब्रह्मलोक को जाता हुआ योगी आकाश ग्निलोक में जाता है। वहाँ पापों को समाप्त करके उसके बाद ऊपर स्थित भगवान शिशुमार लोक में पहुँचता है।

पञ्चविंश: श्लोक:

तद् विश्वनाभिं त्वतिवर्त्य विष्णो-रणीयसा विरजेनात्मनैकः ।
नमस्कृतं ब्रह्मविदामुपैति, कल्पायुषो यद् विबुधा रमन्ते ॥२५॥

तद् विश्व नाभिम् तु अतिवर्त्य विष्णोः, अणीयसा विरजेन आत्मना एकः ।
नमस्कृतम् ब्रह्म विदाम् उपैति, कल्प आयुषः यद् विबुधाः रमन्ते ॥

५.	उस (शिशुमार चक्र) को	एकः ।	१०.	अकेले ही
२.	विश्व ब्रह्माण्ड के	नमस्कृतम्	१२.	वन्दित (महर्लोक) में
३.	घूमने का केन्द्र	ब्रह्मविदाम्	११.	ब्रह्मज्ञानियों के द्वारा
१.	तदनन्तर (योगी पुरुष)	उपैति,	१३.	पहुँचता है
६	पार करके	कल्प	१५,	कल्प पर्यन्त
४.	भगवान् विष्णु के	आयुषः	१६.	जीवित रहने वाले
७.	अत्यन्त सूक्ष्म (और)	यद्	१४.	जहाँ पर
८.	निर्मल	विबुधाः	१७.	देव-गण
९.	शरीर से	रमन्ते ॥	१८.	विहार करते हैं

दनन्तर योगी पुरुष विश्व-ब्रह्माण्ड के घूमने का केन्द्र भगवान् विष्णु के उस शि क्र को पार करके अत्यन्त सूक्ष्म और निर्मल शरीर से अकेले ही ब्रह्मज्ञानियों न्दित महर्लोक में पहुँचता है। जहाँ पर कल्प पर्यन्त जीवित रहने वाले देव-गण रते हैं

षड्विंश: श्लोक:

अथो अनन्तस्य मुखानलेन, दन्दह्यमानं स निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वरजुष्टधिष्ण्यं, यद् द्वैपरार्ध्यं तदु पारमेष्ठ्यम् ।।२६।।
अथो अनन्तस्य मुख अनलेन, दन्दह्यमानम् सः निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वर जुष्ट धिष्ण्यम्, यद् द्वैपरार्ध्यम् तद् उ पारमेष्ठ्यम् ।।

१.	उसके बाद (प्रलय काल में)	निर्याति	१६.	चला जाता है
२.	भगवान् शेषनाग के	सिद्धेश्वर	९.	सिद्धों के द्वारा
३.	मुख की	जुष्ट	१०.	सेवित
४.	आग से	धिष्ण्यम्,	११.	स्थान वाले
६.	भस्म होते	यद्	१४.	जो कि
८.	वह (योगी पुरुष)	द्वैपरार्ध्यम्	१५.	दो परार्ध वर्ष तक
७.	देखकर	तद् उ	१२.	उसी
५.	नीचे के लोकों को	पारमेष्ठ्यम्	१३.	ब्रह्मलोक को

सके बाद प्रलय काल में भगवान् शेषनाग के मुख की आग से नीचे के लोकों को भस्‍खकर वह योगी पुरुष सिद्धों के द्वारा सेवित स्थानवाले उसी ब्रह्मलोक को, जो कि दो र्ष तक स्थित रहता है, चला जाता है।

सप्तविंश: श्लोक:

न यत्र शोको न जरा न मृत्यु—र्नार्तिर्न चोद्वेग ऋते कुतश्चित् ।
यच्चित्ततोऽदः कृपयानिदंविदां, दुरन्तदुःखप्रभवानुदर्शनात् ।।२७।।
न यत्र शोकः न जरा न मृत्युः, न आर्तिः न च उद्वेगः ऋते कुतश्चित् ।
यत् चित्ततः अदः कृपया अनिदम् विदाम्, दुरन्त दुःख प्रभव अनु दर्शनात् ।।

१३.	न	कुतश्चित् ।	१२.	किसी से
११.	वहाँ (किसी को)	यत्	८.	जो
१४.	दुःख (है)	चित्ततः	९.	हार्दिक (व्यथा है उसे
१५.	न बुढ़ापा (है)	अदः	१.	उस (ब्रह्मलोक) को
१६.	न मृत्यु (है)	कृपया	७.	दयावश
१७.	न भय (है)	अनिदम्	२.	वास्तविक रूप से न
१९.	न ही	विदाम्,	३.	जानने वाले (लोगो के
१८.	और	दुरन्त दुःख	४.	घोर संकट-स्वरूप
२०.	घबराहट (है)	प्रभव	५.	जन्म-मरण को
१०.	छोड़कर	अनुदर्शनात् ।।	६.	देखकर (ब्रह्मलोकवासी

स ब्रह्मलोक को वास्तविक रूप से न जाननेवाले लोगों के घोर संकट-स्वरूप जन्म-मर खकर ब्रह्मलोकवासी लोगों में दयावश जो हार्दिक व्यथा है, उसे छोड़कर वहाँ कि सी से न दुःख है न बुढ़ापा है न मृत्यु है न भय है और न ही घबराहट है

ज्योतिर्मयो वायुमुपेत्य काले, वाय्वात्मना ख बृहदात्मलिङ्गम् । २८

पदच्छद — **तत विशेषम प्रतिपद्य निर्भय, तेन आत्मना आप अनल मूर्ति अत्वरन ।**
ज्योतिमय वायुम उपेत्य काले वायु आत्मना खम् बृहत आत्मन लिङ्गम ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	ब्रह्मलोक का भोग कर लेने पर	**ज्योतिर्मयः**	९.	तैजसरूप को
विशेषम्	३.	सूक्ष्म शरीर को	**वायुम्**	१०.	वायुरूप में
प्रतिपद्य	४.	प्राप्त करके	**उपेत्य**	११.	विलीन करके
निर्भयः,	२.	अभय हुआ (वह योगी)	**काले,**	१२.	समय आने पर
तेन आत्मना	६.	उस पार्थिव शरीर को	**वायु आत्मना**	१३.	वायु शरीर को
आपः	७.	(जल में) जलीय शरीर को	**खम्**	१६.	आकाशतत्त्व में (विलीन करे)
अनल मूर्तिः	८.	तेज में (तथा)	**बृहत्**	१५.	महान्
अत्वरन् ।	५.	स्थिरता के साथ	**आत्मन्लिङ्गम् ॥**	१४.	परमात्मा का बोध कराने वाले

श्लोकार्थ—ब्रह्म लोक का भोग कर लेने पर अभय हुआ वह योगी सूक्ष्म शरीर को प्राप्त करके स्थिरता के साथ उस पार्थिव शरीर को जल में, जलीय-शरीर को तेज में तथा तैजस-रूप को वायुरूप में विलीन करके समय आने पर वायु शरीर को परमात्मा का बोध करावे वाले महान् आकाश तत्त्व में विलीन करे ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

घ्राणेन गन्धं रसनेन वै रसं, रूपं तु दृष्ट्या श्वसनं त्वचैव ।
श्रोत्रेण चोपेत्य नभोगुणत्वं, प्राणेन चाकूतिमुपैति योगी ॥२९॥

पदच्छेद— **घ्राणेन गन्धम् रसनेन वै रसम्, रूपम् तु दृष्ट्या श्वसनम् त्वचा एव ।**
श्रोत्रेण च उपेत्य नभोगुणत्वम्, प्राणेन च आकूतिम् उपैति योगी ॥

शब्दार्थ—

घ्राणेन	३.	नासिका इन्द्रिय को	**एव ।**	१४.	ही
गन्धम्	४.	गन्ध तन्मात्रा में	**श्रोत्रेण**	१२.	श्रवणेन्द्रिय को
रसनेन	५.	जिह्वा को	**च**	१६.	तदनन्तर
वै	१.	आवरण भेदन के बाद	**उपेत्य**	१५.	मिलाकर
रसम्,	६.	रस तन्मात्रा में	**नभोगुणत्वम्,**	१३.	शब्द तन्मात्रा में
रूपम्	८.	रूप तन्मात्रा में	**प्राणेन**	१७.	कर्मेन्द्रियों को
तु	११.	तथा	**च**	१८.	भी
दृष्ट्या	७.	नेत्रेन्द्रिय को	**आकूतिम्**	१९.	क्रियाशक्ति में
श्वसनम्	१०.	स्पर्श तन्मात्रा में	**उपैति**	२०.	लीन करे
त्वचा	९.	त्वग् इन्द्रिय को	**योगी ॥**	२.	योगी पुरुष

श्लोकार्थ—आवरण भेदन के बाद योगी पुरुष नासिका इन्द्रिय को गन्ध तन्मात्रा में, जिह्वा को रस तन्मात्रा में, नेत्रेन्द्रिय को रूप तन्मात्रा में, त्वग् इन्द्रिय को स्पर्श तन्मात्रा में तथा श्रवणेन्द्रिय को शब्द तन्मात्रा में ही मिलाकर तदनन्तर कर्मेन्द्रियों को भी क्रियाशक्ति में लीन करे ।

श्री

त्रिंशः श्लोकः

स भूतसूक्ष्मेन्द्रियसंनिकर्षं, मनोमयं देवमयं विकार्यम् ।
संसाद्य गत्या सह तेन याति, विज्ञानतत्त्वं गुणसंनिरोधम् ॥३०॥

सः भूत सूक्ष्म इन्द्रिय संनिकर्षम्, मनोमयम् देवमयम् विकार्यम् ।
संसाद्य गत्या सह तेन याति, विज्ञान तत्त्वम् गुण संनिरोधम् ॥

१. वह (योगी पुरुष)	संसाद्य	८. लीन करके
२. पञ्च तन्मात्राओ को	गत्या	११. गति के द्वारा
४. इन्द्रियों को	सह	१०. साथ
६. (इनके) अधिष्ठाता को	तेन	९. उस (त्रिविध अहं
७. सात्त्विक अहंकार में	याति	१४. पहुँचता है
५. राजस अहंकार मे (तथा)	विज्ञानतत्त्वम्	१३. महत्तत्त्व में
३. तामस अहंकार में	गुण संनिरोधम्	१२. तीनों गुणों मे रहि

योगी पुरुष पञ्च तन्मात्राओं को तामस अहंकार में, इन्द्रियों को राजस अहंका के अधिष्ठाता को सात्त्विक अहंकार में लीन करके उस त्रिविध अहंकार के सा रा तीनों गुणों से रहित महत्तत्त्व में पहुँचता है ।

एकत्रिंशः श्लोकः

तेनात्मनाऽऽत्मानमुपैति शान्त—मानन्दमानन्दमयोऽवसाने ।
एतां गतिं भागवतीं गतो यः, स वै पुनर्नेह विषज्जतेऽङ्ग ॥३१॥

तेन आत्मना आत्मानम् उपैति शान्तम्, आनन्दम् आनन्दमयः अवसाने ।
एताम् गतिम् भागवतीम् गतः यः, सः वै पुनः न इह विषज्जते अङ्ग ॥

४. उसी	भागवतीम्	१२. भगवत्संबन्धी
५. सूक्ष्म शरीर से	गतः	१४. पाया है
८. परमात्मा को	यः,	१०. जिसने
९. प्राप्त करता है	सः	१६. वह (पुरुष)
६. शान्त और	वै	१५. निश्चयपूर्वक
७. आनन्द स्वरूप	पुनः	१७. फिर से
२. आनन्द रूप (वह योगी)	न	१९. नहीं
३. प्रलय काल में	इह	१८. इस संसार में
११. इस	विषज्जते	२०. फँसता है
१३. गति को	अङ्ग ॥	१. हे परीक्षित् !

परीक्षित् ! आनन्द रूप वह योगी प्रलय काल में उसी सूक्ष्म शरीर से शान्त औ रूप परमात्मा को प्राप्त करता है । जिसने इस भगवत्संबन्धी गति को पाया है, क वह पुरुष फिर से इस संसार में नहीं फँसता है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

ते सृती ते नृप वेद गीते, त्वयाभिपृष्टे ह सनातने च ।
वै पुरा ब्रह्मण आह पृष्ट, आराधितो भगवान् वासुदेवः ॥

एते सृती ते नृप वेद गीते, त्वया अभिपृष्टे ह सनातने च ।
ये वै पुरा ब्रह्मणे आह पृष्टः, आराधितः भगवान् वासुदेवः ॥

८	इन दोनों	च	६.	और
९	मुक्ति मार्गों को	ये वै	१७.	इन्हीं दोनो
१०.	तुमसे (कहा है)	पुरा	११.	सत्ययुग मे
१	हे राजन् !	ब्रह्मणे	१६	ब्रह्मा जी से
४.	वेदों में वर्णित	आह	१८.	वर्णन किया
२.	तुम्हारे	पृष्टः,	१३.	पूछने पर
३	पूछने पर (मैंने)	आराधितः	१२.	प्रसन्न करके
५.	प्रसिद्ध	भगवान्	१४.	भगवान्
७.	सनातन	वासुदेवः ॥	१५.	विष्णु ने

राजन ! तुम्हारे पूछने पर मैंने वेदों में वर्णित, प्रसिद्ध और सनातन इन तुमसे कहा है। सत्ययुग में प्रसन्न करके पूछने पर भगवान् विष्णु ने ो मार्गों का वर्णन किया था।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न ह्यतोऽन्यः शिवः पन्था विशतः संसृताविह ।
वासुदेवे भगवति भक्तियोगो यतो भवेत् ॥ ३३ ॥

न हि अतः अन्यः शिवः पन्थाः, विशतः संसृतौ इह ।
वासुदेवे भगवति, भक्तियोगः यतः भवेत् ॥

८.	नहीं	संसृतौ	२.	संसार मे
९.	है	इह ।	१.	इस
४	इसके	वासुदेवे	१२.	वासुदेव मे
५.	अतिरिक्त दूसरा	भगवति	११.	भगवान्
६.	कल्याणकारी	भक्तियोगः	१३.	भक्तियोग
७.	मार्ग	यतः	१०.	जिससे
३.	प्रवेश करने वाले लोगों के लिए	भवेत् ॥	१४.	हो जाय

ससार में प्रवेश करने वाले लोगों के लिए इसके अतिरिक्त दूसरा ा है, जिससे भगवान् वासुदेव में भक्तियोग हो जाय ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

भगवान् ब्रह्म कात्स्न्र्येन त्रिरन्वीक्ष्य मनीषया ।
तदध्यवस्यत् कूटस्थो रतिरात्मन् यतो भवेत् ॥३४॥

पदच्छेद— भगवान् ब्रह्म कात्स्न्र्येन, त्रिः अन्वीक्ष्य मनीषया ।
तद् अध्यवस्यत् कूटस्थः, रतिः आत्मन् यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१.	भगवान्	तद्	७.	उस (साधन) का
ब्रह्म	२.	ब्रह्मा जी ने	अध्यवस्यत्	८.	निश्चय किया
कात्स्न्र्येन	३.	सम्पूर्ण (वेदों) का	कूटस्थः,	११.	अचल
त्रिः	५.	तीन बार	रतिः	१२.	प्रेम
अन्वीक्ष्य	६.	अध्ययन करके	आत्मन्	१०.	परमात्मा में
मनीषया ।	४.	सावधानी के साथ	यतः	९.	जिससे
			भवेत् ॥	१३.	हो सके

श्लोकार्थ —भगवान् ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण वेदों का सावधानी के साथ तीन बार अध्ययन करके उस साधन का निश्चय किया, जिससे परमात्मा में अचल प्रेम हो सके ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भगवान् सर्वभूतेषु लक्षितः स्वात्मना हरिः ।
दृश्यैर्बुद्ध्यादिभिर्द्रष्टा लक्षणैरनुमापकैः ॥३५॥

पदच्छेद— भगवान् सर्व भूतेषु, लक्षितः स्वात्मना हरिः ।
दृश्यै बुद्धि आदिभिः द्रष्टा, लक्षणैः अनुमापकैः ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	५.	भगवान्	दृश्यैः	१०.	प्रत्यक्ष
सर्व	१.	सभी	बुद्धि	८.	बुद्धि
भूतेषु,	२.	प्राणियों में	आदिभिः	९.	इत्यादि
लक्षितः	४.	ज्ञात होने वाले	द्रष्टा,	१२.	साक्षिरूप से सिद्ध (हैं)
स्वात्मना	३.	आत्मा रूप से	लक्षणैः	११.	साधनों के द्वारा
हरिः ।	६.	वासुदेव	अनुमापकैः ॥	७.	अनुमान कराने वाले

श्लोकार्थ —सभी प्राणियों में आत्मा रूप से ज्ञात होने वाले भगवान् वासुदेव अनुमान कराने वाले बुद्धि इत्यादि प्रत्यक्ष साधनों के द्वारा साक्षिरूप से सिद्ध हैं ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

तस्मात् सर्वात्मना राजन् हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यो भगवान्नृणाम् ॥ ३६ ॥

पदच्छेद— तस्मात् सर्व आत्मना राजन्, हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मर्तव्यः भगवान् नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिए	श्रोतव्यः	९.	श्रवण
सर्व आत्मना	६.	सभी प्रकार से	कीर्तितव्यः	१०.	कीर्तन
राजन्,	२.	हे परीक्षित्	च,	११.	और
हरिः	८.	श्री हरि का	स्मर्तव्यः	१२.	स्मरण करना चाहिए
सर्वत्र	५.	सब जगह	भगवान्	७.	भगवान्
सर्वदा ।	४.	हमेशा	नृणाम् ॥	३.	मनुष्यों को

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! मनुष्यों को हमेशा सब जगह सभी प्रकार से भगवान् श्रीहरि श्रवण, कीर्तन और स्मरण करना चाहिए ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां, कथामृतं श्रवणपुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं, व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम् ॥ ३७ ॥

पदच्छेद— पिबन्ति ये भगवतः आत्मनः सताम्, कथा अमृतम् श्रवण पुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषय विदूषित आशयम्, व्रजन्ति तत् चरण सरोरुह अन्तिकम् ॥

शब्दार्थ—

पिबन्ति	८.	पान करते हैं	पुनन्ति	१२.	पवित्र कर देते हैं (तथ
ये	१.	जो (लोग)	ते	९.	वे (लोग)
भगवतः	६.	भगवान् के	विषय, विदूषित	१०.	विषय-भोगों से, मलिन
आत्मनः	५.	परमात्मा	आशयम्,	११.	अन्तःकरण को
सताम्,	२.	सज्जनों से वर्णित (और)	व्रजन्ति	१६	पहुँच जाते हैं
कथा, अमृतम्	७.	कथारूपी, अमृतरस का	तत् चरण	१३.	उन (प्रभु) के चरण
श्रवण, पुटेषु	३.	कान रूपी, दोनों में	सरोरुह	१४.	कमल के
सम्भृतम् ।	४.	पूरित	अन्तिकम् ॥	१५.	समीप

श्लोकार्थ—जो लोग सज्जनों से वर्णित और कानरूपी दोनों में पूरित परमात्मा भगवान् के कथ अमृतरस का पान करते हैं, वे लोग विषय-भोगों से मलिन अन्तःकरण को पवित्र कर दे तथा उन प्रभु के चरण-कमल के समीप पहुँच जाते हैं ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
पुरुषसंस्थावर्णनं नाम द्वितीयः अध्यायः ॥ २ ॥

द्वितीयः स्कन्धः

अथ तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

एवमेतन्निगदितं पृष्टवान् यद् भवान् मम ।
नृणां यन्म्रियमाणानां मनुष्येषु मनीषिणाम् ॥ १ ॥

एवम् एतद् निगदितम्, पृष्टवान् यद् भवान् मम ।
नृणाम् यद् म्रियमाणानाम्, मनुष्येषु मनीषिणाम् ॥

११.	इस प्रकार	**मम ।**	२.	मुझसे
१०.	उसे	**नृणाम्**	९.	मनुष्यों को
१२.	बता दिया गया	**यद्**	५.	कि
४.	पूछा था	**म्रियमाणानाम्**	६.	मरते समय
३.	जो	**मनुष्येषु**	७.	मनुष्यों मे
१.	आपने	**मनीषिणाम् ॥**	८.	बुद्धिमान्

ने मुझसे जो पूछा था कि मरते समय मनुष्यों में बुद्धिमान् मनुष्यों
हिए ? उसे इस प्रकार बता दिया गया ।

द्वितीयः श्लोकः

ब्रह्मवर्चसकामस्तु यजेत ब्रह्मणस्पतिम् ।
इन्द्रमिन्द्रियकामस्तु प्रजाकामः प्रजापतीन् ॥ २ ॥

ब्रह्मवर्चस कामः तु, यजेत ब्रह्मणस्पतिम् ।
इन्द्रम् इन्द्रिय कामः तु, प्रजा कामः प्रजापतीन् ॥

१	ब्रह्म	**इन्द्रम्**	८.	इन्द्र की
२.	तेज का	**इन्द्रिय**	६.	इन्द्रिय बल
३.	इच्छुक (मनुष्य)	**कामः**	७.	इच्छुक
५.	और	**तु**	९.	तथा
१२.	उपासना करे	**प्रजाकामः**	१०.	संतान का
४.	बृहस्पति की	**प्रजापतीन् ॥**	११.	प्रजापतियो

तेज का इच्छुक मनुष्य बृहस्पति की और इन्द्रिय-बल का इच्छुक इन्द्र
अभिलाषी प्रजापतियों की उपासना करे

तृतीय: श्लोक:

देवीं मायां तु श्रीकामस्तेजस्कामो विभावसुम् ।
वसुकामो वसून् रुद्रान् वीर्यकामोऽथ वीर्यवान् ॥३॥

देवीम् मायाम् तु श्रीकाम:, तेज: काम: विभावसुम् ।
वसु काम: वसून् रुद्रान्, वीर्य काम: अथ वीर्यवान् ॥

४	देवी की	**वसु काम:**	८.	धन की कामना से
३	माया	**वसून्**	६.	वसुओं की
५.	तथा	**रुद्रान्**	१२.	रुद्रों की (उपासना
२.	लक्ष्मी की कामना से	**वीर्य काम:**	११.	बल की कामना से
६	तेज की इच्छा से	**अथ**	१०.	और
७	अग्नि की	**वीर्यवान् ॥**	१.	वीर पुरुष

: पुरुष लक्ष्मी की कामना से माया देवी की तथा तेज की इच्छा से अग्नि की,
मना से वसुओं की और बल की कामना से रुद्रों की उपासना करे।

चतुर्थ: श्लोक:

अन्नाद्यकामस्त्वदितिं स्वर्गकामोऽदितेः सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्यकामः साध्यान् संसाधको विशाम् ॥४॥

अन्नाद्य काम: तु अदितिम्, स्वर्गकाम: अदिते: सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्य काम:, साध्यान् संसाधक: विशाम् ॥

१	अनाज की कामना से	**विश्वान्**	७.	विश्वे
६.	तथा	**देवान्**	८.	देवों की
२	अदिति देवमाता की	**राज्य काम:**	६.	राज्य की कामना से
३.	स्वर्ग की कामना से	**साध्यान्**	१२.	साध्य देवों की (उपास
४.	अदिति के	**संसाधक:**	११.	अनुकूल करने की इ
५	पुत्र देवताओं की	**विशाम् ॥**	१०.	प्रजाओं को

ज की कामना से अदिति देवमाता की, स्वर्ग की कामना से अदिति के पुत्र देवता
की कामना से विश्वे देवों की तथा प्रजाओं को अनुकल करने की इच्छा
की उपासना करे।

पञ्चमः श्लोकः

आयुष्कामोऽश्विनौ देवौ पुष्टिकाम इलां यजेत् ॥
प्रतिष्ठाकामः पुरुषो रोदसी लोकमातरौ ॥५॥

आयुः कामः अश्विनौ देवौ, पुष्टि कामः इलाम् यजेत् ।
प्रतिष्ठा कामः पुरुषः, रोदसी लोकमातरौ ॥

१	आयु की इच्छा वाला (मनुष्य)	**प्रतिष्ठा**	६.	सम्मान का
२	अश्विनी कुमार	**कामः**	७.	अभिलाषी
३	देवों की	**पुरुषः**	८.	मनुष्य
४	पुष्टि का इच्छुक	**रोदसी**	६.	आकाश (तथा)
५	पृथ्वी की (और)	**लोक**	१०.	लोक
१२	उपासना करे	**मातरौ ॥**	११.	माता पृथ्वी की

की इच्छा वाला मनुष्य अश्विनी कुमार देवों की, पुष्टि का इच्छुक पृ
ान का अभिलाषी मनुष्य आकाश तथा लोकमाता पृथ्वी की उपासना करे ।

षष्ठः श्लोकः

रूपाभिकामो गन्धर्वान् स्त्रीकामोऽप्सर उर्वशीम् ।
आधिपत्यकामः सर्वेषां यजेत परमेष्ठिनम् ॥६॥

रूप अभिकामः गन्धर्वान्, स्त्री कामः अप्सरः उर्वशीम् ।
आधिपत्य कामः सर्वेषाम्, यजेत परमेष्ठिनम् ॥

१	सौन्दर्य की	**उर्वशीम् ।**	६.	उर्वशी
२	अभिलाषा से	**आधिपत्य**	६.	स्वामी होने की
३	गन्धर्वों की	**कामः**	१०.	कामना से
४	स्त्री प्राप्ति की	**सर्वेषाम्**	८.	सबका
५	कामना से	**यजेत**	१२.	आराधना करनी
७.	अप्सरा की (तथा)	**परमेष्ठिनम् ॥**	११.	ब्रह्मा जी की

र्य की अभिलाषा से गन्धर्वों की, स्त्री-प्राप्ति की कामना से उर्वशी अप्
ा स्वामी होने की कामना से ब्रह्मा जी की करनी चाहिए

सप्तमः श्लोकः

यज्ञं यजेद् यशस्कामः कोशकामः प्रचेतसम् ।
विद्याकामस्तु गिरिशं दाम्पत्यार्थ उमां सतीम् ।।७।।

पदच्छेद—

यज्ञम् यजेत् यशः कामः, कोश कामः प्रचेतसम् ।
विद्या कामः तु गिरिशम्, दाम्पत्य अर्थः उमाम् सतीम् ।।

शब्दार्थ—

यज्ञम्	२.	यज्ञ भगवान् की	**कामः**	६.	इच्छा से
यजेत्	१२.	आराधना करनी चाहिए	**तु**	८.	तथा
यशः कामः	१.	कीर्ति की कामना से	**गिरिशम्**	७.	भगवान् शंकर की
कोश कामः	३.	खजाने की लालसा से	**दाम्पत्य अर्थः**	९.	पति-पत्नी में प्रेम
प्रचेतसम्	४.	वरुण की	**उमाम्**	११.	पार्वती की
विद्या ।	५.	विद्या-प्राप्ति की	**सतीम् ।।**	१०.	सती

श्लोकार्थ—कीर्ति की कामना से यज्ञ भगवान् की, खजाने की लालसा से वरुण की, विद्या इच्छा से भगवान् शंकर की तथा पति-पत्नी में प्रेम के निमित्त सती पार्वती की करनी चाहिए ।

अष्टमः श्लोकः

धर्मार्थ उत्तमश्लोकं तन्तुं तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षाकामः पुण्यजनानोजस्कामो मरुद्गणान् ।।८।।

पदच्छेद—

धर्मार्थः उत्तम श्लोकम्, तन्तुम् तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षा कामः पुण्यजनान्, ओजः कामः मरुद् गणान् ।।

शब्दार्थ—

धर्मार्थः	१.	धर्म के लिए	**रक्षा**	६.	रक्षा की
उत्तम श्लोकम्	२.	भगवान् विष्णु की	**कामः**	७.	कामना से
तन्तुम्	३.	वंश परम्परा की	**पुण्यजनान्**	८.	यक्षों की (और)
तन्वन्	४.	वृद्धि के लिए	**ओजः**	९.	बल-प्राप्ति की
पितॄन्	५.	पितरों की	**कामः**	१०.	इच्छा से
यजेत् ।	१२.	उपासना करनी चाहिए	**मरुद्गणान् ।।**	११.	मरुद्गणों की

श्लोकार्थ—धर्म के लिए भगवान् विष्णु की, वंश-परम्परा की वृद्धि के लिए पितरों की, रक्षा से यक्षों की और बल-प्राप्ति की इच्छा से मरुद्गणों की उपासना करनी चाहिए ।

नवमः श्लोकः

राज्यकामो मनून् देवान् निर्ऋतिं त्वभिचरन् यजेत् ।
कामकामो यजेत् सोममकामः पुरुषं परम् ॥९॥

पदच्छेद—

राज्य कामः मनून् देवान्, निर्ऋतिम् तु अभिचरन् यजेत् ।
काम कामः यजेत् सोमम्, अकामः पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

राज्य कामः	१.	राज्य की कामना से	यजेत् ।	७.	आराधना करे
मनून्	२.	मन्वन्तर के अधिपति	काम कामः	८.	भोगों की लालसा से
देवान्	३.	देवों की	यजेत्	१३.	उपासना करे
निर्ऋतिम्	६.	निर्ऋति की	सोमम्	९.	सोम की (और)
तु	४.	तथा	अकामः	१०.	निष्काम होने पर
अभिचरन्	५.	अभिचार की इच्छा से	पुरुषम्	१२.	पुरुष नारायण की
			परम् ॥	११.	आदि

श्लोकार्थ—राज्य की कामना से मन्वन्तर के अधिपति देवों की तथा अभिचार की इच्छा से निर्ऋति की आराधना करे । भोगों की लालसा से सोम की और निष्काम होने पर आदि पुरुष नारायण की उपासना करे ।

दशमः श्लोकः

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, यजेत पुरुषं परम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अकामः सर्व कामः वा, मोक्ष कामः उदारधीः ।
तीव्रेण भक्ति योगेन, यजेत पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

अकामः	३.	निष्काम भावना	तीव्रेण	७.	दृढ़
सर्व कामः	४.	समस्त कामना	भक्ति	८.	भक्ति
वा	५.	अथवा	योगेन	९.	भाव के द्वारा
मोक्ष कामः	६.	मुक्ति की इच्छा से	यजेत	१२.	उपासना करे
उदार	१.	विशाल	पुरुषम्	११.	पुरुष नारायण की
धीः	२.	बुद्धिशाली (मनुष्य)	परम् ॥	१०.	परम

श्लोकार्थ—विशाल बुद्धिशाली मनुष्य निष्काम भावना, समस्त कामना अथवा मुक्ति की इच्छा से दृढ़ भक्ति-भाव के द्वारा परम पुरुष नारायण की उपासना करे ।

एकादश: श्लोक:

एतावानेव यजतामिह निःश्रेयसोदयः ।
भगवत्यचलो भावो यद् भागवतसङ्गतः ॥ ११ ॥

पदच्छेद— एतावान् एव यजताम्, इह निःश्रेयसा उदयः ।
भगवति अचलः भावः, यद् भागवत सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	४.	यह	भगवति	१०.	भगवान में
एव	५.	ही	अचलः	११.	दृढ़
यजताम्	२.	उपासना करने वाले मनुष्यों की	भावः	१२.	भक्ति (हो जाय)
इह	१.	इस संसार में	यद्	७.	कि
निः श्रेयसा	३.	परम कल्याण के साथ	भागवत	८.	भगवद्भक्तों की
उदयः ।	६.	उन्नति है	सङ्गतः ।	९.	संगति से (उनकी)

श्लोकार्थ—इस संसार में उपासना करने वाले मनुष्यों की परम कल्याण के साथ यही उन्नति भगवद्भक्तों की संगति से उनकी भगवान् में दृढ़ भक्ति हो जाय ।

द्वादश: श्लोक:

ज्ञानं यदा प्रतिनिवृत्तगुणोर्मिचक्र-मात्मप्रसाद उत यत्र गुणेष्वसङ्गः ।
कैवल्यसम्मतपथस्त्वथ भक्तियोगः, को निर्वृतो हरिकथासु रतिं न कुर्यात् ॥ १

पदच्छेद— ज्ञानम् यदा प्रतिनिवृत्त गुण ऊर्मि चक्रम्, आत्मन् प्रसादः उत यत्र गुणेषु, असङ्गः
कैवल्य सम्मत पथः तु अथ भक्ति योगः, कः निर्वृतः हरि कथासु रतिम् न कुर्यात् ;

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	५.	ज्ञान	कैवल्य	१२.	कैवल्य मोक्ष का
यदा	६.	जब (हो जाता है तब)	सम्मत पथः	१३.	मान्य साधन
प्रतिनिवृत्त	४.	समाप्त कर देने वाला	तु	१५.	अतः
गुण	२.	तीनों गुणों के	अथ	११.	तदनन्तर
ऊर्मि चक्रम्,	३.	तरंग जाल को	भक्ति योगः,	१४.	भगवद्भक्ति (मिल जात
आत्म प्रसादः	७.	आत्मा प्रसन्न हो जाती है	कः	१६.	कौन
उत	८.	तथा	निर्वृतः	१७.	आत्मानन्दी (मनुष्य)
यत्र	१.	जिस (सत्संगति) से	हरि कथासु	१८.	श्रीहरि की कथाओ मे
गुणेषु	९.	विषयों में	रतिम्	१९.	प्रेम
असङ्गः ।	१०.	आसक्ति नहीं रहती है	न कुर्यात् ।	२३.	नहीं करेगा

श्लोकार्थ—जिस सत्संगति से तीनों गुणों के तरंग-जाल को समाप्त कर देने वाला ज्ञान जब हो है तब आत्मा प्रसन्न हो जाती है तथा विषयों में आसक्ति नहीं रहती है । तदनन्तर कै मोक्ष का मान्य-साधन भगवद्भक्ति मिल जाती है; अतः कौन आत्मानन्दी मनुष्य श्री ह कथाओ मे प्रेम नहीं करेगा

त्रयोदश: श्लोक:

शौनक उवाच

इत्यभिव्याहृतं राजा निशम्य भरतर्षभः ।
किमन्यत्पृष्टवान् भूयो वैयासकिमृषिं कविम् ॥१३

पदच्छेद—

इति अभिव्याहृतम् राजा, निशम्य भरत ऋषभः ।
किम् अन्यत् पृष्टवान् भूयः, वैयासकिम् ऋषिम् कविम् ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	अन्यत्	१०.	और
अभिव्याहृतम्	४.	कही गयी (बात) को	पृष्टवान्	१२.	पूछा था
राजा	२.	राजा परीक्षित् ने	भूयः	६.	फिर
निशम्य	५.	सुनकर	वैयासकिम्	७.	व्यास पुत्र शु
भरत ऋषभः ।	१.	भरतवंशियों में श्रेष्ठ	ऋषिम्	८.	मुनि से
किम्	११.	क्या	कविम् ॥	६.	दूरदर्शी

श्लोकार्थ—भरतवंशियों में श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ने इस प्रकार कही गयी बात को व्यास पुत्र शुकदेव मुनि से फिर और क्या पूछा था ?

चतुर्दश: श्लोक:

एतच्छुश्रूषतां विद्वन् सूत नोऽर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथोदर्काः सतां स्युः सदसि ध्रुवम् ॥१४

पदच्छेद—

एतद् शुश्रूषताम् विद्वन्, सूत नः अर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथा उदर्काः, सताम् स्युः सदसि ध्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५.	उस बात को	कथाः	१०.	वार्तालाप
शुश्रूषताम्	३.	सुनने के इच्छुक	हरिकथा	१२.	श्री हरि की
विद्वन्	१.	हे विद्वान्	उदर्काः	१३.	बताने वाला
सूत	२.	सूत जी ! (आप)	सताम्	८.	सन्तों की
नः	४.	हम लोगों से	स्युः	१४.	होगा
अर्हसि	७.	कृपा करें (क्योंकि)	सदसि	६	सभा में
भाषितुम् ।	६.	बताने की	ध्रुवम् ॥	११.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—हे विद्वान् सूत जी ! आप सुनने के इच्छुक हम लोगों से उस बात को बताने क्योंकि सन्तों की सभा में वार्तालाप निश्चय ही श्री हरि की लीला कथा होगा ।

पञ्चदशः श्लोकः

स वै भागवतो राजा पाण्डवेयो महारथः ।
बालक्रीडनकैः क्रीडन् कृष्णक्रीडां य आददे ।। १५ ।।

पदच्छेद—

सः वै भागवतः राजा, पाण्डवेयः महारथः ।
बाल क्रीडनकैः क्रीडन्, कृष्ण क्रीडाम् यः आददे ।।

शब्दार्थ—

सः	५.	वे	**बाल**	८.	बाल्यावस्था में
वै	१.	प्रसिद्ध है कि	**क्रीडनकैः**	९	खिलौनों से
भागवतः	२.	भगवद् भक्त (एवम्)	**क्रीडन्,**	१०.	खेलते हुए
राजा,	६.	राजा परीक्षित्	**कृष्ण क्रीडाम्**	११.	श्रीकृष्ण की लीला का ही
पाण्डवेयः	४.	पाण्डु नन्दन	**यः**	७.	जो
महारथः ।	३.	महारथी	**आददे ।**	१२.	रस पान करते थे

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि भगवद्भक्त एवम् महारथी पाण्डुनन्दन वे राजा परीक्षित् जो बाल्यावस्था में खिलौनों से खेलते हुए श्रीकृष्ण की लीला का ही रस पान करते थे ।

षोडशः श्लोकः

वैयासकिश्च भगवान् वासुदेवपरायणः ।
उरुगायगुणोदाराः सतां स्युर्हि समागमे ।। १६ ।।

पदच्छेद—

वैयासकिः च भगवान्, वासुदेव परायणः ।
उरुगाय गुण उदाराः, सताम् स्युः हि समागमे ।।

शब्दार्थ—

वैयासकिः	२.	शुकदेव मुनि (भी)	**गुण**	९.	लीलाओं की
च	५.	अतः	**उदाराः**	११.	चर्चा
भगवान्	१.	भगवान्	**सताम्**	६.	सन्तों की
वासुदेव	३.	श्रीकृष्ण के	**स्युः**	१२.	हुई होगी
परायणः ।	४.	परम अनुरागी (हैं)	**हि**	१०.	ही
उरुगाय	८.	श्री हरि के	**समागमे ।**	७.	संगति में

श्लोकार्थ—भगवान् शुकदेव मुनि भी श्रीकृष्ण के परम अनुरागी हैं, अतः सन्तों की संगति में श्री हरि के लीलाओं की ही चर्चा हुई होगी ।

सप्तदशः श्लोकः

आयुर्हरति वै पुंसामुद्यन्नस्तं च यन्नसौ ।
तस्यर्ते यत्क्षणो नीत उत्तमश्लोकवार्तया ।।१७।।

आयुः हरति वै पुंसाम्, उद्यन् अस्तम् च यन् असौ ।
तस्य ऋते यत् क्षणः नीतः, उत्तम श्लोक वार्तया ।।

९.	समय को	**असौ ।**	१४.	वे (भगवान् सूर्य)
१६.	समाप्त कर रहे हैं	**तस्य**	७.	उससे
१५.	निश्चय ही	**ऋते**	८.	अतिरिक्त
६.	मनुष्यों के	**यत्**	३.	जो
१०.	उगते हुए	**क्षणः**	४.	समय
१२.	अस्ताचल को	**नीतः**	५.	बिताया गया
११.	और	**उत्तमश्लोक**	१.	श्री हरि की
१३.	जाते हुए	**वार्तया ।।**	२.	चर्चा के द्वारा

ो हरि की चर्चा के द्वारा जो समय बिताया गया, मनुष्यों के उससे अतिरिक्त
गते हुए और अस्ताचल को जाते हुए वे भगवान् सूर्य निश्चय ही समाप्त कर रहे

अष्टादशः श्लोकः

तरवः किं न जीवन्ति भस्त्राः किं न श्वसन्त्युत ।
न खादन्ति न मेहन्ति किं ग्रामपशवोऽपरे ।।१८।।

तरवः किम् न जीवन्ति, भस्त्राः किम् न श्वसन्ति उत ।
न खादन्ति न मेहन्ति, किम् ग्राम पशवः अपरे ।।

२.	वृक्ष	**उत ।**	५.	अथवा
१.	क्या	**न खादन्ति**	१४.	नहीं खाते हैं (और
३.	नहीं	**न**	१५.	नहीं
४.	जीते हैं	**मेहन्ति**	१२.	मल-मूत्र त्यागते है
७.	लुहार की धौंणनी	**किम्**	१०.	क्या
६.	क्या	**ग्राम**	११.	गाँव के
८	नहीं	**पशवः**	१३.	पशु
९.	साँस लेती है	**अपरे ।।**	१२.	दूसरे

। वृक्ष नहीं जीते हैं ? अथवा क्या लुहार की धौंकनी साँस नहीं लेती है ? क्या
रे पशु नहीं खाते हैं और मल-मूत्र नहीं त्यागते हैं ?

एकोनविंश: श्लोक:

श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत्कर्ण पथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः ।। १९ ।।

श्वन् विड्वराह उष्ट्र खरैः, संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत् कर्ण पथ उपेतः, जातु नाम गदाग्रजः ।।

९. कुत्ते	न	५.	नहीं
१०. ग्राम सूकर	यत्	१.	जिसके
११. ऊँट और गधों से भी	कर्णपथ	२.	कान के छिद्र में
१२. गया-बीता है	उपेतः	६.	पहुँचा
७. (वह) मनुष्य (रूपधारी)	जातु नाम	४.	कभी भी
८. पशु	गदाग्रजः ।।	३.	भगवान् श्रीकृष्ण का

जिसके कान के छिद्र में भगवान् श्रीकृष्ण का नाम कभी भी नहीं पहुँचा, वह मनुष्य-पशु कुत्ते, ग्राम-सूकर, ऊँट और गधों से भी गया-बीता है ।

विंश: श्लोक:

बिले बतोरुक्रमविक्रमान् ये, न शृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वासती दार्दुरिकेव सूत, न चोपगायत्युरुगायगाथाः ।। २०

बिले बत उरुक्रम विक्रमान् ये, न शृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वा असती दार्दुरिका इव सूत, न च उपगायति उरुगाय गाथाः ।।

९. बिल (हैं)	असती	१८.	मिथ्या (है)
८. खेद है (वे)	दार्दुरिका	१६.	मेढक की जीभ के
२. भगवान् श्रीहरि के	इव	१७.	समान
३. लीला चरित को	सूत,	१.	हे सूत जी !
६. जो	न	१३.	नहीं
४. नहीं सुनने वाले	च	१०.	तथा (जो)
७. दोनों कान (हैं)	उपगायति	१४.	गान करती है (वह)
५. मनुष्य के	उरुगाय	११.	भगवान् श्रीकृष्ण की
१५. जीभ	गाथाः ।।	१२.	लीलाओं का

सूत जी ! भगवान् श्रीहरि के लीला-चरित को नहीं सुनने वाले मनुष्य के जो दो... खेद है; वे बिल हैं तथा जो भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान नहीं करती ...भ मेढक की जीभ के समान मिथ्या है ।

एकविंशः श्लोकः

भारः परं पट्टकिरीटजुष्ट - मप्युत्तमाङ्गं न नमेन्मुकुन्दम् ।
शावौ करौ नो कुरुतः सपर्यां, हरेर्लसत्काञ्चनकङ्कणौ वा ।।२१

भारः परम् पट्ट किरीट जुष्टम्, अपि उत्तमाङ्गम् न नमेत् मुकुन्दम् ।
शावौ करौ नो कुरुतः सपर्याम्, हरेः लसत् काञ्चन कङ्कणौ वा ।।

१०. बोझ है	**शावौ**	२०.	मुर्दे के (हाथ हैं)
६. बहुत बड़ा	**करौ**	१५.	दोनों हाथ (यदि)
५. रेशमी वस्त्र और	**नो**	१८.	नहीं
६. मुकुट से	**कुरुतः**	१९.	करते हैं (तब वे)
७. सुशोभित होते पर	**सपर्याम्,**	१७.	सेवा
८. भी	**हरेः**	१६.	भगवान् श्रीकृष्ण क
१. (मनुष्य का) सिर	**लसत्**	१४.	भूषित
३. नहीं	**काञ्चन**	१२.	सुवर्ण के
४. झुका (तो वह)	**कङ्कणौ**	१३.	कंगन से
२. भगवान् श्रीहरि के (चरणों में)	**वा ।।**	११.	उसी प्रकार

मनुष्य का सिर भगवान् श्री हरि के चरणों में नहीं झुका तो वह रेशमी वस्त्र और सुशोभित होने पर भी बहुत बड़ा बोझ है । उसी प्रकार सुवर्ण के कंगन से भूषित दो यदि भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा नहीं करते हैं, तब वे मुर्दे के हाथ हैं ।

द्वाविंशः श्लोकः

बर्हायिते ते नयने नराणां, लिङ्गानि विष्णोर्न निरीक्षतो ये ।
पादौ नृणां तौ द्रुमजन्मभाजौ, क्षेत्राणि नानुव्रजतो हरेर्यौ ।।२२।।

बर्हायिते ते नयने नराणाम् लिङ्गानि विष्णोः न निरीक्षतः ये ।
पादौ नृणाम् तौ द्रुम जन्म भाजौ, क्षेत्राणि न अनुव्रजतः हरेः यौ ।।

७. मोर के पंख की आँख के समान है	**पादौ**	१३.	पैर
६. वे नेत्र	**नृणाम् तौ**	१२.	मनुष्यों के वे दोनों
५. मनुष्यों के	**द्रुम जन्मभाजौ**	१४.	पेड़ के जीवन के समा
३. स्थानों का	**क्षेत्राणि**	१०.	तीर्थ क्षेत्रों की
२. भगवान् विष्णु के	**न अनुव्रजतः**	११.	यात्रा नहीं करते
४. दर्शन नहीं करते	**हरेः**	६.	भगवान् श्री हरि के
१. जो (नेत्र)	**यौ ।।**	८.	जो (पैर)

नेत्र भगवान् विष्णु के स्थानों का दर्शन नहीं करते, मनुष्यों के वे नेत्र मोर के प ंख के समान हैं । तथा जो पैर भगवान् श्रीहरि के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा नहीं नुष्यों के वे दोनों पैर पेड़ के जीवन के समान हैं ।

त्रयोविंशः श्लोकः

जीवञ्छवो भागवताङ्घ्रिरेणुं, न जातु मर्त्योऽभिलभेत यस्तु ।
श्रीविष्णुपद्या मनुजस्तुलस्याः, श्वसञ्छवो यस्तु न वेद गन्धम् ॥२३॥

पदच्छेद—

जीवन् शवः भागवत अङ्घ्रि रेणुम्, न जातु मर्त्यः अभिलभेत यः तु ।
श्री विष्णुपद्याः मनुजः तुलस्याः, श्वसन् शवः यः तु न वेद गन्धम् ॥

शब्दार्थ—

जीवन् शवः	७.	जीता हुआ मुर्दा (है)	श्रीविष्णुपद्याः	१२.	भगवान् विष्णु के चरणों
भागवत	३.	भगवद्भक्तों के	मनुजः	११.	मनुष्य ने
अङ्घ्रिरेणुम्,	४.	चरणों की धूली को	तुलस्याः,	१३.	तुलसी की
न जातु	५.	कभी भी नहीं	श्वसन् शवः	१६	साँस लेता हुआ मुर्दा है
मर्त्यः	२.	मनुष्य ने	यः	१०.	जिस
अभिलभेत	६.	लगाया (वह)	तु	९.	इसी प्रकार
यः	१.	जिस	न वेद	१५.	अनुभव नहीं किया (वह)
तु	८.	तथा	गन्धम् ॥	१४.	सुगन्ध का

श्लोकार्थ—जिस मनुष्य ने भगवद्भक्तों के चरणों की धूली को कभी भी नहीं लगाया, वह जीता मुर्दा है तथा इसी प्रकार जिस मनुष्य ने भगवान् विष्णु के चरणों की तुलसी की सुगन्ध अनुभव नहीं किया, वह साँस लेता हुआ मुर्दा है ।

चतुर्विंशः श्लोकः

तदश्मसारं हृदयं बतेदं, यद् गृह्यमाणैर्हरिनामधेयैः ।
न विक्रियेताथ यदा विकारो, नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्षः ॥२४॥

पदच्छेद—

तद् अश्मसारम् हृदयम् बत इदम्, यद् गृह्यमाणैः हरि नामधेयैः ।
न विक्रियेत अथ यदा विकारः, नेत्रे जलम् गात्ररुहेषु हर्षः ॥

शब्दार्थ—

तद्	८.	वह (हृदय)	न विक्रियेत	५.	पिघलता नहीं
अश्मसारम्	९.	इस्पात लोहा (है)	अथ	१०.	तथा
हृदयम्	२.	हृदय	यदा	११.	जब (हृदय)
बत	६.	खेद है	विकारः	१२.	पिघलता है (तब)
इदम्,	७	इस प्रकार का	नेत्रे	१३.	आँखों में
यद्	१	जो	जलम्	१४.	आँसू और
गृह्यमाणैः	४.	कीर्तन से	गात्ररुहेषु	१५.	रोमावलियों में
हरिनामधेयैः ।	३.	भगवन्नाम	हर्षः ॥	१६.	आनन्द (छा जाता है)

श्लोकार्थ—जो हृदय भगवन्नाम-कीर्तन से पिघलता नहीं, खेद है, इस प्रकार का वह हृदय इस्पात लोहा है । तथा जब हृदय पिघलता है, तब आँखों में आँसू और रोमावलियों में आनन्द छा जाता है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

अथाभिधेह्यङ्ग मनोऽनुकूलं, प्रभाषसे भागवतप्रधानः ।
यदाह वैयासकिरात्मविद्या—विशारदो नृपतिं साधु पृष्टः ।। २५ ।।

पदच्छेद—

अथ अभिधेहि अङ्ग मनः अनुकूलम्, प्रभाषसे भागवत प्रधानः ।
यद् आह वैयासकिः आत्म विद्या, विशारदः नृपतिम् साधु पृष्टः ।।

शब्दार्थ—

अथ	५.	अतः	**यद्**	१४.	जो
अभिधेहि	१६.	कहिये	**आह**	१५.	कहा था (उसे आप)
अङ्ग	१.	हे सूत जी ! (आप)	**वैयासकिः**	१०.	शुकदेव मुनि ने
मनः	२.	मन को	**आत्मविद्या,**	८.	अध्यात्म ज्ञान के
अनुकूलम्	३.	भाने वाली (बात)	**विशारदः**	९.	पण्डित
प्रभाष से	४.	कह रहे हैं	**नृपतिम्**	११.	राजा के
भागवत	७.	भगवद्भक्त (और)	**साधु**	१२.	सुन्दर
प्रधानः ।	६.	परम	**पृष्टः ।**	१३.	प्रश्नों पर

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आप मन को भानेवाली बात कह रहे हैं; अतः परम भगवद्भक्त और अध्यात्म-ज्ञान के पण्डित शुकदेव मुनि ने राजा के सुन्दर प्रश्नों पर जो कहा था; उसे आप कहिये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
तृतीयः अध्यायः ।।३।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
द्वितीय स्कन्धः
अथ चतुर्थः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

वैयासकेरिति वचस्तत्त्वनिश्चयमात्मनः ।
उपधार्य मतिं कृष्णे औत्तरेयः सतीं व्यधात् ॥ १ ॥

वैयासकेः इति वचः, तत्त्व निश्चयम् आत्मनः ।
उपधार्य मतिम् कृष्णे, औत्तरेयः सतीम् व्यधात् ॥

४.	शुकदेव मुनि के	उपधार्य	७.	धारण करके
५	इस	मतिम्	१०.	बुद्धि को
६	वचन को	कृष्णे	११.	भगवान् श्री
२	भगवत्स्वरूप का	औत्तरेयः	१.	उत्तरा-पुत्र र
३.	ज्ञान कराने वाले	सतीम्	९.	निर्मल
८.	अपनी	व्यधात् ॥	१२.	लगा दिया

-पुत्र राजा परीक्षित् ने भगवत्स्वरूप का ज्ञान कराने वाले शुकदेव मुनि
ारण करके अपनी निर्मल बुद्धि को भगवान् श्रीकृष्ण में लगा दिया ।

द्वितीयः श्लोकः

आत्मजायासुतागारपशुद्रविणबन्धुषु ।
राज्ये चाविकले नित्यं विरूढां ममतां जहौ ॥ २ ॥

आत्मन् जाया सुत आगार, पशु द्रविण बन्धुषु ।
राज्ये च अविकले नित्यम्, विरूढाम् ममताम् जहौ ॥

१.	(राजा परीक्षित् ने) देह	राज्ये	१०.	राज्य में
२.	पत्नी	च	८.	और
३.	पुत्र	अविकले	९.	सम्पूर्ण
४.	घर	नित्यम्	११	सदा
५	पशु	विरूढाम्	१२.	लगी हुई
६	धन	ममताम्	१३.	ममता को
७.	भाई-बन्धु	जहौ ॥	१४.	त्याग दिया

परीक्षित् ने देह, पत्नी, पुत्र, घर, पशु, धन, भाई-बन्धु और सम्पूर्ण रा
ममता को त्याग दिया ।

तृतीयः श्लोकः

पप्रच्छ चेममेवार्थं यन्मां पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्णानुभावश्रवणे श्रद्दधानो महामनाः ॥३॥

पप्रच्छ च इमम् एव अर्थम्, यत् माम् पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्ण अनुभाव श्रवणे, श्रद्दधानः महामनाः ॥

१०. पूछा था		पृच्छथ	१४.	पूछ रहे हैं
१२. आप लोग		सत्तमाः ।	१.	हे शौनकादि ऋषिय
७. इस		कृष्ण	२.	भगवान् श्री कृष्ण
८. ही		अनुभाव	३.	लीलाओं को
९. प्रश्न को		श्रवणे	४.	सुनने में
११. जिसे		श्रद्दधानः	५.	श्रद्धा रखने वाले
१३. मुझसे		महामनाः ॥	६.	मनस्वी राजा परी

शौनकादि ऋषियों ! भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनने में श्रद्धा रखने वाले
जा परीक्षित् ने इसी प्रश्न को पूछा था, जिसे आप लोग मुझसे पूछ रहे हैं ।

चतुर्थः श्लोकः

संस्थां विज्ञाय संन्यस्य कर्म त्रैवर्गिकं च यत् ।
वासुदेवे भगवति आत्मभावं दृढं गतः ॥४॥

संस्थाम् विज्ञाय संन्यस्य, कर्म त्रैवर्गिकम् च यत् ।
वासुदेवे भगवति, आत्म भावम् दृढम् गतः ॥

१. (राजा परीक्षित् अपनी) मृत्यु को	यत्	४.	जो
२. जानकर	वासुदेवे	९.	वासुदेव में
७. छोड़कर	भगवति	८.	भगवान्
६. पुरुषार्थ हैं (उन्हें)	आत्मभावम्	११.	अनन्य भाव को
५. धर्म, अर्थ और काम तीनों	दृढम्	१०.	अत्यन्त
३. तथा	गतः ॥	१२.	प्राप्त हो गये थे

जा परीक्षित् अपनी मृत्यु को जानकर तथा जो धर्म, अर्थ और काम तीन पुरुषार्थ
डकर भगवान वासुदेव में अत्यन्त अनन्य-भाव को प्राप्त हो गये थे ।

पञ्चमः श्लोकः

समीचीनं वचो ब्रह्मन् सर्वज्ञस्य तवानघ ।
तमो विशीर्यते मह्यं हरेः कथयतः कथाम् ।। ५ ।।

समीचीनम् वचः ब्रह्मन्, सर्वज्ञस्य तव अनघ ।
तमः बिशीर्यते मह्यम्, हरेः कथयतः कथाम् ।।

६. बड़ा उत्तम है	समीचीनम्	तमः	११. (मेरा) अज्ञान
५. उपदेश	वचः	विशीर्यते	१२. दूर होता जा रह
१. हे ब्रह्मज्ञानी	ब्रह्मन्	मह्यम्	७. मुझे
३. सब कुछ जानने वाले	सर्वज्ञस्य	हरेः	८. भगवान् श्रीकृष्ण
४. आपका	तव	कथयतः	१०. सुनाते रहने से
२. निष्पाप शुकदेव जी !	अनघ	कथाम् ।।	९. लीलाओं को

ब्रह्मज्ञानी निष्पाप शुकदेव जी ! सब कुछ जानने वाले आपका उपदेश बड़ा उत्त
ावान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनाते रहने से मेरा अज्ञान दूर होता जा रहा

षष्ठः श्लोकः

भूय एव विवित्सामि भगवानात्ममायया ।
यथेदं सृजते विश्वं दुर्विभाव्यमधीश्वरैः ।।६।।

भूयः एव विवित्सामि, भगवान् आत्म मायया ।
यथा इदम् सृजते विश्वम्, दुर्विभाव्यम् अधीश्वरैः ।।

१०. फिर	भूयः	यथा	४. जिस प्रकार
११. (उसे) ही (मैं)	एव	इदम्	५. इस
१२. जानना चाहता हूँ	विवित्सामि	सृजते	७. रचते हैं (जिसे)
१. भगवान	भगवान्	विश्वम्	६. ब्रह्माण्ड को
२. अपनी	आत्म	दुर्विभाव्यम्	९. नहीं जान सकते
३. माया से	मायया	अधीश्वरैः ।।	८. ब्रह्मादि लोकपाल

ावान् अपनी माया से जिस प्रकार इस ब्रह्माण्ड को रचते हैं, जिसे ब्रह्मादि ल
ो जान सकते फिर उसे ही मैं जानना चाहता हूँ ।।

सप्तमः श्लोकः

यथा गोपायति विभुर्यथा संयच्छते पुनः ।
यां यां शक्तिमुपाश्रित्य पुरुशक्तिः परः पुमान् ।
आत्मानं क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।। ७ ।।

यथा गोपायति विभुः यथा संयच्छते पुनः ।
याम् याम् शक्तिम् उपाश्रित्य पुरु शक्तिः परः पुमान् ।
आत्मामम् क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।।

५.	जिस प्रकार (जगत् की)	पुरु शक्तिः	१.	महान् शक्तिशाली
६.	रक्षा करते हैं	परः	३.	परात्पर
२.	व्यापक (एवम्)	पुमान् ।	४.	परमात्मा
७.	जिस प्रकार	आत्मानम्	१३.	अपने को
८.	संहार करते हैं	क्रीडयन्	१४.	खिलौना बनाकर
९.	फिर से	क्रीडन्	१५.	खेलते हुए
१०.	जिस-जिस	करोति	१६.	सृष्टि करते हैं
११.	शक्ति के	विकरोति	१८.	संहार करते हैं (उ
१२.	सहारे	च ।।	१७.	तथा

हान् शक्तिशाली, व्यापक एवं परात्पर परमात्मा जिस प्रकार जगत् की रक्षा
जस प्रकार संहार करते हैं, फिर से जिस-जिस शक्ति के सहारे अपने को खिलौन
खेलते हुए सृष्टि करते हैं तथा संहार करते हैं, उसे बतावें ।

अष्टमः श्लोकः

नूनं भगवतो ब्रह्मन् हरेद्भुतकर्मणः ।
दुर्विभाव्यमिवाभाति कविभिश्चापि चेष्टितम् ।। ८ ।।

नूनम् भगवतः ब्रह्मन्, हरेः अद्भुत कर्मणः ।
दुर्विभाव्यम् इव आभाति, कविभि, च अपि चेष्टितम्: ।।

७.	निश्चय ही	दुर्भाव्यम्	१०.	कठिनाई से जानने
४.	भगवान्	इव	११.	भाँति
१.	हे शुकदेव जी !	आभाति	१२.	प्रतीत होती हैं
५.	श्रीकृष्ण की	कविभिः	८.	विद्वानों के द्वारा
२.	अलौकिक	च अपि	९.	भी
३.	लीलाधारी	चेष्टितम् ।।	६.	लीलायें

हे शुकदेव जी ! अलौकिक लीलाधारी भगवान् श्रीकृष्ण की लीलायें निश्चय ही
द्वारा भी कठिनाई से जानने योग्य की भाँति प्रतीत होती हैं ।

नवम: श्लोक:

यथा गुणांस्तु प्रकृतेर्युगपत् क्रमशोऽपि वा ।
बिभर्त्ति भूरिशस्त्वेकः कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ॥९॥

पदच्छेद—

यथा गुणान् तु प्रकृतेः, युगपत् क्रमशः अपि वा ।
बिभर्ति भूरिशः तु एकः, कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१३.	किस प्रकार	बिभर्ति	१४.	धारण करते हैं
गुणान्	९.	गुणों को	भूरिशः	३.	अनेक
तु	१.	हे शुकदेव जी !	तु	७.	ही
प्रकृतेः	८.	प्रकृति के	एकः	६.	अकेले
युगपत्	१०.	एक साथ	कुर्वन्	५.	करते हुए (भगवान्)
क्रमशः	१२.	एक-एक करके	कर्माणि	४.	लीलाओं को
अपिवा ।	११.	अथवा	जन्मभिः ॥	२.	अवतारों के द्वारा

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! अवतारों के द्वारा अनेक लीलाओं को करते हुए भगवान् अकेले ही प्रकृति के गुणों को एक साथ अथवा एक-एक करके किस प्रकार धारण करते हैं ?

दशम: श्लोक:

विचिकित्सितमेतन्मे ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः परस्मिंश्च भवान्खलु ॥१०॥

पदच्छेद—

विचिकित्सितम् एतद् मे, ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः, परस्मिन् च भवान् खलु ॥

शब्दार्थ—

विचिकित्सितम्	१०.	सन्देह को	शाब्दे ब्रह्मणि	४.	शब्द ब्रह्म को
एतद्	९.	इस	निष्णातः	७.	जानने वाले हैं (अतः)
मे	८.	मेरे	परस्मिन्	६.	परब्रह्म को
ब्रवीतु	१२.	दूर करें	च	५.	और
भगवान्	१.	हे मुनिवर !	भवान्	२.	आप
यथा ।	११.	भलीभाँति	खलु ॥	३.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आप निश्चय ही शब्द-ब्रह्म को और परब्रह्म को जानने वाले हैं; अतः मेरे इस सन्देह को भलीभाँति दूर करें ।

एकादशः श्लोकः

इत्युपामन्त्रितो राज्ञा गुणानुकथने हरेः ।
हृषीकेशमनुस्मृत्य प्रतिवक्तुं प्रचक्रमे ।।११।।

इति उपामन्त्रितः राज्ञा, गुण अनुकथने हरेः ।
हृषीकेशम् अनुस्मृत्य, प्रतिवक्तुम् प्रचक्रमे ।।

५.	इस प्रकार	हरेः ।	२.	भगवान् श्रीकृष्ण के
६.	निवेदन करने पर(शुकदेव जी)	हृषीकेशम्	७.	इन्द्रियाधीश श्रीकृ
१.	राजा परीक्षित् के द्वारा	अनुस्मृत्य	८.	स्मरण करके
३.	गुणों को	प्रतिवक्तुम्	९.	कहना
४.	कहने के लिए	प्रचक्रमे ।।	१०.	प्रारम्भ किया

राजा परीक्षित् के द्वारा भगवान् श्रीकृष्ण के गुणों को कहने के लिए इस प्रका
रने पर शुकदेव जी ने इन्द्रियाधीश भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करके कहना
किया ।

द्वादशः श्लोकः

च---

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सदुद्भवस्थाननिरोधलीलया ।
गृहीतशक्तित्रितयाय देहिना---मन्तर्भवायानुपलक्ष्यवर्त्मने ।।१२

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सद् उद्भव स्थान निरोध लीलया ।
गृहीत शक्ति त्रितयाय देहिनाम्, अन्तः भवाय अनुपलक्ष्य वर्त्मने ।।

१६.	प्रणाम है	गृहीत	१२.	धारण करने वाले
१३.	परात्पर	शक्ति	११.	शक्तियों को
१४.	परब्रह्म को	त्रितयाय	१०.	सत्त्व, रजस् और
१५.	बार-बार	देहिनाम्,	१.	प्राणियों के
६.	जगत् की उत्पत्ति	अन्तः	२.	अन्तःकरण में
७.	स्थिति और	भवाय	३.	रहने वाले
८.	प्रलय की	अनुपलक्ष्य	४.	अज्ञात
९.	लीला करने वाले	वर्त्मने ।।	५.	स्वरूप वाले

ाणियों के अन्तःकरण में रहने वाले, अज्ञात स्वरूप वाले, जगत् की उत्पत्ति, सि
लय की लीला करने वाले; सत्त्व, रजस् और तमस् शक्तियों को धारण क
रात्पर परब्रह्म को बार-बार प्रणाम है ।

त्रयोदश: श्लोक:

भूयो नमः सद्वृजिनच्छिदेऽसता-मसम्भवायाखिलसत्त्वमूर्तये ।
पुंसां पुनः पारमहंस्य आश्रमे, व्यवस्थितानामनुमृग्यदाशुषे ।।१३।।

भूयः नमः सद् वृजिन छिदे असताम्, असम्भवाय अखिल सत्त्व मूर्तये ।
पुंसाम् पुनः पारमहंस्ये आश्रमे, व्यवस्थितानाम् अनुमृग्य दाशुषे ।।

१६. बार-बार प्रणाम है		**मूर्तये ।**	८. रूपों में स्थित
१. सज्जनों के		**पुंसाम्**	१३. मनुष्यों के
२. दु:ख को		**पुनः**	९. तथा
३. दूर करने वाले		**पारमहंस्ये**	१०. परमहंस
४. दुष्टों की		**आश्रमे,**	११. आश्रम में
५. उत्पत्ति को रोकने वाले		**व्यवस्थितानाम्**	१२. रहने वाले
६. सम्पूर्ण		**अनुमृग्य**	१४. मनोरथों को
७. प्राणियों के		**दाशुषे ।।**	१५. पूर्ण करनेवाले(परमात्मा

ज्जनों के दु:ख को दूर करने वाले, दुष्टों की उत्पत्ति को रोकने वाले, सम्पूर्ण प्राणियों के स्थित तथा परमहंस आश्रम में रहने वाले मनुष्यों के मनोरथों को पूर्ण करने रमात्मा को बार-बार प्रणाम है।

चतुर्दश: श्लोक:

नमो नमस्तेऽस्त्वृषभाय सात्वतां, विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा, स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ।।१४।।

नमः नमः ते अस्तु ऋषभाय सात्वताम्, विदूर काष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्त साम्य अतिशयेन राधसा, स्व धामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ।।

८. बार-बार	**कुयोगिनाम् ।**	३. भक्तिहीन हठयोगियो से
९. प्रणाम	**निरस्त**	१४. रहित (आप)
७. आपको	**साम्य**	१३. (अपनी) बराबरी से
१०. है	**अतिशयेन**	११. बहुत अधिक
२. वत्सल (एवं)	**राधसा,**	१२. तेज के कारण
१. भक्तों के	**स्व धामनि**	१६. अपने धाम में
५. दूर	**ब्रह्मणि**	१५. ब्रह्मस्वरूप
६. रहने वाले	**रंस्यते**	१७. विहार करते हैं(अतः आ
४. बहुत	**नमः ।।**	१८. प्रणाम है

क्तों के वत्सल एवं भक्तिहीन हठयोगियों से बहुत दूर रहने वाले आपको बार-बार प्र । बहुत अधिक तेज के कारण अपनी बराबरी से रहित आप ब्रह्म-स्वरूप अपने धा हार करते हैं अत: आपको प्रणाम है।

पञ्चदशः श्लोकः

यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं, यद्वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् ।
लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥१५॥

पदच्छेद— **यद कीर्तनम् यद् स्मरणम् यद् ईक्षणम्, यद वन्दनम् यद् श्रवणम् यद् अर्हणम् । लोकस्य सद्यः विधुनोति कल्मषम्, तस्मै सुभद्र श्रवसे नमः नमः ॥**

शब्दार्थ—

यद् कीर्तनम्	१.	जिनका कीर्तन	**सद्यः**	९.	तत्काल
यद् स्मरणम्	२.	जिनका स्मरण	**विधुनोति**	१०	नष्ट कर देता है
यद् ईक्षणम्,	३.	जिनका दर्शन	**कल्मषम्,**	८.	पापों को
यद् वन्दनम्	४.	जिनका वन्दन	**तस्मै**	११.	उन
यद् श्रवणम्	५.	जिनका श्रवण (और)	**सुभद्र**	१२.	पुण्य
यद् अर्हणम् ।	६.	जिनका पूजन	**श्रवसे**	१३.	कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण
लोकस्य	७.	जीवों के	**नमः नमः ॥**	१४.	बार-बार नमस्कार है

श्लोकार्थ—जिनका कीर्तन, जिनका स्मरण, जिनका दर्शन, जिनका वन्दन, जिनका श्रवण और जि पूजन जीवों के पापों को तत्काल नष्ट कर देता है; उन पुण्य कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण बार-बार नमस्कार है ।

षोडशः श्लोकः

विचक्षणा यच्चरणोपसादनात्, सङ्गं व्युदस्योभयतोऽन्तरात्मनः ।
विन्दन्ति हि ब्रह्मगतिं गतक्लमा-स्तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥१६॥

पदच्छेद— **विचक्षणाः यद् चरण उपसादनात्, सङ्गम् व्युदस्य, उभयतः अन्तरात्मनः । विन्दन्ति हि ब्रह्म गतिम् गत क्लमाः, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमः नमः ॥**

शब्दार्थ—

विचक्षणाः	१.	विद्वान् लोग	**हि**	११.	ही
यद्	२.	जिन (भगवान्) के	**ब्रह्म**	१२.	ब्रह्म
चरण	३.	चरणों की	**गतिम्**	१३.	लोक को
उपसादनात्,	४.	सन्निधि पाने के बाद	**गत**	१०.	विना
सङ्गम्	७.	आसक्ति को	**क्लमाः,**	९.	परिश्रम के
व्युदस्य	८.	समाप्त करके	**तस्मै**	१५.	उन
उभयतः	६.	इस लोक और परलोक की	**सुभद्र**	१६.	मंगलमय
अन्तरात्मनः ।	५.	शुद्ध हृदय से	**श्रवसे**	१७.	कीर्ति वाले भगवान श्रीक
विन्दन्ति	१४.	प्राप्त करते हैं	**नमः नमः ॥**	१८.	बार-बार प्रणाम है

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग जिन भगवान् के चरणों की सन्निधि पाने के बाद शुद्ध हृदय से इस लोक परलोक की आसक्ति को समाप्त करके परिश्रम के विना ही ब्रह्म लोक को प्राप्त कर उन मंगलमय कीर्ति वाले भगवान श्रीकृष्ण को बार-बार प्रणाम है ।

क्षेम न विन्दन्ति विना यदर्पणं, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।१७।।

पदच्छेद तपस्विन दान परा यशस्विन मनस्विन मन्त्र विद सुमङ्गला ।
क्षेमम न विन्दन्ति विना यद अर्पणम तस्मै सुभद्र श्रवसे नम नम ।।

शब्दार्थ—

तपस्विनः	१.	तपस्वी	विन्दन्ति	१३.	प्राप्त कर सकते
दान पराः	२.	दानी	विना	१०.	विना
यशस्विनः,	३.	कीर्तिवाले	यद्	८	जिस (भगवान्) में
मनस्विनः	४.	स्वाभिमानी	अर्पणम्,	९.	समर्पण भाव के
मन्त्र	५.	मन्त्रों के	तस्मै	१४	उन
विदः	६.	जानकार (तथा)	सुभद्र	१५.	मंगलमय
सुमङ्गलाः ।	७.	सदाचारी लोग	श्रवसे	१६.	नाम वाले (श्री कृष्ण)
क्षेमम्	११.	कल्याण	नमः	१७.	बार-बार
न	१२.	नहीं	नमः ।।	१८.	प्रणाम है

श्लोकार्थः—तपस्वी, दानी, कीर्तिवाले, स्वाभिमानी, मन्त्रों के जानकार तथा सदाचारी लोग जि भगवान् में समर्पण भाव के विना कल्याण प्राप्त नहीं कर सकते; उन मंगलमय नाम व भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार प्रणाम है ।

अष्टादशः श्लोकः

किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कसा, आभीरकङ्का यवनाः खसादयः ।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः, शुद्ध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ।।१८।।

पदच्छेद— किरात हूण आन्ध्र पुलिन्द पुल्कसाः, आभीरकङ्काः यवनाः खस आदयः ।
ये अन्ये च पापाः यद् उपाश्रय आश्रयाः, शुद्ध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ।।

शब्दार्थ—

किरात हूण	१.	किरात हूण	च	६.	और
आन्ध्र पुलिन्द	२.	आन्ध्र पुलिन्द	पापाः	१०.	पापी लोग (हैं वे)
पुल्कसाः,	३.	पुल्कस	यद्	११.	जिस (भगवान्) के
आभीर कङ्काः	४.	आभीर कंक	उपाश्रय	१२.	भक्तों की
यवनाः	५.	यवन	आश्रयाः,	१३.	भक्ति से
खस आदयः ।	७.	खस इत्यादि	शुद्ध्यन्ति	१४.	पवित्र हो जाते हैं
ये	८.	जो	तस्मै	१५.	उन
अन्ये	९.	दूसरे	प्रभविष्णवे	१६.	सर्वशक्तिमान् श्रीहरि को
			नमः ।।	१७.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, कंक, यवन और खस इत्यादि जो दूसरे पा लोग हैं, वे जिस भगवान् के भक्तों की भक्ति से पवित्र हो जाते हैं; उन सर्वशक्तिमा भगवान श्री हरि को नमस्कार है ।

एकोनविंश: श्लोक:

स एष आत्माऽऽत्मवतामधीश्वर–स्त्रयीमयो धर्ममयस्तपोमय: ।
गतव्यलीकैरजशङ्करादिभि-र्वितर्क्यलिङ्गो भगवान् प्रसीदताम् ॥१९॥

स: एष: आत्मा आत्मवताम् अधीश्वर:, त्रयीमय: धर्ममय: तपोमय: ।
गत: व्यलीकै: अज शङ्कर आदिभि:, वितर्क्य लिङ्ग: भगवान् प्रसीदताम् ॥

स:	१४. वे	**गत**	९. रहित होकर
एष:	१. ये (भगवान्)	**व्यलीकै:**	८. कपट भाव से
आत्मा	३. आत्मा	**अज शङ्कर**	१०. ब्रह्मा, शिव
आत्मवताम्	२. ज्ञानियों की	**आदिभि:,**	११. इत्यादि देवताओं द्वारा
अधीश्वर:,	४. स्वामी	**वितर्क्य**	१२. आश्चर्यपूर्वक
त्रयीमय:	५. वेद मूर्ति	**लिङ्ग:**	१३. ज्ञात होने वाले
धर्ममय:	६. धर्म स्वरूप (और)	**भगवान्**	१५. भगवान् श्रीकृष्ण
तपोमय:।	७. तप रूप (हैं)	**प्रसीदताम्॥**	१६. प्रसन्न होवें

भगवान् ज्ञानियों की आत्मा, स्वामी, वेदमूर्ति, धर्मस्वरूप और तप रूप हैं। क रहित होकर ब्रह्मा, शिव इत्यादि देवताओं के द्वारा आश्चर्यपूर्वक ज्ञात हो गवान् श्रीकृष्ण प्रसन्न होवें।

विंश: श्लोक:

श्रिय: पतिर्यज्ञपति: प्रजापति-र्धियां पतिर्लोकपतिर्धरापति: ।
पतिर्गतिश्चान्धकवृष्णिसात्वतां, प्रसीदतां मे भगवान् सतां पति: ॥२०॥

श्रिय: पति: यज्ञपति: प्रजापति:, धियाम् पति: लोकपति: धरा पति: ।
पति: गति: च अन्धक वृष्णि सात्वताम्, प्रसीदताम् मे भगवान् सताम् पति: ॥

श्रिय: पति:	१. लक्ष्मी के स्वामी	**च**	१२. तथा
यज्ञपति:	२. यज्ञों के भोक्ता	**अन्धक**	७. अन्धक (और)
प्रजापति:,	३. प्रजा के पालक	**वृष्णि**	८. वृष्णि कुल के
धियाम् पति:	४. बुद्धि प्रदाता	**सात्वताम्,**	९ यादवों के
लोकपति:	५ संसार के रक्षक	**प्रसीदताम्**	१६. प्रसन्न होवें
धरा पति:।	६. पृथ्वी के शासक	**मे**	१५. मेरे पर
पति:	१०. रक्षक (एवम्)	**भगवान्**	१४. भगवान् श्रीकृष्ण
गति:	११. शरण दाता	**सताम् पति:॥**	१३. सन्तों के स्वामी

क्ष्मी के स्वामी, यज्ञों के भोक्ता, प्रजा के पालक, बुद्धि प्रदाता, संसार के रक्षक ासक, अन्धक और वृष्णि कुल के यादवों के रक्षक एवम् शरण तथा सन्तों ागवान् श्रीकृष्ण मेरे पर प्रसन्न होवें।

एकविंश: श्लोक:

यदङ्घ्र्यभिध्यानसमाधिधौतया, धियानुपश्यन्ति हि तत्त्वमात्मनः ।
वदन्ति चैतत् कवयो यथारुचं, स मे मुकुन्दो भगवान् प्रसीदताम् ।।२१।।

यद् अङ्घ्रि अभिध्यान समाधि धौतया, धिया अनुपश्यन्ति हि तत्त्वम् आत्मनः ।
वदन्ति च एतत् कवयः यथारुचम्, सः मे मुकुन्दः भगवान् प्रसीदताम् ।।

२.	जिनके	वदन्ति	१५.	वर्णन करते हैं
३.	चरणों के	च	१२.	और
४.	निरन्तर ध्यान की	एतत्	१४.	उसका
५.	समाधि से	कवयः	१.	विद्वान् लोग
६.	निर्मल	यथारुचम्,	१३.	अपनी रुचि के अनुसा
७.	ज्ञान के द्वारा	सः	१६.	वे
११.	दर्शन करते हैं	मे	१९.	मेरे पर
८.	ही	मुकुन्दः	१८.	श्रीकृष्ण
१०.	स्वरूप का	भगवान्	१७.	भगवान्
९.	आत्मा के	प्रसीदताम् ।।	२०.	प्रसन्न होवें

विद्वान् लोग जिनके चरणों के निरन्तर ध्यान की समाधि से निर्मल ज्ञान के द्वारा ही के स्वरूप का दर्शन करते हैं और अपनी रुचि के अनुसार उसका वर्णन करते हैं; वे भ. श्रीकृष्ण मेरे पर प्रसन्न होवें ।

द्वाविंश: श्लोक:

प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती, वितन्वताजस्य सतीं स्मृतिं हृदि ।
स्वलक्षणा प्रादुरभूत् किलास्यतः, स मे ऋषीणामृषभः प्रसीदताम् ।।२२।।

प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती, वितन्वता अजस्य सतीम् स्मृतिम् हृदि ।
स्वलक्षणा प्रादुरभूत् किल आस्यतः, सः मे ऋषीणाम् ऋषभः प्रसीदताम् ।।

९.	प्रेरित किया	स्व लक्षणा	१२.	अपने सभी अंगों के सा
२.	जिन्होंने	प्रादुरभूत्	१३.	प्रकट हुई (एवंच)
१.	आदिकाल में	किल	१०.	तदनन्तर (वह देवी)
८	सरस्वती देवी को	आस्यतः,	११,	(ब्रह्मा जी के) मुख से
७.	विस्तार करते हुए	सः	१६.	वे (भगवान् श्रीकृष्ण)
३.	ब्रह्मा के	मे	१७	मेरे पर
५.	पूर्वकल्प की	ऋषीणाम्	१४.	ज्ञानियों में
६.	स्मरण शक्ति का	ऋषभः	१५.	सर्वश्रेष्ठ
४.	हृदय में	प्रसीदताम् ।।	१८.	प्रसन्न होवें

दिकाल में जिन्होंने ब्रह्माजी के हृदय में पूर्वकल्प की स्मरण शक्ति का विस्तार ए सरस्वती देवी को प्रेरित किया । तदनन्तर वह देवी ब्रह्मा जी के मुख से अपने गों के साथ प्रकट हुई । एवंच ज्ञानियों में सर्व-श्रेष्ठ वे भगवान् श्रीकृष्ण मेरे पर प्र वें ।

त्रयोविंशः श्लोकः

भूतैर्महद्भिर्य इमाः पुरो विभुर्निर्माय शेते यदमूषु पूरुषः।
भुङ्क्ते गुणान् षोडश षोडशात्मकः, सोऽलङ्कृषीष्ट भगवान् वचांसि

भूतैः महद्भिः यः इमाः पुरः विभुः, निर्माय शेते यद् अमूषु पूरुषः
भुङ्क्ते गुणान् षोडश षोडश आत्मकः, सः अलङ्कृषीष्ट भगवान् वचांसि नः

४. पंच महाभूतों के द्वारा		पूरुषः।	१०. जीव रूप से
३. महत्तत्त्वादि		भुङ्क्ते	१५. भोग करते हैं
२. जो (भगवान् श्रीकृष्ण)		गुणान्	१४. विषयों का
५. इन		षोडश	१३. सोलह
६. शरीरों को		षोडशआत्मकः,	१२. सोलह इन्द्रियों
१. सर्वव्यापी		सः	१६. वे
७. बनाकर		अलङ्कृषीष्ट	२०. सुशोभित करें
११. विद्यमान रहते हैं (तब)		भगवान्	१७. भगवान् (श्रीकृ
८. जब		वचांसि	१९. वाणी को
९. इनमें		नः॥	१८. मेरी

र्वव्यापी जो भगवान् श्रीकृष्ण महत्तत्त्वादि पंच महाभूतों के द्वारा इन शरीरों
ब इनमें जीवरूप से विद्यमान रहते हैं, तब सोलह इन्द्रियों से सोलह विषयों क
। वे भगवान् श्रीकृष्ण मेरी वाणी को सुशोभित करें।

चतुर्विंशः श्लोकः

नमस्तस्मै भगवते वासुदेवाय वेधसे।
पपुर्ज्ञानमयं सौम्या यन्मुखाम्बुरुहासवम् ॥२४॥

नमः तस्मै भगवते, वासुदेवाय वेधसे।
पपुः ज्ञानमयम् सौम्याः, यद् मुख अम्बुरुह आसवम्॥

५. नमस्कार है	ज्ञानमयम्	११. ज्ञान-कथा का
२. उन	सौम्याः	६. सन्त जन
३. भगवान्	यद्	७. जिनके
१. वासुदेव (के अवतार)	मुख	८. मुख
४. वेद व्यास जी को	अम्बुरुह	९. कमल के
१२. पान करते हैं	आसवम्॥	१०. मकरन्द-स्वरूप

ासुदेव के अवतार उन भगवान् वेदव्यास जी को नमस्कार है। सन्त जन जिनके
; -स्वरूप ज्ञान-कथा का पान करते हैं

पञ्चविंशः श्लोकः

एतदेवात्मभू राजन् नारदाय विपृच्छते ।
वेदगर्भोऽभ्यधात् साक्षाद् यदाह हरिरात्मनः ।।२५।।

पदच्छेद—

एतद् एव आत्मभूः राजन्, नारदाय विपृच्छते ।
वेदगर्भः अभ्यधात् साक्षात्, यद् आह हरिः आत्मनः ।।

शब्दार्थ—

एतद् एव	६.	यही (ज्ञान)	अभ्यधात्	७.	बताया था
आत्मभूः	३.	ब्रह्मा जी ने	साक्षात्	९.	स्वयम्
राजन्	१.	हे परीक्षित् !	यद्	८.	जिसका
नारदाय	४.	देवर्षि नारद के	आह	१२.	उपदेश दिया था
विपृच्छते ।	५.	पूछने पर	हरिः	१०.	भगवान् विष्णु ने
वेद गर्भः	२.	वेदों को धारण करने वाले	आत्मनः ।।	११.	उन्हें

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! वेदों को धारण करने वाले ब्रह्मा जी ने देवर्षि नारद के पूछने पर यही ज्ञान बताया था, जिसका स्वयं भगवान् विष्णु ने उन्हें उपदेश दिया था ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
चतुर्थः अध्यायः ।। ४ ।।

卐

द्वितीयः स्कन्धः

अथ पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

देवदेव नमस्तेऽस्तु भूतभावन पूर्वज ।
तद् विजानीहि यज्ज्ञानमात्मतत्त्वनिदर्शनम् ॥१॥
देवदेव नमः ते अस्तु, भूत भावन पूर्वज ।
तद् विजानीहि यद् ज्ञानम्, आत्मन् तत्त्व निदर्शनम् ॥

४	हे देवाधिदेव (ब्रह्मा जी)	तद्	८.	वह
६	नमस्कार	विजानीहि	१०.	बतावें
५	आपको	यद्	११.	जो
७	है (आप मुझे)	ज्ञानम्,	९.	ज्ञान
१	प्राणियों के	आत्मन्	१२	परमात्मा के
२.	रक्षक (एवं)	तत्त्व	१३.	स्वरूप का
३	(सबके) पितामह	निदर्शनम् ॥	१४.	दर्शन कराने व

यों के रक्षक एवं सबके पितामह हे देवाधिदेव ब्रह्मा जी ! आपको नमस्क
.ह ज्ञान बतावें, जो परमात्मा के स्वरूप का दर्शन कराने वाला है ।

द्वितीयः श्लोकः

यद्रूपं यदधिष्ठानं यतः सृष्टमिदं प्रभो ।
यत्संस्थं यत्परं यच्च तत् तत्त्वं वद तत्त्वतः ॥ २ ॥
यद् रूपम् यद् अधिष्ठानम्, यतः सृष्टम् इदम् प्रभो ।
यद् संस्थम् यद् परम् यद् च, तत् तत्त्वं वद तत्त्वतः ॥

२.	जो	यद्	९.	जिसमें
३	स्वरूप है	संस्थम्	१०.	प्रलय होता है
४.	जो	यद् परम्	११.	जिसके अधीन
५	आधार है	यद्	१३.	जैसा है
६.	जिससे	च	१२.	और
८	सृष्टि हुई है	तत् तत्त्वम्	१४.	उस स्वरूप को
७	यह	वद	१६.	बतावें
१	हे भगवन् । (परमात्मा का)	तत्त्वतः ॥	१५.	सही रूप में

वन् ! परमात्मा का जो स्वरूप है, जो आधार है, जिससे यह सृष्टि हुई है,
है जिसके अधीन है और जैसा है उस स्वरूप को सही रूप में बतावें

तृतीयः श्लोकः

सर्वं ह्येतद् भवान् वेद भूतभव्यभवत्प्रभुः ।
करामलकवद् विश्वं विज्ञानावसितं तव ।।३।।

सर्वम् हि एतद् भवान् वेद, भूत भव्य भवत् प्रभुः ।
कर आमलकवत् विश्वम्, विज्ञान अवसितम् तव ।।

सब कुछ	प्रभुः ।	३.	स्वामी
निश्चय ही	कर	१०.	हाथ में रखे हुए
यह	आमलकवत्	११.	आँवले के समान
आप	विश्वम्,	६.	सारा संसार
जानते हैं	विज्ञान	१३.	ज्ञान-दृष्टि के अन्त
भूत, भविष्य और	अवसितम्	१४.	समाहित है
वर्तमान काल के	तव ।।	१२.	आपकी

ष्य और वर्तमान काल के स्वामी आप निश्चय ही यह सब कुछ जानते
थ मे रखे हुए आँवले के समान आपकी ज्ञान-दृष्टि के अन्दर समाहित है

चतुर्थः श्लोकः

यद्विज्ञानो यदाधारो यत्परस्त्वं यदात्मकः ।
एकः सृजसि भूतानि भूतैरेवात्ममायया ।।४।।

यद् विज्ञानः यद् आधारः, यद् परः त्वम् यद् आत्मकः ।
एकः सृजसि भूतानि, भूतैः एव आत्मन् मायया ।।

(हे स्वामिन् ! आपको) जहाँ से	आत्मकः ।	६.	स्वरूप है (उसे बत
ज्ञान मिला है	एकः	१०.	(आप) अकेले
जो	सृजसि	१६.	सृष्टि करते हैं
आधार है	भूतानि,	१५.	प्राणियों की
जो	भूतैः	१४.	पञ्च महाभूतो के
स्वामी है (तथा)	एव	११	ही
आपका	आत्मन्	१२.	अपनी
जो	मायया ।।	१३.	माया से

न् ! आपको जहाँ से ज्ञान मिला है, जो आधार है, जो स्वामी है तथा
उसे बतावें । आप अकेले ही अपनी माया से पञ्च महाभूतों के द्वारा प्र
रते हैं

पञ्चमः श्लोकः

आत्मन् भावयसे तानि न पराभावयन् स्वयम् ।
आत्मशक्तिमवष्टभ्य ऊर्णनाभिरिवाक्लमः ॥५॥

पदच्छेद—

आत्मन् भावयसे तानि, न पर अभावयन् स्वयम् ।
आत्मन् शक्तिम् अवष्टभ्य, ऊर्णनाभिः इव अक्लमः ॥

शब्दार्थ—

आत्मन्	१.	हे भगवन् ! (आप)	आत्मन्	५.	अपनी
भावयसे	१३.	सृष्टि करते हैं	शक्तिम्	६.	शक्ति के
तानि,	१२.	इन (जीवों) की	अवष्टभ्य,	७.	सहारे
न	३.	नहीं	ऊर्णनाभिः	८.	मकड़ी के
पर	२.	दूसरों को	इव	९.	समान
अभावयन्	४.	कष्ट पहुँचाते हुए	अक्लमः ॥	११.	विना श्रम के
स्वयम् ।	१०	अपने आप			

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप दूसरों को कष्ट न पहुँचाते हुए अपनी शक्ति के सहारे मकड़ी के समान अपने आप विना श्रम के इन जीवों की सृष्टि करते हैं ।

षष्ठः श्लोकः

नाहं वेद परं ह्यस्मिन्नापरं न समं विभो ।
नामरूपगुणैर्भाव्यं सदसत् किञ्चिदन्यतः ॥६॥

पदच्छेद—

न अहम् वेद परम् हि अस्मिन्, न अपरम् न समम् विभो ।
नाम रूप गुणैः भाव्यम्, सत् असत् किञ्चित् अन्यतः ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	नहीं	विभो ।	१	हे प्रभो !
अहम्	१२.	मैं	नाम	३.	नाम
वेद	१४.	जानता (तथा)	रूप	४.	रूप और
परम्	११.	उत्कृष्ट (वस्तु) को	गुणैः	५.	गुणों के द्वारा
हि	१०.	अथवा	भाव्यम्,	६.	अनुभव में आने वाली
अस्मिन्,	२.	इस संसार में	सत्	८.	सत्
न	१५.	न	असत्	९.	असत्
अपरम्	१६.	अधम (और)	किञ्चित्	७.	ऐसी कोई
न समम्	१७.	न मध्यम को (जानता)	अन्यतः ॥	१८.	(जो) दूसरे से (उत्पन्न हुई हो)

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! इस संसार में नाम, रूप और गुणों के द्वारा अनुभव में आने वाली ऐसी कोई सत्, असत् अथवा उत्कृष्ट वस्तु को मैं नहीं जानता तथा न अधम और न मध्यम को जानता; जो दूसरे से उत्पन्न हुई हो । अर्थात् सब कुछ आपसे ही उत्पन्न है

सप्तमः श्लोकः

स भवानचरद् घोरं यत् तपः सुसमाहितः ।
तेन खेदयसे नस्त्वं पराशङ्कां प्रयच्छसि ।।७।।

पदच्छेद—

सः अचरत् घोरम्, यत् तपः सुसमाहितः ।
तेन खेदयसे नः त्वम्, पर आशङ्काम् प्रयच्छसि ।।

शब्दार्थ—

सः	१.	सो जगत् के कारण	तेन	८.	उससे
भवान्	२.	आपने (भी)	खेदयसे	११.	मोह में डाल रहे हैं (और)
अचरत्	६.	की है	नः	१०.	मुझे
घोरम्,	४.	कठिन	त्वम्,	९.	आप
यत्	७.	अतः	पर	१२.	बहुत बड़ा
तपः	५.	तपस्या	आशङ्काम्	१३.	सन्देह
सुसमाहितः ।	३.	एकाग्रमन से	प्रयच्छसि ।।	१४.	उत्पन्न कर रहे हैं

श्लोकार्थ—सो जगत् के कारण आपने भी एकाग्रमन से कठिन तपस्या की है; अतः उससे आप मुझे मोह में डाल रहे हैं और बहुत बड़ा सन्देह उत्पन्न कर रहे हैं।

अष्टमः श्लोकः

एतन्मे पृच्छतः सर्वं सर्वज्ञ सकलेश्वर ।
विजानीहि यथैवेदमहं बुद्धयेऽनुशासितः ।।८।।

पदच्छेद—

एतद् मे पृच्छतः सर्वम्, सर्वज्ञ सकल ईश्वर ।
विजानीहि यथा एव इदम्, अहम् बुद्धये अनुशासितः ।।

शब्दार्थ—

एतद्	५.	इन	विजानीहि	८.	उत्तर देवें
मे	४.	मेरे	यथा	१३.	भली भाँति
पृच्छतः	७.	प्रश्नों का	एव	९.	ताकि
सर्वम्,	६.	सभी	इदम्,	१२.	इसे
सर्वज्ञ	१.	सब कुछ जानने वाले	अहम्	११.	मैं
सकल	२.	(और) सबके	बुद्धये	१४.	जान सकूँ
ईश्वर ।	३.	स्वामी हे प्रभो !	अनुशासितः ।।	१०.	उपदेश पाकर

श्लोकार्थ—सब कुछ जानने वाले और सबके स्वामी हे प्रभो ! मेरे इन सभी प्रश्नों का उत्तर देवें, ताकि उपदेश पाकर मैं इसे भली-भाँति जान सकूँ।

नवमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—

सम्यक् कारुणिकस्येदं वत्स ते विचिकित्सितम् ।
यदहं चोदितः सौम्य भगवद्वीर्यदर्शने ॥ ९ ॥

पदच्छेद—

सम्यक् कारुणिकस्य इदम्, वत्स ते विचिकित्सितम् ।
यद् अहम् चोदितः सौम्य, भगवद् वीर्य दर्शने ॥

शब्दार्थ—

सम्यक्	७.	उचित है	यद्	८.	इससे
कारुणिकस्य	३.	परम दयालु	अहम्	९	मैंने
इदम्,	५.	यह	चोदितः	१२.	प्रेरणा पायी है
वत्स	१.	हे पुत्र !	सौम्य	२.	नारद !
ते	४.	तुम्हारा	भगवद् वीर्य	१०.	भगवान् की लीलाओं के
विचिकित्सितम् ।	६.	सन्देह	दर्शने ॥	११.	वर्णन की

श्लोकार्थ—हे पुत्र नारद ! परम दयालु तुम्हारा यह सन्देह उचित है । इससे मैंने भगवान् की लीलाओं के वर्णन की प्रेरणा पायी है ।

दशमः श्लोकः

नानृतं तव तच्चापि यथा मां प्रब्रवीषि भोः ।
अविज्ञाय परं मत्त एतावत्त्वं यतो हि मे ॥ १० ॥

पदच्छेद—

न अनृतम् तव तद् च अपि, यथा माम् प्रब्रवीषि भोः ।
अविज्ञाय परम् मत्तः, एतावत् त्वम् यतः हि मे ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं (है)	भोः ।	१.	हे नारद ! (तुम)
अनृतम्	९.	असत्य	अविज्ञाय	१४.	न जानकर
तव	५.	तुम्हारा	परम्	१३.	परे परमात्मा को
तद्	६.	वह	मत्तः,	१२.	मुझसे
च	७.	कथन	एतावत्	१८.	ऐसा (समझ रहे हो)
अपि,	८.	भी	त्वम्	१६.	तुम
यथा	३.	जैसा	यतः	११.	क्योंकि
माम्	२.	मुझे	हि	१५.	ही
प्रब्रवीषि	४.	बता रहे हो	मे ॥	१७.	मुझे

श्लोकार्थ—हे नारद ! तुम मुझे जैसा बता रहे हो, तुम्हारा वह कथन भी असत्य नहीं है । क्योंकि मुझसे परे परमात्मा को न जानकर ही तुम मुझे ऐसा समझ रहे हो ।

एकादशः श्लोकः

येन स्वरोचिषा विश्वं रोचितं रोचयाम्यहम् ।
यथार्कोऽग्निर्यथा सोमो यथर्क्षग्रहतारकाः ॥११॥

पदच्छेद—

येन स्व रोचिषा विश्वम्, रोचितम् रोचयामि अहम् ।
यथा अर्कः अग्निः यथा सोमः, यथा ऋक्ष ग्रह तारकाः ॥

शब्दार्थ—

येन	१०.	उस	अर्कः	१.	सूर्य
स्व रोचिषा	११.	स्वयं प्रकाश (परमात्मा) के	अग्निः	२.	अग्नि
विश्वम्,	१३.	संसार को	यथा	४.	और
रोचितम्	१२.	प्रकाश से	सोमः,	३.	चन्द्रमा
रोचयामि	१४.	प्रकाशित करता हूँ	यथा	६.	तथा
अहम् ।	९.	मैं (भी)	ऋक्ष, ग्रह	५.	नक्षत्र, ग्रह
यथा	८.	समान	तारकाः ॥	७.	तारों के

श्लोकार्थ—सूर्य, अग्नि, चन्द्रमा और नक्षत्र, ग्रह तथा तारों के समान मैं भी उस स्वयं-प्रकाश परमात्मा के प्रकाश से संसार को प्रकाशित करता हूँ।

द्वादशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते वासुदेवाय धीमहि ।
यन्मायया दुर्जयया मां ब्रुवन्ति जगद्गुरुम् ॥१२॥

पदच्छेद—

तस्मै नमः भगवते, वासुदेवाय धीमहि ।
यद् मायया दुर्जयया, माम् ब्रुवन्ति जगद् गुरुम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	१.	उन	मायया	८.	माया के कारण (लोग)
नमः	४.	नमस्कार करते हैं (और उनका)	दुर्जयया,	७.	अजेय
भगवते,	२.	भगवान्	माम्	९.	मुझे
वासुदेवाय	३	वासुदेव को (हम)	ब्रुवन्ति	१२.	कहते हैं
धीमहि ।	५.	ध्यान करते हैं	जगद्	१०	संसार का
यद्	६.	जिनकी	गुरुम् ॥	११.	पितामह

श्लोकार्थ—उन भगवान् वासुदेव को हम नमस्कार करते हैं और उनका ध्यान करते हैं; जिनकी अजेय माया के कारण लोग मुझे संसार का पितामह कहते हैं।

त्रयोदशः श्लोकः

विलज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया ।
विमोहिता विकत्थन्ते ममाहमिति दुर्धियः ॥ १३ ॥

पदच्छेद—

विलज्जमानया यस्य, स्थातुम् ईक्षा पथे अमुया ।
विमोहिताः विकत्थन्ते, मम अहम् इति दुर्धियः ॥

शब्दार्थ—

विलज्जमानया	४.	लजाती हुई	विमोहिताः	६.	भ्रम में पड़े हुए
यस्य,	१.	उस (परमात्मा) की	विकत्थन्ते,	११.	अभिमान करते हैं
स्थातुम्	३.	ठहरने में	मम	९.	(यह) मेरा (है)
ईक्षापथे	२.	दृष्टि के सामने	अहम्	८.	(यह) मैं (हूँ)
अमुया ।	५.	उस (माया) से	इति	१०.	इस प्रकार
			दुर्धियः ॥	७.	अज्ञानी जन

श्लोकार्थ—उस परमात्मा की दृष्टि के सामने ठहरने में लजाती हुई उस माया से भ्रम में पड़े हुए अज्ञानी जन यह 'मैं हूँ, यह मेरा है' इस प्रकार अभिमान करते हैं ।

चतुर्दशः श्लोकः

द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च ।
वासुदेवात्परो ब्रह्मन्न चान्योऽर्थोऽस्ति तत्त्वतः ॥ १४ ॥

पदच्छेद—

द्रव्यम् कर्म च कालः च, स्वभावः जीवः एव च ।
वासुदेवात् परः ब्रह्मन्, न च अन्यः अर्थः अस्ति तत्त्वतः ॥

शब्दार्थ—

द्रव्यम्	२.	द्रव्य	वासुदेवात्	१२.	भगवान् वासुदेव से
कर्म	३.	कर्म	परः	१३.	भिन्न
च	४.	और	ब्रह्मन्,	१.	हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी !
कालः	५.	काल	न	१७.	नहीं
च,	६.	तथा	च	१४.	कोई
स्वभावः	७.	स्वभाव	अन्यः	१५.	दूसरी
जीवः	९.	प्राणी	अर्थः	१६.	चीज
एव	१०.	भी	अस्ति	१८.	हैं
च ।	८.	एवम्	तत्त्वतः ॥	११.	वास्तव में

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! द्रव्य, कर्म और काल तथा स्वभाव एवं प्राणी भी वास्तव में भगवान् वासुदेव से भिन्न कोई दूसरी चीज नहीं हैं ।

पञ्चदशः श्लोकः

नारायणपरा वेदा देवा नारायणाङ्गजाः ।
नारायणपरा लोका नारायणपरा मखाः ॥१५॥

पदच्छेद—

नारायण पराः वेदाः, देवाः नारायण अङ्गजाः ।
नारायण पराः लोकाः, नारायण पराः मखाः ॥

शब्दार्थ—

नारायण	२.	भगवान् नारायण के	नारायण	८.	भगवान् नारायण में
पराः	३.	बोधक (हैं)	पराः	९.	स्थित हैं (तथा)
वेदाः	१.	वेद	लोकाः	७.	तीनों लोक
देवाः	४.	देवगण	नारायण	११.	भगवान् नारायण को
नारायण	५.	भगवान् नारायण के	पराः	१२.	प्रसन्न करते हैं
अङ्गजाः ।	६.	शरीर से उत्पन्न (हैं)	मखाः ॥	१०.	यज्ञ (भी)

श्लोकार्थ—वेद भगवान् नारायण के बोधक हैं । देवगण भगवान् नारायण के शरीर से उत्पन्न हैं । तीनों लोक भगवान् नारायण में स्थित हैं तथा यज्ञ भी भगवान् नारायण को प्रसन्न करते हैं ।

षोडशः श्लोकः

नारायणपरो योगो नारायणपरं तपः ।
नारायणपरं ज्ञानं नारायणपरा गतिः ॥१६॥

पदच्छेद—

नारायण परः योगः, नारायण परम् तपः ।
नारायण परम् ज्ञानम्, नारायण परा गतिः ॥

शब्दार्थ—

नारायण	२.	भगवान् नारायण का	नारायण	८.	भगवान् नारायण को
परः	३.	दर्शन कराता (है)	परम्	९.	बताता है (और)
योगः	१.	योग	ज्ञानम्	७.	ज्ञान
नारायण	५.	भगवान् नारायण की	नारायण	११.	भगवान् नारायण में
परम्	६.	प्राप्ति कराती (है)	परा	१२.	स्थित है
तपः ।	४.	तपस्या	गतिः ॥	१०.	मोक्ष

श्लोकार्थ—योग भगवान् नारायण का दर्शन कराता है । तपस्या भगवान् नारायण की प्राप्ति कराती है । ज्ञान भगवान् नारायण को बताता है और मोक्ष भगवान् नारायण में स्थित है ।

सप्तदशः श्लोकः

तस्यापि द्रष्टुरीशस्य कूटस्थस्याखिलात्मनः ।
सृज्यं सृजामि सृष्टोऽहमीक्षयैवाभिचोदितः ॥१७॥

पदच्छेद—

तस्य अपि द्रष्टुः ईशस्य, कूटस्थस्य अखिल आत्मनः ।
सृज्यम् सृजामि सृष्टः अहम्, ईक्षया एव अभिचोदितः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	७.	उस (परमात्मा) की	**सृज्यम्**	१३	संसार की
अपि	२.	भी	**सृजामि**	१४.	सृष्टि करता हूँ
द्रष्टुः	१.	साक्षी होने पर	**सृष्टः**	१०	उत्पन्न होकर (और)
ईशस्य	३.	स्वामी (तथा)	**अहम्**	१२.	मैं
कूटस्थस्य	४.	निर्विकार होने पर (भी)	**ईक्षया**	९.	दृष्टि से
अखिल	५.	सबकी	**एव**	८.	ही
आत्मनः ।	६.	आत्मा	**अभिचोदितः ॥**	११.	प्रेरणा पाकर

श्लोकार्थ—साक्षी होने पर भी स्वामी तथा निर्विकार होने पर भी सबकी आत्मा उस परमात्मा की ही दृष्टि से उत्पन्न होकर और प्रेरणा पाकर मैं संसार की सृष्टि करता हूँ ।

अष्टादशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति निर्गुणस्य गुणास्त्रयः ।
स्थितिसर्गनिरोधेषु गृहीता मायया विभोः ॥१८॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् रजः तमः इति, निर्गुणस्य गुणाः त्रयः ।
स्थिति सर्ग निरोधेषु, गृहीताः मायया विभोः ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	७.	सत्त्व	**स्थिति**	४.	पालन (और)
रजः	८.	रज (और)	**सर्ग**	३.	उत्पत्ति
तमः	९.	तम	**निरोधेषु**	५.	प्रलय के लिए
इति	१०.	इन	**गृहीताः**	१३.	धारण किया है
निर्गुणस्य	१.	निर्गुण (एवं)	**मायया**	६.	माया के द्वारा
गुणाः	१२.	गुणों को	**विभोः ॥**	२.	अनन्त परमात्मा ने
त्रयः ।	११.	तीन			

श्लोकार्थ—निर्गुण एवं अनन्त परमात्मा ने उत्पत्ति, पालन और प्रलय के लिए माया के द्वारा सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों को धारण किया है ।

एकोनविंशः श्लोकः

कार्यकारणकर्तृत्वे द्रव्यज्ञानक्रियाश्रयाः ।
बध्नन्ति नित्यदा मुक्तं मायिनं पुरुषं गुणाः ॥१९॥

पदच्छेद—

कार्य कारण कर्तृत्वे, द्रव्य ज्ञान क्रिया आश्रयाः ।
बध्नन्ति नित्यदा मुक्तम्, मायिनम् पुरुषम् गुणाः ॥

शब्दार्थ—

कार्य कारण	१०.	कार्य-कारण और	बध्नन्ति	१२.	बाँध लेते हैं
कर्तृत्वे	११.	कर्तापन के अभिमान में	नित्यदा	६.	नित्य
द्रव्य	१.	द्रव्य	मुक्तम्	७.	मुक्त (और)
ज्ञान	२.	ज्ञान और	मायिनम्	८.	माया में स्थित
क्रिया	३.	क्रिया को	पुरुषम्	९.	आदिपुरुष भगवान् को
आश्रयाः ।	४.	उत्पन्न करने वाले	गुणाः ॥	५.	सत्त्वादि गुण

श्लोकार्थ—द्रव्य, ज्ञान और क्रिया को उत्पन्न करने वाले सत्त्वादि-गुण नित्य मुक्त और माया में स्थित आदि पुरुष भगवान् को कार्य-कारण और कर्तापन के अभिमान में बाँध लेते हैं ।

विंशः श्लोकः

स एष भगवाँल्लिङ्गैस्त्रिभिरेभिरधोक्षजः ।
स्वलक्षितगतिर्ब्रह्मन् सर्वेषां मम चेश्वरः ॥२०॥

पदच्छेद—

सः एषः भगवान् लिङ्गैः, त्रिभिः एभिः अधोक्षजः ।
स्वलक्षित गतिः ब्रह्मन्, सर्वेषाम् मम च ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

सः	९.	वे	स्वलक्षित	५.	अज्ञात
एषः	८.	ये (ही)	गतिः	६.	स्वरूप वाले (एवम्)
भगवान्	१०.	भगवान्	ब्रह्मन्	१.	हे नारद जी !
लिङ्गैः	४.	आवरणों के कारण	सर्वेषाम्	११.	सबके
त्रिभिः	३.	तीन गुणों के	मम	१३.	मेरे
एभिः	२.	इन	च	१२.	और
अधोक्षजः ।	७.	इन्द्रियों से परे	ईश्वरः ॥	१४.	स्वामी (हैं)

श्लोकार्थ—हे नारद जी ! इन तीन गुणों के आवरणों के कारण अज्ञात स्वरूप वाले एवम् इन्द्रियों से परे ये ही वे सबके और मेरे स्वामी हैं

एकविंशः श्लोकः

कालं कर्म स्वभावं च मायेशो मायया स्वया ।
आत्मन् यदृच्छया प्राप्तं विबुभूषुरुपाददे ॥२१॥

पदच्छेद---

कालम् कर्म स्वभावम् च, माया ईशः मायया स्वया ।
आत्मन् यदृच्छया प्राप्तम्, विबुभूषुः उपाददे ॥

शब्दार्थ---

कालम् कर्म	९.	काल, कर्म	स्वया ।	४.	अपनी
स्वभावम्	११.	स्वभाव को	आत्मन्	६.	अपने में
च	१०.	और	यदृच्छया	७.	स्वेच्छा से
माया	१.	माया	प्राप्तम्	८	आये हुए
ईशः	२.	पति (भगवान्) ने	विबुभूषुः	३.	बहुत रूपों में होने की इच्छा से
मायया	५.	माया के द्वारा	उपाददे ॥	१२.	स्वीकार किया

श्लोकार्थ---माया-पति भगवान् ने बहुत रूपों में होने की इच्छा से अपनी माया के द्वारा अपने में स्वेच्छा से आये हुए काल, कर्म और स्वभाव को स्वीकार किया ।

द्वाविंशः श्लोकः

कालाद् गुणव्यतिकरः, परिणामः स्वभावतः ।
कर्मणो जन्म महतः, पुरुषाधिष्ठितादभूत् ॥२२॥

पदच्छेद---

कालात् गुण व्यतिकरः, परिणामः स्वभावतः ।
कर्मणः जन्म महतः, पुरुष अधिष्ठितात् अभूत् ॥

शब्दार्थ---

कालात्	३.	काल से	कर्मणः	८.	कर्म से
गुण	४.	सत्त्वादि गुणों में	जन्म	१०.	उत्पत्ति
व्यतिकरः	५.	संबन्ध	महतः	९.	महत्तत्त्व की
परिणामः	७.	परिवर्तन-क्रिया (और)	पुरुष	१.	भगवान् के द्वारा
स्वभावतः ।	६.	स्वभाव से	अधिष्ठितात्	२.	स्वीकृत
			अभूत् ॥	११.	हुई

श्लोकार्थ---भगवान् के द्वारा स्वीकृत काल से सत्त्वादि-गुणों में संबन्ध, स्वभाव से परिवर्तन-क्रिया और कर्म से महत्तत्त्व की उत्पत्ति हुई ।

त्रयोविंशः श्लोकः

महतस्तु विकुर्वाणाद्रजःसत्त्वोपबृंहितात् ।
तमःप्रधानस्त्वभवद् द्रव्यज्ञानक्रियात्मकः ।।२३।।
महतः तु विकुर्वाणात्, रजः सत्त्व उपबृंहितात् ।
तमः प्रधानः तु अभवत्, द्रव्य ज्ञान क्रिया आत्मकः ।।

महत्तत्त्व के	**तमः**	९.	तमोगुण
तदनन्तर	**प्रधानः**	१०.	प्रधान
विकार से	**तु**	११.	अहंतत्त्व की
रजोगुण (और)	**अभवत्**	१२.	उत्पत्ति हुई
सत्त्वगुण की	**द्रव्य, ज्ञान**	७.	महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय
अधिकता वाले	**क्रिया आत्मकः।।**	८.	कर्मेन्द्रिय के उत्पाद

रजोगुण और सत्त्वगुण की अधिकता वाले महत्तत्त्व के विकार से
और कर्मेन्द्रिय के उत्पादक तमोगुण प्रधान अहन्तत्त्व की उत्पत्ति हुई ।

चतुर्विंशः श्लोकः

सोऽहङ्कार इति प्रोक्तो विकुर्वन् समभूत्त्रिधा ।
वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेति यद्भिदा ।
द्रव्यशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिरिति प्रभो ।।२४।।
सः अहङ्कारः इति प्रोक्तः, विकुर्वन् समभूत् त्रिधा ।
वैकारिकः तैजसः च, तामसः च इति यद् भिदा ।
द्रव्य शक्तिः क्रिया शक्तिः, ज्ञान शक्तिः इति प्रभो ।।

वही (तत्त्व)	**तामसः च**	१२.	तमोगुण प्रधान ता
अहंकार	**इति**	१३.	ये
इस नाम से	**यद्**	९.	जिसके
कहा गया है	**भिदा ।**	१४.	भेद (हैं, वे ही)
(उसमें) विकार होने पर	**द्रव्य शक्तिः**	१५.	द्रव्य शक्ति
विभक्त हो गया	**क्रिया शक्तिः**	१६.	क्रिया शक्ति और
(वह) तीन रूपों में	**ज्ञान शक्तिः**	१७.	ज्ञान शक्ति
सत्त्व गुण प्रधान वैकारिक	**इति**	१८.	इस नाम से भी प्रसि
रजोगुण प्रधान तैजस और	**प्रभो ।।**	१.	हे नारद जी !

ो ! वही तत्त्व अहंकार इस नाम से कहा गया है । उसमें विकार होने पर
भक्त हो गया; जिसके सत्त्वगुण-प्रधान वैकारिक, रजोगुण-प्रधान तैजस अ
तामस ये भेद हैं । वे ही द्रव्य-शक्ति, क्रिया-शक्ति और ज्ञान-शक्ति इस
है

पञ्चविंश: श्लोक:

तामसादपि भूतादेर्विकुर्वाणादभून्नभः ।
तस्य मात्रा गुणः शब्दो लिङ्गं यद् द्रष्टृदृश्ययोः ।।२५।।

पदच्छेद—

तामसात् अपि भूत आदेः, विकुर्वाणात् अभूत् नभः ।
तस्य मात्रा गुणः शब्दः, लिङ्गम् यद् द्रष्टृ दृश्ययोः ।।

शब्दार्थ—

तामसात्	२.	तामस अहंकार से	**मात्रा**	८.	सूक्ष्म रूप (और)
अपि	३.	ही	**गुणः**	९.	गुण
भूत आदेः	१.	पञ्च महाभूतों का कारण	**शब्दः**	१०.	शब्द (है)
विकुर्वाणात्	४.	परिवर्तन होने पर	**लिङ्गम्**	१४.	बोध होता है
अभूत्	६.	उत्पन्न हुआ	**यद्**	११.	जिस (शब्द) से
नभः ।	५.	आकाश	**द्रष्टृ**	१२.	साक्षी परमात्मा (और)
तस्य	७.	उस (आकाश) का	**दृश्ययोः ।।**	१३.	जगत् का

श्लोकार्थ—पञ्च महाभूतों का कारण तामस अहंकार से ही परिवर्तन होने पर आकाश उत्पन्न हुआ। उस आकाश का सूक्ष्म रूप और गुण शब्द है, जिस शब्द से साक्षी परमात्मा और जगत् का बोध होता है।

षड्विंश श्लोक:

नभसोऽथ विकुर्वाणादभूत् स्पर्शगुणोऽनिलः ।
परान्वयाच्छब्दवांश्च प्राण ओजः सहो बलम् ।।२६।।

पदच्छेद—

नभसः अथ विकुर्वाणात्, अभूत् स्पर्श गुणः अनिलः ।
पर अन्वयात् शब्दवान् च, प्राणः ओजः सहः बलम् ।।

शब्दार्थ—

नभसः	२.	आकाश में	**पर**	८.	कारण के
अथ	१.	तदनन्तर	**अन्वयात्**	९.	संबन्ध से
विकुर्वाणात्	३.	परिवर्तन होने पर	**शब्दवान्**	१०.	शब्द वाला
अभूत्	७.	उत्पन्न हुआ (वह)	**च**	१३.	और
स्पर्श	४.	स्पर्श	**प्राणः, ओजः**	११.	जीवन-शक्ति, स्फूर्ति
गुणः	५.	गुण वाला	**सहः**	१२.	सहन-शक्ति
अनिलः ।	६.	वायु	**बलम् ।।**	१४.	बल रूप (है)

श्लोकार्थ—तदनन्तर आकाश में परिवर्तन होने पर स्पर्श गुण वाला वायु उत्पन्न हुआ। वह कारण के से शब्द वाला जीवन शक्ति स्फूर्ति सहन शक्ति और बल-रूप है

सप्तविंशः श्लोकः

वायोरपि विकुर्वाणात् कालकर्मस्वभावतः ।
उदपद्यत तेजो वै रूपवत् स्पर्शशब्दवत् ।।२७।।

पदच्छेद—

वायोः अपि विकुर्वाणात्, काल कर्म स्वभावतः ।
उदपद्यत तेजः वै, रूपवत् स्पर्श शब्दवत् ।।

शब्दार्थ—

वायोः	४. वायु में	**उदपद्यत**	९. उत्पन्न हुआ (जो)
अपि	५. भी	**तेजः**	८. तेज
विकुर्वाणात्	६. परिवर्तन होने से	**वै**	७. ही
काल	१. काल	**रूपवत्**	१०. रूप
कर्म	२. कर्म और	**स्पर्श**	११. स्पर्श और
स्वभावतः ।	३. स्वभाव के कारण	**शब्दवत् ।।**	१२. शब्द गुण वाला (है)

श्लोकार्थ—काल, कर्म और स्वभाव के कारण वायु में भी परिवर्तन होने से ही तेज उत्पन्न हुआ, जो रूप स्पर्श और शब्द गुण वाला है ।

अष्टाविंशः श्लोकः

तेजसस्तु विकुर्वाणादासीदम्भो रसात्मकम् ।
रूपवत् स्पर्शवच्चाम्भो घोषवच्च परान्वयात् ।।२८।।

पदच्छेद—

तेजसः तु विकुर्वाणात्, आसीत् अम्भः रस आत्मकम् ।
रूपवत् स्पर्शवत् च अम्भः, घोषवत् च पर अन्वयात् ।।

शब्दार्थ—

तेजसः	२. तेज से	**रूपवत्**	११. रूप गुण
तु	१. तदनन्तर	**स्पर्शवत्**	१२. स्पर्श गुण
विकुर्वाणात्	३. परिवर्तन होने पर	**च**	८. वह
आसीत्	७. उत्पन्न हुआ	**अम्भः**	९. जल
अम्भः	६. जल	**घोषवत्**	१४. शब्द गुण से भी युक्त (है)
रस	४. रस गुण	**च**	१३. और
आत्मकम् ।	५. वाला	**पर,अन्वयात् ।।**	१०. कारण के, संबन्ध से

श्लोकार्थ—तदनन्तर तेज में परिवर्तन होने पर रस गुण वाला जल उत्पन्न हुआ । वह जल कारण के सम्बन्ध से रूप गुण, स्पर्श गुण और शब्द गुण से भी युक्त है ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विशेषस्तु विकुर्वाणादम्भसो गन्धवानभूत् ।
परान्वयाद् रसस्पर्शशब्दरूपगुणान्वितः ॥ २९ ॥

पदच्छेद—

विशेषः तु विकुर्वाणात्, अम्भसः गन्धवान् अभूत् ।
पर अन्वयात् रस स्पर्श, शब्द रूप गुण अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

विशेषः	४.	विशेष रूप से	अन्वयात्	८.	संबन्ध से (वह)
तु	१.	तथा	रस	९.	रस
विकुर्वाणात्	३.	परिवर्तन होने पर	स्पर्श	१०.	स्पर्श
अम्भसः	२.	जल से	शब्द	११.	शब्द और
गन्धवान्	५.	गन्धगुण वाली (पृथ्वी)	रूप	१२.	रूप
अभूत् ।	६.	उत्पन्न हुई	गुण	१३.	गुण से (भी)
पर	७.	कारण के	अन्वितः ॥	१४.	युक्त (है)

श्लोकार्थ—तथा जल से परिवर्तन होने पर विशेष रूप में गन्ध गुणवाली पृथ्वी उत्पन्न हुई। कारण के संबन्ध से वह रस, स्पर्श, शब्द और रूप गुण से भी युक्त है।

त्रिंशः श्लोकः

वैकारिकान्मनो जज्ञे देवा वैकारिका दश ।
दिग्वातार्कप्रचेतोऽश्विवह्नीन्द्रोपेन्द्रमित्रकाः ॥ ३० ॥

पदच्छेद—

वैकारिकात् मनः जज्ञे, देवाः वैकारिकाः दश ।
दिक् वात अर्क प्रचेतस् अश्विन्, वह्नि इन्द्र उपेन्द्र मित्र काः ॥

शब्दार्थ—

वैकारिकात्	१.	वैकारिक अहंकार से	अर्क	८.	सूर्य
मनः	२.	मन (और)	प्रचेतस्	९.	वरुण
जज्ञे	६.	उत्पन्न हुए (ये देवता हैं)	अश्विन्	१०.	अश्विनी कुमार
देवाः	५.	देवता	वह्नि	११	अग्नि
वैकारिकाः	३.	इन्द्रियों के स्वामी	इन्द्र, उपेन्द्र	१२.	इन्द्र, विष्णु
दश ।	४.	दस	मित्र	१३.	मित्र (एवं)
दिक् वात	७.	दिशा, वायु	काः ॥	१४.	प्रजापति

श्लोकार्थ—वैकारिक अहंकार से मन और इन्द्रियों के स्वामी दस देवता उत्पन्न हुए। ये देवता हैं—दिशा वायु, सूर्य वरुण अश्विनी कुमार अग्नि इन्द्र विष्णु मित्र एवं प्रजापति।

एकत्रिंश: श्लोक:

तैजसात्तु विकुर्वाणादिन्द्रियाणि दशाभवन् ।
ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिर्बुद्धिः प्राणश्च तैजसौ ।
श्रोत्रं त्वग्घ्राणदृग्जिह्वा वाग्दोर्मेढ्राङ्घ्रिपायवः ।।३१।।

तैजसात् तु विकुर्वाणात्, इन्द्रियाणि दश अभवन् ।
ज्ञान शक्तिः क्रिया शक्तिः, बुद्धिः प्राणः च तैजसौ ।
श्रोत्रम् त्वक् घ्राण दृश् जिह्वाः, वाक् दोः मेढ् अङ्घ्रि पायवः ।।

१	तैजस अहंकार से	**तैजसौ ।**	२२.	तैजस अहंका
१६.	तथा	**श्रोत्रम्**	३.	कान
२.	परिवर्तन होने पर	**त्वक्**	४.	चमड़ी
१४.	इन्द्रियाँ	**घ्राण**	५.	नासिका
१३.	दश	**दृश्**	६.	आँख
१५.	उत्पन्न हुई	**जिह्वाः**	७.	जीभ
१७.	ज्ञान शक्ति	**वाक्**	८.	वाणी
२०.	क्रिया शक्ति	**दोः**	९.	हाथ
१८.	बुद्धि	**मेढ्**	१०.	जननेन्द्रिय
२१.	प्राण (भी)	**अङ्घ्रि**	११.	पैर (और)
१९.	और	**पायवः ।**	१२.	गुदा (नामक)

ास अहंकार से परिवर्तन होने पर कान, चमड़ी, नासिका, आँख, जीभ, ननेन्द्रिय, पैर और गुदा नामक दस इन्द्रियाँ उत्पन्न हुई तथा ज्ञानशक्ति बुि क्त प्राण भी तैजस अहंकार से ही उत्पन्न हैं ।

द्वात्रिंश: श्लोक:

यदैतेऽसङ्गता भावा भूतेन्द्रियमनोगुणाः ।
यदायतननिर्माणे न शेकुर्ब्रह्मवित्तमम् ।।३२।।

यदा एते असङ्गताः भावाः, भूत इन्द्रिय मनः गुणा ।
यदा आयतन निर्माणे, न शेकुः ब्रह्म वित्तमम् ।।

६.	जब	**यदा**	८.	(तथा) जब (
४.	ये	**आयतन**	९.	शरीर की
७.	अलग-अलग (विद्यमान थे)	**निर्माणे**	१०.	रचना करने
५.	पदार्थ	**न**	११.	नहीं
२.	पञ्च महाभूत, दस इन्द्रियाँ	**शेकुः**	१२.	समर्थ हो सके
३.	मन और सत्त्वादि गुण	**ब्रह्म वित्तमम् ।।**	१.	हे ब्रह्मज्ञानी

ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! पञ्च महाभूत, दस इन्द्रियाँ, मन और सत्त्वादि गुण लग-अलग विद्यमान थे तथा जब ये शरीर की रचना करने में समर्थ नहीं हु

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तदा संहत्य चान्योन्यं भगवच्छक्तिचोदिताः ।
सदसत्त्वमुपादाय चोभयं ससृजुर्ह्यदः ॥३३॥

पदच्छेद—

तदा संहत्य च अन्योन्यम्, भगवत् शक्ति चोदिताः ।
सत् असत्त्वम् उपादाय, च उभयम् ससृजुः हि अदः ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	तब	असत्त्वम्	९.	कार्य भाव को
संहत्य	६.	मिलकर	उपादाय	१०.	स्वीकार करके
च	७.	और	च	२.	भूतादि गुणों ने
अन्योन्यम्	५.	एक दूसरे से	उभयम्	१२.	दोनों की
भगवत् शक्ति	३.	भगवान् की माया की	ससृजुः	१४.	सृष्टि की
चोदिताः ।	४.	प्रेरणा पाने पर	हि	१३.	ही
सत्	८.	कारण	अदः ॥	११.	उस (अण्ड-पिण्ड)

श्लोकार्थ—तब भूतादि गुणों ने भगवान् की माया की प्रेरणा पाने पर एक दूसरे से मिलकर और कारण-कार्य भाव को स्वीकार करके उस अण्ड-पिण्ड दोनों की ही सृष्टि की ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

वर्षपूगसहस्रान्ते तदण्डमुदकेशयम् ।
कालकर्मस्वभावस्थो जीवोऽजीवमजीवयत् ॥३४॥

पदच्छेद—

वर्ष पूग सहस्र अन्ते, तद् अण्डम् उदके शयम् ।
काल कर्म स्वभावस्थः, जीवः अजीवम् अजीवयत् ॥

शब्दार्थ—

वर्ष	६.	वर्षों का	शयम् ।	१०.	स्थित (तथा)
पूग	७.	समूह	काल	१.	काल
सहस्र	५.	हजारों	कर्म	२.	कर्म और
अन्ते	८.	बीतने पर	स्वभावस्थः	३.	स्वभाव से युक्त
अद्	१२.	उस (हिरण्यमय)	जीवः	४.	आदि पुरुष ने
अण्डम्	१३.	अण्डे को	अजीवम्	११.	अचेतन
उदके	९.	जल में	अजीवयत् ॥	१४.	जीवित किया

श्लोकार्थ—काल, कर्म और स्वभाव से युक्त आदि पुरुष ने हजारों वर्षों का समूह बीतने पर जल में स्थित तथा अचेतन उस हिरण्यमय अण्डे को जीवित किया ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

स एव पुरुषस्तस्मादण्डं निर्भिद्य निर्गतः ।
सहस्रोर्वङ्घ्रिबाह्वक्षः सहस्राननशीर्षवान् ॥३५॥

पदच्छेद—

सः एव पुरुषः तस्मात्, अण्डम् निर्भिद्य निर्गतः ।
सहस्र उरु अङ्घ्रि बाहु अक्षः, सहस्र आनन शीर्षवान् ॥

शब्दार्थ—

सः एव	१.	वही	**उरु**	७.	जाँघ
पुरुषः	२.	आदि पुरुष	**अङ्घ्रि**	८.	पैर
तस्मात्	३.	उस (सुवर्ण के)	**बाहु**	९.	भुजा
अण्डम्	४.	अण्डे को	**अक्षः**	१०.	आँख (तथा)
निर्भिद्य	५.	फोड़कर	**सहस्र**	११.	हजारों
निर्गतः ।	१४.	बाहर निकला	**आनन**	१२.	मुख और
सहस्र	६.	हजारों	**शीर्षवान् ॥**	१३.	मस्तक के साथ

श्लोकार्थ— वही आदि पुरुष उस सुवर्ण के अण्डे को फोड़कर हजारों जाँघ, पैर, भुजा, आँख तथा हजारों मुख और मस्तक के साथ बाहर निकला ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

यस्येहावयवैर्लोकान् कल्पयन्ति मनीषिणः ।
कट्यादिभिरधः सप्त सप्तोर्ध्वं जघनादिभिः ॥३६॥

पदच्छेद—

यस्य इह अवयवैः लोकान्, कल्पयन्ति मनीषिणः ।
कटि आदिभिः अधः सप्त, सप्त ऊर्ध्वम् जघन आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	उस (आदि पुरुष) के	**आदिभिः**	३.	(नीचे के) सात अंगों से
इह	१०.	इस प्रकार	**अधः**	४.	पाताल के
अवयवैः	१२.	अङ्गों से (ही)	**सप्त**	५.	सात लोकों की (और)
लोकान्	१३.	चौदह लोकों की	**सप्त**	९.	सात लोकों की
कल्पयन्ति	१४.	रचना मानते हैं	**ऊर्ध्वम्**	८.	स्वर्ग के
मनीषिणः ।	११.	विद्वज्जन (उसके)	**जघन**	६.	कमर से लेकर
कटि	२.	कमर से लेकर	**आदिभिः ॥**	७.	(ऊपर के सात) अंगों से

श्लोकार्थ—उस आदि पुरुष के कमर से लेकर नीचे के सात अंगों से पाताल के सात लोकों की और कमर से लेकर ऊपर के सात अंगों से स्वर्ग के सात लोकों की, इस प्रकार विद्वज्जन उसके अंगो से ही चौदह लोकों की रचना मानते है ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पुरुषस्य मुखं ब्रह्म क्षत्रमेतस्य बाहवः ।
ऊर्वोर्वैश्यो भगवतः पद्भ्यां शूद्रोऽभ्यजायत ॥ ३७ ॥

पदच्छेद—

पुरुषस्य मुखम् ब्रह्म, क्षत्रम् एतस्य बाहवः
ऊर्वोः वैश्यः भगवतः, पद्भ्याम् शूद्रः अभ्यजायत ॥

शब्दार्थ—

पुरुषस्य	२.	विराट् पुरुष के	ऊर्वोः	८.	दोनों जंघाओं से
मुखम्	३.	मुख (हैं और)	वैश्यः	९.	वैश्य (तथा)
ब्रह्म	१.	ब्राह्मण	भगवतः	७.	भगवान् की
क्षत्रम्	४.	क्षत्रिय	पद्भ्याम्	१०.	पैरों से
एतस्य	५.	इसकी	शूद्रः	११.	शूद्र वर्ण
बाहवः ।	६.	भुजायें (हैं इसी प्रकार)	अभ्यजायत ॥	१२.	उत्पन्न हुआ है

श्लोकार्थ—ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख है और क्षत्रिय इसकी भुजायें है । इसी प्रकार भगवान् की दोनों जघाओं से वैश्य तथा पैरों से शूद्र वर्ण उत्पन्न हुआ है ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ।
हृदा स्वर्लोक उरसा महर्लोको महात्मनः ॥ ३८ ॥

पदच्छेद—

भूः लोकः कल्पितः पद्भ्याम्, भुवः लोकः अस्य नाभितः ।
हृदा स्वः लोकः उरसा, महः लोकः महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

भूर्लोकः	३.	पृथ्वी लोक की	नाभितः ।	५.	नाभि से
कल्पितः	१२.	रचना हुई है	हृदा	८.	हृदय से
पद्भ्याम्	२.	पैरों से	स्वर्लोकः	९.	स्वर्ग लोक की (और)
भुवः	६.	अन्तरिक्ष	उरसा	१०.	वक्षस्थल से
लोकः	७.	लोक की	महर्लोकः	११.	महर्लोक की
अस्य	४.	उसके	महात्मनः ॥	१.	विराट् पुरुष के

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के पैरों से पृथ्वी लोक की, उसके नाभि से अन्तरिक्ष लोक की, हृदय से स्वर्ग लोक की और वक्षस्थल से महर्लोक की रचना हुई है

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ग्रीवायां जनलोकश्च तपोलोकः स्तनद्वयात् ।
मूर्धभिः सत्यलोकस्तु ब्रह्मलोकः सनातनः ॥३९॥

पदच्छेद—

ग्रीवायाम् जनलोकः च, तपोलोकः स्तन द्वयात् ।
मूर्धभिः सत्यलोकः तु, ब्रह्मलोकः सनातनः ॥

शब्दार्थ—

ग्रीवायाम्	१.	(विराट् पुरुष के) गले से	मूर्धभिः	७.	मस्तक से
जनलोकः	२.	जनलोक	सत्यलोकः	१०.	सत्यलोक (उत्पन्न हुआ है)
च	३.	और	तु	६.	तथा
तपोलोकः	५.	तप लोक	ब्रह्मलोकः	९.	ब्रह्मा का निवास स्थान
स्तनद्वयात् ।	४.	दोनों स्तनों से	सनातनः ॥	८.	सदा स्थायी

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के गले से जनलोक और दोनों स्तनों से तप लोक तथा मस्तक से सदा स्थायी ब्रह्मा का निवास स्थान सत्यलोक उत्पन्न हुआ है।

चत्वारिंशः श्लोकः

तत्कट्यां चातलं क्लृप्तमूरुभ्यां वितलं विभोः ।
जानुभ्यां सुतलं शुद्धं जङ्घाभ्यां तु तलातलम् ॥४०॥

पदच्छेद—

तत् कट्याम् च अतलम् क्लृप्तम्, ऊरुभ्याम् वितलम् विभोः ।
जानुभ्याम् सुतलम् शुद्धम्, जङ्घाभ्याम् तु तलातलम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उस	विभोः ।	२.	विराट् पुरुष की
कट्याम्	३.	कमर से	जानुभ्याम्	८.	घुटनों से
च	५.	और	सुतलम्	१०.	सुतललोक की
अतलम्	४.	अतल लोक की	शुद्धम्	९.	पवित्र
क्लृप्तम्	१४.	रचना हुई है	जङ्घाभ्याम्	१२.	पिण्डलियों से
ऊरुभ्याम्	६.	जङ्घाओं से	तु	११.	तथा
वितलम्	७.	वितल लोक की	तलातलम् ॥	१३.	तलातल लोक की

श्लोकार्थ—उस विराट् पुरुष की कमर से अतल लोक की और जंघाओं से वितल लोक की, घुटनों से पवित्र सुतल लोक की तथा पिण्डलियों से तलातल लोक की रचना हुई है।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

महातलं तु गुल्फाभ्यां प्रपदाभ्यां रसातलम् ।
पातालं पादतलत इति लोकमयः पुमान् ।।४१।।

महातलम् तु गुल्फाभ्याम्, प्रपदाभ्याम् रसातलम् ।
पातालम् पाद तलतः, इति लोकमयः पुमान् ।।

२.	महातल लोक	**पातालम्**	७.	पाताल लोक (निर्मित
५	तथा	**पाद, तलतः**	६.	पैरों के, तलुवे से
१.	एड़ी के ऊपर की गाँठों से	**इति**	८.	इस प्रकार
३.	पंजों से	**लोकमयः**	१०.	सभी लोकों में युक्त ह
४	रसातल लोक	**पुमान् ।।**	९.	(वह) विराट् पुरुष

ाट् पुरुष की एड़ी के ऊपर की गाँठों से महातल लोक, पंजों से रसातल लोक तथ
ालुवे से पाताल लोक निर्मित है। इस प्रकार वह विराट् पुरुष सभी लोकों में युक्त

द्विचत्वारिंश: श्लोक:

भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ।
स्वर्लोकः कल्पितो मूर्ध्ना इति वा लोककल्पना ।।४२।।

भूः लोकः कल्पितः पद्भ्याम्, भुवः लोकः अस्य नाभितः ।
स्वः लोकः कल्पितः मूर्ध्ना, इति वा लोक कल्पना ।।

३.	पृथ्वी लोक	**स्वः लोकः**	८.	स्वर्ग लोक
४	उत्पन्न है	**कल्पितः**	९.	उत्पन्न है
२.	पैरों से	**मूर्ध्ना**	७.	मस्तक से
६.	अन्तरिक्ष लोक (तथा)	**इति**	१०.	ऐसी
१.	इस (विराट् पुरुष) के	**वा**	११.	भी
५.	नाभि से	**लोक कल्पना।।**	१२.	लोक रचना है

विराट् पुरुष के पैरों से पृथ्वी लोक उत्पन्न है, नाभि से अन्तरिक्ष लोक तथा मस
लोक उत्पन्न है; ऐसी भी लोक-रचना है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
पञ्चमः अध्यायः ।।५।।

द्वितीयः स्कन्धः

अथ षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

वाचां वह्नेर्मुखं क्षेत्रं छन्दसां सप्तधातवः ।
हव्यकव्यामृतान्नानां जिह्वा सर्वरसस्य च ॥१॥

वाचाम् वह्नेः मुखम् क्षेत्रम्, छन्दसाम् सप्त धातवः ।
हव्य कव्य अमृत अन्नानाम्, जिह्वा सर्व रसस्य च ॥

वाणी और	**हव्य**	९.	हवन सामग्री
अग्नि का	**कव्य**	१०.	श्राद्ध के अन्न और
(विराट् पुरुष का) मुख	**अमृत**	११.	जीवनदायी
उत्पत्ति स्थान है	**अन्नानाम्**	१२.	अन्नों का (एवं)
छन्दों का	**जिह्वा**	८.	रसनेन्द्रिय
सातों	**सर्व रसस्य**	१३.	सभी रसों का
धातुयें	**च ॥**	७.	तथा

रुष का मुख वाणी और अग्नि का, रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थि, मेदा धातुएँ गायत्री, त्रिष्टुप, अनुष्टुप्, उष्णिक्, बृहती पङ्क्ति और जगती छन्द । हवन सामग्री, श्राद्ध के अन्न और जीवनदायी अन्नों का एवं सभी स्थान है ।

द्वितीयः श्लोकः

सर्वासूनां च वायोश्च तन्नासे परमायने ।
अश्विनोरोषधीनां च घ्राणो मोदप्रमोदयोः ॥२॥

सर्व असूनाम् च वायोः च, तद् नासे परम अयने ।
अश्विनोः ओषधीनाम् च, घ्राणः मोद प्रमोदयोः ॥

सभी	**परम अयने ।**	१४.	उत्पत्ति का स्थान
प्राणों की	**अश्विनोः**	९.	दोनों अश्विनी कुम
और	**ओषधीनाम्**	१०.	वनस्पति
वायु की	**च**	१२.	और
तथा	**घ्राणः**	८.	नासिका इन्द्रिय
विराट् पुरुष का	**मोद**	११.	सामान्य गन्ध
नासापुट	**प्रमोदयोः ॥**	१३.	विशेष गन्ध की

रुष का नासा पुट प्राण, अपान, व्यान, समान और उदान आदि सभी की तथा नासिका इन्द्रिय दोनों अश्विनी कुमारों, वनस्पति, सामान्य न्ध की उत्पत्ति का स्थान है ।

तृतीय: श्लोक:

रूपाणां तेजसां चक्षुर्दिवः सूर्यस्य चाक्षिणी ।
कर्णौ दिशां च तीर्थानां श्रोत्रमाकाशशब्दयोः ।
त द्गात्रं वस्तु साराणां सौभगस्य च भाजनम् ।। ३ ।।

रूपाणाम् तेजसाम् चक्षुः, दिवः सूर्यस्य च अक्षिणी ।
कर्णौ दिशाम् च तीर्थानाम्, श्रोत्रम् आकाश शब्दयोः ।
तद् गात्रम् वस्तु साराणाम् सौभगस्य च भाजनम् ।।

२	रूप और	श्रोत्रम्	११.	कानों का छिद्र
३.	तेज का	आकाश	१२.	आकाश और
१.	नेत्र इन्द्रिय	शब्दयोः ।	१३.	शब्द का (नश
५.	स्वर्ग और सूर्य का	तद्	१४.	उनका
६.	तथा	गात्रम्	१५.	शरीर
४.	आँखों की पुतली	वस्तु	१६.	पदार्थों के
७	कान	साराणाम्	१७.	सारभाग
८.	दिशाओं	सौभगस्य	१९.	सुन्दरता का
९.	और	च	१८.	और
१०.	तीर्थों का	भाजनम् ।।	२०.	उत्पादक है

राट् पुरुष की नेत्र-इन्द्रिय रूप और तेज का, आँखों की पुतली स्वर्ग और सूर्य
दिशाओं और तीर्थों का, कानों का छिद्र आकाश और शब्द का तथा उनका श
सारभाग और सुन्दरता का उत्पादक है ।

चतुर्थ: श्लोक:

त्वगस्य स्पर्शवायोश्च सर्वमेधस्य चैव हि ।
रोमाण्युद्भिज्जजातीनां यैर्वा यज्ञस्तु सम्भृतः ।। ४ ।।

त्वक् अस्य स्पर्श वायोः च, सर्व मेधस्य च एव हि ।
रोमाणि उद्भिज्ज जातीनाम्, यैः वा यज्ञः तु सम्भृतः ।।

२.	चमड़ी से	रोमाणि	१०.	रोयें से
१.	इस (विराट पुरुष) की	उद्भिज्ज	११.	अंकुर वाली
३.	स्पर्श गुण	जातीनाम	१२.	वनस्पतियां (
५.	वायु	यैः	१३.	जिनसे
४.	और	वा	१४.	कि
७.	सभी प्रकार की	यज्ञः	१५.	यज्ञानुष्ठान
८.	पवित्रता	तु	९.	और
६.	तथा	सम्भृतः ।।	१६.	सम्पन्न होता है

स विराट् पुरुष की चमड़ी से स्पर्शगुण और वायु तथा सभी प्रकार की पवित्र
अंकुर वाली वनस्पतियाँ उत्पन्न हुई हैं जिनसे कि सम्पन्न होता है

पञ्चमः श्लोकः

केशश्मश्रुनखान्यस्य शिलालोहाभ्रविद्युताम् ।
बाह्वो लोकपालानां प्रायशः क्षेमकर्मणाम् ।। ५ ।।

पदच्छेद—

केश श्मश्रु नखानि अस्य, शिला लोह अभ्र विद्युताम् ।
बाह्वः लोकपालानाम्, प्रायशः क्षेम कर्मणाम् ।।

शब्दार्थ—

केश	२	बाल	**विद्युताम् ।**	८.	बिजली के (तथा)
श्मश्रु	३.	दाढ़ी-मूँछ और	**बाह्वः**	९.	भुजायें
नखानि	४.	नाखून (क्रमशः)	**लोक**	१३.	लोक
अस्य	१.	विराट् पुरुष के	**पालानाम्**	१४.	पालों के (उत्पादक हैं)
शिला	५.	पत्थर	**प्रायशः**	१०.	प्रायः
लोह	६.	लोहा	**क्षेम**	११.	मंगल
अभ्र	७	बादल और	**कर्मणाम् ।।**	१२	कारी

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के बाल, दाढ़ी-मूँछ और नाखून क्रमशः पत्थर, लोहा, बादल और बिजली के तथा भुजायें प्रायः मंगलकारी लोकपालों के उत्पादक हैं ।

षष्ठः श्लोकः

विक्रमो भूर्भुवः स्वश्च क्षेमस्य शरणस्य च ।
सर्वकामवरस्यापि हरेश्चरण आस्पदम् ।। ६ ।।

पदच्छेद—

विक्रमः भूः भुवः स्वः च, क्षेमस्य शरणस्य च ।
सर्व काम वरस्य अपि, हरेः चरणः आस्पदम् ।।

शब्दार्थ—

विक्रमः	२.	गति	**च ।**	९.	तथा (उनके)
भूः	३.	पृथ्वी	**सर्व काम**	११.	सभी कामनाओं
भुवः	४.	अन्तरिक्ष	**वरस्य**	१३.	वरदानों को
स्वः	५.	स्वर्गलोक	**अपि**	१२.	और
च	७.	और	**हरेः**	१.	विराट् पुरुष की
क्षेमस्य	६.	कल्याण	**चरणः**	१०.	पैर
शरणस्य	८.	अभय पद को	**आस्पदम् ।।**	१४.	देने वाले है

श्लोकार्थ—विराट् भगवान् की गति पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वर्गलोक, कल्याण और अभयपद को तथा उनके पैर सभी कामनाओं और वरदानों को देने वाले हैं ।

सप्तमः श्लोकः

अपां वीर्यस्य सर्गस्य पर्जन्यस्य प्रजापतेः ।
पुंसः शिश्न उपस्थस्तु प्रजात्यानन्दनिर्वृतेः ॥७॥

पदच्छेद—

अपाम् वीर्यस्य सर्गस्य, पर्जन्यस्य प्रजापतेः ।
पुंसः शिश्नः उपस्थः तु, प्रजाति आनन्द निर्वृतेः ॥

शब्दार्थ—

अपाम्	३.	जल का	शिश्नः	२.	लिङ्ग
वीर्यस्य	४.	शुक्राणु का	उपस्थः	६.	जननेन्द्रिय
सर्गस्य	५.	सृष्टि का	तु	८.	तथा (उनकी)
पर्जन्यस्य	६.	मेघ का (और)	प्रजाति	१०	मैथुन के
प्रजापतेः ।	७.	ब्रह्मा का (उत्पादक है)	आनन्द	११.	आनन्द को
पुंसः	१.	विराट् पुरुष का	निर्वृतेः ।	१२.	प्रदान करने वाली है

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का लिङ्ग जल का, शुक्राणु का, सृष्टि का, मेघ का और ब्रह्मा का उत्पादक है तथा उनकी जननेन्द्रिय मैथुन के आनन्द को प्रदान करने वाली है ।

अष्टमः श्लोकः

पायुर्यमस्य मित्रस्य परिमोक्षस्य नारद ।
हिंसाया निर्ऋतेर्मृत्योर्निरयस्य गुदः स्मृतः ॥८॥

पदच्छेद—

पायुः यमस्य मित्रस्य, परिमोक्षस्य नारद ।
हिंसायाः निर्ऋतेः मृत्योः, निरयस्य गुदः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

पायुः	२.	गुदा इन्द्रिय	हिंसायाः	७.	हिंसा
यमस्य	३.	यमराज	निर्ऋतेः	८.	निर्ऋति देवता
मित्रस्य	४.	मित्र देवता (और)	मृत्योः	९.	मृत्यु (और)
परिमोक्षस्य	५.	मल त्याग का (तथा)	निरयस्य	१०.	नरक का
नारद ।	१.	हे देवर्षे ! (विराट् पुरुष की)	गुदः	६.	(उनका) गुदा द्वार
			स्मृतः ॥	११	(स्थान) कहा गया है

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! विराट् पुरुष की गुदा इन्द्रिय यमराज, मित्र देवता और मलत्याग का तथा उनका गुदा द्वार हिंसा, निर्ऋतिदेवता, मृत्यु और नरक का स्थान कहा गया है ।

नवमः श्लोकः

पराभूतेरधर्मस्य तमसश्चापि पश्चिमः ।
नाड्यो नदनदीनां तु गोत्राणामस्थिसंहतिः ॥९॥

पदच्छेद—

पराभूतेः अधर्मस्य, तमसः च अपि पश्चिमः ।
नाड्यः नद नदीनाम् तु, गोत्राणाम् अस्थि संहतिः ॥

शब्दार्थ—

पराभूतेः	२. पराजय	**नाड्यः**	७. नाड़ियाँ
अधर्मस्य	३. पाप	**नद नदीनाम्**	८. महानद और नदियों का
तमसः	५. अज्ञान का	**तु**	९. एवम्
च	४. और	**गोत्राणाम्**	१२. पर्वतों का (उत्पादक है)
अपि	६. तथा	**अस्थि**	१०. (उनकी) हड्डियों का
पश्चिमः ।	१. (विराट् पुरुष की) पीठ	**संहतिः ॥**	११. समूह

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष की पीठ पराजय, पाप और अज्ञान का तथा नाड़ियाँ महानद और नदियों का एवम् उनकी हड्डियों का समूह पर्वतों का उत्पादक है ।

दशमः श्लोकः

अव्यक्तरससिन्धूनां भूतानां निधनस्य च ।
उदरं विदितं पुंसो हृदयं मनसः पदम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अव्यक्त रस सिन्धूनाम्, भूतानाम् निधनस्य च ।
उदरम् विदितम् पुंसः, हृदयम् मनसः पदम् ॥

शब्दार्थ—

अव्यक्त	३. मूल प्रकृति	**उदरम्**	२. उदर
रस	४. मधुरादि रस	**विदितम्**	१२. कहा गया है
सिन्धूनाम्	५. समुद्र	**पुंसः**	१. विराट् पुरुष का
भूतानाम्	६. प्राणी	**हृदयम्**	९. (उनका) हृदय
निधनस्य	८. मृत्यु का (और)	**मनसः**	१०. मन का
च ।	७. तथा	**पदम् ॥**	११. आश्रय

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का उदर मूल-प्रकृति, मधुरादि-रस, समुद्र, प्राणी तथा मृत्यु का और उनका हृदय मन का आश्रय कहा गया है ।

एकादशः श्लोकः

धर्मस्य मम तुभ्यं च कुमाराणां भवस्य च ।
विज्ञानस्य च सत्त्वस्य परस्यात्मा परायणम् ।। ११ ।।

पदच्छेद—

धर्मस्य मम तुभ्यम् च, कुमाराणाम् भवस्य च ।
विज्ञानस्य च सत्त्वस्य, परस्य आत्मा परायणम् ।।

शब्दार्थ—

धर्मस्य	३.	धर्म का	विज्ञानस्य	१०.	ब्रह्मविद्या का
मम	४.	मेरा	च	११.	एवम्
तुभ्यम्	६.	तुम्हारा	सत्त्वस्य	१२	अन्तःकरण का
च	५.	और	परस्य	१	विराट् पुरुष की
कुमाराणाम्	७.	सनकादि कुमारों का	आत्मा	२.	आत्मा
भवस्य	९.	भगवान् शंकर का	परायणम् ।।	१३.	आश्रय है
च ।	८.	तथा			

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! विराट् पुरुष की आत्मा धर्म का, मेरा और तुम्हारा, सनकादि कुमारों का तथा भगवान् शंकर का, ब्रह्मविद्या का एवं अन्तःकरण का आश्रय है ।

द्वादशः श्लोकः

अहं भवान् भवश्चैव त इमे मुनयोऽग्रजाः ।
सुरासुरनरा नागाः खगा मृगसरीसृपाः ।। १२ ।।

पदच्छेद—

अहम् भवान् भवः च एव, ते इमे मुनयः अग्रजाः ।
सुर असुर नराः नागाः, खगाः मृग सरीसृपाः ।।

शब्दार्थ—

अहम्	१.	(हे नारद जी !) मैं	अग्रजाः ।	७	तुम्हारे बड़े भाई
भवान्	२.	आप	सुर	१०.	देव
भवः	३.	भगवान् शंकर	असुर	११.	दानव
च	४.	और	नराः	१२	मनुष्य
एव	९.	तथा	नागाः	१३	सर्प
ते	६.	प्रसिद्ध	खगाः	१५.	पक्षी (एवं)
इमे	५.	ये	मृग	१४.	पशु
मुनयः	८.	सनकादि कुमार	सरीसृपाः ।।	१६	रेंगने वाले जन्तु (विराट् पुरुष के रूप हैं)

श्लोकार्थ—हे नारद जी ! मैं, आप, भगवान् शंकर और ये प्रसिद्ध तुम्हारे बड़े भाई सनकादि कुमार तथा देव दानव मनुष्य सर्प पशु पक्षी एवं रेंगने वाले जन्तु विराट पुरुष के रूप हैं

त्रयोदशः श्लोकः

गन्धर्वाप्सरसो यक्षा रक्षोभूतगणोरगाः ।
पशवः पितरः सिद्धा विद्याध्राश्चारणा द्रुमाः ॥ १३ ॥

पदच्छेद—

गन्धर्व अप्सरसः यक्षाः, रक्षः भूत गण उरगाः ।
पशवः पितरः सिद्धाः, विद्याध्राः चारणाः द्रुमाः ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व	१	गन्धर्व	पशवः	७	पशु
अप्सरसः	२.	अप्सरा	पितरः	८.	पितर
यक्षाः	३.	यक्ष	सिद्धाः	९.	सिद्ध
रक्षः	४.	राक्षस	विद्याध्राः	१०.	विद्याधर
भूतगण	५	भूत-प्रेत	चारणाः	११.	चारण (और)
उरगाः ।	६.	सर्प	द्रुमाः ॥	१२.	वृक्ष (विराट् पुरुष के रूप हैं)

श्लोकार्थ- गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, राक्षस, भूत-प्रेत, सर्प, पशु, पितर, सिद्ध, विद्याधर, चारण और वृक्ष विराट् पुरुष के रूप हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

अन्ये च विविधा जीवा जलस्थलनभौकसः ।
ग्रहर्क्षकेतवस्तारास्तडितः स्तनयित्नवः ॥ १४ ॥

पदच्छेद—

अन्ये च विविधाः जीवाः, जल स्थल नभ ओकसः ।
ग्रह ऋक्ष केतवः ताराः, तडितः स्तनयित्नवः ॥

शब्दार्थ—

अन्ये	३.	दूसरे	ग्रह	७.	सूर्यादि ग्रह
च	६.	तथा	ऋक्ष	८.	नक्षत्र
विविधाः	४.	अनेकों	केतवः	९.	पुच्छल तारा
जीवाः	५.	प्राणी	ताराः	१०.	तारा-मण्डल
जल स्थल	१.	जल-थल और	तडितः	११.	बिजली और
नभ ओकसः ।	२.	आकाश के निवासी	स्तनयित्नवः ॥	१२.	बादल भी विराट् पुरुष के रूप हैं

श्लोकार्थ- जल-थल और आकाश के निवासी दूसरे अनेकों प्राणी तथा सूर्यादि ग्रह, नक्षत्र, पुच्छल तारा तारा मण्डल बिजली और बादल भी विराट पुरुष के रूप हैं।

पञ्चदशः श्लोकः

सर्वं पुरुष एवेदं भूतं भव्यं भवच्च यत् ।
तेनेदमावृतं विश्वं वितस्तिमधितिष्ठति ॥ १५ ॥

सर्वम् पुरुषः एव इदम्, भूतम् भव्यम् भवत् च यत् ।
तेन इदम् आवृतम् विश्वम्, वितस्तिम् अधितिष्ठति ॥

७.	सब	च	३.	और
८.	विराट् पुरुष का	यत् ।	५.	जो कुछ (है)
९.	ही (रूप है)	तेन	१०.	उसी (विराट् पुरु
६.	यह	इदम्	१२.	यह
१.	बीता हुआ	आवृतम्	११.	ढका हुआ
२.	आने वाला	विश्वम्	१३.	ब्रह्माण्ड
४.	वर्तमान	वितस्तिम्	१४.	(उसके) दस अगुल
		अधितिष्ठति ॥	१५.	स्थित है

ा हुआ, आनेवाला और वर्तमान जो कुछ है, यह सब विराट् पुरुष का ही रूप
ट् पुरुष से ढका हुआ यह ब्रह्माण्ड उसके दस अंगुल में स्थित है ।

षोडशः श्लोकः

स्वधिष्ण्यं प्रतपन् प्राणा बहिश्च प्रतपत्यसौ ।
एवं विराजं प्रतपंस्तपत्यन्तर्बहिः पुमान् ॥ १६ ॥

स्वधिष्ण्यम् प्रतपन् प्राणः, बहिः च प्रतपति असौ ।
एवम् विराजम् प्रतपन्, तपति अन्तः बहिः पुमान् ॥

४.	अपने मण्डल को	एवम्	८.	इसी प्रकार
५	प्रकाशित करता हुआ	विराजम्	१०.	विराट् विग्रह को
३.	सूर्य	प्रतपन्	११.	प्रकाशित करता हु
६.	बाहर (भी)	तपति	१४.	प्रकाशित करता है
१	जिस प्रकार	अन्तः	१२.	अन्दर और
७.	प्रकाश करता है	बहिः	१३.	बाहर
२	(दूर स्थित) वह	पुमान् ॥	९.	विराट् पुरुष

प्रकार दूर स्थित वह सूर्य अपने मण्डल को प्रकाशित करता हुआ बाहर
ता है, इसी प्रकार विराट् पुरुष विराट् विग्रह को प्रकाशित करता हुआ अन्दर अ
शित करता है

सप्तदशः श्लोकः

सोऽमृतस्याभयस्येशो मर्त्यमन्नं यदत्यगात् ।
महिमैष ततो ब्रह्मन् पुरुषस्य दुरत्ययः ।। १७ ।।

पदच्छेद---

सः अमृतस्य अभयस्य ईशः, मर्त्यम् अन्नम् यद् अत्यगात् ।
महिमा एषः ततः ब्रह्मन्, पुरुषस्य दुरत्ययः ।।

शब्दार्थ---

सः	२.	वह (परमात्मा)	अत्यगात् ।	८.	परे है
अमृतस्य	३.	अविनाशी	महिमा	१३.	लीला
अभयस्य	४.	मोक्ष पद का	एषः	१२.	यह
ईशः	५.	स्वामी है (और)	ततः	९.	इसलिए
मर्त्यम्	६.	विनाशी	ब्रह्मन्	१०.	हे नारद जी !
अन्नम्	७.	कर्मफल से	पुरुषस्य	११.	परमात्मा की
यद्	१.	क्योंकि	दुरत्ययः ।।	१४.	अपार है

श्लोकार्थ---क्योंकि वह परमात्मा अविनाशी मोक्ष पद का स्वामी है और विनाशी कर्मफल से परे है, इसलिए हे नारद जी ! परमात्मा की यह लीला अपार है ।

अष्टादशः श्लोकः

पादेषु सर्वभूतानि पुंसः स्थितिपदो विदुः ।।
अमृतं क्षेममभयं त्रिमूर्ध्नोऽधायि मूर्धसु ।।१८।।

पदच्छेद---

पादेषु सर्व भूतानि, पुंसः स्थिति पदः विदुः ।
अमृतम् क्षेमम् अभयम्, त्रिमूर्ध्नः अधायि मूर्धसु ।।

शब्दार्थ---

पादेषु	४.	पैर में	अमृतम्	७.	अविनाशी
सर्व	१.	सभी	क्षेमम्	८.	मंगलमय
भूतानि	२.	प्राणियों को	अभयम्	९.	मोक्ष पद
पुंसः	३.	विराट् पुरुष के	त्रिमूर्ध्नः	१०.	त्रिकोली के मस्तक महर्लोक से
स्थिति पदः	५.	स्थित	अधायि	१२.	स्थित है
विदुः ।	६.	समझना चाहिए (तथा)	मूर्धसु ।।	११.	ऊपर (जन, तप और सत्यलोकमें)

श्लोकार्थ---सभी प्राणियों को विराट् पुरुष के पैर में स्थित समझना चाहिए तथा अविनाशी मंगलमय मोक्ष पद त्रिलोकी के मस्तक महर्लोक से ऊपर जन, तप और सत्यलोक में स्थित है ।

एकोनविंशः श्लोकः

पादास्त्रयो बहिश्चासन्नप्रजानां य आश्रमाः ।
अन्तस्त्रिलोक्यास्त्वपरो गृहमेधोऽबृहद्व्रतः ॥१९॥

पदच्छेद—

पादाः त्रयः बहिः च आसन्, अप्रजानाम् ये आश्रमाः ।
अन्तः त्रिलोक्याः तु अपरः, गृहमेधः अबृहत् व्रतः ॥

शब्दार्थ—

पादाः	३. लोक		अन्तः	१४.	अन्दर (ही रहते हैं)
त्रयः	२. जन, तप और सत्य		त्रिलोक्याः	१३.	भू, भुवः और स्वर्ग के
बहिः च	१. त्रिलोकी से ऊपर		तु	८	किन्तु
आसन्	४. स्थित हैं		अपरः	११.	(ब्रह्मचारियों से) निम्न
अप्रजानाम्	६. ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारियों का		गृहमेधः	१२.	गृहस्थ जन
ये	५. जहाँ		अबृहत्	९.	आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत न
आश्रमाः ।	७. निवास है		व्रतः ॥	१०.	रखने वाले

श्लोकार्थ—त्रिलोकी से ऊपर जन, तप और सत्य लोक स्थित हैं, जहाँ ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारियों का निवास है; किन्तु आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत न रखने वाले ब्रह्मचारियों से निम्न गृहस्थजन भू, भुवः और स्वर्गलोक के अन्दर ही रहते हैं ।

विंशः श्लोकः

सृती विचक्रमे विष्वङ् साशनानशने उभे ।
यदविद्या च विद्या च पुरुषस्तूभयाश्रयः ॥२०॥

पदच्छेद—

सृती विचक्रमे विष्वङ्, स अशन अनशने उभे ।
यद् अविद्या च विद्या च, पुरुषः तु उभय आश्रय ॥

शब्दार्थ—

सृती	५. मार्गों पर	अविद्या	८.	कर्मकाण्ड रूप
विचक्रमे	६. भ्रमण करता है	च	९.	और
विष्वङ्	१. जीवात्मा	विद्या च	१०.	उपासना रूप हैं
स अशन	२. सकाम	पुरुषः	१२.	परमात्मा
अनशने	३. निष्काम	तु	११.	तथा
उभे ।	४. इन दोनों	उभय	१३.	दोनों (मार्गों) का
यद्	७. ये (मार्ग)	आश्रयः ॥	१४.	आधार है

श्लोकार्थ—जीवात्मा सकाम-निष्काम इन दोनों मार्गों पर भ्रमण करता है । ये मार्ग कर्मकाण्ड-रूप और उपासना रूप हैं तथा परमात्मा दोनों मार्गों का आधार है ।

एकविंश: श्लोक:

यस्मादण्डं विराड् जज्ञे भूतेन्द्रियगुणात्मकः।
तद् द्रव्यमत्यगाद् विश्वं गोभिः सूर्य इवातपन् ॥२१॥

यस्मात् अण्डम् विराट् जज्ञे, भूत इन्द्रिय गुण आत्मकः।
तद् द्रव्यम् अत्यगात् विश्वम्, गोभिः सूर्यः इव अतपन् ॥

जिस (परमात्मा) से	तद्	९.	वह (परमात्मा)
ब्रह्माण्ड (तथा)	द्रव्यम्	१५.	सभी वस्तुओं से
विराट् पुरुष	अत्यगात्	१६.	अलग है
उत्पन्न हुआ है	विश्वम्	११.	पूरे विश्व को
पञ्च महाभूत	गोभिः	१०.	(अपनी) किरणों
एकादश इन्द्रिय और	सूर्यः	१३.	सूर्य के
सत्त्व, रजस्, तमस् गुण	इव	१४.	समान
स्वरूप	अतपन् ॥	१२.	प्रकाशित करने व

मात्मा से ब्रह्माण्ड तथा पंच महाभूत, एकादश इन्द्रिय और सत्त्व, रजस्, वराट् पुरुष उत्पन्न हुआ है; वह परमात्मा अपनी किरणों से पूरे विश्व ले सूर्य के समान सभी वस्तुओं से अलग है।

द्वाविंश: श्लोक:

यदास्य नाभ्यान्नलिनादहमासं महात्मनः।
नाविदं यज्ञसंभारान् पुरुषावयवादृते ॥२२॥

यदा अस्य नाभ्यात् नलिनात्, अहम् आसम् महात्मनः।
न अविदम् यज्ञ संभारान्, पुरुष अवयवात् ऋते ॥

जब	न	१३.	नहीं
इस	अविदम्	१४.	पाया
नाभि के	यज्ञ	११.	यज्ञ की
कमल से	संभारान्	१२.	सामग्रियों को
मैं	पुरुष	८.	विराट् पुरुष के
उत्पन्न हुआ था (उस समय)	अवयवात्	९.	अंगों के
परमात्मा की	ऋते ॥	१०.	अतिरिक्त

स परमात्मा की नाभि के कमल से उत्पन्न हुआ था; उस समय विराट् पु रक्त यज्ञ की सामग्रियों को नहीं पाया।

त्रयोविंशः श्लोकः

तेषु यज्ञस्य पशवः सवनस्पतयः कुशाः ।
इदं च देवयजनं कालश्चोरुगुणान्वितः ॥२३॥

पदच्छेद—

तेषु यज्ञस्य पशवः, स वनस्पतयः कुशाः ।
इदम् च देव यजनम्, कालः च उरु गुण अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

तेषु	१.	(मैंने) उस (विराट् के अंगों) से	देव	८.	यज्ञ
यज्ञस्य	२.	यज्ञ के	यजनम्	९.	भूमि का
पशवः	३.	पशु	कालः	१४.	शुभ मुहूर्त्त का (संकलन किया)
स वनस्पतयः	४.	वनस्पति तथा	च	१०.	एवं
कुशाः ।	५.	कुशा	उरु	११.	उत्तम
इदम्	७.	इस	गुण	१२.	गुणों से
च	६.	और	अन्वितः ।	१३.	युक्त

श्लोकार्थ—मैंने उस विराट् के अंगों से यज्ञ के पशु, वनस्पति तथा कुशा और इस यज्ञ-भूमि का एवं उत्तम गुणों से युक्त शुभ मुहूर्त्त का संकलन किया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

वस्तून्योषधयः स्नेहा रसलोहमृदो जलम् ।
ऋचो यजूंषि सामानि चातुर्होत्रं च सत्तम ॥२४॥

पदच्छेद—

वस्तूनि ओषधयः स्नेहाः, रस लोह मृदः जलम् ।
ऋचः यजूंषि सामानि, चातुर्होत्रम् च सत्तम ॥

शब्दार्थ—

वस्तूनि	२.	यज्ञपात्रादि वस्तु	ऋचः यजूंषि	७.	ऋग्वेद, यजुर्वेद
ओषधयः	३.	जौ चावल आदि ओषधि	सामानि	८.	सामवेद
स्नेहाः	४.	घी आदि द्रव पदार्थ	चातुर्होत्रम्	१०	चारों होता (इन सबको मैंने विराट् से एकत्रित किया)
रस लोह	५.	मधुरादि रस, लोहा	च	९.	और
मृदः जलम् ।	६.	मिट्टी, जल	सत्तम ॥	१.	हे मुनिवर !

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! यज्ञपात्रादि वस्तु, जौ-चावल आदि ओषधि, घी आदि द्रव पदार्थ, मधुरादि रस, लोहा, मिट्टी, जल, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और चारों होता इन सबको मैंने विराट् पुरुष से एकत्रित किया था ।

पञ्चविंशः श्लोकः

नामधेयानि मन्त्राश्च दक्षिणाश्च व्रतानि च ।
देवतानुक्रमः कल्पः सङ्कल्पस्तन्त्रमेव च ॥२५॥

पदच्छेद—

नामधेयानि मन्त्राः च, दक्षिणाः च व्रतानि च ।
देवता अनुक्रमः कल्पः, सङ्कल्पः तन्त्रम् एव च ॥

शब्दार्थ—

नामधेयानि	१.	नाम संज्ञा	देवता	८.	देवताओं के
मन्त्राः	२.	मन्त्र	अनुक्रमः	९.	क्रम
च	३.	और	कल्पः	१०.	यज्ञ विधान
दक्षिणाः	४.	दक्षिणा	सङ्कल्पः	११.	संकल्प
च	५.	तथा	तन्त्रम्	१३.	शास्त्र को
व्रतानि	६.	व्रत	एव	१४.	भी (मैंने विराट् पुरुष के अंगों से इकट्ठा किया)
च ।	७.	एवम्	च॥	१२.	तथा

श्लोकार्थ—नाम संज्ञा, मन्त्र और दक्षिणा तथा व्रत एवम् देवताओं के क्रम, यज्ञ-विधान, संकल्प तथा शास्त्र को भी मैंने विराट् पुरुष के अंगों से इकट्ठा किया ।

षड्विंशः श्लोकः

गतयो मतयः श्रद्धा प्रायश्चित्तं समर्पणम् ।
पुरुषावयवैरेते सम्भाराः सम्भृता मया ॥२६॥

पदच्छेद—

गतयः मतयः श्रद्धा, प्रायश्चित्तम् समर्पणम् ।
पुरुष अवयवैः एते, सम्भाराः सम्भृताः मया ॥

शब्दार्थ—

गतयः	४.	क्रिया	पुरुष	२.	विराट् पुरुष के
मतयः	५.	ज्ञान	अवयवैः	३.	अंगों से
श्रद्धा	६.	भक्ति	एते	९.	इन
प्रायश्चित्तम्	७.	प्रायश्चित्त (तथा)	सम्भाराः	१०.	सभी वस्तुओं को
समर्पणम् :	८.	समर्पण-भाव	सम्भृताः	११.	इकट्ठा किया
			मया ॥	१.	मैंने

श्लोकार्थ—मैंने विराट् पुरुष के अंगों से क्रिया, ज्ञान, भक्ति, प्रायश्चित्त तथा समर्पण-भाव इन सभी वस्तुओं को इकटठा किया

एकोनत्रिंश: श्लोक:

ततश्च मनवः काले ईजिरे ऋषयोऽपरे ।
पितरो विबुधा दैत्या मनुष्याः क्रतुभिर्विभुम् ॥२९॥

पदच्छेद—

ततः च मनवः काले, ईजिरे ऋषयः अपरे ।
पितरः विबुधाः दैत्याः, मनुष्याः क्रतुभिः विभुम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	पितरः	५.	पितर
च	८	तथा	विबुधाः	६.	देवता
मनवः	२.	मनु	दैत्याः	७.	दानव
काले	१०.	समय-समय पर	मनुष्याः	९.	मनुष्यों ने
ईजिरे	१३.	आराधना की थी	क्रतुभिः	११.	यज्ञों से
ऋषयः	४.	ऋषि गण	विभुम् ॥	१२.	परमात्मा की
अपरे ।	३.	दूसरे			

श्लोकार्थ—तदनन्तर मनु, दूसरे ऋषिगण, पितर, देवता, दानव तथा मनुष्यों ने समय-समय पर यज्ञों से परमात्मा की आराधना की थी ।

त्रिंश: श्लोक:

नारायणे भगवति तदिदं विश्वमाहितम् ।
गृहीतमायोरुगुणः सर्गादावगुणः स्वतः ॥३०॥

पदच्छेद—

नारायणे भगवति, तद् इदम् विश्वम् आहितम् ।
गृहीत माया उरु गुणः, सर्ग आदौ अगुणः स्वतः ॥

शब्दार्थ—

नारायणे	५.	नारायण में	माया	११.	माया के
भगवति	४.	भगवान्	उरु	१२.	महान्
तद्	१.	इस प्रकार	गुणः	१३.	गुणों को
इदम्	२.	यह	सर्ग	९.	सृष्टि के
विश्वम्	३.	सारा संसार	आदौ	१०.	प्रारम्भ में
आहितम् ।	६.	स्थित है	अगुणः	८.	निर्गुण होने पर भी
गृहीत	१४.	धारण करते हैं	स्वतः ॥	७.	(वे भगवान्) स्वयं

श्लोकार्थ—इस प्रकार यह सारा संसार भगवान् नारायण में स्थित है । वे भगवान् स्वयं निर्गुण होने पर भी सृष्टि के प्रारम्भ में माया के महान् गुणों को धारण करते हैं ।

एकत्रिंशः श्लोकः

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुषरूपेण परिपाति त्रिशक्तिधृक् ॥ ३१ ॥

पदच्छेद—

सृजामि तद् नियुक्तः अहम्, हरः हरति तद् वशः ।
विश्वम् पुरुष रूपेण, परिपाति त्रिशक्ति धृक् ॥

शब्दार्थ—

सृजामि	५.	सृष्टि करता हूँ	**वशः ।**	८.	आधीन होकर
तद्	२.	उसी (परमात्मा) की	**विश्वम्**	४.	संसार की
नियुक्तः	३.	प्रेरणा से	**पुरुष**	१२.	विष्णु
अहम्	१.	मैं	**रूपेण**	१३.	रूप से
हरः	६.	भगवान् शंकर	**परिपाति**	१४.	पालन करते हैं
हरति	९.	सहार करते हैं (तथा)	**त्रिशक्ति**	१०.	उत्पत्ति, पालन और संहार की
तद्	७.	उसी के	**धृक् ॥**	११.	शक्तियों को धारण करते हुए

श्लोकार्थ—मैं उसी परमात्मा की प्रेरणा से संसार की सृष्टि करता हूँ। भगवान् शंकर उसी के आधीन होकर संहार करते हैं तथा वे स्वयं उत्पत्ति, पालन और संहार की शक्तियों को धारण करते हुए विष्णु रूप से पालन करते है।

द्वात्रिंशः श्लोकः

इति तेऽभिहितं तात यथेदमनुपृच्छसि ।
नान्यद्भगवतः किंचिद्भाव्यं सदसदात्मकम् ॥ ३२ ॥

पदच्छेद—

इति ते अभिहितम् तात, यथा इदम् अनुपृच्छसि ।
न अन्यत् भगवतः किंचित्, भाव्यम् सत् असत् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

इति	५.	उसे	**न**	१४.	नहीं है
ते	६.	तुम्हें	**अन्यत्**	१३.	भिन्न
अभिहितम्	७.	बता दिया	**भगवतः**	१२.	भगवान् से
तात	१.	हे पुत्र !	**किंचित्**	१०.	कोई भी
यथा	२.	जैसा	**भाव्यम्**	११.	वस्तु
इदम्	३.	इसे	**सत् असत्**	८.	भाव-अभाव
अनुपृच्छसि ।	४.	पूछे हो	**आत्मकम् ॥**	९.	रूप

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! जैसा इसे पूछे हो, उसे तुम्हें बता दिया। भाव-अभाव रूप कोई भी वस्तु भगवान् से भिन्न नहीं है।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

न भारती मेऽङ्ग मृषोपलक्ष्यते, न वै क्वचिन्मे मनसो मृषा गतिः।
न मे हृषीकाणि पतन्त्यसत्पथे, यन्मे हृदौत्कण्ठ्यवता धृतो हरिः ॥३३

न भारती मे अङ्ग मृषा उपलक्ष्यते, न वै क्वचित् मे मनसः मृषा गतिः।
न मे हृषीकाणि पतन्ति असत् पथे, यद् मे हृदा औत्कण्ठ्यवता धृतः हरिः ॥

५	नहीं	न	१४.	नहीं
३.	वाणी	मे	११.	मेरी
२	मेरी	हृषीकाणि	१२.	इन्द्रियाँ
१.	हे पुत्र !	पतन्ति	१५.	जाती हैं
४.	वृथा	असत् पथे,	१३.	कुमार्ग में
६	होती है	यद्	१६.	क्योंकि
१०.	नहीं होता है (तथा)	मे हृदा	१७.	मेरे हृदय ने
८.	कभी भी	औत्कण्ठ्यवता	१८.	बड़ी लालसा से
७.	मेरे मन में	धृतः	२०.	धारण कर रखा है
९.	असत् संकल्प	हरिः ॥	१९.	भगवान् श्री हरि क

पुत्र ! मेरी वाणी वृथा नहीं होती है, मेरे मन में कभी भी असत् संकल्प नहीं होत..
ी इन्द्रियाँ कुमार्ग में नहीं जाती हैं; क्योंकि मेरे हृदय ने बड़ी लालसा से भगवान्
धारण कर रखा है।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

सोऽहं समाम्नायमयस्तपोमयः, प्रजापतीनामभिवन्दितः पतिः।
आस्थाय योगं निपुणं समाहित-स्तं नाध्यगच्छं यत आत्मसम्भवः ॥३'

सः अहम् समाम्नायमयः तपोमयः, प्रजापतीनाम् अभिवन्दितः पतिः।
आस्थाय योगम् निपुणम् समाहितः, तम् न अध्यगच्छम् यतः आत्म सम्भवः ॥

६.	वही मैं	निपुणम्	८.	भलीभाँति
१.	वेदमूर्ति	समाहितः,	७.	सावधान मन से
२	तपोमूर्त्ति	तम्	११	उसे
३.	प्रजापतियों से	न	१२.	नहीं
४.	पूजित (और)	अध्यगच्छम्	१३.	जान सका
५.	(उनका) स्वामी	यतः	१४.	जिससे
१०.	स्थित होकर (भी)	आत्म	१५.	मैं
९.	योग में	सम्भवः ॥	१६.	उत्पन्न हुआ हूँ

मूर्ति, तपोमूर्ति, प्रजापतियों से पूजित और उनका स्वामी वही मैं सावधान मन से
ति योग में स्थित होकर भी उसे नहीं जान सका, जिससे मैं उत्पन्न हुआ हूँ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नतोऽस्म्यहं तच्चरणं समीयुषां, भवच्छिदं स्वस्त्ययनं सुमङ्गलम् ।
यो ह्यात्ममायाविभवं स्म पर्यगाद्, यथा नभः स्वान्तमथापरे कुतः ।। ३५

पदच्छेद—नतः अस्मि अहम् तद् चरणम् समीयुषाम्, भवच्छिदम् स्वस्त्ययनम् सुमङ्गलम् ।
यः हि आत्ममाया विभवम् स्म पर्यगात्, यथा नभः स्व अन्तम् अथ अपरे कुतः ।।

शब्दार्थ—

नतः अस्मि	८. नत मस्तक हूँ	हि	१०. कि		
अहम्	१. मैं	आत्ममाया	११. अपनी माया के		
तद्	६. उस (परमात्मा) के	विभवम्	१२. विस्तार को		
चरणम्	७. चरणों में	स्म पर्यगात्,	१३. नहीं जानता है		
समीयुषाम्,	२. शरणागत (भक्तों) को	यथा नभः	१४. जैसे आकाश		
भवच्छिदम्	३. संसार से मुक्त करने वाले	स्व अन्तम्	१५. अपने अन्त को (नहीं जा		
स्वस्त्ययनम्	४. कल्याणकारी (एवं)	अथ	१६. अतः		
सुमङ्गलम् ।	५. मंगलमय	अपरे	१७. दूसरे लोग (उसे)		
यः	९. जो	कुतः ।	१८. कैसे (जान सकते हैं ?)		

श्लोकार्थ—मैं शरणागत भक्तों को संसार से मुक्त करने वाले, कल्याणकारी एवं मंगलमय उस परमा के चरणों में नत मस्तक हूँ; जो कि अपनी माया के विस्तार को नहीं जानता है। जैसे आ अपने अन्त को नहीं जानता; अतः दूसरे लोग उसे कैसे जान सकते हैं ? ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

नाहं न यूयं यदृतां गतिं विदु-र्न वामदेवः किमुतापरे सुराः ।
तन्मायया मोहितबुद्धयस्त्विदं, विनिर्मितं चात्मसमं विचक्ष्महे ।। ३६ ।।

पदच्छेद—न अहम् न यूयम् यद् ऋताम् गतिम् विदुः, न वामदेवः किमुत अपरे सुराः ।
तद् मायया मोहित बुद्धयः तु इदम्, विनिर्मितम् च आत्म समम् विचक्ष्महे ।।

शब्दार्थ—

न अहम्	४. न मैं	तद् मायया	१०. उसी की माया के कारण
न यूयम्	५. न तुम लोग	मोहित बुद्धयः	११. मलिन बुद्धि वाले
यद्	१. जिस (परमात्मा) के	तु	१२. (हम लोग) तो
ऋताम्	२. वास्तविक	इदम्,	१४. इस संसार के विषय मे
गतिम्	३. स्वरूप को	विनिर्मितम्	१३. रचे गये
विदुः,	७. जानते हैं (फिर)	च	१५. केवल
न वामदेवः	६. न शंकर जी (ही)	आत्म समम्	१६. अपनी बुद्धि के अनुसार
किमुत	९. बात ही क्या है	विचक्ष्महे ।।	१७. सोचते हैं
अपरे सुराः ।	८. दूसरे देवताओं की		

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को न मैं, न तुम लोग, न शंकर जी ही जानते हैं, फि दूसरे देवताओं की बात ही क्या है ? उसी की माया के कारण मलिन बुद्धिवाले हम लोग रचे गये इस संसार के विषय में केवल अपनी बुद्धि के अनुसार सोचते हैं

सप्तत्रिंशः श्लोकः

यस्यावतारकर्माणि गायन्ति ह्यस्मदादयः ।
न यं विदन्ति तत्त्वेन तस्मै भगवते नमः ॥३७॥

पदच्छेद—

यस्य अवतार कर्माणि, गायन्ति हि अस्मद् आदयः ।
न यम् विदन्ति तत्त्वेन, तस्मै भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	३.	जिस परमात्मा के	न	१०.	नहीं
अवतार	४.	अवतार की	यम्	८.	जिसे
कर्माणि	५.	लीलाओं का	विदन्ति	११.	जानते हैं
गायन्ति	६	गान करते हैं	तत्त्वेन	९.	स्वरूप से
हि	७	किन्तु	तस्मै	१२.	उस
अस्मद्	१.	हम	भगवते	१३	परमात्मा को
आदयः ।	२.	लोग	नमः ॥	१४	नमस्कार है

श्लोकार्थ हम लोग जिस परमात्मा के अवतार की लीलाओं का गान तो करते हैं, किन्तु जिसे स्वरूप से नहीं जानते हैं: उस परमात्मा को नमस्कार है ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

स एव आद्यः पुरुषः कल्पे कल्पे सृजत्यजः ।
आत्माऽऽत्मन्यात्मनाऽऽत्मानं संयच्छति च पाति च ॥३८॥

पदच्छेद—

सः एषः आद्यः पुरुषः, कल्पे कल्पे सृजति अजः ।
आत्मा आत्मनि आत्मना आत्मानम्, संयच्छति च पाति च ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वही	आत्मा	६.	परमात्मा
एषः	२	यह	आत्मनि	९.	अपने में
आद्यः	४	आदि	आत्मना	१०.	अपने से
पुरुषः	५.	पुरुष	आत्मानम्	११.	अपनी
कल्पे	७.	प्रत्येक	संयच्छति	१६.	संहार करता है
कल्पे	८.	कल्प में	च	१५.	तथा
सृजति	१२.	सृष्टि करता है	पाति	१४	पालन करता है
अजः ।	३.	अजन्मा	च ॥	१३.	और

श्लोकार्थ—वही यह अजन्मा आदि पुरुष परमात्मा प्रत्येक कल्प में अपने में अपने से अपनी सृष्टि करता है और पालन करता है तथा संहार करता है ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

विशुद्धं केवलं ज्ञानं प्रत्यक् सम्यगवस्थितम् ।
सत्यं पूर्णमनाद्यन्तं निर्गुणं नित्यमद्वयम् ॥ ३९ ॥

विशुद्धम् केवलम् ज्ञानम्, प्रत्यक् सम्यक् अवस्थितम् ।
सत्यम् पूर्णम् अनादि अन्तम्, निर्गुणम् नित्यम् अद्वयम् ॥

१	(वह परमात्मा) माया से रहित	**सत्यम्**	७.	(वह तीनों कालों में) सत्य
२	केवल	**पूर्णम्**	८.	परिपूर्ण
३	ज्ञान स्वरूप (और)	**अनादि अन्तम्**	९.	जन्म-मृत्यु से रहित
४	आत्मरूप से	**निर्गुणम्**	१०.	सत्त्वादि तीनों गुणों से अस-
५	सभी जगह	**नित्यम्**	११.	सनातन (और)
६	स्थित है	**अद्वयम् ॥**	१२	एकरूप है

परमात्मा माया से रहित, केवल ज्ञानस्वरूप और आत्मरूप से सभी जगह स्थित है तीनों कालों में सत्य, परिपूर्ण, जन्म-मृत्यु से रहित, सत्त्वादि तीनों गुणों से असंग, सनातन र एकरूप है ।

चत्वारिंशः श्लोकः

ऋषे विदन्ति मुनयः प्रशान्तात्मेन्द्रियाशयाः ।
यदा तदेवासत्तर्कैस्तिरोधीयेत विप्लुतम् ॥ ४० ॥

ऋषे विदन्ति मुनयः, प्रशान्त आत्मन् इन्द्रिय आशयाः ।
यदा तद् एव असत् तर्कैः, तिरोधीयेत विप्लुतम् ॥

१	हे नारद !	**यदा**	८.	जब (लोग)
७	जानते हैं	**तद्**	९.	उसी
६	मुनि जन (उस परमात्मा को)	**एव**	१०.	परमात्मा को
५	शान्त किये हुए	**असत्**	११.	दुष्ट
२	(अपने) शरीर	**तर्कैः**	१२.	विचारों से
३	इन्द्रिय और	**तिरोधीयेत**	१३.	मिथ्या मान लेते हैं
४	अन्तःकरण को	**विप्लुतम् ॥**	१४.	(तब उन्हें उसका) दर्शन नहीं होता है

रद ! अपने शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण को शान्त किये हुए मुनि-जन उस परमात्मा जानते हैं । जब लोग उसी परमात्मा को दुष्ट विचारों से मिथ्या मान लेते हैं, तब उन्हें ा दर्शन नहीं होता है

एकचत्वारिंशः श्लोकः

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य, कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।
द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि, विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥४१॥

आद्यः अवतारः पुरुषः परस्य, कालः स्वभावः सत् असत् मनः च ।
द्रव्यम् विकारः गुणः इन्द्रियाणि, विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥

२. पहला		द्रव्यम्	९.	पंच महाभूत
३. अवतार		विकारः	१०.	अहंकार
४. विराट् पुरुष		गुणः	११.	सत्त्वादि गुण
१ भगवान् का		इन्द्रियाणि,	१२.	इन्द्रियाँ
५. काल		विराट्	१३.	ब्रह्माण्ड शरीर
६. स्वभाव		स्वराट्	१४.	ब्रह्माण्ड पुरुष
७. कारण-कार्य		स्थास्नु	१५.	स्थावर
८. मन		चरिष्णु	१७.	जंगम (ये सब)
१६. और		भूम्नः ॥	१८.	भगवान् के (रूप है)

गवान् का पहला अवतार विराट् पुरुष, काल, स्वभाव, कारण-कार्य, मन, पंच
हंकार, सत्त्वादि गुण, इन्द्रियाँ, ब्रह्माण्ड शरीर, ब्रह्माण्ड पुरुष, स्थावर और जगम
गवान् के रूप हैं ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अहं भवो यज्ञ इमे प्रजेशा, दक्षादयो ये भवदादयश्च ।
स्वर्लोकपालाः खगलोकपाला, नृलोकपालास्तललोकपालाः ॥४२॥

अहम् भवः यज्ञः इमे प्रजेशाः, दक्ष आदयः ये भवत् आदयः च ।
स्वर्लोकपालाः खग लोकपालाः, नृलोकपालाः तल लोकपालाः ॥

१. मैं		च ।	९.	और
२. शंकर जी		स्वः	१०.	स्वर्गलोक के
३. विष्णु भगवान्		लोकपालाः	११.	लोकपाल
४. ये		खगलोक	१२.	अन्तरिक्ष लोक के
६. प्रजापति (तथा)		पालाः,	१३.	रक्षक
५. दक्ष इत्यादि दस		नृलोकपालाः	१४.	पृथ्वीलोक के रक्षक
७. जो		तललोक	१५.	पाताल लोक के
८. आप-सरीखे (भक्तजन हैं वे)		पालाः ॥	१६.	रक्षक(ये सब भगवा

I, शंकर जी, विष्णु भगवान्, ये दक्ष इत्यादि दस प्रजापति तथा जो आप-सरीखे
, वे और स्वर्गलोक के लोकपाल, अन्तरिक्ष लोक के रक्षक, पृथ्वीलोक के
ताल लोक के रक्षक ये सब भगवान् के रूप हैं ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

गन्धर्वविद्याधरचारणेशा, ये यक्षरक्षोरगनागनाथाः ।
ये वा ऋषीणामृषभाः पितॄणां, दैत्येन्द्रसिद्धेश्वरदानवेन्द्राः ।
अन्ये च ये प्रेतपिशाचभूत-कूष्माण्डयादोमृगपक्ष्यधीशाः ।। ४३ ।।

पदच्छेद— **गन्धर्व विद्याधर चारण ईशाः, ये यक्ष रक्ष उरग नाग नाथाः ।**
ये वा ऋषीणाम् ऋषभाः पितॄणाम्, दैत्येन्द्र सिद्धेश्वर दानवेन्द्राः ।
अन्ये च ये प्रेत पिशाच भूत, कूष्माण्ड यादः मृग पक्षि अधीशाः ।।

शब्दार्थ—

गन्धर्व, विद्याधर	२.	गन्धर्व, विद्याधर और	**ऋषभाः**	१०.	अधिपति
चारण ईशाः,	३	चारणों के स्वामी	**पितॄणाम्,**	६	पितरों के
ये	१	जो	**दैत्येन्द्र, सिद्धेश्वर**	११.	दैत्यराज, सिद्धनाथ
यक्ष, रक्ष	४.	यक्ष, राक्षस	**दानवेन्द्राः ।**	१२.	दानवराज
उरग	५.	साँप और	**अन्ये च ये**	१३	और जो दूसरे
नागनाथाः ।	६	नागों के स्वामी	**प्रेत, पिशाच**	१४.	प्रेत, पिशाच
ये वा	७	तथा जो	**भूत, कूष्माण्ड**	१५.	भूत, कूष्माण्ड
ऋषीणाम्	८.	ऋषियों के और	**यादः, मृग**	१६.	जलचर, पशु और
			पक्षि, अधीशाः ।।	१७	पक्षियों के, स्वामी है

श्लोकार्थ—जो गन्धर्व, विद्याधर और चारणों के स्वामी, यक्ष, राक्षस, साँप और नागों के स्वामी जो ऋषियों के और पितरों के अधिपति, दैत्यराज, सिद्धनाथ, दानवराज और जो दूसरे पिशाच, भूत, कूष्माण्ड, जलचर, पशु और पक्षियों के स्वामी है, वे सब भगवान् के रूप ;

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

यत्किं च लोके भगवन्महस्व-दोजःसहस्वद् बलवत् क्षमावत् ।
श्रीह्रीविभूत्यात्मवदद्भुतार्णं, तत्त्वं परं रूपवदस्वरूपम् ।।४४।।

पदच्छेद **यत् किं च लोके भगवत् महस्वत्, ओजः सहस्वत् बलवत् क्षमावत् ।**
श्री ह्री विभूति आत्मवत् अद्भुत अर्णम्, तत्त्वम् परम् रूपवत् अस्वरूपम् ।।

शब्दार्थ—

यत् किं च	१२.	जो कुछ है (वह सब)	**श्री ह्री विभूति**	७.	सौन्दर्य, लज्जा, वैभव २,
लोके	१.	संसार में	**आत्मवत्**	८.	सुन्दर शरीर से युक्त
भगवत्	२.	ऐश्वर्य-सम्पन्न	**अद्भुत, अर्णम्,**	६.	विचित्र, रंगों से युक्त
महस्वत्,	३.	तेजोमय	**तत्त्वम्**	१४.	स्वरूप है
ओजः सहस्वत्	४.	मनोबल और इन्द्रियबल से युक्त	**परम्**	१३.	परमात्मा का
बलवत्	५.	बलवान्	**रूपवत्**	१०.	रूपवान् और
क्षमावत् ।	६.	क्षमावान्	**अस्वरूपम् ।।**	११.	अरूप

श्लोकार्थ—संसार में ऐश्वर्य-सम्पन्न, तेजोमय, मनोबल और इन्द्रियबल से युक्त, बलवान्, क्षमाव सौन्दर्य, लज्जा, वैभव और सुन्दर शरीर से युक्त, विचित्र रंगों से युक्त रूपवान् और अ जो कुछ है वह सब परमात्मा का स्वरूप है

पञ्चचत्वारिंश: श्लोक:

प्राधान्यतो यानृष आमनन्ति, लीलावतारान् पुरुषस्य भूम्नः ।
आपीयतां कर्णकषायशोषा-ननुक्रमिष्ये त इमान् सुपेशान् ॥४५॥

पदच्छेद—

प्राधान्यतः यान् ऋषे आमनन्ति, लीला अवतारान् पुरुषस्य भूम्नः ।
आपीयताम् कर्ण कषाय शोषान्, अनुक्रमिष्ये ते इमान् सुपेशान् ॥

शब्दार्थ

प्राधान्यतः	४.	प्रधान रूप में	आपीयताम्	१६.	पान करें
यान्	५	जो	कर्ण	१३.	कानों के
ऋषे	१.	हे देवर्षि नारद !	कषाय	१४.	दोषों को
आमनन्ति,	८	माने गये हैं	शोषान्,	१५.	दूर करने वाली (उन कथाओं का)
लीला	६	लीला	अनुक्रमिष्ये	१२.	क्रमशः कहूँगा (आप)
अवतारान्	७	अवतार	ते	११.	आपसे
पुरुषस्य	३	परमात्मा के	इमान्	९.	उनकी
भूम्नः ।	२	परम पुरुष	सुपेशान् ॥	१०.	सुन्दर (कथाओं) को (मैं)

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! परम पुरुष परमात्मा के प्रधान रूप से जो लीला-अवतार माने गये हैं, उनकी सुन्दर कथाओं को मैं आपसे क्रमशः कहूँगा । आप कानों के दोषों को दूर करने वाली उन कथाओं का पान करें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
षष्ठः अध्यायः ॥ ६ ॥

द्वितीयः स्कन्धः

अथ सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—

यत्रोद्यतः क्षितितलोद्धरणाय बिभ्रत्, क्रौडीं तनुं सकलयज्ञमयीमनन्तः ।
अन्तर्महार्णव उपागतमादिदैत्यं, तं दंष्ट्रयाद्रिमिव वज्रधरो ददार ॥१॥

पदच्छेद— **यत्र उद्यतः क्षिति तल उद्धरणाय बिभ्रत, क्रौडीम् तनुम् सकल यज्ञमयीम् अनन्तः । अन्तः महार्णवे उपागतम् आदिदैत्यम्, तम् दंष्ट्रया अद्रिम् इव वज्रधरः ददार ॥**

शब्दार्थ—

यत्र	५.	जब	**अन्तः महार्णवे**	९.	समुद्र के अन्दर
उद्यतः	८.	यत्न किया (उस समय)	**उपागतम्**	१०.	(लड़ने के लिए) आये हुए
क्षितितल	६.	(डूबी हुई) पृथ्वी को	**आदि दैत्यम्,**	१२.	आदि दैत्य हिरण्याक्ष को
उद्धरणाय	७.	ऊपर लाने का	**तम्**	११.	उस
बिभ्रत्,	४.	धारण करके	**दंष्ट्रया**	१३.	(अपनी) दाढ़ों से
क्रौडीम्, तनुम्	३.	सूकर शरीर को	**अद्रिम्**	१६.	पर्वतों को (काट दिया था)
सकल, यज्ञमयीम्	२.	सम्पूर्ण, यज्ञमय	**इव, वज्रधरः**	१५.	जैसे, इन्द्र ने (वज्र से)
अनन्तः ।	१.	भगवान् विष्णु ने	**ददार ॥**	१४.	विदीर्ण कर दिया

श्लोकार्थ— भगवान् विष्णु ने सम्पूर्ण यज्ञमय सूकर शरीर को धारण करके जब डूबी हुई पृथ्वी को ऊपर लाने का यत्न किया; उस समय समुद्र के अन्दर लड़ने के लिए आये हुए उस आदि-दैत्य हिरण्याक्ष को अपनी दाढ़ों से विदीर्ण कर दिया । जैसे इन्द्र ने अपने वज्र से पर्वतों को काट दिया था ।

द्वितीयः श्लोकः

जातो रुचेरजनयत् सुयमान् सुयज्ञ, आकूतिसूनुरमरानथ दक्षिणायाम् ।
लोकत्रयस्य महतीमहरद् यदाऽऽर्तिं, स्वायम्भुवेन मनुना हरिरित्यनूक्तः ॥२॥

पदच्छेद— **जातः रुचेः अजनयत् सुयमान् सुयज्ञः, आकूति सूनुः अमरान् अथ दक्षिणायाम् । लोक त्रयस्य महतीम् अहरत् यदा आर्तिम्, स्वायम्भुवेन मनुना हरिः इति अनूक्तः ॥**

शब्दार्थ—

जातः	४	अवतार लेकर	**दक्षिणायाम् ।**	५.	दक्षिणा के गर्भ से
रुचेः	१.	रुचि प्रजापति की (पत्नी)	**लोक त्रयस्य महतीम्**	११.	तीनों लोकों के महान्
अजनयत्	८.	उत्पन्न किया था	**अहरत्**	१३.	दूर किया (उससमय
सुयमान्	६.	सुयम नामक	**यदा**	१०.	जब (उन्होंने)
सुयज्ञः,	३.	सुयज्ञ नाम से	**आर्तिम्,**	१२.	संकट को
आकूति सूनुः	२.	आकूति के पुत्र के रूप में	**स्वायम्भुवेन**	१४.	स्वायम्भुव
अमरान्	७.	देवताओं को	**मनुना, हरिः**	१५.	मनु ने, (उन्हें) हरि
अथ	९.	तदनन्तर	**इति, अनूक्तः ॥**	१६	इस नाम से, पुकारा था

श्लोकार्थ—भगवान् ने रुचि नामक प्रजापति की पत्नी आकूति के पुत्र के रूप में सुयज्ञ नाम से अवतार लेकर अपनी पत्नी दक्षिणा के गर्भ से सुयम नामक देवताओं को उत्पन्न किया था । तदनन्तर जब उन्होंने तीनों लोकों के महान संकट को दूर किया उस समय स्वायम्भुव मनु ने उन्हें हरि इस नाम से पुकारा था ।

ऊचे ययाऽऽत्मशमल गुणसङ्गपङ्क-मस्मिन विधूय कपिलस्य गतिं प्रपेदे ।३।

पदच्छद जज्ञे च कर्दम गृहे द्विज देवहूत्याम, स्त्रीभि समम नवभि आत्म गतिम स्व मात्रे ।
ऊचे यया आत्म शमलम गुण सङ्ग पङ्कम अस्मिन् विधूय कपिलस्य गतिम प्रपेदे ।

शब्दार्थ—

जज्ञे, च	६.	उत्पन्न हुए थे, इस अवतार में	ऊचे, यया	९.	उपदेश दिया था, जिससे
कर्दम, गृहे	२.	कर्दम प्रजापति के, घर मे	आत्म, शमलम	११.	मन की, मैल (और)
द्विज	१.	हे देवर्षि नारद ! (वे भगवान्)	गुण सङ्ग	१२.	सत्त्वादि गुणों में आसक्ति रूप
देवहूत्याम,	३	देवहूती के गर्भ से	पङ्कम,	१३	कीचड़ को
स्त्रीभिः, समम	५.	बहिनों के, साथ	अस्मिन्	१०	इस शरीर में विद्यमान
नवभिः	४.	नव	विधूय	१४.	धोकर
आत्म गतिम्	८.	आत्मा के स्वरूप का	कपिलस्य गतिम्	१५	भगवान् कपिल के स्वरूप को
स्व, मात्रे ।	७.	अपनी, माता को	प्रपेदे ॥	१६	प्राप्त हो गयीं

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! वे भगवान् कर्दम प्रजापति के घर में देवहूती के गर्भ से नव बहिनों के साथ उत्पन्न हुए थे । इस अवतार में उन्होंने अपनी माता को आत्मा के स्वरूप का उपदेश दिया था; जिससे देवहूती जी इस शरीर में विद्यमान मन की मैल और सत्त्वादि गुणों में आसक्ति रूप कीचड़ को धोकर भगवान् कपिल के स्वरूप को प्राप्त हो गयीं ।

चतुर्थः श्लोकः

अत्रेरपत्यमभिकाङ्क्षत आह तुष्टो, दत्तो मयाहमिति यद् भगवान् स दत्तः ।
यत्पादपङ्कजपरागपवित्रदेहा, योगर्द्धिमापुरुभयीं यदुहैहयाद्याः ॥ ४ ॥

पदच्छेद—अत्रेः अपत्यम् अभिकाङ्क्षतः आह तुष्टः, दत्तः मया अहम् इति यद् भगवान् सः दत्तः ।
यत् पाद पङ्कज पराग पवित्र देहाः, योग ऋद्धिम् आपुः उभयीम् यदु हैहय आद्याः ॥

शब्दार्थ—

अत्रेः	३	अत्रि ऋषि से	दत्तः । यत्	१०.	दत्तात्रेय हुए । जिनके
अपत्यम्	१.	पुत्र की	पाद, पङ्कज	११.	चरण, कमल के
अभिकाङ्क्षतः	२.	कामना करने वाले	पराग पवित्रदेहाः,	१२.	केसर से निर्मल शरीर वाले
आह, तुष्टः,	४.	वरदान दिया, प्रसन्न होकर	योग, ऋद्धिम्	१६	योग की, सिद्धियों को
दत्तः	७.	दे दिया	आपुः	१७.	प्राप्त किया था
मया, अहम्	६.	मैंने, अपने को	उभयीम्	१५.	भोग और मोक्ष दोनों
इति	५.	कि	यदु	१३.	राजा यदु और
यद्	८.	इसलिए,	हैहय आद्याः ॥	१४.	सहस्रार्जुन इत्यादि राजाओ ने
भगवान्, सः	९.	भगवान्, वे			

श्लोकार्थ—पुत्र की कामना करने वाले अत्रि ऋषि से प्रसन्न होकर भगवान् ने उन्हें वरदान दिया कि 'मैंने अपने को दे दिया', इसलिए वे भगवान् दत्तात्रेय इस नाम से प्रसिद्ध हुए; जिनके चरण-कमल के केसर से निर्मल शरीर वाले राजा यदु और सहस्रार्जुन इत्यादि राजाओं ने योग की भोग और मो दोनों सिद्धियों को प्राप्त किया था ।

पञ्चमः श्लोकः

तप्तं तपो विविधलोकसिसृक्षया मे, आदौ सनात् स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत् ।
प्राक्कल्पसम्प्लवविनष्टमिहात्मतत्त्वं, सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥५॥

पदच्छेद—**तप्तम् तपः विविध लोक सिसृक्षया मे, आदौ सनात् स्व तपसः सः चतुः सनः अभूत् ।**
प्राक् कल्प सम्प्लव विनष्टम् इह आत्म तत्त्वम्, सम्यक् जगाद मुनयः यद् अचक्षत आत्मन् ।

शब्दार्थ—

तप्तम्, तपः	४	की थी, तपस्या	**अभूत् ।**	१०.	उत्पन्न हुए थे
विविध, लोक	२.	अनेक. लोकों की	**प्राक् कल्प**	११.	पूर्व कल्प के
सिसृक्षया	३.	सृष्टि करने की इच्छा से	**सम्प्लव, विनष्टम्**	१२.	प्रलय से, भूले हुए
मे,	५.	मेरी	**इह**	१४.	इस कल्प में
आदौ	१.	(मैंने) सृष्टि के प्रारम्भ में	**आत्म तत्त्वम्,**	१३.	आत्मा के स्वरूप को
सनात्, स्व	६.	सन नामवाली, अपनी	**सम्यक्, जगाद**	१५	भली प्रकार, बताया
तपसः	७.	तपस्या से (प्रसन्न होकर)	**मुनयः, यद्**	१६.	ऋषिगणों ने, जिसका
सः	८.	वे (भगवान्)	**अचक्षत**	१८.	साक्षात्कार किया है
चतुः, सनः	९.	सनक, आदि चार रूपों में	**आत्मन् ॥**	१७.	आत्मा में

श्लोकार्थ—मैंने सृष्टि के प्रारम्भ में अनेक लोकों की सृष्टि करने की इच्छा से तपस्या की थी मेरी सन नाम वाली अपनी तपस्या से प्रसन्न होकर वे भगवान् सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुम चार रूपों में उत्पन्न हुए थे । उन सनकादि कुमारों ने पूर्व कल्प के प्रलय से भूले हुए आत्मा के स्व को इस कल्प में भली प्रकार बताया; जिसका ऋषि गणों ने आत्मा में साक्षात्कार किया है ।

षष्ठः श्लोकः

धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां, नारायणो नर इति स्वतपःप्रभावः ।
दृष्ट्वाऽऽत्मनो भगवतो नियमावलोपं, देव्यस्त्वनङ्गपृतना घटितुं न शेकुः ॥६॥

पदच्छेद—**धर्मस्य दक्ष दुहितरि अजनिष्ट मूर्त्याम्, नारायणः नरः इति स्व तपः प्रभावः ।**
दृष्ट्वा आत्मनः भगवतः नियम अवलोपम्, देव्यः तु अनङ्ग पृतनाः घटितुं न शेकुः ॥

शब्दार्थ—

धर्मस्य	१.	(भगवान् ने) धर्म की (पत्नी)	**दृष्ट्वा**	११.	सामने देखकर
दक्ष, दुहितरि	२.	दक्ष प्रजापति की, कन्या	**आत्मनः भगवतः**	१०.	अपने को भगवान् के
अजनिष्ट	७.	अवतार लिया था	**नियम अवलोपम्**	१२.	तपस्या में विघ्न
मूर्त्याम्,	३.	मूर्ति देवी के गर्भ से	**देव्यः तु**	९.	अप्सरायें भी
नारायणः, नरः	५.	नारायण, नर	**अनङ्ग, पृतनाः**	८.	कामदेव की, सेना
इति	६.	(ऋषि के) रूप में	**घटितुम्**	१३.	डालने में
स्वतपःप्रभावः ।	४.	अपने समान तपोबल वाले	**न शेकुः ॥**	१४.	समर्थ नहीं हो सकी थीं

श्लोकार्थ—भगवान् ने धर्म की पत्नी तथा दक्ष प्रजापति की कन्या मूर्ति देवी के गर्भ से अ समान तपोबल वाले नर-नारायण ऋषि के रूप में अवतार लिया था । कामदेव की सेना अप्स अपने को भगवान् के सामने देखकर भी उनकी तपस्या में विघ्न डालने में समर्थ नहीं हो सकी थीं ।

सप्तमः श्लोकः

कामं दहन्ति कृतिनो ननु रोषदृष्ट्या, रोषं दहन्तमुत ते न दहन्त्यसह्यम् ।
सोऽयं यदन्तरमलं प्रविशन् बिभेति, कामः कथं नु पुनरस्य मनः श्रयेत ।। ७

पदच्छेद—**कामम् दहन्ति कृतिनः ननु रोष दृष्ट्या, रोषम् दहन्तम् उत ते न दहन्ति असह्यम्**
सः अयम् यद् अन्तरम् अलम् प्रविशन् बिभेति, कामः कथम् नु पुनः अस्य मनः श्रयेत

शब्दार्थ—

कामम्, दहन्ति	४.	कामदेव को, जला देते हैं	**सः, अयम्**	१०.	वही, यह (क्रोध)
कृतिनः	१.	(शंकर आदि) महानुभाव	**यद्, अन्तरम्**	११.	जिनके, अन्तःकरण मे
ननु	३.	निश्चय ही	**अलम्**	१३.	बहुत
रोष, दृष्ट्या,	२.	क्रोध की, अग्नि से	**प्रविशन्**	१२.	प्रवेश करते समय
रोषम्	८.	क्रोध को	**बिभेति,**	१४.	डरता है
दहन्तम्	६.	(अपने को) जलाने वाले	**कामः, कथम्**	१६.	कामदेव, कैसे
उत, ते	५.	किन्तु, वे	**नु, पुनः**	१५.	भला, फिर
न दहन्ति	९.	नहीं जला पाते हैं	**अस्य, मनः**	१७.	इनके, मन में
असह्यम् ।	७.	असहनीय	**श्रयेत ।।**	१८.	प्रवेश कर सकता था

श्लोकार्थ—शंकर आदि महानुभाव क्रोध की अग्नि से निश्चय ही कामदेव को जला देते हैं, वे अपने को जलाने वाले असहनीय क्रोध को नहीं जला पाते हैं। वही यह क्रोध जिनके अन्त.क प्रवेश करते समय बहुत डरता है, फिर भला कामदेव कैसे इनके मन में प्रवेश कर सकता था ?

अष्टमः श्लोकः

विद्धः सपत्न्युदितपत्रिभिरन्ति राज्ञो, बालोऽपि सन्नुपगतस्तपसे वनानि ।
तस्मा अदाद् ध्रुवगतिं गृणते प्रसन्नो, दिव्याः स्तुवन्ति मुनयो यदुपर्यधस्तात्

पदच्छेद—**विद्धः सपत्नी उदित पत्रिभिः अन्ति राज्ञः, बालः अपि सन् उपगतः तपसे वनानि ।**
तस्मै अदात् ध्रुव गतिम् गृणते प्रसन्नः, दिव्याः स्तुवन्ति मुनयः यद् उपरि अधस्तात् ।

शब्दार्थ—

विद्धः	४.	बिंधे हुए (ध्रुव)	**अदात्**	११.	दिया था
सपत्नी	२.	सौतेली माँ के	**ध्रुव, गतिम्**	१०.	ध्रुव पद
उदित, पत्रिभिः	३.	वचन, बाण से	**गृणते, प्रसन्नः,**	८.	स्तुति से, प्रसन्न होकर
अन्ति, राज्ञः,	१.	समीप (स्थित), राजा के	**दिव्याः**	१४.	स्वर्गलोक के
बालः, अपि सन्	५.	बालक, भी होने पर	**स्तुवन्ति**	१६.	स्तुति करते हैं
उपगतः	७.	चले गये	**मुनयः**	१५.	महर्षिगण (उनकी)
तपसे, वनानि।	६.	तपस्या करने, वन में	**यद्, उपरि**	१२.	जिनके, ऊपर और
तस्मै	९	उन्हें (भगवान् ने)	**अधस्तात् ।।**	१३.	नीचे (परिक्रमा करते

श्लोकार्थ—राजा उत्तानपाद के समीप स्थित सौतेली माँ के वचन-बाण से बिंधे हुए ध्रुव होने पर भी तपस्या करने वन में चले गये। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् ने उन्हें ध्रुवप था जिनके ऊपर और नीचे परिक्रमा करते हुए स्वर्ग लोक के महर्षिगण उनकी स्तुति करते है।

त्रात्वार्थितो जगति पुत्रपद च लेभे, दुग्धा वसूनि वसुधा सकलानि येन ।।

पदच्छद यद वेनम उत्पथ गतम द्विज वाक्य वज्र विप्लुष्ट पौरुष भगम निरये पतन्तम ।
त्रात्वा अर्थित जगति पुत्र पदम च लेभे दुग्धा वसूनि वसुधा सकलानि येन ।

शब्दार्थ—

यद्, वेनम्	८.	जिस, राजा वेन को	त्रात्वा	९.	बचाया और
उत्पथ गतम्	७.	कुमार्गगामी	अर्थितः	१.	प्रार्थना करने पर
द्विज	२.	ब्राह्मणों के	जगति पुत्र पदम्	१०.	संसार में पुत्र नाम को
वाक्य, वज्र,	३.	वचन रूप, वज्र से	च, लेभे,	११.	तदनन्तर, सार्थक किया
विप्लुष्ट, पौरुष	४.	भस्म हुए, पुरुषार्थ और	दुग्धा	१५.	दोहन किया था
भगम्	५.	ऐश्वर्य वाले (तथा)	वसूनि	१४	औषधियों का
निरये, पतन्तम्	६.	नरक में, गिरते हुए	वसुधा, सकलानि	१३.	पृथ्वी से, सम्पूर्ण
			येन ।।	१२	उन्होंने

श्लोकार्थ—पृथु अवतार में भगवान् ने प्रार्थना करने पर ब्राह्मणों के वचन रूप वज्र से भस्म पुरुषार्थ और ऐश्वर्य वाले तथा नरक में गिरते हुए कुमार्गगामी जिस राजा वेन को बचाया और से पुत्र नाम को सार्थक किया । तदनन्तर उन्होंने पृथ्वी से सम्पूर्ण औषधियों का दोहन किया था ।

दशमः श्लोकः

नाभेरसावृषभ आस सुदेविसूनु—र्यो वै चचार समदृग् जडयोगचर्याम् ।
यत् पारमहंस्यमृषयः पदमामनन्ति, स्वस्थः प्रशान्तकरणः परिमुक्तसङ्गः ।।१

पदच्छेद—नाभेः असौ ऋषभः आस सुदेवि सूनुः, यः वै चचार समदृक् जड योग चर्याम् ।
यत् पारमहंस्यम् ऋषयः पदम् आमनन्ति, स्वस्थः प्रशान्त करणः परिमुक्त सङ्गः ।।

शब्दार्थ—

नाभेः	२.	राजा नाभि की (पत्नी)	यत्	१७.	उन (ऋषभदेव) को
असौ	१.	वे (भगवान्)	पारमहंस्यम्	१८.	परमहंस या अवधूत
ऋषभः, आस	४.	ऋषभ नाम से, अवतरित हुए थे	ऋषयः	११.	मुनि जन
सुदेवि, सूनुः,	३.	सुदेवी के, पुत्र रूप में	पदम्	१९.	नाम से
यः	६.	जिन्होंने	आमनन्ति,	२०.	जानते हैं
वै	५.	तदनन्तर	स्वस्थः	१६.	आत्मानन्द में मग्न
चचार	१०.	किया था	प्रशान्त	१३.	वश में किये हुए
समदृक्	७.	समदर्शी होकर	करणः	१२	मन और इन्द्रिय को
जड	८.	जड़ की भाँति	परिमुक्त	१५.	रहित (और)
योगचर्याम् ।	९.	तपोनुष्ठान	सङ्गः ।।	१४.	आसक्ति से

श्लोकार्थ—वे भगवान् राजा नाभि की पत्नी सुदेवी के पुत्ररूप में ऋषभ नाम से अवतरित हुए तदनन्तर जिन्होंने समदर्शी होकर जड़ की भाँति तपोनुष्ठान किया था । मुनिजन मन और इन्द्रिय को में किये हुए, आसक्ति से रहित और आत्मानन्द में मग्न उन ऋषभदेव को परमहंस या अवधूत न जानते हैं ।

एकादश: श्लोक:

सत्रे ममास भगवान् हयशीरषाथो, साक्षात् स यज्ञपुरुषस्तपनीयवर्णः ।
छन्दोमयो मखमयोऽखिलदेवतात्मा, वाचो बभूवुरुशतीः श्वसतोऽस्य नस्तः ॥११॥

पदच्छेद— **सत्रे मम आस भगवान् हयशीरषा अथो, साक्षात् सः यज्ञपुरुषः तपनीय वर्णः ।**
छन्दोमयः मखमयः अखिल देवता आत्मा, वाचः बभूवुः उशतीः श्वसतः अस्य नस्तः ॥

शब्दार्थ—

सत्रे	६. यज्ञ में	**छन्दोमयः**	९. वेदों के रूप में
मम	५. मेरे	**मखमयः**	१०. यज्ञ स्वरूप और
आस	७. प्रकट हुए थे	**अखिल,देवता आत्मा,**	११. सर्व, देवमय हैं
भगवान्	८. वे भगवान्	**वाचः, बभूवुः**	१६. वाणी, प्रकट हुई है
हयशीरषा	४. हयग्रीव रूप से	**उशतीः**	१५. वेद
अथो, साक्षात्	१. तदनन्तर, स्वयम्	**श्वसतः**	१४. श्वास से
सः, यज्ञपुरुषः	२. वही, परमात्मा	**अस्य**	१२ इन्हीं (भगवान्) की
तपनीय, वर्णः ।	३. सुवर्ण के समान, पीतवर्ण	**नस्तः ॥**	१३. नासिका के

श्लोकार्थ—तदनन्तर स्वयम् वही परमात्मा सुवर्ण के समान पीतवर्ण हयग्रीव रूप से मेरे यज्ञ में प्रकट हुए थे। वे भगवान् वेदों के रूप में, यज्ञस्वरूप और सर्व देवमय हैं। इन्हीं भगवान् की नासिका के श्वास से वेदवाणी प्रकट हुई है।

द्वादश: श्लोक:

मत्स्यो युगान्तसमये मनुनोपलब्धः, क्षोणीमयो निखिलजीवनिकायकेतः ।
विस्रंसितानुरुभये सलिले मुखान्मे, आदाय तत्र विजहार ह वेदमार्गान् ॥ १२ ॥

पदच्छेद— **मत्स्यः युगान्त समये मनुना उपलब्धः, क्षोणीमयः निखिल जीव निकाय केतः ।**
विस्रंसितान् उरु भये सलिले मुखात् मे, आदाय तत्र विजहार ह वेद मार्गान् ॥

शब्दार्थ—

मत्स्यः	३. मछली के रूप में	**उरु भये**	१६. भयंकर
युगान्त समये	१. खण्ड प्रलय के समय	**सलिले**	१७. जल में
मनुना	२. (सत्यव्रत) मनु ने (भगवान् को)	**मुखात्**	११. मुख से (निःसृत और)
उपलब्धः,	४. प्राप्त किया था (उस समय)	**मे,**	१०. मेरे
क्षोणीमयः	५. पृथ्वी रूपी नौका से	**आदाय**	१४. लेकर
निखिल	६. सम्पूर्ण	**तत्र**	१५. उस
जीव, निकाय	७. प्राणि, समूह की	**विजहार**	१८. विहार किया था
केतः ।	८. रक्षा की थी	**ह**	९. तथा
विस्रंसितान्	१२. विच्छिन्न हुई	**वेद, मार्गान् ॥**	१३. वेद की, शाखाओं को

श्लोकार्थ—खण्ड प्रलय के समय सत्यव्रत मनु ने भगवान् को मछली के रूप में प्राप्त किया था। उस समय उन्होंने पृथ्वी रूपी नौका से सम्पूर्ण प्राणि-समूह की रक्षा की थी तथा मेरे मुख से निःसृत और विच्छिन्न हुई वेद की शाखाओं को लेकर उस भयंकर जल में विहार किया था

त्रयोदशः श्लोकः

क्षीरोदधावमरदानवयूथपाना-मुन्मथ्नताममृतलब्धय आदिदेवः ।
पृष्ठेन कच्छपवपुर्विदधार गोत्रं, निद्राक्षणोऽद्रिपरिवर्तकषाणकण्डूः ॥ १३ ॥

पदच्छेद— क्षीर उदधौ अमर दानव यूथपानाम्, उन्मथ्नताम् अमृत लब्धये आदि देवः ।
पृष्ठेन कच्छप वपुः विदधार गोत्रम्, निद्रा क्षणः अद्रि परिवर्त कषाण कण्डूः ॥

शब्दार्थ—

क्षीर	१.	क्षीर	**पृष्ठेन**	११.	(अपनी) पीठ पर
उदधौ	२.	सागर में	**कच्छप, वपुः**	१०.	कच्छप, रूप से
अमर	४.	देवताओं और	**विदधार**	१३.	धारण किया था (उस समय)
दानव	५.	दानवों के द्वारा	**गोत्रम्,**	१२.	मंदराचल को
यूथपानाम्,	३	प्रमुख	**निद्रा**	१८.	(सुख की) नींद (ली थी)
उन्मथ्नताम्	८.	मन्थन करने के समय	**क्षणः**	१७.	कुछ समय तक
अमृत	६.	सुधा की	**अद्रि, परिवर्त**	१४.	पर्वत की, रगड़ से
लब्धये	७	प्राप्ति के लिए	**कषाण**	१६.	शांत हो जाने के कारण (उन्होंने
आदिदेवः ।	९.	भगवान् ने	**कण्डूः ॥**	१५.	खुजली

श्लोकार्थ - क्षीर सागर में प्रमुख देवताओं और दानवों के द्वारा सुधा की प्राप्ति के लिए मन्थन करने के समय भगवान् ने कच्छप रूप से अपनी पीठ पर मंदराचल को धारण किया था । उस समय पर्वत की रगड़ से खुजली शान्त हो जाने के कारण उन्होंने कुछ समय तक सुख की नींद ली थी ।

चतुर्दशः श्लोकः

त्रैविष्टपोरुभयहा स नृसिंहरूपं, कृत्वा भ्रमद् भ्रुकुटिदंष्ट्रकरालवक्त्रम् ।
दैत्येन्द्रमाशु गदयाभिपतन्तमारा—दूरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ॥ १४ ॥

पदच्छेद— त्रैविष्टप उरु भयहा सः नृसिंह रूपम्, कृत्वा भ्रमत् भ्रुकुटि दंष्ट्र कराल वक्त्रम् ।
दैत्येन्द्रम् आशु गदया अभिपतन्तम् आरात्, ऊरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ॥

शब्दार्थ—

त्रैविष्टप	२.	देवताओं के	**दैत्येन्द्रम्**	१३.	दैत्यराज हिरण्यकशिपु को
उरु	३.	महान्	**आशु**	११.	झपट कर
भयहा	४.	संकट को काटने वाले	**गदया**	१०.	गदा के साथ
सः	१.	उन (भगवान्) ने	**अभिपतन्तम्**	१२.	सामने आते हुए
नृसिंह रूपम्,	८.	नरसिंह के रूप को	**आरात्,**	१४.	खेल-खेल में
कृत्वा	९.	धारण किया था (तथा)	**ऊरौ, निपात्य**	१५.	(अपनी) जंघाओं पर, गिराकर
भ्रमत्, भ्रुकुटि	५.	टेढ़ी, भौहों और	**विददार**	१८.	फाड़ दिया था
दंष्ट्र	६.	डाढ़ों के कारण	**नखैः**	१७.	नाखूनों से
कराल, वक्त्रम् ।	७.	भयंकर, मुख से युक्त	**स्फुरन्तम् ॥**	१६.	छटपटाते हुए (उसे)

श्लोकार्थ—उन भगवान् ने देवताओं के महान् संकट को काटने वाले, टेढ़ी भौहों और डाढ़ों के कारण भयंकर मुख से युक्त नरसिंह के रूप को धारण किया था तथा गदा के साथ झपट कर सामने आते हुए दैत्यराज हिरण्यकशिपु को खेल-खेल में अपनी जंघाओं पर गिराकर छटपटाते हुए उसे नाखूनों से फाड़ दिया था

आहेदमादिपुरुषाखिललोकनाथ, तीर्थश्रव श्रवणमङ्गलनामधेय ॥ १५ ।

पदच्छेद अन्त सरसि उरु बलेन पदे गृहीत:, ग्राहेण यूथपति अम्बुज हस्त आर्त ।
आह इदम आदि पुरुष अखिल लोक नाथ तीर्थ श्रव श्रवण मङ्गल नामधेय ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	२.	अन्दर	आह	१८.	पुकार लगाई थी
सरसि	१.	विशाल सरोवर के	इदम्	१७.	इस प्रकार
उरु, बलेन	४.	बड़े, जोर से	आदि पुरुष	१०.	हे आदि पुरुष
पदे, गृहीतः,	५.	पैर, पकड़ लिए जाने पर	अखिल	११.	हे सम्पूर्ण
ग्राहेण	३.	ग्राह के द्वारा	लोक नाथ,	१२.	ब्रह्माण्ड के स्वामिन् !
यूथपतिः	६.	गजराज ने	तीर्थश्रवः	१३.	हे पुण्यकीर्ते !
अम्बुज	८.	कमल लेकर	श्रवण	१४.	हे पवित्र और
हस्तः	७.	सूँड में	मङ्गल	१५.	कल्याणकारी
आर्तः ।	९.	दीन-भाव से	नामधेय ॥	१६.	नाम धारिन् !

श्लोकार्थ—विशाल सरोवर के अन्दर ग्राह के द्वारा बड़े जोर से पैर पकड़ लिए जाने पर गजराज में कमल लेकर दीन-भाव से हे आदि पुरुष ! हे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामिन् ! हे पुण्य हे पवित्र और कल्याणकारी नामधारिन् ! इस प्रकार पुकार लगाई थी ।

षोडशः श्लोकः

श्रुत्वा हरिस्तमरणार्थिनमप्रमेय – श्चक्रायुधः पतगराजभुजाधिरूढः ।
चक्रेण नक्रवदनं विनिपाट्य तस्मा-द्धस्ते प्रगृह्य भगवान् कृपयोज्जहार ॥१

पदच्छेद—श्रुत्वा हरिः तम् अरणार्थिनम् अप्रमेयः, चक्र आयुधः पतगराज भुज अधिरूढः ।
चक्रेण नक्र वदनम् विनिपाट्य तस्मात्, हस्ते प्रगृह्य भगवान् कृपया उज्जहार ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	३.	सुनकर	चक्रेण	९.	चक्र सुदर्शन से
हरिः	६.	श्री हरि	नक्र, वदनम्	१०.	ग्राह के, मुख को
तम्	२.	उस (गजराज) की (पुकार)	विनिपाट्य	११.	काट दिये (इस प्रकार
अरणार्थिनम्	१.	हारे हुए	तस्मात्,	१५.	उस (ग्राह) से
अप्रमेयः,	४.	अतुल बलशाली (और)	हस्ते, प्रगृह्य	१४.	सूंड पकड़ कर
चक्र, आयुधः	५.	चक्र, सुदर्शनधारी	भगवान्	१३.	भगवान् ने
पतगराज, भुज	७.	गरुड़ के, पंख पर	कृपया	१२.	कृपा परवश
अधिरूढः ।	८.	सवार होकर	उज्जहार ॥	१६	उद्धार किया था

श्लोकार्थ —हारे हुए उस गजराज की पुकार सुनकर अतुल बलशाली और चक्र सुदर्शनधारी श्री गरुड़ के पंख पर सवार होकर चक्र सुदर्शन से ग्राह के मुख को काट दिये । इस प्रका परवश भगवान् ने सूँड पकड़ कर गजराज का उस ग्राह से उद्धार किया था ।

सप्तदशः श्लोकः

ज्यायान् गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां, लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः ।
क्ष्मां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन, याच्ञामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः ।।१७।

पदच्छेद—ज्यायान् गुणैः अवरजः अपि अदितेः सुतानाम्, लोकान् विचक्रमे इमान् यद् अथ अधियज्ञः ।
क्ष्माम् वामनेन जगृहे त्रिपद छलेन, याच्ञाम् ऋते पथि चरन् प्रभुभिः न चाल्यः ।।

शब्दार्थ—

ज्यायान्, गुणैः	३.	सबसे बड़े थे, गुणों के कारण	**क्ष्माम्**	११.	पूरी पृथ्वी को
अवरजः, अपि	२.	छोटे होने पर, भी (भगवान्)	**वामनेन**	९.	वामन रूप से, (भगवान्) ने
अदितेः, सुतानाम्	१.	माता अदिति के, पुत्रों में	**जगृहे**	१२.	ले लिया
लोकान् विचक्रमे	८.	तीनों लोकों को नाप लिया था	**त्रिपद, छलेन,**	१०.	तीन पग के, बहाने
इमान्	७.	इन	**याच्ञाम्, ऋते**	१५.	याचना के, सिवाय
यद्	४.	क्योंकि	**पथि, चरन्**	१४.	सन्मार्ग में, चलने वालों को
अथ	६.	संकल्प करते ही (उन्होंने)	**प्रभुभिः**	१३.	समर्थ पुरुष भी
अधियज्ञः ।	५.	यज्ञ में (बलि के)	**न चाल्यः ।।**	१६.	विचलित नहीं कर सकते हैं

श्लोकार्थ—माता अदिति के पुत्रों में छोटे होने पर भी भगवान् गुणों के कारण सबसे बड़े थे; क्योंकि यज्ञ में बलि के संकल्प करते ही उन्होंने इन तीनों लोकों को नाप लिया था। इस प्रकार वामन रूप से भगवान् ने तीन पग के बहाने पूरी पृथ्वी को ले लिया। समर्थ पुरुष भी सन्मार्ग में चलने वालों को याचना के सिवाय अन्य उपाय से विचलित नहीं कर सकते हैं।

अष्टादशः श्लोकः

नार्थो बलेरयमुरुक्रमपादशौच—आपः शिखाधृतवतो विबुधाधिपत्यम् ।
यो वै प्रतिश्रुतमृते न चिकीर्षदन्य—दात्मानमङ्ग शिरसा हरयेऽभिमेने ।। १८ ।।

पदच्छेद— न अर्थः बलेः अयम् उरुक्रम पाद शौचम्, आपः शिखा धृतवतः विबुध आधिपत्यम् ।
यः वै प्रतिश्रुतम् ऋते न चिकीर्षत् अन्यत्, आत्मानम् अङ्ग शिरसा हरये अभिमेने ।।

शब्दार्थ—

न अर्थः	५.	पुरुषार्थ नहीं है (कि उसे)	**प्रतिश्रुतम्**	१०.	(अपनी) प्रतिज्ञा के
बलेः, अयम्	४.	बलि का, यह	**ऋते**	११.	विपरीत
उरुक्रम, पाद	१	वामन भगवान् के, चरणों के	**न चिकीर्षत्**	१४.	करने की इच्छा नहीं की थी
शौचम्, आपः	२.	धोवन, जल को	**अन्यत्,**	१२.	कुछ
शिखा, धृतवतः	३.	शिर पर, धारण करने वाले	**आत्मानम्**	१७.	अपने को
विबुध	६.	देवताओं के	**अङ्ग**	८.	हे देवर्षि नारद !
आधिपत्यम् ।	७.	राजा की पदवी (प्राप्त हुई)	**शिरसा**	१५.	(उसी ने) शिर झुकाकर
यः	९.	जिस (बलि) ने	**हरये**	१६.	वामन भगवान् के (चरणों में)
वै	१३.	भी	**अभिमेने ।।**	१८.	समर्पित कर दिया

श्लोकार्थ— वामन भगवान् के चरणों के धोवन जल को शिर पर धारण करने वाले बलि का यह पुरुषार्थ नहीं है कि उसे देवताओं के राजा की पदवी प्राप्त हुई। हे देवर्षि नारद ! जिस बलि ने अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत कुछ भी करने की इच्छा नहीं की थी; उसी ने शिर झुकाकर वामन भगवान् के चरणों में अपने को समर्पित कर दिया।

एकोनविंशः श्लोकः

तुभ्यं च नारद भृशं भगवान् विवृद्ध-भावेन साधुपरितुष्ट उवाच योगम् ।
ज्ञानं च भागवतमात्मसतत्त्वदीपं, यद्वासुदेवशरणा विदुरञ्जसैव ।। १६

पदच्छेद— **तुभ्यम् च नारद भृशम् भगवान् विवृद्ध, भावेन साधु परितुष्टः उवाच योगम् । ज्ञानम् च भागवतम् आत्म सतत्त्व दीपम्, यद् वासुदेव शरणाः विदुः अञ्जसा एव ।।**

शब्दार्थ—

तुभ्यम् च	६.	तुम्हें	**च**	८.	और
नारद	१.	हे देवर्षि नारद ! (तुम्हारे)	**भागवतम्**	११.	भागवत
भृशम्	२.	अत्यन्त	**आत्म**	९.	आत्मा के
भगवान्	५.	भगवान् ने हंस रूप धारण करके	**सतत्त्व,दीपम्**	१०.	स्वरूप का, दर्शन कराने
विवृद्ध, भावेन	३.	बढ़े हुए, प्रेम भाव से	**यद्**	१४.	जिसे
साधु, परितुष्टः	४.	अच्छी तरह, प्रसन्न हुए	**वासुदेव**	१५.	भगवान् वासुदेव के
उवाच	१३.	उपदेश दिया था	**शरणाः**	१६.	शरणागत भक्त जन
योगम् ।	७.	योग शास्त्र का	**विदुः**	१८.	जान जाते हैं
ज्ञानम्	१२.	ज्ञान का	**अञ्जसा एव ।।**	१७.	सरलता से ही

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! तुम्हारे अत्यन्त बढ़े हुए प्रेम-भाव से अच्छी तरह प्रसन्न हुए भगवान् हंस रूप धारण करके तुम्हें योग-शास्त्र का और आत्मा के स्वरूप का दर्शन कराने वाले भागवत-ज्ञान उपदेश दिया था; जिसे भगवान् वासुदेव के शरणागत भक्तजन सरलता से ही जान जाते हैं ।

विंशः श्लोकः

चक्रं च दिक्ष्वविहतं दशसु स्व तेजो, मन्वन्तरेषु मनुवंशधरो बिभर्ति ।
दुष्टेषु राजसु दमं व्यदधात् स्वकीर्तिम्, सत्ये त्रिपृष्ठ उशतीं प्रथयंश्चरित्रैः ।।२

पदच्छेद— **चक्रम् च दिक्षु अविहतम् दशसु स्व तेजः, मन्वन्तरेषु मनु वंश धरः बिभर्ति । दुष्टेषु राजसु दमम् व्यदधात् स्व कीर्तिम्, सत्ये त्रिपृष्ठे उशतीम् प्रथयन् चरित्रैः ।।**

शब्दार्थ—

चक्रम्	८.	शासन को	**दुष्टेषु राजसु**	१७.	दुष्ट राजाओं का
च	६.	और	**दमम् व्यदधात्**	१८.	दमन किया था
दिक्षु	४.	दिशाओं में	**स्व**	१३.	अपनी
अविहतम्	७.	निर्विघ्न	**कीर्तिम्,**	१५.	कीर्ति
दशसु	३.	दसों	**सत्ये**	१२.	सत्यलोक तक
स्व तेजः,	५.	अपने प्रताप	**त्रिपृष्ठे**	११.	तीनों लोकों के ऊपर
मन्वन्तरेषु	१.	सभी मन्वन्तरों में	**उशतीम्**	१४.	सुन्दर
मनुवंश धरः	२.	मनुवंश में उत्पन्न होकर	**प्रथयन्**	१६.	फैलाते हुए
बिभर्ति ।	९.	धारण किया (तथा)	**चरित्रैः ।।**	१०.	अपने चरित्र से

श्लोकार्थ—भगवान् ने सभी मन्वन्तरों में मनुवंश में उत्पन्न होकर दसों दिशाओं में अपने प्रताप निर्विघ्न शासन को धारण किया तथा अपने चरित्र से तीनों लोकों के ऊपर सत्यलोक तक अपनी सु कीर्ति फलाते हुए दुष्ट राजाओं का दमन किया था

यज्ञे च भागममृतायुरवावरुन्ध, आयुश्च वेदमनुशास्त्यवतीर्य लोके ॥२१॥

पदच्छेद धन्वन्तरि च भगवान स्वयम एव कीर्ति, नाम्ना नृणाम पुरु रुजाम रुज आशु हन्ति ।
यज्ञे च भागम अमृत आयु अवावरुन्ध आयु च वेदम अनुशास्ति अवतीर्य लोके ॥

शब्दार्थ—

धन्वन्तरिः च	३.	धन्वन्तरि	यज्ञे	१०.	(उन्होंने) यज्ञ में
भगवान्	२	भगवान्	च	१४.	तथा
स्वयम्एव,कीर्तिः,	१.	साक्षात्, यशोरूप	भागम्	१२.	भाग की
नाम्ना	४.	(अपने) नाम से ही	अमृत आयुः	११.	देवताओं के
नृणाम्	६.	मनुष्यों के	अवावरुन्धे	१३.	रक्षा की थी
पुरु रुजाम्	५.	बड़े-बड़े रोगों से ग्रस्त	आयुः च वेदम्	१७.	आयुर्वेद का
रुजः	७.	रोगों को	अनुशास्ति	१८.	उपदेश किया था
आशु	८.	तत्काल	अवतीर्य	१६.	अवतार लेकर
हन्ति ।	९.	दूर कर देते हैं,	लोके ॥	१५.	संसार में

श्लोकार्थ—साक्षात् यशोरूप भगवान् धन्वन्तरि अपने नाम से ही बड़े-बड़े रोगों से ग्रस्त मनुष्यों के को तत्काल दूर कर देते हैं। उन्होंने यज्ञ में देवताओं के भाग की रक्षा की थी तथा संसार में अवतार ले आयुर्वेद का उपदेश किया था।

द्वाविंशः श्लोकः

क्षत्रं क्षयाय विधिनोपभृतं महात्मा, ब्रह्मध्रुगुज्झितपथं नरकार्तिलिप्सु ।
उद्धन्त्यसाववनिकण्टकमुग्रवीर्य—स्त्रिः सप्तकृत्व उरुधारपरश्वधेन ॥२२॥

पदच्छेद—क्षत्रम् क्षयाय विधिना उपभृतम् महात्मा, ब्रह्मध्रुक् उज्झित पथम् नरक आर्ति लिप्सु
उद्धन्ति असौ अवनि कण्टकम् उग्रवीर्यः, त्रिः सप्तकृत्वः उरु धार परश्वधेन

शब्दार्थ—

क्षत्रम्	१४.	क्षत्रियों का	लिप्सु।	९.	इच्छुक
क्षयाय	१२.	(अपने) विनाश के लिए	उद्धन्ति	१६.	विनाश किया था
विधिना	११.	दैव वश	असौ	१.	उन (भगवान्) ने
उपभृतम्	१३.	बढ़े हुए	अवनि, कण्टकम्	१०.	पृथ्वी के, काँटे (एवम्)
महात्मा,	३.	परशुराम अवतार में	उग्र, वीर्यः,	२.	महान्, पराक्रमी
ब्रह्म, ध्रुक्	६.	ब्राह्मण, द्रोही	त्रिःसप्तकृत्वः	१५.	इक्कीस बार
उज्झित पथम्	७.	मर्यादा का उल्लंघन करने वाले	उरु, धार	४.	तीखी, धार वाले
नरक, आर्ति	८.	नारकीय, दुःखों के	परश्वधेन ॥	५.	(अपने) फरसे से

श्लोकार्थ—उन भगवान् ने महान् पराक्रमी परशुराम अवतार में तीखी धार वाले अपने फरसे से ब्राह्मण द्रोही, मर्यादा का उल्लंघन करने वाले, नारकीय दुःखों के इच्छुक, पृथ्वी के काँटे एवं दैव-वश से विनाश के लिए बढ़ हुए क्षत्रियों का इक्कीस बार विनाश किया था

त्रयोविंश: श्लोक:

अस्मत्प्रसादसुमुखः कलया कलेश—इक्ष्वाकुवंश अवतीर्य गुरोर्निदेशे ।
तिष्ठन् वनं सदयितानुज आविवेश, यस्मिन् विरुध्य दशकन्धर आर्तिमार्च्छत् ॥

पदच्छेद—**अस्मत् प्रसाद सुमुखः कलया कलेशः, इक्ष्वाकु वंशे अवतीर्य गुरोः निदेशे । तिष्ठन् वनम् सदयिता अनुजः आविवेश, यस्मिन् विरुध्य दशकन्धरः आर्तिम् आर्च्छत् ॥**

शब्दार्थ—

अस्मत्, प्रसाद	१.	हम पर, कृपा करने के	**वनम्**	११.	वन में
सुमुखः	२.	इच्छुक	**स**	१०.	साथ
कलया	४.	(अपनी) कलाओं के साथ	**दयिता अनुजः**	९	पत्नी और छोटे भाई
कलेशः,	३.	माया पति भगवान्	**आविवेश,**	१२.	गये थे
इक्ष्वाकु वंशे	५.	इक्ष्वाकु वंश में(श्रीरामरूपसे)	**यस्मिन्, विरुध्य**	१३.	जिनसे, विरोध करके
अवतीर्य	६.	अवतार लेकर	**दशकन्धरः**	१४.	रावण
गुरोः, निदेशे ।	७.	पिता दशरथ के, आदेश का	**आर्तिम्**	१५.	मृत्यु को
तिष्ठन्	८.	पालन करते हुए	**आर्च्छत् ॥**	१६.	प्राप्त किया था

श्लोकार्थ—हम पर कृपा करने के इच्छुक मायापति भगवान् अपनी कलाओं के साथ इक्ष्वाकु श्रीराम रूप से अवतार लेकर पिता दशरथ के आदेश का पालन करते हुए अपनी पत्नी और छोटे साथ वन में गये थे; जिनसे विरोध करके रावण मृत्यु को प्राप्त किया था ।

चतुर्विंश: श्लोक:

यस्मा अदादुदधिरूढभयाङ्गवेपो, मार्गं सपद्यरिपुरं हरवद् दिधक्षोः ।
दूरे सुहृन्मथितरोषसुशोणदृष्ट्या, तातप्यमानमकरोरगनक्रचक्रः ॥२

पदच्छेद— **यस्मै अदात् उदधिः ऊढ भय अङ्ग वेपः, मार्गम् सपदि अरि पुरम् हरवत् दिधक्षोः । दूरे सुहृद् मथित रोष सुशोण दृष्ट्या, तातप्यमान मकर उरग नक्र चक्रः ॥**

शब्दार्थ—

यस्मै	१७.	जिस (श्रीराम जी) को	**दूरे**	२.	वियोग से
अदात्	२०.	दे दिया था	**सुहृद्**	१.	सीता के
उदधिः	११.	समुद्र ने	**मथित**	३.	उत्पन्न
ऊढ, भय	१२.	उत्पन्न, भय के कारण	**रोष**	४.	क्रोध के कारण
अङ्ग वेपः,	१३.	काँपते शरीर से	**सुशोण**	५.	लाल
मार्गम्	१९.	रास्ता	**दृष्ट्या,**	६.	आँखों की (अग्नि से)
सपदि	१८.	तत्काल	**तातप्यमान**	७.	जलते हुए
अरि पुरम्	१६.	शत्रु रावण की नगरी लंका को	**मकर**	८.	मगरमच्छ
हरवत्	१५.	भगवान् शंकर के समान	**उरग, नक्र**	९.	सर्प, ग्राह
दिधक्षोः ।	१४.	भस्म करने के इच्छुक	**चक्रः ।**	१०.	आदि जीवों से युक्त

श्लोकार्थ—सीता के वियोग से उत्पन्न क्रोध के कारण लाल आँखों की अग्नि से जलते हुए मग सर्प, ग्राह आदि जीवों से युक्त समुद्र ने उत्पन्न भय के कारण काँपते शरीर से त्रिपुर को भस्म इच्छुक भगवान् शंकर के समान शत्रु रावण की नगरी लंका को भस्म करने के इच्छुक जिस जी को मार्ग दे दिया था

पञ्चविंशः श्लोकः

वक्षःस्थलस्पर्शरुग्णमहेन्द्रवाह—दन्तैर्विडम्बितककुब्जुष ऊढहासम् ।
सद्योऽसुभिः सह विनेष्यति दारहर्तु—र्विस्फूर्जितैर्धनुष उच्चरतोऽधिसैन्ये ॥ २५ ॥

पदच्छेद— **वक्षः स्थल स्पर्श रुग्ण महेन्द्र वाह, दन्तैः विडम्बित ककुप् जुषः ऊढ हासम् ।**
सद्यः असुभिः सह विनेष्यति दार हर्तुः, विस्फूर्जितैः धनुषः उच्चरतः अधिसैन्ये ॥

शब्दार्थ—

वक्षःस्थल	१.	छाती की	**सद्यः**	१५.	तत्काल
स्पर्श	२.	टक्कर से	**असुभिः, सह**	१४.	प्राणों के, साथ
रुग्ण	३	चूरा हुए	**विनेष्यति**	१६.	नष्ट हो जायेगा
महेन्द्रवाह,	४.	ऐरावत के	**दार हर्तुः**	८.	सीता का हरण करने वाले चोर रावण का
दन्तैः	५.	दाँतों से			
विडम्बित	७.	सफेद कर देने वाले (तथा)	**विस्फूर्जितैः**	१३.	टंकार से (उसके)
ककुप्, जुषः	६.	दिशाओं की, कान्ति को	**धनुषः**	१२.	(श्रीराम जी के) धनुष की
			उच्चरतः	११.	उतरने पर
ऊढ हासम् ।	९.	अट्टहास	**अधिसैन्ये ॥**	१०.	लड़ाई के मैदान में

श्लोकार्थ—छाती की टक्कर से चूरा हुए ऐरावत के दाँतों से दिशाओं की कान्ति को सफेद कर देने वाले तथा सीता का हरण करने वाले रावण का अट्टहास लड़ाई के मैदान में उतरने पर श्रीराम जी के धनुष की टंकार से उसके प्राणों के साथ तत्काल नष्ट हो जायेगा ।

षड्विंशः श्लोकः

भूमेः सुरेतरवरूथविमर्दितायाः, क्लेशव्ययाय कलया सितकृष्णकेशः ।
जातः करिष्यति जनानुपलक्ष्यमार्गः, कर्माणि चात्ममहिमोपनिबन्धनानि ॥ २६ ॥

पदच्छेद— **भूमेः सुर इतर वरूथ विमर्दितायाः, क्लेश व्ययाय कलया सित कृष्ण केशः ।**
जातः करिष्यति जन अनुपलक्ष्य मार्गः, कर्माणि च आत्म महिमन् उपनिबन्धनानि ॥

शब्दार्थ—

भूमेः	३.	पृथ्वी के	**जातः**	९.	अवतार लेंगे
सुर इतर, वरुथ	१.	दैत्य, समूह से	**करिष्यति**	१६.	करेंगे
विमर्दितायाः,	२.	रौंदी गयी	**जन, अनुपलक्ष्य**	११.	लोगों से अज्ञात
क्लेश	४.	भार को	**मार्गः,**	१२.	रहस्य वाले (वे भगवान्)
व्ययाय	५.	उतारने के लिए (भगवान्)	**कर्माणि**	१५.	लीलाओं को
कलया	६.	अपनी कला से	**च**	१०.	तथा
सित	७.	बलराम और	**आत्म, महिमन्**	१३.	अपने सामर्थ्य को
कृष्ण केशः ।	८.	श्रीकृष्ण के रूप में	**उपनिबन्धनानि ।**	१४.	प्रगट करने वाली

श्लोकार्थ—दैत्य-समूह से रौंदी गयी पृथ्वी के भार को उतारने के लिए भगवान् अपनी कला से बलराम और श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लेंगे तथा लोगों से अज्ञात रहस्य वाले वे भगवान् अपने सामर्थ्य को प्रगट करने वाली लीलाओं को करेंगे ।

सप्तविंशः श्लोकः

तोकेन जीवहरणं यदुलूकिकाया---स्त्रैमासिकस्य च पदा शकटोऽपवृत्तः ।
यद् रिङ्गतान्तरगतेन दिविस्पृशोर्वा, उन्मूलनं त्वितरथार्जुनयोर्न भाव्यम् ।। २७ ।।

पदच्छेद--- **तोकेन जीव हरणम् यद् उलूकिकायाः, त्रैमासिकस्य च पदा शकटः अपवृत्तः ।**
यद् रिङ्गता अन्तरगतेन दिविस्पृशोः वा, उन्मूलनम् तु इतरथा अर्जुनयोः न भाव्यम् ।।

शब्दार्थ---

तोकेन	१.	बचपन में	**यद्**	१५.	जो (उन्हें)
जीव, हरणम्	४.	प्राण, हर लेना	**रिङ्गता**	११.	घुटनों के बल चलते हुए
यद्	२.	जो	**अन्तर, गतेन**	१४.	बीच में, जाकर
उलूकिकायाः,	३.	पूतना का	**दिविस्पृशोः**	१२.	आकाश को छूने वाले
त्रैमासिकस्य	६	तीन मास की आयु में	**वा,**	१०.	अथवा
च	५.	तथा	**उन्मूलनम् तु**	१६.	उखाड़ देना है (उसे)
पदा	७.	पैर से	**इतरथा**	१७.	भगवान् के सिवाय दूसरा
शकटः	८	छकड़ा	**अर्जुनयोः**	१३.	यमलार्जुन वृक्षों के
अपवृत्तः ।	९.	उलट देना	**न भाव्यम् ।।**	१८	नहीं कर सकता है

श्लोकार्थ— बचपन में जो पूतना का प्राण हर लेना तथा तीन मास की आयु में पैर से छकड़ा उलट देन अथवा घुटनों के बल चलते हुए आकाश को छूने वाले यमलार्जुन वृक्षों के बीच में जाकर जो उन्हें उखाड़ देना है; उसे भगवान् के सिवाय दूसरा नहीं कर सकता है ।

अष्टाविंशः श्लोकः

यद् वै व्रजे व्रजपशून् विषतोयपीथान्, पालांस्त्वजीवयदनुग्रहदृष्टिवृष्ट्या ।
तच्छुद्धयेऽतिविषवीर्यविलोलजिह्व---मुच्चाटयिष्यदुरगं विहरन् ह्रदिन्याम् ।। २८ ।

पदच्छेद--- **यद् वै व्रजे व्रज पशून् विष तोय पीथान्, पालान् तु अजीवयत् अनुग्रह दृष्टि वृष्टचा ।**
तत् शुद्धये अतिविष वीर्य विलोल जिह्वम्, उच्चाटयिष्यत् उरगम् विहरन् ह्रदिन्याम् ।।

शब्दार्थ---

यद् वै	१.	जब (भगवान् श्रीकृष्ण)	**वृष्टचा ।**	९.	वर्षा से
व्रजे	२.	व्रज में	**तत्, शुद्धये**	११.	तब, शुद्ध करने के लिए
व्रज, पशून्	५.	व्रज के, पशुओं	**अतिविष, वीर्य**	१४.	अधिक विषैली, शक्तिशाली औ
विष, तोय	३.	विष से दूषित, जल	**विलोल**	१५.	लपलपाती
पीथान्,	४.	पीये हुए	**जिह्वम्,**	१६.	जीभ वाले
पालान्	७.	ग्वालों को	**उच्चाटयिष्यत्**	१८.	निकालेंगे
तु	६.	और	**उरगम्**	१७.	कालियनाग को
अजीवयत्	१०.	जीवित करेंगे	**विहरन्**	१३.	विहार करते हुए (वे भगवान्
अनुग्रह, दृष्टि	८.	सुधामयी, कृपा दृष्टि की	**ह्रदिन्याम् ।।**	१२.	कालिय दह में

श्लोकार्थ---जब भगवान् श्रीकृष्ण व्रज में विष से दूषित जल पीये हुए व्रज के पशुओं और ग्वालो को सुधामयी कृपा-दृष्टि की वर्षा से जीवित करेंगे, तब शुद्ध करने के लिए कालियदह में विहार करते हुए वे भगवान् अधिक विषैली, शक्तिशाली और लपलपाती जीभ वाले कालियनाग को निकालेंगे ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तत्कर्म दिव्यमिव यन्निशि निःशयानं, दावाग्निना शुचिवने परिदह्यमाने ।
उन्नेष्यति व्रजमतोऽवसितान्तकालं, नेत्रे पिधाय्य सबलोऽनधिगम्यवीर्यः ।। २९ ।

पदच्छेद— **तत् कर्म दिव्यम् इव यद् निशि निःशयानम्, दाव अग्निना शुचिवने परिदह्यमाने ।**
उन्नेष्यति व्रजम् अतः अवसित अन्त कालम्, नेत्रे पिधाय्य सबलः अनधिगम्य वीर्यः ।।

शब्दार्थ—

तत्, कर्म	१६.	(उनकी) वह लीला	**उन्नेष्यति**	१५.	उबार लेंगे
दिव्यम्	१८.	अलौकिक (होगी)	**व्रजम्**	११.	व्रजवासियों को
इव	१७.	भी	**अतः**	१३.	उस (संकट) से
यद्	१४.	जो	**अवसित**	१०.	पड़े हुए
निशि	७.	रात्रि में	**अन्त, कालम्**	९.	प्राण-संकट में
निः शयानम्	८.	आराम से सोये हुए (तथा)	**नेत्रे, पिधाय्य**	१२.	आँखें, बन्द कराकर
दाव अग्निना	४.	दावाग्नि से	**सबलः**	३.	बलराम जी के साथ
शुचि वने	५.	मूँजवन के	**अनधिगम्य**	१	अचिन्त्य
परिदह्यमाने ।	६.	जलते समय	**वीर्यः ।।**	२.	शक्ति (भगवान् श्रीकृष्ण)

श्लोकार्थ—अचिन्त्य-शक्ति भगवान् श्री कृष्ण बलराम जी के साथ दावाग्नि से मूँज वन के जलने समय रात्रि में आराम से सोये हुए तथा प्राण-संकट में पड़े हुए व्रजवासियों को, आँखें बन्द कराकर उस संकट से जो उबार लेंगे, उनकी वह लीला भी अलौकिक होगी ।

त्रिंशः श्लोकः

गृह्णीत यद् यदुपबन्धममुष्य माता, शुल्बं सुतस्य न तु तत् तदमुष्य माति ।
यज्जृम्भतोऽस्य वदने भुवनानि गोपी, संवीक्ष्य शङ्कितमनाः प्रतिबोधिताऽऽसीत् ।।३०

पदच्छेद— **गृह्णीत यद् यद् उपबन्धम् अमुष्य माता, शुल्बम् सुतस्य न तु तत् तद् अमुष्य माति ।**
यद् जृम्भतः अस्य वदने भुवनानि गोपी, संवीक्ष्य शङ्कित मनाः प्रतिबोधिता आसीत् ।।

शब्दार्थ—

गृह्णीत	५.	लायेंगी	**यद्**	१३	जब
यद् यद् उपबन्धम्	४.	जो-जो रस्सी	**जृम्भतः**	१२.	जंभाई लेने समय
अमुष्य	२.	उस	**अस्य, वदने**	१४.	उसके, मुख में
माता	१.	माता (यशोदा)	**भुवनानि**	१५.	चौदह लोकों को
शुल्बम्	८.	रस्सी	**गोपी,**	११.	माता यशोदा (बालक के)
सुतस्य	३.	पुत्र श्रीकृष्ण को बाँधने के लिए	**संवीक्ष्य**	१६	देखेंगी (तब पहले)
न तु	९.	नहीं	**शङ्कितमनाः**	१७.	भयभीत होंगी (किन्तु फिर
तद् तद्	७.	वह-वह	**प्रतिबोधिता**	१८.	सम्हल
अमुष्य	६.	उनके लिए	**आसीत् ।।**	१९.	जायेंगी
माति ।	१०.	पूरी पड़ेगी (तथा वह)			

श्लोकार्थ—माता यशोदा उस पुत्र श्रीकृष्ण को बाँधने के लिए जो-जो रस्सी लायेंगी, उनके लिए व वह रस्सी पूरी नहीं पड़ेगी तथा वह माता यशोदा बालक के जँभाई लेने समय जब उसके मुख में चौ लोकों को देखेंगी तब पहले भयभीत होंगी किन्तु फिर सम्हल जायेंगी

पदच्छद नन्दम च मोक्ष्यति भयात वरुणस्य पाशात, गोपान बिलषु पिहितान मय सूनुना च।
अह्नि आपृतम निशि शयानम अतिश्रमेण लोकम विकुण्ठम उपनेष्यति गोकुलम स्म ॥

शब्दार्थ- -

नन्दम्	४. नन्द बाबा को	अह्नि	११. दिन भर
च	२. और	आपृतम्	१२. कामधन्धों में लगे रहने वा
मोक्ष्यति	१०. छुड़ायेंगे (अन्त में)	निशि	१४. रात में
भयात्	१. (अजगर के) भयसे	शयानम्	१६. सोने वाले
वरुणस्य, पाशात्,	३ वरुण के, फन्दे से	अतिश्रमेण,	१५. थक कर
गोपान्	६. ग्वालों को	लोकम्	१६. धाम
बिलेषु	७. पहाड़ की गुफाओं में	विकुण्ठम्	१८. वैकुण्ठ
पिहितान्	८. बन्द किये गये	उपनेष्यति	२०. पहुँचायेंगे
मय सूनुना	६. मयदानव के पुत्र के द्वारा	गोकुलम्	१७. व्रजवासियों को
च।	५. तथा	स्म ॥	१३. और

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण अजगर के भय से और वरुण के फन्दे से नन्द बाबा को तथा मय दानव पुत्र व्योमासुर के द्वारा पहाड़ की गुफाओं में बन्द किये गये ग्वालों को छुड़ायेंगे। अन्त मे दिन भर काम धन्धों में लगे रहने वाले और रात में थक कर सोने वाले व्रजवासियों को वैकुण्ठ धाम पहुँचायेंगे।

द्वात्रिंश: श्लोक:

गोपैर्मखे प्रतिहते व्रजविप्लवाय, देवेऽभिवर्षति पशून् कृपया रिरक्षुः।
धर्तोच्छिलीन्ध्रमिव सप्त दिनानि सप्त—वर्षो महीध्रमनघैककरे सलीलम् ॥३२

पदच्छेद— गोपैः मखे प्रतिहते व्रज विप्लवाय, देवे अभिवर्षति पशून् कृपया रिरक्षुः।
धर्ता उच्छिलीन्ध्रम् इव सप्त दिनानि सप्त, वर्षः महीध्रम् अनघ एक करे सलीलम् ॥

शब्दार्थ—

गोपैः	२. ग्वालों के द्वारा	धर्ता	१६. धारण किये रहेंगे
मखे, प्रतिहते	३. पूजन, बन्द कर देने पर	उच्छिलीन्ध्रम्	१२. कुकुरमुत्ते के
व्रज, विप्लवाय	५. व्रजभूमि के, विनाश के लिए	इव, सप्त दिनानि	१३ समान, सात दिनों तक
देवे	४. देवराज इन्द्र	सप्त, वर्षः	१०. सात, वर्ष की आयु वाले
अभिवर्षति	६. (जब) वर्षा करने लगेंगे	महीध्रम्	११. गोवर्धन पर्वत को
पशून्	८. पशुओं की	अनघ	१. हे निष्पाप नारद जी!
कृपया	७. (उस समय) कृपावश	एक करे	१५. एक हाथ पर
रिरक्षुः।	६. रक्षा करने की इच्छा से	सलीलम् ॥	१४. खेल-खेल में

श्लोकार्थ—हे निष्पाप नारद जी! ग्वालों के द्वारा पूजन बन्द कर देने पर देवराज इन्द्र व्रजभूमि विनाश के लिए जब वर्षा करने लगेंगे, उस समय कृपावश पशुओं की रक्षा करने की इच्छा से सात व की आयु वाले भगवान् श्रीकृष्ण गोवर्धन पर्वत को कुकुरमुत्ते के समान सात दिनों तक खेल-खेल मे ए हाथ पर धारण किये रहेंगे।

उद्दीपि   व्रजभृद्वधूना, हर्तुर्हरिष्यति शिरो धनदानुगस्य ॥

पदच्छद क्रीडन वने निशि निशाकर रश्मि गौर्याम, रास उन्मुख कल पद आयत मूर्च्छितेन ।
उद्दीपित स्मर रुजाम व्रजभृत वधूनाम, हर्तु हरिष्यति शिर धनद अनुगस्य ॥

शब्दार्थ—

क्रीडन्	३.	विहार करते हुए (श्रीकृष्ण)	मूर्च्छितेन ।	९.	तान से
वने	२.	वन में	उद्दीपित	११.	वश में हुईं
निशि	६.	रात्रि में	स्मर रुजाम्	१०.	प्रेम के
निशाकर	४.	चन्द्रमा की	व्रजभृत् वधूनाम्	१२.	ग्वालों की स्त्रियों का
रश्मि, गौर्याम्,	५.	चांदनी से, उज्ज्वल	हर्तुः	१३.	हरण करने वाले
रास, उन्मुखः	१.	रास लीला की, इच्छा से	हरिष्यति	१६.	उतार देंगे
कलपद	७.	वंशी की	शिरः	१५.	मस्तक
आयत	८.	लम्बी	धनद अनुगस्य।	१४.	कुबेर के सेवक का

श्लोकार्थ—रासलीला की इच्छा से वन में विहार करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्रमा की चाँद उज्ज्वल रात्रि में वंशी की लम्बी तान से प्रेम के वश में हुईं ग्वालों की स्त्रियों का करने वाले कुबेर के सेवक शंखचूड का मस्तक उतार देंगे ।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

ये च प्रलम्बखरदर्दुरकेश्यरिष्ट-मल्लेभकंसयवनाः कुजपौण्ड्रकाद्याः ।
अन्ये च शाल्वकपिबल्वलदन्तवक्त्र-सप्तोक्षशम्बरविदूरथरुक्मिमुख्याः ॥३४॥

पदच्छेद—ये च प्रलम्ब खर दर्दुर केशी अरिष्ट, मल्ल इभ कंस यवनाः कुज पौण्ड्रक आद्याः ।
अन्ये च शाल्व कपि बल्वल दन्तवक्त्र, सप्त उक्षन् शम्बर विदूरथ रुक्मि मुख्याः ॥

शब्दार्थ—

ये च	८.	जो (राजा) थे	अन्ये	१५.	दूसरे
प्रलम्ब, खर	१.	प्रलम्बासुर, धेनुकासुर	च	९.	तथा
दर्दुर, केशी	२.	बकासुर, केशी	शाल्व, कपि	१०.	शाल्व, द्विविद वानर
अरिष्ट	३.	अरिष्टासुर,	बल्वल, दन्तवक्त्र	११.	बल्वल, दन्तवक्त्र
मल्ल	४.	चाणूरादि पहलवान	सप्त उक्षन्	१२.	(राजा नग्नजित के) स
इभ, कंस	५.	कुवलयापीड हाथी, कंस	शम्बर, विदूरथ	१३.	शम्बरासुर, विदूरथ
यवनाः, कुज	६.	कालयवन, भौमासुर	रुक्मि	१४.	रुक्मी, (आदि)
पौण्ड्रक, आद्याः।	७.	मिथ्यावासुदेव, इत्यादि	मुख्याः ॥	१६.	प्रधान (दुष्ट थे)

श्लोकार्थ—प्रलम्बासुर, धेनुकासुर, बकासुर, केशी, अरिष्टासुर, चाणूरादि पहलवान, कुवलय हाथी, कंस, कालयवन, भौमासुर, मिथ्या वासुदेव इत्यादि जो राजा थे तथा शाल्व, द्विविद व बल्वल, दन्तवक्त्र, राजा नग्नजित के सात बैल, शम्बरासुर, विदूरथ, रुक्मी आदि दूसरे प्रधान दुष्ट थे, भगवान् उनका वध करेंगे ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ये वा मृधे समितिशालिन आत्तचापाः, काम्बोजमत्स्यकुरुकैकयसृञ्जयाद्याः ।
यास्यन्त्यदर्शनमलं बलपार्थभीम, व्याजाह्वयेन हरिणा निलयं तदीयम् ॥३५॥

पदच्छेद—**ये वा मृधे समिति शालिनः आत्तचापाः, काम्बोज मत्स्य कुरु कैकय सृञ्जय आद्याः ।**
यास्यन्ति अदर्शनम् अलम् बल पार्थ भीम, व्याज आह्वयेन हरिणा निलयम् तदीयम् ॥

शब्दार्थ—

ये वा	५. जो भी राजा	**अदर्शनम्**	१५. मार दिये जायेंगे (और)
मृधे	८. लड़ाई के मैदान में	**अलम्**	१४. तत्काल
समिति शालिनः	६. युद्ध करने की इच्छा से	**बल, पार्थ, भीम**	१०. बलराम, अर्जुन, भीमसेन
आत्त चापाः,	७. धनुष लेकर	**व्याज**	१२. बहाने
काम्बोज, मत्स्य	१. कम्बोज, मत्स्य	**आह्वयेन**	११. नामों के
कुरु, कैकय	२. कुरु, कैकय	**हरिणा**	१३. (स्वयं) श्री कृष्ण के द्वारा
सृञ्जय	३. सृञ्जय	**निलयम्**	१७. निवास वैकुण्ठ लोक को चले जायेंगे
आद्याः ।	४. आदि देशों के		
यास्यन्ति	९. जायेंगे (वे सब)	**तदीयम् ॥**	१६. उनके

श्लोकार्थ—कम्बोज, मत्स्य, कुरु, कैकय, सृञ्जय आदि देशों के जो भी राजा युद्ध करने की इच्छा से धनुष लेकर लड़ाई के मैदान में जायेंगे; वे सब बलराम, अर्जुन, भीमसेन नामों के बहाने स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा तत्काल मार दिये जायेंगे और उनके निवास वैकुण्ठधाम को चले जायेंगे ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

कालेन मीलितधियामवमृश्य नृणां, स्तोकायुषां स्वनिगमो बत दूर पारः ।
आविर्हितस्त्वनुयुगं स हि सत्यवत्यां, वेदद्रुमं विटपशो विभजिष्यति स्म ॥ ३६ ।

पदच्छेद— **कालेन मीलित धियाम् अवमृश्य नृणाम्, स्तोक आयुषाम् स्वनिगमः बत दूर पारः ।**
आविर्हितः तु अनुयुगम् सः हि सत्यवत्याम्, वेद द्रुमम् विटपशः विभजिष्यति स्म ॥

शब्दार्थ—

कालेन	१. समय के फेर से	**पारः ।**	७. अध्ययन की
मीलित, धियाम्	३. मन्द, बुद्धि	**आविर्हितः, तु**	१३. अवतार लेंगे, तथा
अवमृश्य	९. विचार करके	**अनुयुगम्**	११. प्रत्येक युग में
नृणाम्,	२. मनुष्यों की	**सः, हि**	१०. वे भगवान्, ही
स्तोक, आयुषाम्	४. अल्प, आयु	**सत्यवत्याम्**	१२. सत्यवती के गर्भ से
स्व निगमः	६. वेद वाणी के	**वेद, द्रुमम्**	१४. वेद, वृक्ष को
बत	५. और	**विटपशः**	१५. शाखाओं में
दूर	८. असमर्थता पर	**विभजिष्यतिस्म ॥**	१६. बाँट देंगे

श्लोकार्थ—समय के फेर से मनुष्यों की मन्द-बुद्धि, अल्प-आयु और वेद वाणी के अध्ययन की असमर्थता पर विचार करके वे भगवान् ही प्रत्येक युग में सत्यवती के गर्भ से अवतार लेंगे तथा वेदवृक्ष को शाखाओं में बाँट देंगे

पदच्छद देवद्विषाम निगम वत्मनि निष्ठितानाम पूर्भि मयेन विहिताभि अदृश्य तूर्भि
लोकान घ्नताम मति विमोहम अतिप्रलोभम, वेषम विधाय बहु भाष्यते औपधर्म्यम।

शब्दार्थ

देवद्विषाम्	८.	दैत्यो की	**घ्नताम्**	७.	नाश करन वाले
निगम वर्त्मनि	१.	वेद के मार्ग का	**मति, विमोहम्**	९.	बुद्धि में, भ्रम (और)
निष्ठितानाम्,	२.	सहारा लिये हुये	**अति प्रलोभम्**	१०.	अत्यन्त लोभ उत्पादक
पूर्भिः	५.	नगरों में (रहने वाले)	**वेषम्, विधाय**	११.	वेष को, धारण करके
मयेन विहिताभिः	३.	मयदानव से बनाये हुये	**बहु**	१२.	बहुत से
अदृश्य तूर्भिः।	४.	सूक्ष्म वेग वाले	**भाष्यते**	१४.	उपदेश देंगे
लोकान्	६.	(और) लोगों का	**औपधर्म्यम्॥**	१३.	उपधर्मों का

श्लोकार्थ—वेद के मार्ग का सहारा लिये हुये, मयदानव से बनाये हुये सूक्ष्म वेग वाले नगरों मे रहने व
और लोगों का नाश करने वाले दैत्यों की बुद्धि में भ्रम और अत्यन्त लोभ उत्पादक वेष
धारण करके वे भगवान् बुद्धरूप से वहुत से उपधर्मों का उपदेश देंगे।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

यर्ह्यालयेष्वपि सतां न हरेः कथाः स्युः, पाखण्डिनो द्विजजना वृषला नृदेवाः।
स्वाहा स्वधा वषडिति स्म गिरो न यत्र, शास्ता भविष्यति कलेर्भगवान् युगान्ते ॥३८

पदच्छेद— **यर्हि आलयेषु अपि सताम् न हरेः कथाः स्युः, पाखण्डिनः द्विज जनाः वृषलाः नृदेवाः**
स्वाहा स्वधा वषट् इति स्म गिरः न यत्र, शास्ता भविष्यति कलेः भगवान् युग अन्ते

शब्दार्थ—

यर्हि	१.	जब	**स्वाहा, स्वधा**	१३.	स्वाहा, स्वधा (और)
आलयेषु	४.	घरों में	**वषट्, इति**	१४.	वषट्कार ये
अपि	३.	भी	**स्म**	१७.	सुनाई देंगे (तब)
सताम्	२.	सज्जनों के	**गिरः,**	१५.	शब्द,
न	६	नहीं	**न**	१६.	नहीं
हरेः, कथाः	५.	भगवान् की, कथायें	**यत्र**	१२.	(तथा) जब
स्युः	७.	होंगी	**शास्ता**	२०.	शासन करने वाले
पाखण्डिनः	९.	पाखण्डी (और)	**भविष्यति**	२२.	अवतार लेंगे
द्विज, जनाः	८.	ब्राह्मण जन	**कलेः**	१९.	कलियुग पर
वृषलाः	११.	शूद्र (हो जावेंगे)	**भगवान्**	२१.	भगवान् (कल्कि रूप से)
नृदेवाः।	१०.	क्षत्रिय	**युग, अन्ते॥**	१८.	कलियुग के, अन्त में

श्लोकार्थ—जब सज्जनों के भी घरों में भगवान् की कथायें नहीं होंगी, ब्राह्मण जन पाखण्डी और क्ष
शूद्र हो जावेंगे तथा जब स्वाहा, स्वधा और वषट्कार ये शब्द नहीं सुनाई देंगे, तब क
युग के अन्त में कलियुग पर शासन करने वाले भगवान् कल्कि रूप से अवतार लेंगे।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

सर्गे तपोऽहमृषयो नव ये प्रजेशाः, स्थाने च धर्ममखमन्वमरावनीशाः ।

अन्ते त्वधर्महरमन्युवशासुराद्या, मायाविभूतय इमाः पुरुशक्तिभाजः ॥ ३९

पदच्छेद— **सर्गे तपः अहम् ऋषयः नव ये प्रजेशाः, स्थाने च धर्म मख मनु अमर अवनीशाः ।**
अन्ते तु अधर्म हर मन्युवश असुर आद्याः, माया विभूतयः इमाः पुरु शक्ति भाजः ॥

शब्दार्थ—

सर्गे	१.	(संसार की) सृष्टि के समय	**अन्ते**	१०.	संहार के समय
तपः, अहम्	२.	तपस्या, मैं	**तु**	९.	तथा
ऋषयः, नव	३.	सप्तर्षि, (और) नव	**अधर्म, हर**	११.	अधर्म, रुद्र
ये	१४.	जो (प्रधान रूप हैं)	**मन्युवश**	१२.	मन्युवश नाग और
प्रजेशाः,	४.	प्रजापति	**असुर, आद्याः**	१३.	दैत्य, इत्यादि
स्थाने	६.	पालन के समय	**माया**	१७.	माया के
च	५.	एवम्	**विभूतयः**	१८	विशेष अवतार हैं
धर्म, मख, मनु	७	धर्म, विष्णु, मनु	**इमाः, पुरु**	१५.	ये, सर्व
अमर, अवनीशाः ।	८.	देवता, (और) राजगण	**शक्तिभाजः ॥**	१६.	शक्तिमान् परमात्मा की

श्लोकार्थ—संसार की सृष्टि के समय तपस्या, मैं, सप्तर्षि और नव प्रजापति एवम् पालन के समय धर्म, विष्णु, मनु, देवता और राजगण तथा संहार के समय अधर्म, रुद्र, मन्युवश नाग और दैत्य इत्यादि जो प्रधान रूप हैं; ये सर्व शक्तिमान् परमात्मा की माया के विशेष अवतार हैं ।

चत्वारिंश: श्लोक:

विष्णोर्नु वीर्यगणनां कतमोऽर्हतीह, यः पार्थिवान्यपि कविर्विममे रजांसि ।

चस्कम्भ यः स्वरंहसास्खलता त्रिपृष्ठं, यस्मात् त्रिसाम्यसदनादुरुकम्पयानम् ॥४०॥

पदच्छेद— **विष्णोः नु वीर्य गणनाम् कतमः अर्हति इह, यः पार्थिवानि अपि कविः विममे रजांसि ।**
चस्कम्भ यः स्व रंहसा अस्खलता त्रिपृष्ठम्, यस्मात् त्रि साम्य सदनात् उरु कम्पयानम् ॥

शब्दार्थ—

विष्णोः	९.	भगवान् विष्णु के	**रजांसि ।**	४.	कणों को
नु	७.	भला	**चस्कम्भ**	२०.	स्थिर किया था
वीर्य, गणनाम्	१०.	पराक्रम को, गिनती	**यः**	१२.	उन्होंने
कतमः	८.	कौन (व्यक्ति)	**स्व**	१७.	अपने
अर्हति	११.	कर सकता है	**रंहसा**	१९.	वेग से
इह,	६.	यहाँ (उनमें से)	**अस्खलता**	१८.	अटल
यः	१.	जिस	**त्रिपृष्ठम्**	१६.	सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को
पार्थिवानि, अपि	३.	पृथ्वी के, भी	**यस्मात्, त्रिसाम्य**	१३.	जिन, तीन बराबर पगों को
कविः	२.	प्रतिभाशाली ने	**सदनात्**	१४.	फैलाने के समय
विममे	५.	माप लिया है	**उरु, कम्पयानम् ॥**	१५.	जोर से, काँपते हुये

श्लोकार्थ—जिस प्रतिभाशाली ने पृथ्वी के भी कणों को माप लिया है, यहाँ उनमें से भला कौन व्यक्ति भगवान् विष्णु के पराक्रम को गिनती कर सकता है ? उन्होंने जिन तीन बराबर पगों को फैलाने के समय जोर से काँपने हुये पृथ्वी से सत्य लोक तक के सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने अटल वेग से स्थिर किया था ।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

नान्तं विदाम्यहममी मुनयोऽग्रजास्ते, मायाबलस्य पुरुषस्य कुतोऽपरे ये ।
गायन् गुणान् दशशताननं आदिदेवः, शेषोऽधुनापि समवस्यति नास्य पारम् ॥४१

पदच्छेद— न अन्तम् विदामि अहम् अमी मुनयः अग्रजाः ते, माया बलस्य पुरुषस्य कुतः अपरे ये ।
गायन् गुणान् दशशत आननः आदिदेवः, शेषः अधुना अपि समवस्यति न अस्य पारम् ॥

शब्दार्थ—

न	८. नहीं	**अपरे**	११. दूसरे लोग (है वे भला)
अन्तम्	७. पार	**ये ।**	१०. (फिर) जो
विदामि	९. पा सका हूँ	**गायन्**	१६. गान करते हुये
अहम्	४. मैं (भी)	**गुणान्**	१५. (उनके) गुणों का
अमी, मुनयः	३. वे (सनकादि) मुनि (तथा)	**दशशत, आननः**	१४. हजार, मुखों से
अग्रजाः	२. बड़े भाई	**आदिदेवः, शेषः**	१३. आदिदेव, भगवान् शेष ना
ते,	१. तुम्हारे	**अधुना, अपि**	१७. आज तक, भी
माया, बलस्य	५. माया, शक्ति वाले	**समवस्यति**	२० निश्चय कर पाये हैं
पुरुषस्य	६. भगवान् विष्णु का	**न**	१९. नहीं
कुतः	१२. कैसे (जान सकते हैं)	**अस्य, पारम् ॥**	१८. उनके, अन्त का

श्लोकार्थ—तुम्हारे बड़े भाई वे सनकादि मुनि तथा मैं भी माया शक्ति वाले भगवान् विष्णु का र नहीं पा सका हूँ, फिर जो दूसरे लोग हैं, वे भला कैसे जान सकते हैं ? आदिदेव भगवान् शेषन हजार मुखों से उनके गुणों का गान करते हुए आज तक भी उनके अन्त का निश्चय नहीं कर पाये है ।

द्विचत्वारिंश: श्लोक:

येषां स एव भगवान् दययेदनन्तः, सर्वात्मनाश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम् ।
ते दुस्तरामतितरन्ति च देवमायां, नैषां ममाहमिति धीः श्वशृगालभक्ष्ये ॥४२॥

पदच्छेद—येषाम् सः एव भगवान् दययेत् अनन्तः, सर्वात्मना आश्रित पदः यदि निर्व्यलीकम् ।
ते दुस्तराम् अतितरन्ति च देव मायाम्, न एषाम् मम अहम् इति धीः श्वन् शृगाल भक्ष्ये ॥

शब्दार्थ—

येषाम्	६. उन पर	**ते, दुस्तराम्**	११. (तदनन्तर) वे, अपार
सः एव	७. वे ही	**अतितरन्ति, च**	१३. पार कर लेते हैं, तथा
भगवान्	८. भगवान्	**देव, मायाम्**	१२. देव, माया को
दययेत्	१०. कृपा करते हैं	**न**	२०. नहीं रहता है
अनन्तः,	९. अनन्त	**एषाम्**	१९ उनमें
सर्वात्मना	४. सभी तरह से	**मम**	१७. मेरा
आश्रित	५. सहारा लिया गया है (तो)	**अहम्**	१६. मैं (और)
पदः	३. (भगवान् के) श्रीचरणों का	**इति, धीः**	१८. यह, भाव
यदि	१. यदि	**श्वन्, शृगाल**	१४. कुत्ते और, सियार के
निर्व्यलीकम् ।	२. निष्कपट भाव से	**भक्ष्ये ॥**	१५. कलेवा रूप शरीर में

श्लोकार्थ—यदि निष्कपट-भाव से भगवान् के श्री चरणों का सभी तरह से सहारा लिया गय तो उन पर वे ही भगवान् अनन्त कृपा करते हैं। तदनन्तर वे लोग अपार देव माया को कर लेते हैं तथा कुत्ते और सियार के कलेवा रूप शरीर में 'मैं' और 'मेरा' यह भाव उनमे रहता है ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

वेदाहमङ्ग परमस्य हि योगमायां, यूयं भवश्च भगवानथ दैत्यवर्यः ।
पत्नी मनोः स च मनुश्च तदात्मजाश्च, प्राचीनबर्हिऋर्भुरङ्ग उत ध्रुवश्च ॥४३॥

पदच्छेद— वेद अहम् अङ्ग परमस्य हि योग मायाम्, यूयम् भवः च भगवान् अथ दैत्य वर्यः ।
पत्नी मनोः सः च मनुः च तद् आत्मजाः च, प्राचीन बर्हिः ऋभुः अङ्गः उत ध्रुवः च ॥

शब्दार्थ—

वेद	२२.	जानते हैं	मनोः	१०.	मनु की
अहम्	४.	मैं	सः	१२.	वे
अङ्ग	१.	हे देवर्षि नारद !	च	६.	और
परमस्य	२.	परम पुरुष की	मनुः, च	१३.	मनु, तथा
हि	२१.	ही	तद्, आत्मजाः	१४.	उनके, पुत्र (प्रियव्रत आदि
योग मायाम्,	३.	माया शक्ति को	च, प्राचीनबर्हिः	१५.	एवम्, प्राचीनबर्हि
यूयम्	५.	तुम लोग	ऋभुः	१७.	ऋभु
भवः	७.	शंकर	अङ्गः	१६.	प्यारे
च, भगवान्	६.	और, भगवान्	उत	१६.	तथा
अथ, दैत्यवर्यः ।	८.	तथा, प्रह्लाद	ध्रुवः	२०.	ध्रुव
पत्नी	११.	स्त्री (शतरूपा)	च ॥	१८.	एवम्

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! परम पुरुष की माया शक्ति को मैं, तुम लोग और भगवान् शंकर त
प्रह्लाद और मनु की स्त्री शतरूपा, वे मनु तथा उनके पुत्र प्रियव्रत आदि एवम् प्राचीनब
तथा ऋभु एवम् प्यारे ध्रुव ही जानते हैं ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इक्ष्वाकुरैलमुचुकुन्दविदेहगाधि, रघ्वम्बरीषसगरा गयनाहुषाद्याः ।
मान्धात्रलर्कशतधन्वनुरन्तिदेवा, देवव्रतो बलिरमूर्त्तरयो दिलीपः ॥४४॥

पदच्छेद— इक्ष्वाकुः ऐल मुचुकुन्द विदेह गाधि, रघु अम्बरीष सगराः गय नाहुष आद्याः ।
मान्धातृ अलर्क शतधनु अनु रन्तिदेवाः, देवव्रतः बलिः अमूर्त्तरयः दिलीपः ॥

शब्दार्थ—

इक्ष्वाकुः	१.	राजा इक्ष्वाकु	मान्धातृ	८.	मान्धाता
ऐल	२.	ऐल	अलर्क	६.	अलर्क
मुचुकुन्द	३.	मुचुकुन्द	शतधनु	१०.	शतधन्वा
विदेह, गाधि	४.	जनक, गाधि	अनु, रन्तिदेवाः ।	११.	अनु, रन्तिदेव
रघु, अम्बरीष	५.	रघु, अम्बरीष	देवव्रतः	१२.	भीष्म
सगराः	६.	सगर	बलिः	१३.	बलि
गय, नाहुष	७.	गय, ययाति	अमूर्त्तरयः	१४.	अमूर्त्तरय (तथा)
आद्याः ।	१६.	इत्यादि (राजा लोग भी)	दिलीपः ॥	१५.	दिलीप

श्लोकार्थ—राजा इक्ष्वाकु, ऐल, मुचुकुन्द, जनक, गाधि, रघु, अम्बरीष, सगर, गय, ययाति, मान्धात
अलर्क शतधन्वा अनु रन्तिदेव भीष्म बलि अमूर्त्तरय तथा दिलीप इत्यादि राजा लोग
भगवान् की माया को जानते हैं

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सौभर्युतङ्कशिबिदेवलपिप्पलाद, सारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः ।
येऽन्ये विभीषणहनूमदुपेन्द्रदत्त-पार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः ॥४५॥

पदच्छेद— **सौभरि उतङ्क शिबि देवल पिप्पलाद, सारस्वत उद्धव पराशर भूरिषेणाः ।**
ये अन्ये विभीषण हनूमत् उपेन्द्रदत्त, पार्थ आर्ष्टिषेण विदुर श्रुतदेव वर्याः ॥

शब्दार्थ—

सौभरि	१.	सौभरि	**ये, अन्ये**	१५.	जो, दूसरे
उतङ्क	२.	उतङ्क	**विभीषण**	९.	विभीषण
शिबि, देवल	३.	शिबि, देवल	**हनूमत्**	१०.	हनुमत्
पिप्पलाद,	४.	पिप्पलाद	**उपेन्द्रदत्त,**	११.	शुकदेव मुनि
सारस्वत	५.	सारस्वत	**पार्थ**	१२	अर्जुन
उद्धव	६.	उद्धव	**आर्ष्टिषेण**	१३.	आर्ष्टिषेण
पराशर	७.	पराशर	**विदुर, श्रुतदेव**	१४.	विदुर, श्रुतदेव इत्यादि
भूरिषेणाः ।	८.	भूरिषेण	**वर्याः ॥**	१६.	श्रेष्ठ महात्मा हैं (वे भगवान् की माया को जानते हैं)

श्लोकार्थ—सौभरि, उतङ्क, शिबि, देवल, पिप्पलाद, सारस्वत, उद्धव, पराशर, भूरिषेण, विभीषण, हनुमत्, शुकदेवमुनि, अर्जुन, आर्ष्टिषेण, विदुर, श्रुतदेव इत्यादि जो दूसरे श्रेष्ठ महात्मा है, वे भगवान् की माया को जानते हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ते वै विदन्त्यतितरन्ति च देवमायां, स्त्रीशूद्रहूणशबरा अपि पापजीवाः ।
यद्यद्भुतक्रमपरायणशीलशिक्षा—स्तिर्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये ॥४६॥

पदच्छेद—

ते वै विदन्ति अतितरन्ति च देव मायाम्, स्त्री शूद्र हूण शबराः अपि पाप जीवाः ।
यदि अद्भुत क्रम परायण शील शिक्षाः, तिर्यक् जनाः अपि किमु श्रुत धारणाः ये ॥

शब्दार्थ—

ते, वै	१०.	वे, भी	**यदि**	६.	यदि
विदन्ति	१२.	जानते हैं	**अद्भुतक्रम**	७.	भगवान् के
अतितरन्ति	१४.	पार कर लेते हैं	**परायण, शील**	८.	भक्तों के समान, स्वभाव वाले
च	१३.	और (उसे)	**शिक्षाः,**	९.	बुद्धि वाले हैं (तो)
देव मायाम्,	११.	भगवान् की माया को	**तिर्यक्**	४.	पशु-पक्षी इत्यादि
स्त्री, शूद्र, हूण	१.	स्त्री, शूद्र, हूण	**जनाः, अपि**	५.	जीव, भी
शबराः, अपि	२.	कोल-भील, तथा	**किमु**	१७.	उनका तो कहना ही क्या है
पाप जीवाः ।	३.	पाप योनि वाले	**श्रुत, धारणाः**	१६.	वेद के, ज्ञान से युक्त (हैं)
			ये ॥	१५	(फिर) जो

श्लोकार्थ—स्त्री, शूद्र, हूण, कोल-भील तथा पाप योनि वाले पशु-पक्षी इत्यादि जीव भी यदि भगवान् के भक्तों के समान स्वभाव वाले और बुद्धि वाले हैं तो वे भी भगवान की माया को जानते है और उसे पार कर लेते हैं फिर जो वेद के ज्ञान से युक्त हैं उनका तो कहना ही क्या है

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

शश्वत् प्रशान्तमभयं प्रतिबोधमात्रं, शुद्धं समं सदसतः परमात्मतत्त्वम् ।
शब्दो न यत्र पुरुकारकवान् क्रियार्थो, माया परैत्यभिमुखे च विलज्जमाना ॥४७॥

पदच्छेद—

शश्वत् प्रशान्तम् अभयम् प्रतिबोध मात्रम्, शुद्धम् समम् सत् असतः परम् आत्म तत्त्वम् ।
शब्दः न यत्र पुरु कारकवान् क्रियार्थः, माया परैति अभिमुखे च विलज्जमाना ॥

शब्दार्थ—

शश्वत्	२.	सनातन	शब्दः	११.	शब्द की (तथा)
प्रशान्तम्	३.	अत्यन्त शान्त	न	१४.	(गति) नहीं है
अभयम्	४.	अभय	यत्र	१०.	जहाँ पर
प्रतिबोध	६.	ज्ञान रूप	पुरु, कारकवान्	१२.	अनेक, साधनों वाले
मात्रम्,	५.	केवल	क्रियार्थः	१३.	यज्ञ फल की
शुद्धम्,	७.	माया से रहित	माया, परैति	१८.	माया, दूर हो जाती है
समम्	८.	सदा एक रस (और)	अभिमुखे	१६.	सामने
सत्, असतः, परम्	९.	सत्, असत् से परे है	च	१५.	तथा (उनके)
आत्म तत्त्वम् ॥	१.	परमात्मा का, स्वरूप	विलज्जमाना॥	१७.	लजाती हुई

श्लोकार्थ—परमात्मा का स्वरूप सनातन, अत्यन्त शान्त, अभय, केवल ज्ञानरूप, माया से रहित, सदा एक रस और सत्-असत् से परे है। जहाँ पर शब्द की तथा अक साधनों से किये जाने वाले यज्ञ फल की गति नहीं है तथा उनके सामने लजाती हुई माया उनसे दूर भाग जाती है।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

तद् वै पदं भगवतः परमस्य पुंसो, ब्रह्मेति यद् विदुरजस्रसुखं विशोकम् ।
सध्र्यङ् नियम्य यतयो यमकर्तहेतिं, जह्युः स्वराडिव निपानखनित्रमिन्द्रः ॥४८॥

पदच्छेद— तद् वै पदम् भगवतः परमस्य पुंसः, ब्रह्म इति यद् विदुः अजस्र सुखम् विशोकम् ।
सध्र्यङ् नियम्य यतयः यमकर्त हेतिम्, जह्युः स्वराड् इव निपान खनित्रम् इन्द्रः ॥

शब्दार्थ—

तद्, वै	३.	वह, ही	सध्र्यङ्, नियम्य	१५.	आत्मा में, स्थित रहकर
पदम्	४.	परमपद है	यतयः	१४.	(उसी प्रकार) योगी जन
भगवतः	२.	भगवान् का	यमकर्त	१६.	भेद दूर करने वाले
परमस्य, पुंसः,	१.	परम, पुरुष	हेतिम्,	१७.	साधनों की
ब्रह्म, इति	८.	ब्रह्म, इस नाम से	जह्युः	१८.	अपेक्षा नहीं करते हैं
यद्	५.	जिसे (ज्ञानी जन)	स्वराड्	११.	स्वयं (वर्षा) स्वरूप
विदुः	९.	जानते है	इव	१०.	जैसे
अजस्र, सुखम्	७.	अनन्त, आनन्द	निपान, खनित्रम्	१३.	कुआँ खोदने वाले, साधनों के
विशोकम् ।	६.	शोक रहित	इन्द्रः ॥	१२.	इन्द्र (वर्षा करने के लिये)

श्लोकार्थ—परम पुरुष भगवान् का वही परम पद है, जिसे ज्ञानी जन शोक रहित, अनन्त आनन्द, और ब्रह्म इस नाम से जानते हैं। जसे स्वयं वर्षा स्वरूप इन्द्र वर्षा करने के लिये कुआँ आदि खोदनेवाले साधनों की अपेक्षा नहीं करते हैं उसी प्रकार योगी जन आत्मा में स्थित रहकर भेद दूर करने वाले साधनो की अपेक्षा नहीं करते हैं

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

स श्रेयसामपि विभुर्भगवान् यतोऽस्य, भावस्वभावविहितस्य सतः प्रसिद्धिः।
देहे स्वधातुविगमेऽनुविशीर्यमाणे, व्योमेव तत्र पुरुषो न विशीर्यतेऽजः।

पदच्छेद— **सः श्रेयसाम् अपि विभुः भगवान् यतः अस्य, भाव स्वभाव विहितस्य सतः प्रसिद्धिः। देहे स्वधातु विगमे अनुविशीर्यमाणे, व्योमा इव तत्र पुरुषः न विशीर्यते अजः॥**

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	**देहे**	१३.	शरीर
श्रेयसाम्	४.	कर्मों के फल में	**स्वधातु**	११.	शरीर से पञ्चभूतो के
अपि	३.	समस्त	**विगमे**	१२.	अलग हो जाने पर
विभुः	५.	व्याप्त हैं	**अनुविशीर्यमाणे,**	१४.	नष्ट हो जाता है (कि
भगवान्	२.	भगवान्	**व्योमा**	१८.	आकाश की
यतः	६.	क्योंकि	**इव**	१९.	भाँति
अस्य,	९.	मनुष्य के	**तत्र**	१५.	उसमें रहने वाला
भाव, स्वभाव	७.	अपने, स्वभाव से	**पुरुषः**	१७.	पुरुष
विहितस्य	८.	किये गये	**न, विशीर्यते**	२०.	नहीं, नष्ट होता है
सतः, प्रसिद्धिः।	१०.	शुभ कर्मों की, प्रेरणा (उन्हीं से मिलती है)	**अजः॥**	१६.	अजन्मा

श्लोकार्थ—वे भगवान् समस्त कर्मों के फल में व्याप्त हैं, क्योंकि अपने स्वभाव से किये गये मनु शुभ कर्मों की प्रेरणा उन्हीं से मिलती है। शरीर से पञ्चभूतों के अलग हो जाने पर नष्ट हो जाता है, किन्तु उसमें रहने वाला अजन्मा पुरुष आकाश की भाँति नष्ट होता है।

पञ्चाशः श्लोकः

सोऽयं तेऽभिहितस्तात भगवान् विश्वभावनः।
समासेन हरेर्नान्यदन्यस्मात् सदसच्च यत्॥ ५०॥

पदच्छेद—

सः अयम् ते अभिहितः तात, भगवान् विश्व भावनः।
समासेन हरेः न अन्यत्, अन्यस्मात् सत् असत् चयत्॥

शब्दार्थ—

सः	४.	उसी	**समासेन**	८.	थोड़े में
अयम्	५.	इस	**हरेः**	१३.	परमात्मा से
ते	७.	तुमसे	**न**	१५.	नहीं है (और वह)
अभिहितः	९.	वर्णन किया है	**अन्यत्**	१४.	भिन्न
तात	१.	बेटा नारद! (मैंने)	**अन्यस्मात्**	१६.	सबसे (भिन्न है)
भगवान्	६.	परमात्मा का	**सत्, असत्**	१०.	भाव और अभाव रूप
विश्व	२.	(संकल्प से) जगत् की	**च**	१२.	भी
भावनः।	३.	सृष्टि करने वाले	**यत्॥**	११.	कुछ

श्लोकार्थ—बेटा नारद! मैंने संकल्प से जगत् की सृष्टि करने वाले उसी इस परमात्मा का तुमसे वर्णन किया है भाव और अभाव रूप कुछ भी ८ से भिन्न नहीं है और वह भिन्न है

एकपञ्चाशः श्लोकः

इदं भागवतं नाम यन्मे भगवतोदितम् ।
संग्रहोऽयं विभूतीनां त्वमेतद् विपुलीकुरु ।। ५१ ।।

पदच्छेद —

इदम् भागवतम् नाम, यत् मे भगवता उदितम् ।
संग्रहः अयम् विभूतीनाम्, त्वम् एतद् विपुली कुरु ।।

शब्दार्थ—

इदम्	१.	यह	संग्रहः	१०.	संक्षेप से वर्णन है
भागवतम्	२.	भागवत	अयम्	८.	इसमें
नाम	३.	नाम का पुराण है	विभूतीनाम्	९.	(भगवान् के) अवतारों का
यत्	४.	जो	त्वम्	११.	तुम
मे	५.	मुझे	एतद्	१२.	इसका
भगवता	६.	भगवान् ने	विपुली	१३.	विस्तार
उदितम् ।	७.	कहा था	कुरु ।।	१४.	करो

श्लोकार्थ—यह भागवत नाम का पुराण है, जो मुझे भगवान् ने कहा था। इसमें भगवान् के अवतारों का संक्षेप से वर्णन है। तुम उसका विस्तार करो।

द्विपञ्चाशः श्लोकः

यथा हरौ भगवति नृणां भक्तिर्भविष्यति ।
सर्वात्मन्यखिलाधारे इति संकल्प्य वर्णय ।।५२।।

पदच्छेद—

यथा हरौ भगवति, नृणाम् भक्तिः भविष्यति ।
सर्व आत्मनि अखिल आधारे, इति संकल्प्य वर्णय ।।

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	सर्व, आत्मनि	४.	सर्व स्वरूप
हरौ	६.	श्री हरि में	अखिल	२.	सबके
भगवति	५.	भगवान्	आधारे	३.	आधार
नृणाम्	७.	मनुष्यों की	इति	१०.	ऐसा
भक्तिः	८.	प्रेमा भक्ति	संकल्प्य	११.	निश्चय करके
भविष्यति ।	९.	बढ़े	वर्णय ।।	१२.	(इसका) वर्णन करो

श्लोकार्थ—जिस प्रकार सबके आधार, सर्वस्वरूप भगवान् श्री हरि में मनुष्यों की प्रेमा भक्ति बढ़े, ऐसा निश्चय करके इसका वर्णन करो।

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

मायां वर्णयतोऽमुष्य ईश्वरस्यानुमोदतः ।
शृण्वतः श्रद्धया नित्यं माययाऽऽत्मा न मुह्यति ।।५३

मायाम् वर्णयतः अमुष्य, ईश्वरस्य अनुमोदतः ।
शृण्वतः श्रद्धया नित्यम्, मायया आत्मा न मुह्यति ।।

लीला का		श्रद्धया	७.	श्रद्धापू
वर्णन करने वाले		नित्यम्	६.	नित्य
उस		मायया	१०.	माया से
परमात्मा की		आत्मा	६.	आत्मा
समर्थन करने वाले (और)		न	११.	नहीं
सुनने वाले लोगों की		मुह्यति ।।	१२.	मोहित

रमात्मा की लीला का वर्णन करने वाले, समर्थन करने वाले औ
वाले लोगों की आत्मा माया से मोहित नहीं होती है ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
ब्रह्मनारदसंवादे सप्तमः अध्यायः ।। ७ ।।

सप्तदशः श्लोकः

युगानि युगमानं च धर्मो यश्च युगे युगे ।
अवतारानुचरितं यदाश्चर्यतमं हरेः ॥१७॥

पदच्छेद—

युगानि युगमानम् च, धर्मः यः च, युगे युगे ।
अवतार अनुचरितम्, यद् आश्चर्यतमम् हरेः ॥

शब्दार्थ—

युगानि	१. चारों युग	**युगे-युगे ।**	४. प्रत्येक युग में
युगमानम्	२. युगों का प्रमाण	**अवतार**	९. अवतारों की
च,	३. और	**अनुचरितम्,**	१२. कथायें हैं (उन्हें बतावें)
धर्मः	६. धर्म (है)	**यद्**	१०. जो
यः	५. जो	**आश्चर्यतमम्**	११. अत्यन्त अद्भुत
च	७. तथा	**हरेः ॥**	८. भगवान् श्री हरि के

श्लोकार्थ--चारों युग, युगों का प्रमाण और प्रत्येक युग में जो धर्म है तथा भगवान् श्री हरि के अवतारों की जो अत्यन्त अद्भुत कथाये हैं, उन्हें बतावें ।

अष्टादशः श्लोकः

नृणां साधारणो धर्मः सविशेषश्च यादृशः ।
श्रेणीनां राजर्षीणां च धर्मः कृच्छ्रेषु जीवताम् ॥१८॥

पदच्छेद—

नृणाम् साधारणः धर्मः, सविशेषः च यादृशः ।
श्रेणीनाम् राजर्षीणाम् च, धर्मः कृच्छ्रेषु जीवताम् ॥

शब्दार्थ—

नृणाम्	१. मनुष्यों के	**श्रेणीनाम्**	८. अनेक व्यवसाय वाले
साधारणः	२. सामान्य	**राजर्षीणाम्**	९. राजर्षि (तथा)
धर्मः	६. धर्म हैं (उन्हें)	**च**	७. और
सविशेषः	४. विशेष	**धर्मः**	१२. धर्म को (बतावें)
च	३. और	**कृच्छ्रेषु**	१०. कष्ट में
यादृशः ।	५. जिस प्रकार के	**जीवताम् ॥**	११. जीने वाले मनुष्यों के

श्लोकार्थ—मनुष्यों के सामान्य और विशेष जिस प्रकार के धर्म हैं, उन्हें और अनेक व्यवसाय वाले राजर्षि तथा कष्ट में जीने वाले मनुष्यों के धर्म को बतावें ।

एकोनविंश: श्लोक:

तत्त्वानां परिसंख्यानं लक्षणं हेतुलक्षणम् ।
पुरुषाराधनविधिर्योगस्याध्यात्मिकस्य च ॥१९॥

तत्त्वानाम् परिसंख्यानम्, लक्षणम् हेतु लक्षणम् ।
पुरुष आराधन विधिः, योगस्य आध्यात्मिकस्य च ॥

१	सृष्टि के तत्त्वों की	**पुरुष**	६.	परम पुरुष की
२.	संख्या (उनके)	**आराधन**	७.	पूजा का
५	लक्षण	**विधिः**	८.	विधान
३	कारण (और)	**योगस्य**	११.	विद्या का (उपदेश करे)
४	स्वरूप का	**आध्यात्मिकस्य**	१०.	उपनिषदों में वर्णित अध्य
		च ॥	९.	और

के तत्त्वों की संख्या, उनके कारण और स्वरूप का लक्षण, परम पुरुष की पूजा न और उपनिषदों में वर्णित अध्यात्म विद्या का उपदेश करें ।

विंश: श्लोक:

योगेश्वरैश्वर्यगतिर्लिङ्गभङ्गस्तु योगिनाम् ।
वेदोपवेदधर्माणामितिहासपुराणयोः ॥२०॥

योगेश्वर ऐश्वर्य गतिः, लिङ्ग भङ्गः तु योगिनाम् ।
वेद उपवेद धर्माणाम्, इतिहास पुराणयोः ॥

१	योगिराजों की	**योगिनाम् ।**	५.	योगियों के
२	सिद्धि का	**वेद**	८.	चारों वेद
३.	मार्ग	**उपवेद**	९.	(आयुर्वेद इत्यादि) उप
६	सूक्ष्म शरीर का	**धर्माणाम्**	१०.	धर्म शास्त्र
७	विनाश	**इतिहास**	११.	इतिहास (और)
४	तथा	**पुराणयोः ॥**	१२.	पुराण का (तात्पर्य बत

गेराजों की सिद्धि का मार्ग तथा योगियों के सूक्ष्म शरीर का विनाश, चारों वेद, ३ ग्रादि उपवेद, धर्मशास्त्र, इतिहास और पुराण का तात्पर्य बतावें ।

एकविंशः श्लोकः

सम्प्लवः सर्वभूतानां विक्रमः प्रतिसंक्रमः ।
इष्टापूर्तस्य काम्यानां त्रिवर्गस्य च यो विधिः ।।२१।।

संप्लवः सर्व भूतानाम् , विक्रमः प्रतिसंक्रमः ।
इष्टा पूर्तस्य काम्यानाम्, त्रिवर्गस्य च यः विधिः ।।

विनाश	**पूर्तस्य**	७.	कूप निर्माणादि स्मृति क
सभी	**काम्यानाम्**	८.	काम्य कर्म
प्राणियों का	**त्रिवर्गस्य**	१०.	धर्म, अर्थ काम तीनों पुरु
पालन	**च**	९.	और
जन्म	**यः**	११.	जो
यज्ञ आदि वैदिक कर्म	**विधिः ।।**	१२.	विधान हैं (उसे बतावें)

णियो का जन्म, पालन, विनाश, यज्ञ आदि वैदिक कर्म, कूप निर्माणादि स
म्यकर्म और धर्म, अर्थ, काम तीनों पुरुषार्थों के जो विधान हैं, उसे बतावें ।

द्वाविंशः श्लोकः

यश्चानुशायिनां सर्गः पाखण्डस्य च सम्भवः ।
आत्मनो बन्धमोक्षौ च व्यवस्थानं स्वरूपतः ।।२२।।

यः च अनुशायिनाम् सर्गः, पाखण्डस्य च सम्भवः ।
आत्मनः बन्ध मोक्षौ च, व्यवस्थानम् स्वरूपतः ।।

जो	**आत्मनः**	८.	जीवात्मा का
और	**बन्ध**	९.	जन्म-मरण
प्रकृति में लीन रहने वाले की	**मोक्षौ**	११.	मुक्ति (एवं)
सृष्टि है (उसे)	**च**	१०.	और
पाखण्ड की	**व्यवस्थानम्**	१४.	स्थिति को (बतावें)
तथा	**स्व**	१२.	अपने
उत्पत्ति	**रूपतः ।।**	१३.	रूप में आत्मा की

लीन रहने वाले जीवों की जो सृष्टि है, उसे और पाखण्ड की उत्पत्ति तथा ।
-मरण और मुक्ति एवम् अपने रूप में आत्मा की स्थति को बतावें ।

त्रयोविंशः श्लोकः

यथाऽऽत्मतन्त्रो भगवान् विक्रीडत्यात्ममायया ।
विसृज्य वा यथा मायामुदास्ते साक्षिवद् विभुः ॥२३॥

पदच्छेद—

यथा आत्म तन्त्रः भगवान्, विक्रीडति आत्म मायया ।
विसृज्य वा यथा मायाम्, उदास्ते साक्षिवत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

यथा	५.	जिस प्रकार	विसृज्य	९.	छोड़कर
आत्म तन्त्रः	१.	परम स्वतन्त्र	वा	७.	तथा
भगवान्	२.	परमात्मा	यथा	१२.	जिस प्रकार
विक्रीडति	६	खेल करते है	मायाम्	८.	अपनी माया को
आत्म	३.	अपनी	उदास्ते	१३.	उदासीन रहते हैं (उसे बतावें)
मायया ।	४.	माया से	साक्षिवत्	११.	साक्षी के समान
			विभुः ॥	१०.	वे भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—परम स्वतन्त्र परमात्मा अपनी माया से जिस प्रकार खेल करते हैं तथा अपनी माया को छोड़कर वे भगवान् श्री हरि साक्षी के समान जिस प्रकार उदासीन रहते हैं, उसे बतावें ।

चतुर्विंशः श्लोकः

सर्वमेतच्च भगवन् पृच्छते मेऽनुपूर्वशः ।
तत्त्वतोऽर्हस्युदाहर्तुं प्रपन्नाय महामुने ॥२४॥

पदच्छेद—

सर्वम् एतत् च भगवन्, पृच्छते मे अनुपूर्वशः ।
तत्त्वतः अर्हसि उदाहर्तुम्, प्रपन्नाय महामुने ॥

शब्दार्थ—

सर्वम्	७.	सब-कुछ	अनुपूर्वशः ।	८.	क्रम से
एतत्	६.	यह	तत्त्वतः	१०.	वास्तविक रूप से
च	९.	और	अर्हसि	१२.	समर्थ हैं
भगवन्	२.	हे भगवन् शुकदेव जी ! आप	उदाहर्तुम्	११.	बताने में
पृच्छते	३	प्रश्न करते हुये	प्रपन्नाय	५.	शरणागत को
मे	४.	मुझ	महामुने ॥	१.	महामुनि

श्लोकार्थ—महामुनि हे भगवन् शुकदेव जी ! आप प्रश्न करते हुये मुझ शरणागत को यह सब कुछ क्रम से और वास्तविक रूप से बताने में समर्थ हैं ।

पञ्चविंश: श्लोक:

अत्र प्रमाणं हि भवान् परमेष्ठी यथाऽऽत्मभूः ।
परं चेहानुतिष्ठन्ति पूर्वेषां पूर्वजैः कृतम् ॥ २५ ॥

अत्र प्रमाणम् हि भवान्, परमेष्ठी यथा आत्म भूः ।
परे च इह अनुतिष्ठन्ति, पूर्वेषाम् पूर्वजैः कृतम् ॥

इस विषय में	परे	१०.	दूसरे लोग
प्रमाण (हैं)	च	८.	तथा
ही	इह	६.	संसार में
आप	अनुतिष्ठन्ति	१४.	अनुसरण करते है
ब्रह्मा के	पूर्वेषाम्	११.	पूर्वजों के भी
समान	पूर्वजैः	१२.	पूर्वजों की परंपरा से
स्वयंभू	कृतम् ॥	१३.	किये हुए कार्य का

य में आप ही स्वयंभू ब्रह्मा के समान प्रमाण हैं तथा संसार में दूसरे लोग
जों की परम्परा से किये हुये कार्य का अनुसरण करते हैं ।

षड्विंश: श्लोक:

न मेऽसवः परायन्ति ब्रह्मन्ननशनादमी ।
पिबतोऽच्युतपीयूषमन्यत्र कुपिताद् द्विजात् ॥ २६ ॥

न मे असवः परायन्ति, ब्रह्मन् अनशनात् अमी ।
पिबतः अच्युत पीयूषम्, अन्यत्र कुपितात् द्विजात् ॥

नहीं	पिबतः	४.	पान करने वाले
मेरे	अच्युत	२.	श्रीकृष्ण लीला रूप
प्राण	पीयूषम्	३.	अमृत का
चले जायेंगे	अन्यत्र	१०.	सिवाय
ब्रह्मज्ञानी हे शुकदेव जी !	कुपितात्	८.	क्रुद्ध
न खाने से	द्विजात् ॥	६.	ब्राह्मण के (शाप के)
ये			

। हे शुकदेव जी ! श्री कृष्ण लीलारूप अमृत का पान करने वाले मेरे ये प्र
शाप के सिवाय न खाने से नहीं चले जायेंगे ।

सप्तविंश: श्लोकः

स उपामन्त्रितो राज्ञा कथायामिति सत्पतेः ।
ब्रह्मरातो भृशं प्रीतो विष्णुरातेन संसदि ।।२७।।

सः उपामन्त्रितः राज्ञा, कथायाम् इति सत्पतेः ।
ब्रह्मरातः भृशम् प्रीतः, विष्णुरातेन संसदि ।।

८	वे	ब्रह्मरातः	६.	शुकदेव जी
७	प्रार्थना किये जाने पर	भृशम्	१०.	परम
१.	राजा	प्रीतः	११.	प्रसन्न हुये
५	कथा सुनाने के लिये	विष्णुरातेन	२.	परीक्षित् के
६.	इस प्रकार	संसदि ।।	३.	सभा में
४	भगवान् श्रीकृष्ण की			

परीक्षित् के द्वारा सभा में भगवान् श्रीकृष्ण की कथा सुनाने के लिये इस जाने पर वे शुकदेव जी परम प्रसन्न हुये ।

अष्टाविंश: श्लोकः

प्राह भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
ब्रह्मणे भगवत्प्रोक्तं ब्रह्मकल्प उपागते ।।२८।।

प्राह भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
ब्रह्मणे भगवत् प्रोक्तम्, ब्रह्म कल्पे उपागते ।।

१२.	(श्री शुकदेव जी ने) कहा था	ब्रह्मणे	५.	ब्रह्मा जी से
६.	श्री मद्भागवत	भगवत्	४.	भगवान् के
०.	नाम के	प्रोक्तम्	६.	कहे गये
११.	पुराण को	ब्रह्म	१.	ब्रह्म
७.	वेद	कल्पे	२.	कल्प के
८.	तुल्य	उपागते ।।	३.	प्रारम्भ मे

तर हे महर्षियों ! ब्रह्मकल्प के प्रारम्भ में भगवान् के द्वारा ब्रह्माजी से क द्भागवत नाम के पुराण को श्री शुकदेव जी ने कहा था ।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

यद् यत् परीक्षिदृषभः पाण्डूनामनुपृच्छति ।
आनुपूर्व्येण तत्सर्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥२९॥

पदच्छेद—

यत् यत् परीक्षित् ऋषभः, पाण्डूनाम् अनुपृच्छति ।
आनुपूर्व्येण तत् सर्वम्, आख्यातुम् उपचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

यद्	४.	जो	**आनुपूर्व्येण**	७.	(शुकदेव मुनि ने) क्रम से
यत्	५.	जो प्रश्न	**तत्**	८.	उन
परीक्षित्	३.	राजा परीक्षित् ने	**सर्वम्**	९.	सबका
ऋषभः	२.	श्रेष्ठ	**आख्यातुम्**	१०.	उत्तर देना
पाण्डूनाम्	१.	पाण्डुवंशियों में	**उपचक्रमे ॥**	११.	प्रारम्भ किया
अनुपृच्छति ।	६.	पूछे थे			

श्लोकार्थ—पाण्डुवंशियो में श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ने जो जो प्रश्न पूछे थे, शुकदेव मुनि ने क्रम से उन सबका उत्तर देना प्रारम्भ किया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वितीयस्कन्धेप्रश्न विधिर्नाम आष्टमः अध्याय: ॥८॥

द्वितीयः स्कन्धः

अथ नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

आत्ममायामृते राजन् परस्यानुभवात्मनः ।
न घटेतार्थसम्बन्धः स्वप्नद्रष्टुरिवाञ्जसा ।।१।।

आत्म मायाम् ऋते राजन्, परस्य अनुभव आत्मनः ।
न घटेत अर्थ सम्बन्धः, स्वप्न द्रष्टुः इव अञ्जसा ।।

०	अपनी	न, घटेत	१४.	नहीं, हो सकना
१	माया के	अर्थ	८.	विषयों के साथ
२	सिवाय (किसी दूसरे)	सम्बन्धः	९.	सम्बन्ध
१.	हे परीक्षित् !	स्वप्न	५.	स्वप्न
४	आत्मा का	द्रष्टुः	६.	देखने वाले के
२	अनुभव में	इव	७.	समान
३.	आने वाली	अञ्जसा ।।	१३.	सरल उपाय से

ाक्षित् ! अनुभव में आने वाली आत्मा का स्वप्न देखने वाले के समान विष
न्ध अपनी माया के सिवाय किसी दूसरे सरल उपाय से नहीं हो सकता है ।

द्वितीयः श्लोकः

बहुरूप इवाभाति मायया बहुरूपया ।
रममाणो गुणेष्वस्या ममाहमिति मन्यते ।।२।।

बहुरूपः इव आभाति, मायया बहु रूपया ।
रममाणः गुणेषु अस्याः, मम अहम् इति मन्यते ।।

४.	(यह आत्मा) बहुरूपिये के	रममाणः	९.	विहार करता हु
५.	समान	गुणेषु	८.	गुणों में
६	मालूम पड़ता है	अस्याः	७.	माया के
३	माया के कारण	मम	१०.	मेरी (और)
१.	बहुत	अहम् , इति	११.	मैं, इस भाव को
२.	रूपों वाली	मन्यते ।।	१२.	मानने लगता है

रूपों वाली माया के कारण यह आत्मा बहुरूपिये के समान मालूम पड़ता है
में विहार करता हुआ यह 'मेरी और मैं' इस भाव को मानने लगता है ।

तृतीयः श्लोकः

यर्हि वाव महिम्नि स्वे परस्मिन् कालमाययोः ।
रमेत गतसम्मोहस्त्यक्त्वोदास्ते तदोभयम् ॥३॥

पदच्छेद—

यर्हि वाव महिम्नि स्वे, परस्मिन् काल माययोः ।
रमेत गत सम्मोहः, त्यक्त्वा उदास्ते तदा उभयम् ॥

शब्दार्थ—

यर्हि	२.	जब	**रमेत**	१०.	स्थित हो जाता है
वाव	१.	किन्तु	**गत**	४.	रहित हुआ (आत्मा)
महिम्नि	९.	स्वरूप में	**सम्मोहः**	३.	अज्ञान से
स्वे	८.	अपने	**त्यक्त्वा**	१३.	छोड़कर
परस्मिन्	७.	परे	**उदास्ते**	१४.	उदासीन (गुणातीत हो जाता है)
काल	५.	काल (और)	**तदा**	११.	तब
माययोः ।	६.	माया से	**उभयम् ॥**	१२.	मैं और मेरेपन को

श्लोकार्थ—किन्तु जब अज्ञान से रहित हुआ आत्मा काल और माया से परे अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है, तब मैं और मेरेपन को छोड़कर उदासीन गुणातीत हो जाता है।

चतुर्थः श्लोकः

आत्मतत्त्वविशुद्ध्यर्थं यदाह भगवानृतम् ।
ब्रह्मणे दर्शयन् रूपमव्यलीकव्रतादृतः ॥४॥

पदच्छेद—

आत्म तत्त्व विशुद्ध्यर्थम्, यद् आह भगवान् ऋतम् ।
ब्रह्मणे दर्शयन् रूपम्, अव्यलीक व्रतात् ऋतः ॥

शब्दार्थ—

आत्म तत्त्व	८.	आत्म स्वरूप के	**ब्रह्मणे**	३.	ब्रह्मा जी को
विशुद्ध्यर्थम्	९.	शोधन के लिये	**दर्शयन्**	६.	दर्शन कराते हुये
यद्	१०.	जिस	**रूपम्**	५.	स्वरूप का
आह	१२.	कहा था (उसे कहूँगा)	**अव्यलीक**	१.	निष्कपट
भगवान्	७.	भगवान् ने	**व्रतात्**	२.	तपस्या के कारण
ऋतम् ।	११.	परम सत्य को	**ऋतः ॥**	४.	आत्मा के

श्लोकार्थ—निष्कपट तपस्या के कारण ब्रह्मा जी को आत्मा के स्वरूप का दर्शन कराते हुये भगवान् ने आत्म स्वरूप के शोधन के लिये जिस परम सत्य को कहा था, उसे कहूँगा।

पञ्चमः श्लोकः

स आदिदेवो जगतां परो गुरुः, स्वधिष्ण्यमास्थाय सिसृक्षयैक्षत ।
तां नाध्यगच्छद् दृशमत्र सम्मतां, प्रपञ्चनिर्माणविधिर्यया भवेत् ॥ ५॥

पदच्छेद---

सः आदिदेवः जगताम् परः गुरुः, स्व धिष्ण्यम् आस्थाय सिसृक्षया ऐक्षत ।
ताम् न अध्यगच्छद् दृशम् अत्र सम्मताम्, प्रपञ्च निर्माण विधिः यया भवेत् ॥

शब्दार्थ—

सः, आदिदेवः	३.	उन, ब्रह्मा जी ने	न, अध्यगच्छत्	१२.	नहीं, मिल पायी
जगताम्	१.	तीनों लोकों के	दृशम्	११.	ज्ञान दृष्टि
परः, गुरुः	२.	परम, गुरु	अत्र	८.	इस विषय में
स्व, धिष्ण्यम्	४.	अपनी, जन्मभूमि कमल पर	सम्मताम्	१०.	उचित
आस्थाय	५.	बैठकर	प्रपञ्च	१४.	संसार की
सिसृक्षया	६.	सृष्टि करने की इच्छा से	निर्माण, विधिः	१५.	रचना का, विधान
ऐक्षत ।	७	विचार किया (किन्तु)	यया	१३.	जिससे
ताम्	९.	(उनको) वह	भवेत् ॥	१६.	संभव हो

श्लोकार्थ - तीनों लोकों के परम गुरु उन ब्रह्मा जी ने अपनी जन्मभूमि कमल पर बैठकर सृष्टि कर इच्छा से विचार किया, किन्तु इस विषय में उनको वह उचित ज्ञान दृष्टि नही पायी, जिससे संसार की रचना का विधान संभव हो ।

षष्ठः श्लोकः

स चिन्तयन् द्व्यक्षरमेकदाम्भ--स्युपाशृणोद् द्विर्गदितं वचो विभुः ।
स्पर्शेषु यत्षोडशमेकविंशं, निष्किञ्चनानां नृप यद् धनं विदुः ॥६॥

पदच्छेद –

सः चिन्तयन् द्वि अक्षरम् एकदा अम्भसि, उपाशृणोत् द्विः गदितम् वचः विभुः ।
स्पर्शेषु यत् षोडशम् एकविंशम्, निष्किञ्चनानाम् नृप यद् धनम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	उन	स्पर्शेषु	६.	व्यञ्जनों में
चिन्तयन्	२.	चिन्तन करते हुये	यत्	७.	जो
द्वि, अक्षरम्	१०.	दो अक्षरों वाली (तथा)	षोडशम्	८	सोलहवां 'त' (और)
एकदा	५.	एक दिन	एकविंशम्	९.	इक्कीसवां अक्षर 'प' (
अम्भसि	१.	प्रलय के जल में	निष्किञ्चनानाम्	१६.	निर्धन तपस्वियों की
उपाशृणोत्	१३.	सुनी	नृप	१४.	हे परीक्षित् !
द्विः, गदितम्	११.	दो बार, कही जाती हुई	यद्	१५.	जो (तप)
वचः	१२.	वाणी	धनम्	१७	सम्पति
विभुः ।	४.	ब्रह्मा जी ने	विदुः ॥	१८.	बताया गया है

श्लोकार्थ —प्रलय के जल में चिन्तन करते हुये उन ब्रह्माजी ने एक दिन व्यञ्जनों में जो सोलहवाँ 'त' इक्कीसवाँ अक्षर 'प' है, इन दो अक्षरों वाली तथा दो बार कही जाती हुई तप-तप इस प्र की वाणी सुनी । हे परीक्षित ! जो तप निर्धन तपस्वियों की सम्पत्ति बताया गया है ।

स्वधिष्ण्यमास्थाय विमृश्य तद्धितं, तपस्युपादिष्ट इवादधे मनः ॥ ७ ॥

पदच्छेद — निशम्य तद् वक्तृ दिदृक्षया दिशः, विलोक्य तत्र अन्यत् अपश्यमानः ।
स्व धिष्ण्यम् आस्थाय विमृश्य तद् हितम्, तपसि उपादिष्टः इव आदधे मनः ।

शब्दार्थ—

निशम्य	२.	सुनकर (उसके)	स्व, धिष्ण्यम्	१०.	अपनी, जन्म भूमि कमल
तद्	१.	(ब्रह्मा जी ने) उस वाणी को	आस्थाय	११	बैठकर
वक्तृ	३.	वक्ता को	विमृश्य	१३.	विचार किया (तथा)
दिदृक्षया	४.	देखने की इच्छा से	तद्, हितम्	१२.	उसमें, हित का
दिशः	५.	चारों दिशाओं में	तपसि	१७.	तपस्या में
विलोक्य	६.	देखा (किन्तु)	उपादिष्टः	१४.	आदेश पाये हुये की
तत्र	७.	वहाँ	इव	१५.	भाँति (अपने)
अन्यत्	८.	दूसरे को	आदधे	१८.	लगा दिया
अपश्यमानः ।	९.	न देखते हुये (उन्होंने)	मनः ॥	१६.	मन को

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उस वाणी को सुनकर उसके वक्ता को देखने की इच्छा से चारों दिशा देखा। किन्तु वहाँ दूसरे को न देखते हुए उन्होंने अपनी जन्मभूमि कमल पर बैठकर उसमे का विचार किया तथा आदेश पाये हुये की भाँति अपने मन को तपस्या में लगा दिया।

अष्टमः श्लोकः

दिव्यं सहस्राब्दममोघदर्शनो, जितानिलात्मा विजितोभयेन्द्रियः ।
अतप्यत स्माखिललोकतापनं, तपस्तपीयांस्तपतां समाहितः ॥ ८ ॥

पदच्छेद— दिव्यम् सहस्र अब्दम् अमोघ दर्शनः, जित अनिल आत्मा विजित उभय इन्द्रियः ।
अतप्यत स्म अखिल लोक तापनम्, तपः तपीयान् तपताम् समाहितः ।

शब्दार्थ—

दिव्यम्	१०.	देवताओं के	अतप्यत स्म	१७.	अनुष्ठान किया
सहस्र	११.	एक हजार	अखिल	१३	सम्पूर्ण
अब्दम्	१२.	वर्ष तक	लोक	१४.	संसार को
अमोघ, दर्शनः	१	सफल, ज्ञान वाले	तापनम्	१५	प्रकाशित करने वाली
जित	३.	जीते हुये	तपः	१६.	तपस्या का
अनिल, आत्मा	२.	प्राण और, मन को	तपीयान्	८	परम तपस्वी ब्रह्मा जी
विजितः	६.	वश में किये हुये (तथा)	तपताम्	७.	तप करने वालों में
उभय	५	इन दोनों को	समाहितः ॥	९	सावधान मन से
इन्द्रियः ।	४.	ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय			

श्लोकार्थ—सफल ज्ञान वाले, प्राण और मन को जीते हुये, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय इन दोनों को व किये हुये तथा तप करने वालों में परम तपस्वी ब्रह्मा जी ने सावधान मन से देवताओं एक हजार वर्ष तक सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करने वाली तपस्या का अनुष्ठान किया।

नवम: श्लोक:

तस्मै स्वलोकं भगवान् सभाजितः, सन्दर्शयामास परं न यत्परम् ।
व्यपेतसंक्लेशविमोहसाध्वसं, स्वदृष्टवद्भिर्विबुधैरभिष्टुतम् ।। ९

तस्मै स्व लोकम् भगवान् सभाजितः, सन्दर्शयामास परम् न यत् परम् ।
व्यपेत संक्लेश विमोह साध्वसम्, स्व दृष्टवद्भिः विबुधैः अभिष्टुतम् ।।

३.	उन्हें	व्यपेत	१२.	रहित (है तथा)
५	अपना वैकुण्ठ धाम	संक्लेश	९.	दुःख
२.	भगवान् ने	विमोह	१०	अज्ञान (और)
१.	(तप से) प्रसन्न हुये	साध्वसम्	११.	भय से
६.	दिखलाया	स्व	१३.	स्वयम्
४.	सबसे श्रेष्ठ	दृष्टवद्भिः	१४.	दर्शन करने वाले
८.	नहीं है (जो)	विबुधैः	१५.	देवताओं से
७	जिससे,परे कोई दूसरा लोक	अभिष्टुतम् ।।	१६.	प्रशंसित है

ा से प्रसन्न हुये भगवान ने उन्हें सबसे श्रेष्ठ अपना वैकुण्ठ धाम दिखलाया, जिससे सरा लोक नहीं है, जो दुःख, अज्ञान और भय से रहित है तथा स्वयम् दर्शन क वताओं से प्रशंसित है ।

दशम: श्लोक:

प्रवर्तते यत्र रजस्तमस्तयोः, सत्त्वं च मिश्रं न च कालविक्रमः ।
न यत्र माया किमुतापरे हरे—रनुव्रता यत्र सुरासुरार्चिताः ।। १०

प्रवर्तते यत्र रजः तमः तयोः, सत्त्वम् च मिश्रम् न च काल विक्रमः ।
न यत्र माया किमुत अपरे हरेः, अनुव्रताः यत्र सुर असुर अर्चिताः ।।

९.	व्याप्त है	न	११.	नहीं (है तो फिर)
१.	जिस (वैकुण्ठलोक) में	यत्र, माया	१०.	जहाँ, माया भी
२.	रजोगुण, तमोगुण	किमुत	१३.	बात ही क्या है
४.	उन दोनों से	अपरे	१२.	दूसरे की
६	सत्त्वगुण	हरेः, अनुव्रताः	१८.	भगवान् के, पार्षद
३.	और	यत्र	१४.	वहाँ (केवल)
५.	मिश्रित	सुर	१५.	देव (और)
८.	नहीं	असुर	१६.	दानवों से
मः । ७.	तथा, काल की, गति	अर्चिताः ।।	१७	पूजित

तस वैकुण्ठ लोक में रजोगुण, तमोगुण और उन दोनों से मिश्रित सत्त्वगुण तथा ति नहीं व्याप्त है । जहाँ माया भी नही है तो फिर दूसरे की बात ही क्या है ? व व और दानवों से पूजित भगवान् के पार्षद रहते हैं ।

एकादशः श्लोकः

श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाः, पिशङ्गवस्त्राः सुरुचः सुपेशसः ।
सर्वे चतुर्बाहव उन्मिषन्मणि—प्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः ।
प्रवालवैदूर्यमृणालवर्चसः, परिस्फुरत्कुण्डलमौलिमालिनः ॥११॥

पदच्छेद— श्याम अवदाताः शतपत्र लोचनाः, पिशङ्ग वस्त्राः सुरुचः सुपेशसः ।
सर्वे चतुर्बाहवः उन्मिषत् मणि, प्रवेक निष्क आभरणाः सुवर्चसः ।
प्रवाल वैदूर्य मृणाल वर्चसः, परिस्फुरत् कुण्डल मौलि मालिनः ॥

शब्दार्थ—

श्याम, अवदाताः	२	साँवली, आभा	निष्क	१४.	सोने के
शतपत्र, लोचनाः	३	कमल के समान, नयन	आभरणाः	१५.	गहने पहने हुये (एवं)
पिशङ्ग, वस्त्राः	४	पीले, कपड़े	सुवर्चसः ।	१६.	अत्यन्त तेजस्वी हैं
सुरुचः, सुपेशसः ।	५.	सुंदर छवि, मनोहर कोमलता	प्रवाल, वैदूर्य	६.	मूँगा, बिल्लौरी पत्थर(और)
सर्वे	१.	(भगवान् के वे) सभी पार्षद	मृणाल, वर्चसः	७.	कमलनाल की, कांति (तथा)
चतुर्, बाहवः	११.	चार, भुजाओं वाले	परिस्फुरत्	८.	दमकते
उन्मिषत्	१२.	चमकील	कुण्डल, मौलि	९.	कुण्डल, मुकुट (और)
मणि, प्रवेक	१३.	रत्नों से, जड़े	मालिनः ॥	१०.	मालाओं से युक्त

श्लोकार्थ—भगवान् के वे सभी पार्षद साँवली आभा, कमल के समान नयन, पीले कपड़े, सुन्दर छवि मनोहर कोमलता, मूँगा, बिल्लौरी पत्थर और कमल नाल की कांति तथा दमकते कुण्डल, मुकुट और मालाओ से युक्त, चार भुजाओं वाले: चमकीले रत्नों से जड़े सोने के गहने पहने हुये एवं अत्यन्त तेजस्वी हैं ।

द्वादशः श्लोकः

भ्राजिष्णुभिर्यः परितो विराजते, लसद्विमानावलिभिर्महात्मनाम् ।
विद्योतमानः प्रमदोत्तमाद्युभिः, सविद्युदभ्रावलिभिर्यथा नभः ॥१२॥

पदच्छेद— भ्राजिष्णुभिः यः परितः विराजते, लसद् विमान आवलिभिः महात्मनाम् ।
विद्योतमानः प्रमदा उत्तमा द्युभिः, सविद्युत् अभ्र आवलिभिः यथा नभः ॥

शब्दार्थ—

भ्राजिष्णुभिः	१०.	प्रकाशमान	विद्योतमानः	१५.	चमकता हुआ
यः	५.	जो (वैकुण्ठ लोक)	प्रमदा	८.	अप्सराओं से (और)
परितः	१४.	चारों ओर	उत्तमा	७.	श्रेष्ठ
विराजते,	१६.	शोभायमान है	द्युभिः,	६.	स्वर्ग की
लसत्	११.	सुन्दर	सविद्युत्	१	बिजली से युक्त
विमान	१२	विमानों की	अभ्र, आवलिभिः	२.	बादलों के, झुंड से
आवलिभिः	१३.	कतारों से	यथा	४	समान
महात्मनाम् ।	९.	पार्षदों के	नभः ॥	३.	(सुशोभित) आकाश के

श्लोकार्थ—बिजली से युक्त बादलों के झुण्ड से सुशोभित आकाश के समान जो वैकुण्ठ लोक स्वर्ग की श्रेष्ठ अप्सराओं से और पार्षदों के प्रकाशमान सुन्दर विमानों की कतारों से चारों ओर चमकता हुआ शोभायमान है ।

त्रयोदश: श्लोक:

श्रीर्यत्र रूपिण्युरुगायपादयोः, करोति मानं बहुधा विभूतिभिः ।
प्रेङ्खं श्रिता या कुसुमाकरानुगै—र्विगीयमाना प्रियकर्म गायती ।।१३।।

श्रीः यत्र रूपिणी उरुगाय पादयोः, करोति मानम् बहुधा विभूतिभिः ।
प्रेङ्खम् श्रिता या कुसुमाकर अनुगैः, विगीयमाना प्रिय कर्म गायती ।।

	३.	लक्ष्मी जी (अपनी)	**प्रेङ्खम्**	१३	झूले पर
	१.	जिस वैकुण्ठ में	**श्रिता**	१४.	झूलती हुई
	२.	रूपवती	**या**	१२.	जो (लक्ष्मी जी)
ो.,	५.	भगवान के, चरणों में	**कुसुमाकर**	६	वसन्त के
	८.	करती हैं (तथा)	**अनुगैः,**	१०.	साथी भौरों से
	७.	सेवा	**विगीयमाना**	११	गायी जाती हुई
	६	अनेकों प्रकार से	**प्रिय कर्म**	१५.	भगवान् की मधुर लील
	४.	सम्पदा के साथ	**गायती ।।**	१६.	गान करती रहती है

जिस वैकुण्ठ में रूपवती लक्ष्मी जी अपनी सम्पदा के साथ भगवान् के चरणों में अनेको सेवा करती हैं तथा वसन्त के साथी भौरों से गायी जाती हुई जो लक्ष्मी जी झ लती हुई भगवान् की मधुर लीलाओं का गान करती रहती है ।

चतुर्दश: श्लोक:

ददर्श तत्राखिलसात्वतां पतिं, श्रियः पतिं यज्ञपतिं जगत्पतिम् ।
सुनन्दनन्दप्रबलार्हणादिभिः, स्वपार्षदमुख्यैः परिसेवितं विभुम् ।। १४ ।।

ददर्श तत्र अखिल सात्वताम् पतिम्, श्रियः पतिम् यज्ञ पतिम् जगत् पतिम् ।
सुनन्द नन्द प्रबल अर्हण आदिभिः, स्व पार्षद मुख्यैः परिसेवितम् विभुम् ।।

१६.	देखा	**सुनन्द, नन्द**	९.	सुनन्द, नन्द
१.	वहाँ पर (ब्रह्मा जी ने)	**प्रबल, अर्हण**	१०.	प्रबल, अर्हण
२.	सम्पूर्ण	**आदिभिः,**	११.	इत्यादि
३.	भक्तों के	**स्व**	१२.	अपने
४.	परिपालक	**पार्षद**	१४.	पार्षदों से
७.	लक्ष्मीनाथ	**मुख्यैः**	१३.	प्रधान
६	यज्ञों के स्वामी	**परिसेवितम्**	१५.	सेवा किये जाने हुये
५.	संसार के रक्षक (और)	**विभुम् ।।**	८.	भगवान् को

हाँ पर ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण भक्तों के परिपालक, संसार के रक्षक और यज्ञों के स्वामी ाथ भगवान् को सुनन्द, नन्द, प्रबल, अर्हण इत्यादि अपने प्रधान पार्षदों से सेव ाते हुये देखा ।

किरीटिन कुण्डलिन चतुर्भुज, पीताम्बर वक्षसि लक्षित श्रिया १५

पदच्छेद— भृत्य प्रसाद अभिमुखम दृग आसवम प्रसन्न हास अरुण लोचन आननम ।
किरीटिनम कुण्डलिनम चतुर्भुजम, पीताम्बरम वक्षसि लक्षिनम श्रिया ।

शब्दार्थ—

भृत्य	१.	भक्तों पर	किरीटिनम्	९.	मुकुट
प्रसाद	२.	कृपा करने मे	कुण्डलिनम्,	१०.	कुण्डल
अभिमुखम्	३.	तत्पर (वे भगवान्)	चतुर्भुजम्	११.	चार हाथ
दृग्	५.	दृष्टि	पीताम्बरम्	१२.	पीले वस्त्र (और)
आसवम्,	४	मादक	वक्षसि	१३.	छाती पर
प्रसन्न, हास	६	खुली, हंसी	लक्षितम्	१५.	शोभा पा रहे थे
अरुण, लोचन	७	लाल आँखें (और)	श्रिया ।।	१४.	लक्ष्मी जी से
आननम् ।	८.	मुख से युक्त (थे तथा)			

श्लोकार्थ— भक्तों पर कृपा करने में तत्पर वे भगवान् मादक दृष्टि, खुली हँसी, लाल आँखें औ मुख से युक्त थे तथा मुकुट, कुण्डल, चार हाथ, पीले वस्त्र और छाती पर लक्ष्मी जी से पा रहे थे ।

षोडशः श्लोकः

अध्यर्हणीयासनमास्थितं परं, वृतं चतुःषोडशपञ्चशक्तिभिः ।
युक्तं भगैः स्वैरितरत्र चाध्रुवैः, स्व एव धामन् रममाणमीश्वरम् ॥१६

पदच्छेद— अध्यर्हणीय आसनम् आस्थितम् परम्, वृतम् चतुः षोडश पञ्च शक्तिभिः ।
युक्तम् भगैः स्वः इतरत्र च अध्रुवैः, स्वे एव धामन् रममाणम् ईश्वरम् ।।

शब्दार्थ—

अध्यर्हणीय	२.	बहुमूल्य	भगैः	१२.	छओं प्रकार के ऐश्व
आसनम्	३.	आसन पर	स्वैः	११	अपने
आस्थितम्	४.	बैठे हुये	इतरत्र	९.	दूसरों में
परम्,	१.	सर्वोत्तम (और)	च	८.	तथा
वृतम्	७.	घिरे हुये	अध्रुवः,	१०.	अनित्य रूप से रहने
चतुः षोडश पञ्च	५.	पच्चीस	स्वे, एव, धामन्	१५.	अपने, ही, लोक मे
शक्तिभिः ।	६	तत्त्वों से	रममाणम्	१६.	विहार करते हुये (दे
युक्तम्	१३.	सहित	ईश्वरम् ।।	१४	भगवान् को

श्लोकार्थ – सर्वोत्तम और बहुमूल्य आसन पर बैठे हुये, पच्चीस तत्त्वों से घिरे हुये तथा दूसरो मे रूप से रहने वाले, अपने छओं प्रकार के ऐश्वर्यो के सहित भगवान् को अपने ही लोक मे करते हुये ब्रह्माजी ने देखा ।

सप्तदश: श्लोक:

तद्दर्शनाह्लादपरिप्लुतान्तरो, हृष्यत्तनुः प्रेमभराश्रुलोचनः ।
ननाम पादाम्बुजमस्य विश्वसृग्, यत् पारमहंस्येन पथाधिगम्यते ॥१७॥

तद् दर्शन आह्लाद परिप्लुत अन्तरः, हृष्यत तनुः प्रेम भर अश्रु लोचनः ।
ननाम पाद अम्बुजम् अस्य विश्वसृग्, यत् पारमहंस्येन पथा अधिगम्यते ॥

१.	उनके, दर्शन के कारण	**ननाम**	१२.	प्रणाम किया
२.	आनन्द से	**पाद, अम्बुजम्**	११.	चरण, कमलों में
३.	परिपूर्ण	**अस्य**	१०.	उन (भगवान्) के
४.	हृदय वाले	**विश्वसृग्,**	९.	ब्रह्मा जी ने
५.	पुलकित	**यत्**	१३.	जिसे
६.	शरीर से युक्त (एवम्)	**पारमहंस्येन**	१४.	योगियों के
७.	प्रेम के, उमड़ आने से	**पथा**	१५.	निवृत्ति मार्ग से
८.	आँसु भरे, नेत्रों वाले	**अधिगम्यते ॥**	१६.	प्राप्त किया जाता है

उनके दर्शन के कारण आनन्द से परिपूर्ण हृदयवाले, पुलकित शरीर से युक्त एवम् प्रेम के उमड आने से आँसु भरे नेत्रों वाले ब्रह्माजी ने उन भगवान् के चरण-कमलों में प्रणाम किया, जिसे योगियों के निवृत्ति मार्ग से प्राप्त किया जाता है ।

अष्टादश: श्लोक:

तं प्रीयमाणं समुपस्थितं तदा, प्रजाविसर्गे निजशासनार्हणम् ।
बभाष ईषत्स्मितशोचिषा गिरा, प्रियः प्रियं प्रीतमनाः करे स्पृशन् ॥१८॥

तम् प्रीयमाणम् समुपस्थितम् तदा, प्रजा विसर्गे निज शासन अर्हणम् ।
बभाषे ईषत् स्मित शोचिषा गिरा, प्रियः प्रियम् प्रीत मनाः करे स्पृशन् ॥

११.	उन ब्रह्मा जी से	**बभाषे**	१६.	कहा
५.	परम प्रिय	**ईषत्**	१२.	मन्द
६.	सामने खड़े हुये (और)	**स्मित**	१३.	मुसकान भरी
१.	उस समय	**शोचिषा**	१४	सुन्दर
७.	प्रजा की, सृष्टि करने के लिये	**गिरा,**	१५.	वाणी में
८.	अपने	**प्रियः, प्रियम्**	४.	भगवान् ने, प्यारे
९.	आदेश देने के	**प्रीत, मनाः**	२	प्रसन्न, मन से
१०.	योग्य	**करे, स्पृशन् ॥**	३.	हाथ, से सहलाते हुये

उस समय प्रसन्न मन से हाथ से सहलाते हुये भगवान् ने प्यारे, परम प्रिय, सामने खडे हुये और प्रजा की सृष्टि करने के लिये अपने आदेश देने के योग्य उन ब्रह्मा जी से मन्द-मुसकान भरी सुन्दर वाणी में कहा ।

एकोनविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच–

त्वयाहं तोषितः सम्यग् वेदगर्भ सिसृक्षया ।
चिरं भृतेन तपसा दुस्तोषः कूटयोगिनाम् ।। १९ ।।

पदच्छेद—

त्वया अहम् तोषितः सम्यग्, वेद गर्भ सिसृक्षया ।
चिरम् भृतेन तपसा, दुस्तोषः कूट योगिनाम् ।।

शब्दार्थ—

त्वया	७.	आपसे	**चिरम्**	४.	बहुत काल तक
अहम्	८.	मैं	**भृतेन**	५.	की गई
तोषितः	१०.	प्रसन्न किया गया हूँ (जबकि)	**तपसा**	६	तपस्या के द्वारा
सम्यग्	९.	अच्छी प्रकार	**दुः**	१३.	प्रसन्न नही
वेद	१.	वेद ज्ञान से	**तोषः**	१४.	किया जा सकता हूँ
गर्भ	२.	परिपूर्ण हे ब्रह्मा जी !	**कूट**	११.	(मैं) कपटी
सिसृक्षया ।	३.	सृष्टि करने की इच्छा से	**योगिनाम् ।।**	१२.	योगियों के द्वारा

श्लोकार्थ—वेद ज्ञान से परिपूर्ण हे ब्रह्मा जी ! सृष्टि करने की इच्छा से बहुत काल तक की गई तपस्या के द्वारा आपसे मैं अच्छी प्रकार प्रसन्न किया गया हूँ, जबकि मैं कपटी योगियों के द्वारा प्रसन्न नहीं किया जा सकता हूँ ।

विंशः श्लोकः

वरं वरय भद्रं ते वरेशं माभिवाञ्छितम् ।
ब्रह्मञ्छ्रेयः परिश्रामः पुंसो मद्दर्शनावधिः ।। २० ।।

पदच्छेद—

वरम् वरय भद्रम् ते, वरेशम् मा अभिवाञ्छितम् ।
ब्रह्मन् श्रेयः परिश्रामः, पुंसः मत् दर्शन अवधिः ।।

शब्दार्थ—

वरम्	७.	वरदान को	**ब्रह्मन्**	१.	हे ब्रह्मा जी !
वरय	८.	माँगें	**श्रेयः**	१३	कल्याणकारी साधनों का
भद्रम्	३.	कल्याण हो (आप)	**परिश्रामः**	१४	अन्त है
ते	२.	आपका	**पुंसः**	१२.	मनुष्यों के
वरेशम्	४.	वरदान देने में समर्थ	**मत्**	९.	मेरे
मा	५.	मुझसे	**दर्शन**	१०.	साक्षात्कार की
अभिवाञ्छितम् ।	६.	चाहे गये	**अवधिः ।।**	११.	सीमा ही

श्लोकार्थ हे ब्रह्मा जी ! आपका कल्याण हो । आप वरदान देने में समर्थ मुझसे चाहे गये वरदान को माँगें मेरे की सीमा हा मनुष्यो के साधनो का अन्त है

एकविंशः श्लोकः

मनोषितानुभावोऽयं मम लोकावलोकनम् ।
यदुपश्रुत्य रहसि चकर्थ परमं तपः ॥२१॥

पदच्छेद·

मनीषित अनुभावः अयम्, मम लोक अवलोकनम् ।
यद् उपश्रुत्य रहसि, चकर्थ परमम् तपः ॥

शब्दार्थ—

मनीषित	२. मेरी इच्छा का	यद्	७.	क्योंकि (आपने)
अनभावः	३ प्रभाव (है कि आपको)	उपश्रुत्य	६	सुनकर
अयम्	१. यह	रहसि	८	एकान्त में (मेरी वाणी)
मम	४. मेरे	चकर्थ	१२	अनुष्ठान किया था
लोक	५ धाम का	परमम्	१०.	कठोर
अवलोकनम् ।	६. दर्शन हुआ है	तपः ॥	११	तपस्या का

श्लोकार्थ—यह मेरी इच्छा का प्रभाव है कि आपको मेरे धाम का दर्शन हुआ है, क्योंकि आपने एकान्त में मेरी वाणी सुनकर कठोर तपस्या का अनुष्ठान किया था ।

द्वाविंशः श्लोकः

प्रत्यादिष्टं मया तत्र त्वयि कर्मविमोहिते ।
तपो मे हृदयं साक्षादात्माहं तपसोऽनघ ॥२२॥

पदच्छेद—

प्रत्यादिष्टम् मया तत्र, त्वयि कर्म विमोहिते ।
तपः मे हृदयम् साक्षात्, आत्मा अहम् तपसः अनघ ॥

शब्दार्थ—

प्रत्यादिष्टम्	६.	आदेश दिया था	मे	६	मेरा
मया	५.	मैंने ही	हृदयम्	१०.	हृदय है (और)
तत्र	४.	वहाँ पर	साक्षात्	१२.	स्वयम्
त्वयि	१.	आपका	आत्मा	१४.	आत्मा हूँ
कर्म	२.	कर्म के प्रति	अहम्	११.	मैं
विमोहिते ।	३.	विवेक न रहने पर	तपसः	१३	तपस्या की
तपः	८.	तपस्या	अनघ ॥	७.	हे निष्पाप ब्रह्मा जी !

श्लोकार्थ—आपका कर्म के प्रति विवेक न रहने पर वहाँ पर मैंने ही आदेश दिया था । हे निष्पाप ब्रह्मा जी ! तपस्या मेरा हृदय है और मैं स्वयम् तपस्या की आत्मा हूँ

त्रयोविंशः श्लोकः

सृजामि तपसैवेदं ग्रसामि तपसा पुनः ।
बिभर्मि तपसा विश्वं वीर्यं मे दुश्चरं तपः ॥ २३ ॥

पदच्छेद—

सृजामि तपसा एव इदम्, ग्रसामि तपसा पुनः ।
बिभर्मि तपसा विश्वम्, वीर्यम् मे दुश्चरम् तपः ॥

शब्दार्थ—

सृजामि	५. सृष्टि करता हूँ	बिभर्मि	७. पालन करता हूँ
तपसा	१. (मैं) तपस्या से	तपसा	६. तपस्या से
एव	२. ही	विश्वम्	४. संसार की
इदम्	३. इस	वीर्यम्	१४. शक्ति है
ग्रसामि	१०. संहार करता हूँ	मे	१२. मेरी
तपसा	९. तप से (ही)	दुश्चरम्	१३. अनन्त
पुनः ।	८. फिर	तपः ॥	११. तपस्या

श्लोकार्थ—मैं तपस्या से ही इस संसार की सृष्टि करता हूँ, तपस्या से पालन करता हूँ, फिर तप से ही संहार करता हूँ। तपस्या मेरी अनन्त शक्ति है।

चतुर्विंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच

भगवन् सर्वभूतानामध्यक्षोऽवस्थितो गुहाम् ।
वेद ह्यप्रतिरुद्धेन प्रज्ञानेन चिकीर्षितम् ॥ २४ ॥

पदच्छेद—

भगवन् सर्व भूतानाम्, अध्यक्षः अवस्थितः गुहाम् ।
वेद हि अप्रतिरुद्धेन, प्रज्ञानेन चिकीर्षितम् ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१. हे प्रभु ! आप	वेद	११. जानते हैं
सर्व	२. सभी	हि	७. तथा (अपने)
भूतानाम्	३. प्राणियों के	अप्रतिरुद्धेन	८. असीमित
अध्यक्षः	५. साक्षि रूप से	प्रज्ञानेन	९. ज्ञान से
अवस्थितः	६ स्थित हैं	चिकीर्षितम् ॥	१०. मेरे मनोरथ को
गुहाम् ।	४. अन्तः करण में		

श्लोकार्थ—हे प्रभु ! आप सभी प्राणियों के अन्तः करण में साक्षी रूप से स्थित हैं तथा अपने असीमित ज्ञान से मेरे मनोरथ को जानते हैं

पञ्चविंश: श्लोक:

तथापि नाथमानस्य नाथ नाथय नाथितम् ।
परावरे यथा रूपे जानीयां ते त्वरूपिण: ।।२५।।

पदच्छेद---

तथापि नाथमानस्य, नाथ नाथय नाथितम् ।
परावरे यथा रूपे, जानीयाम् ते तु अरूपिण: ।।

शब्दार्थ---

तथापि	१.	अत:	**यथा**	११.	भली भाँति
नाथमानस्य	३.	मुझ याचक की	**रूपे**	१०	स्वरूपों को
नाथ	२.	हे स्वामिन् !	**जानीयाम्**	१२	जान सकूं
नाथय	५.	पूरी करें	**ते**	८.	आपके
नाथितम् ।	४.	याचना	**तु**	६	जिससे मैं
परावरे	९.	निर्गुण और सगुण	**अरूपिण: ।**	७.	रूप रहित

श्लोकार्थ---अत: हे स्वामिन् ! आप मुझ याचक की याचना पूरी करें, जिससे मैं रूप रहित आपके निर्गुण और सगुण स्वरूपों को भली भाँति जान सकूँ ।

षड्विंश: श्लोक:

यथाऽऽत्ममायायोगेन, नानाशक्त्युपबृंहितम् ।
विलुम्पन् विसृजन् गृह्णन्, बिभ्रदात्मानमात्मना ।।२६।।

पदच्छेद---

यथा आत्मन् माया योगेन, नाना शक्ति उपबृंहितम् ।
विलुम्पन् विसृजन् गृह्णन्, बिभ्रत् आत्मानम् आत्मना ।।

शब्दार्थ---

यथा	८.	जिस प्रकार	**विलुम्पन्**	१३.	संहार करते हैं (उसे बतावें)
आत्मन्	१	हे प्रभो ! (आप)	**विसृजन्**	११.	संसार की सृष्टि
माया	२.	(अपनी) माया के	**गृह्णन्**	१२.	रक्षा (और)
योगेन	३.	प्रभाव के कारण	**बिभ्रत्**	९.	धारण करते हैं (तथा)
नाना	४.	अनेक	**आत्मानम्**	७.	अपने को (अनेक रूपों में)
शक्ति	५.	शक्तियों से	**आत्मना ।।**	१०.	अपने से ही
उपबृंहितम् ।	६.	परिपूर्ण			

श्लोकार्थ---हे प्रभो ! आप अपनी माया के प्रभाव के कारण अनेक शक्तियों से परिपूर्ण अपने को अनेक रूपों में जिस प्रकार धारण करते हैं तथा अपने से ही संसार की सृष्टि, रक्षा और संहार करते हैं, उसे बतावें ।

सप्तविंशः श्लोकः

क्रीडस्यमोघसंकल्प ऊर्णनाभिर्यथोर्णुते ।
तथा तद्विषयां धेहि मनीषां मयि माधव ॥ २७ ॥

पदच्छेद—

क्रीडसि अमोघ संकल्पः, ऊर्णनाभिः यथा ऊर्णुते ।
तथा तद् विषयाम् धेहि, मनीषाम् मयि माधव ॥

शब्दार्थ—

क्रीडसि	७.	लीला करते हैं	तथा	४.	उसी प्रकार
अमोघ	५.	सत्य	तद्	१०	उस
संकल्पः	६.	प्रतिज्ञा वाले (आप)	विषयाम्	११.	विषय का
ऊर्णनाभिः	२	मकड़ी	धेहि	१३.	देवें
यथा	१.	जिस प्रकार	मनीषाम्	१२.	ज्ञान
ऊर्णुते ।	३.	जाला बनाती है	मयि	९.	मुझे
			माधव ॥	८.	हे श्रीकृष्ण ! (आप)

श्लोकार्थ— जिस प्रकार मकड़ी जाला बनाती है, उसी प्रकार सत्य प्रतिज्ञा वाले आप लीला करते हैं। हे श्रीकृष्ण ! आप मुझे उस विषय का ज्ञान देवें।

अष्टाविंशः श्लोकः

भगवच्छिक्षितमहं करवाणि ह्यतन्द्रितः ।
नेहमानः प्रजासर्गं बध्येयं यदनुग्रहात् ॥ २८ ॥

पदच्छेद—

भगवत् शिक्षितम् अहम्, करवाणि हि अतन्द्रितः ।
न ईहमानः प्रजा सर्गम्, बध्येयम् यत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

भगवत्	१.	हे प्रभो !	ईहमानः	५.	चेष्टा करता हुआ
शिक्षितम्	२	(आपके द्वारा) बताई गई	प्रजा	३.	जीवों की
अहम्	६.	मैं	सर्गम्	४.	सृष्टि की
करवाणि	९	करता रहूँ (किन्तु)	बध्येयम्	१३.	बंध सकूँ
हि	८.	(उसे) अवश्य	यत्	१०.	जिस आपकी
अतन्द्रितः ।	७.	आलस्य रहित होकर	अनुग्रहात् ॥	११.	कृपा के कारण (कर्तापन के अभिमान से)
न	१२.	नहीं			

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपके द्वारा बताई गई जीवों की सृष्टि की चेष्टा करता हुआ मैं आलस्य रहित होकर उसे अवश्य करता रहूँ; किन्तु जिस आपकी कृपा के कारण कर्तापन के अभिमान से नहीं बँध सकूँ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यावत् सखा सख्युरिवेश ते कृतः, प्रजाविसर्गे विभजामि भो जनम् ।
अविक्लवस्ते परिकर्मणि स्थितो, मा मे समुन्नद्धमदोऽजमानिनः ॥२९॥

यावत् सखा सख्युः इव ईश ते कृतः, प्रजा विसर्गे विभजामि भो जनम् ।
अविक्लवः ते परिकर्मणि स्थितः, मा मे समुन्नद्ध मदः अज मानिनः ॥

२. जब		भो	७.	हे स्वामिन् !
५. मित्र		जनम् ।	१४.	मनुष्यों का (गुण कर्मा
४. एक मित्र के, समान		अविक्लवः	१२.	सावधानी से
१ हे भगवन् !		ते	१०.	आपकी
३. आपने (मुझे)		परिकर्मणि	११.	सेवा में
६ स्वीकार किया है (तब)		स्थितः,	१३.	लगा हुआ (मैं)
८ जीवों की		मा	१९.	नहीं (होवे)
९ सृष्टि रूप		मे	१६.	मुझे
१५ विभाग करूँ (और)		समुन्नद्ध, मदः	१८	बहुत बड़ा, अभिमान
		अज मानिनः॥	१७	अजन्मा होने का

भगवन् ! जब आपने मुझे एक मित्र के समान मित्र स्वीकार किया है तब हे स्वा
गें की सृष्टि रूप आपकी सेवा में सावधानी से लगा हुआ मैं मनुष्यों का गुण-कर्म
गग करूँ और मुझे अजन्मा होने का बहुत बड़ा अभिमान नहीं होवे ।

त्रिंशः श्लोकः

च—

ज्ञानं परमगुह्यं मे, यद् विज्ञानसमन्वितम् ।
सरहस्यं तदङ्गं च, गृहाण गदितं मया ॥३०॥

ज्ञानम् परम गुह्यम् मे, यद् विज्ञान समन्वितम् ।
सरहस्यम् तदङ्गम् च, गृहाण गदितम् मया ॥

९ ज्ञान है	सरहस्यम्	१०.	रहस्यों के साथ (उसे)
७. अत्यन्त	तदङ्गम्	१२.	उसके अंगों को
८ गोपनीय	च	११.	और
६. मेरा	गृहाण	१३	आप ग्रहण करें
५. जो	गदितम्	२.	कहा गया
३ तत्त्व ज्ञान से	मया ॥	१.	मेरे द्वारा
४ युक्त			

द्वारा कहा गया. तत्त्व-ज्ञान से युक्त जो मेरा अत्यन्त गोपनीय ज्ञान है, रहस्यो के
और उसके अगो को आप ग्रहण कर

एकत्रिंशः श्लोकः

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः ।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥३१॥

पदच्छेद—

यावान् अहम् यथा भावः, यद् रूप गुण कर्मकः ।
तथैव तत्त्व विज्ञानम्, अस्तु ते मत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

यावान्	२	जितना (बड़ा हूँ)	तथैव	१०.	उसी प्रकार
अहम्	१	मैं	तत्त्व	१२.	वास्तविक स्वरूप का
यथा	३.	(मेरा) जैसा	विज्ञानम्	१३	ज्ञान
भावः	४.	लक्षण है	अस्तु	१४	होवे
यद् रूप	५	जो स्वरूप	ते	११	आपको (उनके)
गुण	६.	गुण (तथा)	मत्	८.	मेरी
कर्मकः ।	७	लीलायें हैं	अनुग्रहात् ॥	९.	कृपा से

श्लोकार्थ - मैं जितना बड़ा हूँ, मेरा जैसा लक्षण है, जो स्वरूप, गुण तथा लीलायें हैं । मेरी कृपा से उसी प्रकार आपको उनके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होवे ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परम् ।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ॥३२॥

पदच्छेद—
अहम् एव आसम् एव अग्रे, न अन्यत् सत् असत् परम् ।
पश्चात् अहम् यद् एतद् च, यः अवशिष्येत सः अस्मि अहम् ॥

शब्दार्थ—

अहम्, एव	३.	मैं, ही	पश्चात्	१४.	अन्त में
आसम्	४.	था	अहम्	१३.	मैं (ही हूँ और)
एव	२.	केवल	यद्	११.	जो
अग्रे	१.	सृष्टि के पूर्व	एतद्	१२.	यह (जगत् है वह)
न	६.	नहीं था	च	१०.	तथा
अन्यत्	५.	दूसरा कोई	यः, अवशिष्येत	१५.	जो, बचा रहेगा
यत्, सत	७.	जो, स्थूल	सः	१६.	वह (भी)
असत्	८.	सूक्ष्म (और)	अस्मि	१८	हूँ
परम् ।	९	(उसका) कारण अज्ञान है	अहम् ॥	१७.	मैं (ही)

श्लोकार्थ— सृष्टि के पूर्व केवल मैं ही था, दूसरा कोई नहीं था, जो स्थूल सूक्ष्म और उसका कारण अज्ञान है तथा जो यह जगत है; वह मैं ही हूँ और अन्त में जो बचा रहेगा, वह भी मैं ही हूँ ।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि ।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः ।।३३।।

पदच्छेद— ऋते अर्थम् यत् प्रतीयेत, न प्रतीयेत च आत्मनि ।
तद् विद्यात् आत्मनः मायाम्, यथा आभासः यथा तमः ।।

शब्दार्थ—

ऋते	२.	अभाव में	**तद्**	१३.	उसे
अर्थम्	१	वस्तु के	**विद्यात्**	१६.	समझनी चाहिये
यत्	७.	(उसी प्रकार मिथ्या होने पर) भी जिसकी	**आत्मनः**	१४.	परमात्मा की
			मायाम्	१५.	माया
प्रतीयेत	९.	प्रतीति होती है	**यथा**	३.	जैसे
न	११.	नहीं भी	**आभासः**	४.	भ्रम ज्ञान
प्रतीयेत	१२.	होती है	**यथा**	५	अथवा
च	१०.	और	**तमः ।।**	६.	राहु ग्रह की (प्रतीति होती है)
आत्मनि ।	८.	आत्मा में			

श्लोकार्थ—वस्तु के अभाव में जैसे भ्रम ज्ञान अथवा राहु ग्रह की प्रतीती होती है, उसी प्रकार मिथ्या होने पर भी जिसकी आत्मा में प्रतीति होती है और नहीं भी होती है, उसे परमात्मा की माया समझनी चाहिये ।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ।।३४।।

पदच्छेद— यथा महान्ति भूतानि, भूतेषु उच्चावचेषु अनु ।
प्रविष्टानि अप्रविष्टानि, तथा तेषु न तेषु अहम् ।।

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	**अप्रविष्टानि**	८.	प्रवेश नहीं भी करते हैं
महान्ति	२.	पञ्च महा	**तथा**	९.	उसी प्रकार (मैं शरीर दृष्टि से)
भूतानि	३.	भूत	**तेषु**	१०.	उनमें प्रवेश करता हूँ
भूतेषु	५.	जीव शरीरों की	**न**	१२.	(प्रवेश) नहीं भी
उच्चावचेषु	४.	छोटे-बड़े	**तेषु**	११.	और (आत्मदृष्टि से अपने अतिरिक्त कोई वस्तु न होने के कारण,
अनु ।	६.	रचना में			
प्रविष्टानि	७.	प्रवेश करते हैं (और कारण रूप में पूर्व विद्यमान रहने से)	**अहम्**	१३.	(करता) हूँ

श्लोकार्थ—जैसे पञ्चमहाभूत छोटे-बड़े जीव शरीरों की रचना में प्रवेश करते हैं और कारण रूप में पूर्व विद्यमान रहने से प्रवेश नहीं भी करते हैं, उसी प्रकार मैं शरीर दृष्टि से उनमें प्रवेश करता हूँ और आत्मदृष्टि से अपने अतिरिक्त कोई वस्तु न होने के कारण प्रवेश नहीं भी करता हूँ

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥ ३५ ॥

एतावत् एव जिज्ञास्यम्, तत्त्व जिज्ञासुना आत्मनः ।
अन्वय व्यतिरेकाभ्याम्, यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥

८. वही (स्वरूप)	अन्वय	२. सद्भाव और
११. जानने की वस्तु है	व्यतिरेकाभ्याम्	३. अभाव दोनों ही
९. तत्त्व	यत्	१. जो
१०. जिज्ञासु के	स्यात्	६. साथ रहता है
७. आत्मा का	सर्वत्र	४. सब जगह और
	सर्वदा ॥	५. सब समय

सद्भाव और अभाव दोनों ही स्थितियों में सब जगह और सब समय साथ त्मा का वही स्वरूप तत्त्व-जिज्ञासु के जानने की वस्तु है ।

षट्त्रिंश: श्लोक:

एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना ।
भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ॥ ३६ ॥

एतद् मतम् समातिष्ठ, परमेण समाधिना ।
भवान् कल्प विकल्पेषु, न विमुह्यति कर्हिचित् ॥

४. इस	भवान्	१. हे ब्रह्माजी ! आप
५. सिद्धान्त पर	कल्प	७. युग
६. अटल रहें (जिससे)	विकल्पेषु	८. युगान्तरों में
२. उत्तम	न, विमुह्यति	१०. नहीं, मोहित होंगे
३. समाधि के द्वारा	कर्हिचित् ॥	९. कभी भी

ह्मा जी ! आप उत्तम समाधि के द्वारा इस सिद्धान्त पर अटल रहें, जिससे युग कभी भी मोहित नहीं होंगे ।

सप्तत्रिंश: श्लोक:

श्रीशुक उवाच—

सम्प्रदिश्यैवमजनो जनानां परमेष्ठिनम् ।
पश्यतस्तस्य तद् रूपमात्मनो न्यरुणद्धरिः ॥३७॥

पदच्छेद—

सम्प्रदिश्य एवम् अजनः, जनानाम् परमेष्ठिनम् ।
पश्यतः तस्य तद् रूपम्, आत्मनः न्यरुणत् हरिः ॥

शब्दार्थ—

सम्प्रदिश्य	६.	उपदेश देकर	तस्य	७.	उनके
एवम्	५.	इस प्रकार	तद्	१०.	उस
अजनः	१.	अजन्मा	रूपम्	११.	स्वरूप को
जनानाम्	३.	लोकों के	आत्मनः	६.	अपने
परमेष्ठिनम् ।	४.	पितामह ब्रह्मा को	न्यरुणत्	१२.	छिपा लिया
पश्यतः	८.	देखते ही देखते	हरिः ॥	२.	भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् श्री हरि ने लोकों के पितामह ब्रह्माजी को इस प्रकार उपदेश देखते ही देखते अपने उस स्वरूप को छिपा लिया ।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

अन्तर्हितेन्द्रियार्थाय हरये विहिताञ्जलिः ।
सर्वभूतमयो विश्वं ससर्जेदं स पूर्ववत् ॥३८॥

पदच्छेद—

अन्तर्हित इन्द्रिय अर्थाय, हरये विहित अञ्जलिः ।
सर्व भूतमयः विश्वम्, ससर्ज इदम् सः पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

अन्तर्हित	३.	अन्तर्धान किये हुये	भूतमयः	७.	प्राणी स्वरूप
इन्द्रिय	१.	इन्द्रिय	विश्वम्	११.	जगत् की
अर्थाय	२.	गोचर शरीर का	ससर्ज	१२.	रचना की
हरये	४.	भगवान् को	इदम्	१०.	इस
विहित अञ्जलिः ।	५.	हाथ जोड़ने के पश्चात्	सः	८.	उन (ब्रह्मा जी)
सर्व	६.	समस्त	पूर्ववत् ॥	६.	पूर्व कल्प की सृष्टि

श्लोकार्थ—इन्द्रिय गोचर शरीर का अन्तर्धान किये हुये भगवान् को हाथ जोड़ने के पश्चात स्वरूप उन ब्रह्मा जी ने पूर्व कल्प की सृष्टि के समान इस जगत् की रचना की ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्रजापतिर्धर्मपतिरेकदा नियमान् यमान् ।
भद्रं प्रजानामन्विच्छन्नातिष्ठत् स्वार्थकाम्यया ॥३९॥

प्रजापतिः धर्म पतिः, एकदा नियमान् यमान् ।
भद्रम् प्रजानाम् अन्विच्छन्, आतिष्ठत् स्वार्थ काम्यया ॥

२	प्रजाओं के रक्षक (और)	भद्रम्	७.	कल्याण की
३	धर्म के पालक (ब्रह्मा जी ने)	प्रजानाम्	६.	प्रजाओं के
१	एक बार	अन्विच्छन्	८.	कामना से
०	चान्द्रायणादि व्रतों का	आतिष्ठत्	११.	अनुष्ठान किया
९	शम-दम आदि षड्विध यम (और)	स्वार्थ	४.	अपने कार्य की
		काम्यया ॥	५.	पूर्ति के लिये (

बार प्रजाओं के रक्षक और धर्म के पालक ब्रह्माजी ने अपने कार्य की पूर्ति ओं के कल्याण की कामना से शम-दम आदि षड्विध यम और चान्द्र अनुष्ठान किया।

चत्वारिंशः श्लोकः

तं नारदः प्रियतमो रिक्थादानामनुव्रतः ।
शुश्रूषमाणः शीलेन प्रश्रयेण दमेन च ॥४०॥

तम् नारदः प्रियतमः, रिक्थादानाम् अनुव्रतः ।
शुश्रूषमाणः शीलेन, प्रश्रयेण दमेन च ॥

उन्हें (प्रसन्न किया)	शुश्रूषमाणः	५.	सेवा करते हुये
देवर्षि नारद ने	शीलेन	६.	अपने स्वभाव
अत्यन्त प्रिय (और)	प्रश्रयेण	७.	विनय
(उस समय) सभी दायाद पुत्रों में	दमेन	९.	संयम से
आज्ञाकारी	च ॥	८.	और

समय सभी दायाद पुत्रों में अत्यन्त प्रिय और आज्ञाकारी देवर्षि नारद ने से ने स्वभाव, विनय और संयम से उन्हें प्रसन्न किया।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

मायां विविदिषन् विष्णोर्मायेशस्य महामुनिः ।
महाभागवतो राजन् पितरं पर्यतोषयत् ।।४१।।

मायाम् विविदिषन् विष्णोः, माया ईशस्य महामुनिः ।
महा भागवतः राजन्, पितरम् पर्यतोषयत् ।।

५	लीलाओं को	**महा**	७.	महान्
६	जानने की इच्छा से	**भागवतः**	८.	विष्णु भक्त
४	भगवान् विष्णु की	**राजन्**	१.	हे परीक्षित् !
२	माया	**पितरम्**	१०.	(अपने) पिता
३	पति	**पर्यतोषयत् ।।**	११.	प्रसन्न किया
६	देवर्षि नारद ने			

रीक्षित् ! उस समय माया पति भगवान् विष्णु की लीलाओं को जानने
न् विष्णु भक्त देवर्षि नारद ने अपने पिता ब्रह्मा को प्रसन्न किया ।

द्विचत्वारिंश: श्लोक:

तुष्टं निशाम्य पितरं लोकानां प्रपितामहम् ।
देवर्षिः परिपप्रच्छ भवान् यन्मानुपृच्छति ।।४२।।

तुष्टम् निशाम्य पितरम्, लोकानाम् प्रपितामहम् ।
देवर्षिः परिपप्रच्छ, भवान् यत् मा अनुपृच्छति ।।

४	प्रसन्न	**देवर्षिः**	६.	देवर्षि नारद
५.	देखकर	**परिपप्रच्छ**	७.	(वही प्रश्न)
३	(अपने) पिता ब्रह्मा को	**भवान्**	६.	आप
१	लोकों के	**यत्**	८.	जो
२	पितामह (और)	**मा**	१०.	मुझसे
		अनुपृच्छति ।।	११.	पूछ रहे हैं

के पितामह और अपने पिता ब्रह्मा को प्रसन्न देखकर देवर्षि नारद ने
, जो आप मुझसे पूछ रहे है ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मा इदं भागवतं पुराणं दशलक्षणम् ।
प्रोक्तं भगवता प्राह प्रीतः पुत्राय भूतकृत् ।।४३।।

तस्मै इदम् भागवतम्, पुराणम् दश लक्षणम् ।
प्रोक्तम् भगवता प्राह, प्रीतः पुत्राय भूत कृत् ।।

३. अपने	**प्रोक्तम्**	६. कहे गये
९. इस	**भगवता**	५. भगवान् के द्वारा
१०. श्री मद्भागवत	**प्राह**	१२. उपदेश दिया
११. महापुराण का	**प्रीतः**	२. प्रसन्न होकर (उस
७. दश	**पुत्राय**	४. पुत्र नारद को
८. लक्षणों वाले	**भूतकृत् ।।**	१. सृष्टि के रचयिता

ष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी ने प्रसन्न होकर उस समय अपने पुत्र नारद को भगवा हे गये दश लक्षणों वाले इस श्रीमद्भागवत महापुराण का उपदेश दिया था ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

नारदः प्राह मुनये सरस्वत्यास्तटे नृप ।
ध्यायते ब्रह्म परमं व्यासायामिततेजसे ।।४४।।

नारदः प्राह मुनये, सरस्वत्याः तटे नृप ।
ध्यायते ब्रह्म परमम्, व्यासाय अमित तेजसे ।।

२. देवर्षि नारद ने	**ध्यायते**	७. ध्यान करते हुये
१२. सुनाया था	**ब्रह्म**	६. परमात्मा का
११. मुनि को (वह भागवत)	**परमम्**	५. परात्पर
३ सरस्वती नदी के	**व्यासाय**	१०. वेद व्यास
४. तट पर	**अमित**	८. परम
१. हे राजन् !	**तेजसे ।।**	९. तेजस्वी

राजन् ! देवर्षि नारद ने सरस्वती नदी के तट पर परात्पर परमात्मा का अतः परम तेजस्वी वेद व्यास मुनि को वह भागवत सुनाया था ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यदुताहं त्वया पृष्टो वैराजात् पुरुषादिदम् ।
यथाऽऽसीत्तदुपाख्यास्ये प्रश्नानन्यांश्च कृत्स्नशः ॥४५॥

पदच्छेद—

यद् उत अहम् त्वया पृष्टः, वैराजात् पुरुषात् इदम् ।
यथा आसीत् तद् उपाख्यास्ये, प्रश्नान् अन्यान् च कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

यद्	१	जैसा	यथा	७.	जिस प्रकार
उत	२.	कि	आसीत्	१०.	उत्पन्न हुआ है
अहम्	४.	मुझसे	तद्	११.	उसे
त्वया	३.	आपने	उपाख्यास्ये	१६.	बताऊँगा
पृष्टः	५.	पूछा है	प्रश्नान्	१४.	प्रश्नों को (भी)
वैराजात्	८	विराट्	अन्यान्	१३.	दूसरे
पुरुषात्	९.	पुरुष से	च	१२.	और
इदम् ।	६.	यह जगत्	कृत्स्नशः ॥	१५.	पूरी तरह से

श्लोकार्थ—जैसा कि आपने मुझसे पूछा है, यह जगत् जिस प्रकार विराट्-पुरुष से उत्पन्न हुआ है, उसे और दूसरे प्रश्नों को भी पूरी तरह से बताऊँगा ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वितीयस्कन्धे नवमः अध्यायः ॥९॥

ॐ श्रीगणशाय नम

द्वितीयः स्कन्धः

अथ दशमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

त—

अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ॥१॥

अत्र सर्गः विसर्गः च, स्थानम् पोषणम् ऊतयः ।
मन्वन्तर ईश अनुकथा, निरोधः मुक्तिः आश्रयः ॥

१. इस भगावत पुराण में	मन्वन्तर	८.	मन्वन्तर
२. सर्ग	ईश	९.	ईश
३. विसर्ग	अनुकथा	१०.	कथा
४. और	निरोधः	११.	निरोध
५. स्थान	मुक्तिः	१२.	मुक्ति (और)
६. पोषण	आश्रयः ॥	१३.	आश्रय (इन दस
७. ऊती			वर्णन है

भागवत पुराण में सर्ग, विसर्ग और स्थान, पोषण, ऊती, मन्वन्तर, ईश क
त और आश्रयः इन दस विषयों का वर्णन है ।

द्वितीयः श्लोकः

दशमस्य विशुद्धयर्थं नवानामिह लक्षणम् ।
वर्णयन्ति महात्मानः श्रुतेनार्थेन चाञ्जसा ॥२॥

दशमस्य विशुद्धि अर्थम्, नवानाम् इह लक्षणम् ।
वर्णयन्ति महात्मानः, श्रुतेन अर्थेन च अञ्जसा ॥

२. दसवें आश्रय तत्त्व की	वर्णयन्ति	१२.	वर्णन किया है
३. प्राप्ति के	महात्मानः	१.	महात्माओं ने
४. लिये	श्रुतेन	६.	श्रुतियों से
९. नौ तत्त्वों के	अर्थेन	७.	उनके तात्पर्य से
५. इस पुराण में	च	८.	और (अपने अनु
०. स्वरूप का	अञ्जसा ॥	११.	सुगमता पूर्वक

माओं ने दशवें आश्रय तत्त्व की प्राप्ति के लिये इस पुराण में श्रुतियों से, उ
ौर अपने अनुभव से नौ तत्त्वों के स्वरूप का सुगमता पूर्वक वर्णन किया है ।

तृतीयः श्लोकः

भूतमात्रेन्द्रियधियां जन्म सर्ग उदाहृतः ।
ब्रह्मणो गुणवैषम्याद् विसर्ग. पौरुषः स्मृतः ।।३।।

भूत मात्रा इन्द्रिय धियाम्, जन्म सर्गः उदाहृतः ।
ब्रह्मणः गुण वैषम्याद्, विसर्गः पौरुषः स्मृतः ।।

४.	आकाशादि पञ्च महाभूत	**ब्रह्मणः**	१.	परमात्मा की प्रेरणा से
५.	शब्दादि पञ्च तन्मात्रायें	**गुण**	२.	सत्त्वादि गुणों में
६.	इन्द्रिय, अहंकार (और)	**वैषम्याद्**	३.	परिवर्तन के कारण
७.	महत्तत्त्वों की	**विसर्गः**	१२.	विसर्ग
८.	उत्पत्ति को	**पौरुषः**	११.	विराट् पुरुष से उत्पन्न ब्रह्मा की सृष्टि को
९.	सर्ग			
१०.	कहते हैं (तथा)	**स्मृतः ।।**	१३.	कहा गया है

रमात्मा की प्रेरणा से सत्त्वादि गुणों में परिवर्तन के कारण आकाशादि पञ्चमहाभूत ब्दादि पञ्च तन्मात्रायें, इन्द्रिय, अहंकार और महत्तत्त्वों की उत्पत्ति को सर्ग कहते हैं तथ वराट् पुरुष से उत्पन्न ब्रह्मा की सृष्टि को विसर्ग कहा गया है ।

चतुर्थः श्लोकः

स्थितिर्वैकुण्ठविजयः पोषणं तदनुग्रहः ।
मन्वन्तराणि सद्धर्म ऊतयः कर्मवासनाः ।।४।।

स्थितिः वैकुण्ठ विजयः, पोषणम् तद् अनुग्रहः ।
मन्वन्तराणि सत् धर्मः, ऊतयः कर्म वासनाः ।।

३.	स्थान कहते है	**मन्वन्तराणि**	९.	मन्वन्तर कहा गया है
१.	श्री हरि की	**सत्**	७.	मन्वन्तर के अधिपतियों की भगवद् भक्ति और
२.	श्रेष्ठता को			
६.	पोषण है	**धर्मः**	८.	प्रजा पालन को
४.	(जीवों पर) उनकी	**ऊतयः**	१२.	ऊती नाम से कहे जाते है
५.	कृपा ही	**कर्म**	११.	जीवों के कर्म
		वासनाः ।।	१०.	बन्धन में डालने वाले

ी हरि की श्रेष्ठता को स्थान कहते हैं। जीवों पर उनकी कृपा ही पोषण है। मन्वन्तर के अधिपतियों की भगवद् भक्ति और प्रजा पालन को मन्वन्तर कहा गया है। बन्धन में डालने ाले जीवों के कर्म ऊती नाम से कहे जाते हैं।

पञ्चमः श्लोकः

अवतारानुचरितं हरेश्चास्यानुवर्तिनाम् ।
सतामीशकथाः प्रोक्ता नानाख्यानोपबृंहिताः ॥५॥

पदच्छेद—

अवतार अनुचरितम्, हरेः च अस्य अनुवर्तिनाम् ।
सताम् ईश कथाः प्रोक्ताः, नाना आख्यान उपबृंहिताः ॥

शब्दार्थ—

अवतार	२.	अवतारों की	सताम्	१०.	भक्तों की गाथायें
अनुचरितम्	३.	लीलायें	ईश कथाः	११.	ईश कथा
हरेः	१.	भगवान् श्री हरि के	प्रोक्ताः	१२.	कही गयी हैं
च	४.	तथा	नाना	५.	अनेक
अस्य	८.	उनके	आख्यान	६.	आख्यानों से
अनुवर्तिनाम् ।	९.	प्रेमी	उपबृंहिताः ॥	७.	युक्त

श्लोकार्थ—भगवान श्री हरि के अवतारों की लीलायें तथा अनेक आख्यानों से युक्त, उनके प्रेमी भक्तों की गाथायें 'ईश कथा' कही गयी हैं ।

षष्ठः श्लोकः

निरोधोऽस्यानुशयनमात्मनः सह शक्तिभिः ।
मुक्तिर्हित्वान्यथारूपं स्वरूपेण व्यवस्थितिः ॥६॥

पदच्छेद—

निरोधः अस्य अनुशयनम्, आत्मनः सह शक्तिभिः ।
मुक्तिः हित्वा अन्यथा रूपम्, स्व रूपेण व्यवस्थितिः ॥

शब्दार्थ—

निरोधः	६.	निरोध कहा गया है	मुक्तिः	१२.	मुक्ति है
अस्य	४.	इस परमात्मा का	हित्वा	९.	छोड़कर (जीव का)
अनुशयनम्	५.	योग निद्रा में शयन	अन्यथा	७.	देहादि अनात्म
आत्मनः	१.	अपनी	रूपम्	८.	भाव को
सह	३.	साथ	स्व रूपेण	१०.	अपने रूप में
शक्तिभिः ।	२.	शक्तियों के	व्यवस्थितिः ॥	११.	स्थित होना ही

श्लोकार्थ—अपनी शक्तियों के साथ इस परमात्मा का योग निद्रा में शयन निरोध कहा गया है । देहादि अनात्म भाव को छोड़कर जीव का अपने रूप में स्थित होना ही मुक्ति है ।

सप्तमः श्लोकः

आभासश्च निरोधश्च यतश्चाध्यवसीयते ।
स आश्रयः परं ब्रह्म परमात्मेति शब्द्यते ॥७॥

पदच्छेद—

आभासः च निरोधः च, यतः च अध्यवसीयते ।
सः आश्रयः परम् ब्रह्म, परमात्मा इति शब्द्यते ॥

शब्दार्थ—

आभासः	२.	उत्पत्ति	सः	६.	वह
च	३	और	आश्रयः	१०.	आश्रय है (जिसे)
निरोधः	४.	प्रलय	परम्	७.	परम
च	६.	ही	ब्रह्म	८.	ब्रह्म
यतः च	१.	जिस परमात्मा से	परमात्मा	११.	परमात्मा
अध्यवसीयते ।	५.	प्रकाशित होते हैं	इति	१२.	इस नाम से
			शब्द्यते ॥	१३	कहा जाता है

श्लोकार्थ जिस परमात्मा से उत्पत्ति और प्रलय प्रकाशित होते हैं, वह परम ब्रह्म ही आश्रय है, जिसे परमात्मा इस नाम से कहा जाता है ।

अष्टमः श्लोकः

योऽध्यात्मिकोऽयं पुरुषः सोऽसावेवाधिदैविकः ।
यस्तत्रोभयविच्छेदः पुरुषो ह्याधिभौतिकः ॥८॥

पदच्छेद—

यः अध्यात्मिकः अयम् पुरुषः, सः असौ एव आधिदैविकः ।
यः तत्र उभय विच्छेदः, पुरुषः हि आधिभौतिकः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	यः	९.	जो
अध्यात्मिकः	३.	इन्द्रियाभिमानी	तत्र	८.	उनमें
अयम्	२.	यह	उभय	१३.	(उन) दोनों को
पुरुषः	४.	जीव है	विच्छेदः	१४.	अलग-अलग करता है
सः असौ	५.	वह	पुरुषः	११	दृश्य देह है
एव	६.	ही (इन्द्रिय)	हि	१२.	वही
आधिदैविकः ।	७.	अधिष्ठातृ देवता सूर्यादि के रूप में है	आधिभौतिकः॥	१०.	नेत्र आदि से युक्त

श्लोकार्थ—जो यह इन्द्रियाभिमानी जीव है, वही इन्द्रिय-अधिष्ठातृ देवता सूर्यादि के रूप में है । उनमें जो नेत्र आदि से युक्त दृश्य देह है, वही उन दोनों को अलग-अलग करता है ।

नवमः श्लोकः

एकमेकतराभावे यदा नोपलभामहे ।
त्रितयं तत्र यो वेद स आत्मा स्वाश्रयाश्रयः ॥६॥

पदच्छेद—

एकम् एकतर अभावे, यदा न उपलभामहे ।
त्रितयम् तत्र यः वेद, सः आत्मा स्व आश्रय आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

एकम्	४.	एक दूसरे की	**तत्र**	७.	(किन्तु) उनमें से
एकतर	२.	किसी एक का	**यः**	८.	जो
अभावे	३.	अभाव होने पर	**वेद**	१०.	जानता है
यदा	१.	जब कि (उन तीनों में से)	**सः**	११.	वही
न	५.	नही	**आत्मा**	१४.	परमात्मा है
उपलभामहे	६.	उपलब्धि होती है	**स्व आश्रय**	१२.	जीवों के अधिष्ठान का
त्रितयम् ।	९.	तीनों को	**आश्रयः ॥**	१३.	आश्रय तत्त्व

श्लोकार्थ—जब कि उन तीनों में से किसी एक का अभाव होने पर एक दूसरे की उपलब्धि नहीं होती है, किन्तु उनमें से जो तीनों को जानता है, वही जीवों के अधिष्ठान का आश्रय-तत्त्व परमात्मा है।

दशमः श्लोकः

पुरुषोऽण्डं विनिर्भिद्य यदासौ स विनिर्गतः ।
आत्मनोऽयनमन्विच्छन्नपोऽस्राक्षीच्छुचिः शुचीः ॥१०॥

पदच्छेद—

पुरुषः अण्डम् विनिर्भिद्य, यदा असौ सः विनिर्गतः ।
आत्मनः अयनम् अन्विच्छन्, अपः अस्राक्षीत् शुचिः शुचीः ॥

शब्दार्थ—

पुरुषः	३.	विराट् पुरुष	**आत्मनः**	९.	अपने
अण्डम्	४.	ब्रह्माण्ड का	**अयनम्**	१०.	निवास स्थान की
विनिर्भिद्य	५.	भेदन करके	**अन्विच्छन्**	११.	इच्छा की (और)
यदा	१.	जब	**अपः**	१३.	जल की
असौ	२.	वह	**अस्राक्षीत्**	१४.	सृष्टि की
सः	७.	उस	**शुचिः**	८	पवित्र पुरुष ने
विनिर्गतः ।	६.	बाहर आया (तब)	**शुचीः ॥**	१२.	शुद्ध

श्लोकार्थ—जब वह विराट् पुरुष ब्रह्माण्ड का भेदन करके बाहर आया तब उस पवित्र पुरुष ने अपने निवास स्थान की इच्छा की और शुद्ध जल की सृष्टि की।

एकादशः श्लोकः

तास्ववात्सीत् स्वसृष्टासु सहस्रपरिवत्सरान् ।
तेन नारायणो नाम यदापः पुरुषोद्भवाः ।।११।।

पदच्छेद—

तासु अवात्सीत् स्व सृष्टासु, सहस्र परिवत्सरान् ।
तेन नारायणः नाम, यद् आपः पुरुष उद्भवाः ।।

शब्दार्थ—

तासु	३.	उस जल में	तेन	७.	इसलिये (उसका)
अवात्सीत्	६.	निवास किया	नारायणः	९.	नारायण (पड़ा)
स्व	१.	(विराट् पुरुष ने) अपने द्वारा	नाम	८.	नाम
सृष्टासु	२.	निर्मित	यद्	१०.	क्योंकि
सहस्र	४	एक हजार	आपः	१३.	जल को (नार कहते हैं)
परिवत्सरान् ।	५.	वर्षों तक	पुरुष	११.	विराट् पुरुष से
			उद्भवाः ।।	१२.	उत्पन्न

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष ने अपने द्वारा निर्मित उस जल में एक हजार वर्षों तक निवास किया । इसलिये उसका नाम नारायण पड़ा; क्योंकि विराट् पुरुष से उत्पन्न जल को 'नार' कहते हैं ।

द्वादशः श्लोकः

द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च ।
यदनुग्रहतः सन्ति न सन्ति यदुपेक्षया ।।१२।।

पदच्छेद—

द्रव्यम् कर्म च कालः च, स्वभावः जीवः एव च ।
यद् अनुग्रहतः सन्ति, न सन्ति यद् उपेक्षया ।।

शब्दार्थ—

द्रव्यम्	३.	द्रव्य	च ।	१२.	तथा
कर्म	४.	कर्म	यद्	१.	जिस (नारायण) की
च	५.	और	अनुग्रहतः	२.	कृपा से
कालः	६.	काल	सन्ति	११.	सत्तावान् रहते हैं
च	७.	तथा	न	१५.	नहीं
स्वभावः	८.	स्वभाव	सन्ति	१६.	(इनकी) स्थिति रहती है
जीवः	१०.	जीव	यद्	१३.	जिसकी
एव	९.	और	उपेक्षया ।।	१४.	उपेक्षा से

श्लोकार्थ—जिस नारायण की कृपा से द्रव्य, कर्म और काल तथा स्वभाव और जीव सत्तावान् रहते हैं, तथा जिसकी उपेक्षा से इनकी स्थिति ही नहीं रहती है ।

त्रयोदश: श्लोक:

एको नानात्वमन्विच्छन् योगतल्पात् समुत्थितः ।
वीर्यं हिरण्मयं देवो मायया व्यसृजत् त्रिधा ॥१३॥

पदच्छेद—

एकः नानात्वम् अन्विच्छन्, योग तल्पात् समुत्थितः ।
वीर्यम् हिरण्मयम् देवः, मायया व्यसृजत् त्रिधा ॥

शब्दार्थ—

एकः	४.	अद्वितीय	**वीर्यम्**	९.	वीर्य को
नानात्वम्	६.	अनेक होने की	**हिरण्मयम्**	८.	अपने सुवर्णमय
अन्विच्छन्	७.	इच्छा से	**देवः**	५.	भगवान् नारायण ने
योग	१.	योग	**मायया**	१०.	माया के द्वारा
तल्पात्	२.	निद्रा से	**व्यसृजत्**	१२.	विभक्त किया
समुत्थितः ।	३.	उठकर	**त्रिधा ॥**	११	तीन भागों में

श्लोकार्थ—योग निद्रा से उठकर अद्वितीय भगवान् नारायण ने अनेक होने की इच्छा से अपने सुवर्णमय वीर्य को माया के द्वारा तीन भागों में विभक्त किया ।

चतुर्दश: श्लोक:

अधिदैवमथाध्यात्ममधिभूतमिति प्रभुः ।
यथैकं पौरुषं वीर्यं त्रिधाभिद्यत तच्छृणु ॥१४॥

पदच्छेद—

अधिदैवम् अथ अध्यात्मम्, अधिभूतम् इति प्रभुः ।
यथा एकम् पौरुषम् वीर्यम्, त्रिधा अभिद्यत तद् श्रृणु ॥

शब्दार्थ—

अधिदैवम्	१.	(उन भागों को) अधिदैव	**एकम्**	८.	एक
अथ	३.	और	**पौरुषम्**	७.	विराट् पुरुष के
अध्यात्मम्	२.	अध्यात्म	**वीर्यम्**	९.	वीर्य को
अधिभूतम्	४.	अधिभूत	**त्रिधा**	११.	तीन भागों में
इति	५.	नाम से (कहते हैं)	**अभिद्यत**	१२.	विभक्त किया
प्रभुः ।	६.	भगवान् नारायण ने	**तद्**	१३.	उसे
यथा	१०.	जिस प्रकार	**श्रृणु ॥**	१४.	सुनो

श्लोकार्थ— उन तीनों भागों को अधिदैव, अध्यात्म, और अधिभूत नाम से कहते हैं । हे परीक्षित् ! भगवान् नारायण ने विराट् पुरुष के एक वीर्य को जिस प्रकार तीन भागों में विभक्त किया, उसे सुनो ।

पञ्चदशः श्लोकः

अन्तःशरीर आकाशात् पुरुषस्य विचेष्टतः ।
ओजः सहो बलं जज्ञे ततः प्राणो महानसुः ॥१५॥

पदच्छेद—

अन्तः शरीरे आकाशात्, पुरुषस्य विचेष्टतः ।
ओजः सहः बलम् जज्ञे, ततः प्राणः महान् असुः ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	४.	अन्दर (विद्यमान)	सहः	७	मनोबल (और)
शरीरे	३.	(उसके) शरीर के	बलम्	८.	शारीरिक बल की
आकाशात्	५.	आकाश तत्त्व से	जज्ञे	९.	उत्पत्ति हुई
पुरुषस्य	१.	विराट् पुरुष के	ततः	१०.	तदनन्तर
विचेष्टतः ।	२.	हिलने-डुलने पर	प्राणः	१३.	प्राण उत्पन्न हुआ
ओजः	६.	इन्द्रिय बल	महान्	११.	सबसे
			असुः ॥	१२.	शक्तिशाली

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के हिलने डुलने पर उसके शरीर के अन्दर विद्यमान आकाश तत्त्व से इन्द्रिय बल, मनोबल और शारीरिक बल की उत्पत्ति हुई। तदनन्तर सबसे शक्तिशाली प्राण उत्पन्न हुआ।

षोडशः श्लोकः

अनुप्राणन्ति यं प्राणाः, प्राणन्तं सर्वजन्तुषु ।
अपानन्तमपानन्ति, नरदेवमिवानुगाः ॥१६॥

पदच्छेद—

अनुप्राणन्ति यम् प्राणाः, प्राणन्तम् सर्व जन्तुषु ।
अपानन्तम् अपानन्ति, नरदेवम् इव अनुगाः ॥

शब्दार्थ—

अनुप्राणन्ति	९.	प्रबल होती हैं (और)	अपानन्तम्	१०.	सुस्त होने पर
यम्	७.	जिस (प्राण) के	अपानन्ति	११.	सुस्त पड़ जाती हैं
प्राणाः	६.	इन्द्रियाँ	नरदेवम्	३.	राजा के पीछे-पीछे चलते हैं
प्राणन्तम्	८.	प्रबल होने पर	इव	१.	जैसे
सर्व	४.	(उसी प्रकार) सभी	अनुगाः ॥	२.	सेवक
जन्तुषु ।	५.	जीवों में विद्यमान			

श्लोकार्थ— जैसे सेवक राजा के पीछे-पीछे चलते हैं, उसी प्रकार सभी जीवों में विद्यमान इन्द्रियां जिस प्राण के प्रबल होने पर प्रबल होती हैं और सुस्त होने पर सुस्त पड़ जाती हैं।

सप्तदशः श्लोकः

प्राणेन क्षिपता क्षुत् तृडन्तरा जायते प्रभोः ।
पिपासतो जक्षतश्च प्राङ्मुखं निरभिद्यत ॥१७॥

पदच्छेद—

प्राणेन क्षिपता क्षुत् तृड्, अन्तरा जायते प्रभोः ।
पिपासतः जक्षतः च, प्राक् मुखम् निरभिद्यत ॥

शब्दार्थ—

प्राणेन	१.	प्राण में	**पिपासतः**	१०.	पीने की इच्छा होने पर
क्षिपता	२.	तेज गति होने पर	**जक्षतः**	८.	खाने
क्षुत्	५.	भूख और	**च**	९.	और
तृड्	६.	प्यास का	**प्राक्**	११.	पहले
अन्तरा	४.	अन्दर	**मुखम्**	१२.	मुख
जायते	७.	अनुभव हुआ (तथा)	**निरभिद्यत ॥**	१३.	प्रकट हुआ
प्रभोः ।	३.	विराट् पुरुष के			

श्लोकार्थः—प्राण में तेज गति होने पर विराट् पुरुष के अन्दर भूख और प्यास का अनुभव हुआ तथा खाने और पीने की इच्छा होने पर पहले मुख प्रकट हुआ ।

अष्टादशः श्लोकः

मुखतस्तालु निर्भिन्नं जिह्वा तत्रोपजायते ।
ततो नाना रसो जज्ञे जिह्वया योऽधिगम्यते ॥१८॥

पदच्छेद—

मुखतः तालु निर्भिन्नम्, जिह्वा तत्र उपजायते ।
ततः नाना रसः जज्ञे, जिह्वया यः अधिगम्यते ॥

शब्दार्थ—

मुखतः	१.	(विराट् पुरुष के) मुख से	**ततः**	७.	तदनन्तर
तालु	२.	तालु	**नाना**	८.	अनेक
निर्भिन्नम्	३.	उत्पन्न हुआ और	**रसः**	९.	रसों की
जिह्वा	५.	जीभ	**जज्ञे**	१०.	उत्पत्ति हुई
तत्र	४.	उसमें	**जिह्वया**	१२.	जीभ के
उपजायते ।	६.	उत्पन्न हुई	**यः**	११.	जो
			अधिगम्यते ॥	१३.	विषय हैं

श्लोकार्थ :—विराट् पुरुष के मुख से तालु उत्पन्न हुआ और उसमें जीभ उत्पन्न हुई । तदनन्तर अनेक रसों की उत्पत्ति हुई, जो जीभ के विषय हैं ।

एकोनविंशः श्लोकः

विवक्षोर्मुखतो भूम्नो वह्निर्वाग् व्याहृतं तयोः ।
जले वै तस्य सुचिरं निरोधः समजायत ।।१९।।

पदच्छेद—

विवक्षोः मुखतः भूम्नः, वह्निः वाक् व्याहृतम् तयोः ।
जले वै तस्य सुचिरम्, निरोधः समजायत ।।

शब्दार्थ—

विवक्षोः	१.	बोलने की इच्छा होने पर	जले	१०.	जल में
मुखतः	३.	मुख से	वै	११.	ही
भूम्नः	२.	विराट् पुरुष के	तस्य	८.	(तदनन्तर) उनकी
वह्निः	५.	अग्नि (और)	सुचिरम्	९.	बहुत समय तक
वाक्	४.	वाणी (उसके अधिदेवता)	निरोधः	१२.	स्थिति
व्याहृतम्	७.	बोलने की शक्ति उत्पन्न हुई	समजायत ।।	१३.	बनी रही
तयोः ।	६.	उन दोनों के			

श्लोकार्थ—बोलने की इच्छा होने पर विराट् पुरुष के मुख से वाणी, उसके अधिदेवता अग्नि और उन दोनों के बोलने की क्रिया-शक्ति उत्पन्न हुई । तदनन्तर उनकी बहुत समय तक जल में ही स्थिति बनी रही ।

विंशः श्लोकः

नासिके निरभिद्येतां, दोधूयति नभस्वति ।
तत्र वायुर्गन्धवहो, घ्राणो नसि जिघृक्षतः ।।२०।।

पदच्छेद—

नासिके निरभिद्येताम्, दोधूयति नभस्वति ।
तत्र वायुः गन्धवहः, घ्राणः नसि जिघृक्षतः ।।

शब्दार्थ—

नासिके	३.	नासाछिद्र	वायुः	१०.	(अधिदेवता)वायु (उत्पन्न हुये)
निरभिद्येताम्	४.	प्रकट हुये (उनकी)	गन्धवहः	९.	गन्ध को फैलाने वाले
दोधूयति	२.	वेग से	घ्राणः	८.	घ्राणेन्द्रिय (और)
नभस्वति ।	१.	(विराट् पुरुष के) श्वास के	नसि	७.	नासाछिद्र में
तत्र	६.	उस	जिघृक्षतः ।।	५.	सूंघने की इच्छा होने पर

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के श्वास के वेग से नासाछिद्र प्रकट हुए । उनकी सूंघने की इच्छा होने पर उस नासाछिद्र में घ्राणेन्द्रिय और गन्ध को फैलाने वाले अधिदेवता वायु उत्पन्न हुए ।

एकविंश: श्लोक:

यदाऽऽत्मनि निरालोकमात्मानं च दिदृक्षतः ।
निर्भिन्ने ह्यक्षिणी तस्य ज्योतिश्चक्षुर्गुणग्रहः ॥२१॥

यदा आत्मनि निरालोकम्, आत्मानम् च दिदृक्षतः ।
निर्भिन्ने हि अक्षिणी तस्य, ज्योतिः चक्षुः गुण ग्रहः ॥

१. जब	**हि**	१०.	और
२. (विराट् पुरुष के) शरीर में	**अक्षिणी**	८.	आँखें
३ प्रकाश नहीं था (तब)	**तस्य**	७.	उसकी
४. अपने को	**ज्योतिः**	९.	अधिदेवता सूर्य
५. और (दूसरी वस्तु को)	**चक्षुः**	११.	नेत्रेन्द्रिय
६ देखने की इच्छा होने पर	**गुण**	१३.	रूप का
१२. प्रकट हुई (जिससे)	**ग्रहः ॥**	१४.	ज्ञान होता है

ब विराट् पुरुष के शरीर में प्रकाश नहीं था, तब अपने को और दूसरी वस्तुओं इच्छा होने पर उसकी आँखें, अधिदेवता सूर्य और नेत्रेन्द्रिय प्रकट हुई; जिस त होता है ।

द्वाविंश: श्लोक:

बोध्यमानस्य ऋषिभिरात्मनस्तज्जिघृक्षतः ।
कर्णौ च निरभिद्येतां दिशः श्रोत्रं गुणग्रहः ॥२२॥

बोध्यमानस्य ऋषिभिः, आत्मनः तद् जिघृक्षतः ।
कर्णौ च निरभिद्येताम्, दिशः श्रोत्रम् गुण ग्रहः ॥

२. जगाये जाने पर	**च**	८.	और
१. वेदरूपी ऋषियों से	**निरभिद्येताम्**	१०.	उत्पन्न हुई (जिस
३. विराट् पुरुष को स्वयं	**दिशः**	७.	अधिदेवता दिशायें
४. वह	**श्रोत्रम्**	९.	श्रोत्रेन्द्रिय
५. सुनने की इच्छा हुई (तब)	**गुण**	११.	शब्द का
६. उसके दोनों कान	**ग्रहः ॥**	१२.	श्रवण होता है

रूप ऋषियों से जगाये जाने पर विराट् पुरुष को स्वयम् वह सुनने की इच्छ के दोनों कान, अधिदेवता दिशायें और श्रोत्रेन्द्रिय उत्पन्न हुई; जिससे शब्द है ।

त्रयोविंशः श्लोकः

वस्तुनो मृदुकाठिन्यलघुगुर्वोष्णशीतताम् ।
जिघृक्षतस्त्वङ्‌निर्भिन्ना तस्यां रोममहीरुहाः ।
तत्र चान्तर्बहिर्वातस्त्वचा लब्धगुणो वृतः ॥२३॥

पदच्छेद— वस्तुनः मृदु काठिन्य, लघु गुरु उष्ण शीतताम् ।
जिघृक्षतः त्वक् निर्भिन्ना, तस्याम् रोम महीरुहाः ।
तत्र च अन्तः बहिः वातः, त्वचा लब्ध गुणः वृतः ॥

शब्दार्थ—

वस्तुनः, मृदु	१.	वस्तुओं की, कोमलता	**महीरुहाः ।**	८	पृथ्वी पर वृक्षों के समान
काठिन्य, लघु	२.	कठोरता, हल्कापन	**तत्र**	१३.	उस देह के
गुरु, उष्ण	३.	भारीपन, गर्मी (और)	**च**	१५	और
शीतताम् ।	४.	सर्दी	**अन्तः**	१४.	अन्दर
जिघृक्षतः	५.	जानने की इच्छा होने पर	**बहिः, वातः**	१६.	बाहर, वायु देवता(प्रकट हुये)
त्वक्	६.	(उसके शरीर में) चमड़ी	**त्वचा**	११.	चमड़ी से
निर्भिन्ना	७.	उत्पन्न हुई	**लब्ध**	१८.	ज्ञान होता है
तस्याम्	९.	उस चमड़ी में	**गुणः**	१७.	(जिससे) स्पर्श गुण का
रोम	१०.	रोयें उग आये (तथा)	**वृतः ॥**	१२.	लिपटी हुई

श्लोकार्थ—वस्तुओं की कोमलता, कठोरता, हल्कापन, भारीपन, गर्मी और सर्दी जानने की इच्छा होने पर उस विराट् पुरुष के शरीर में चमड़ी उत्पन्न हुई । पृथ्वी पर वृक्षों के समान उस चमड़ी मे रोयें उग आये तथा चमड़ी से लिपटी हुई उस देह के अन्दर और बाहर वायु देवता प्रकट हुये; जिससे स्पर्श गुण का ज्ञान होता है ।

चतुर्विंशः श्लोकः

हस्तौ रुरुहतुस्तस्य नानाकर्मचिकीर्षया ।
तयोस्तु बलमिन्द्रश्च आदानमुभयाश्रयम् ॥२४॥

पदच्छेद— हस्तौ रुरुहतुः तस्य, नाना कर्म चिकीर्षया ।
तयोः तु बलम् इन्द्रः च, आदानम् उभय आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

हस्तौ	५.	दोनों हाथ	**तु**	७.	तथा
रुरुहतुः	६.	उग आये	**बलम्**	९.	ग्रहण करने की शक्ति
तस्य	४.	उस विराट् पुरुष के	**इन्द्रः**	१०.	इन्द्र देवता
नाना	१.	अनेक प्रकार के	**च**	११.	और
कर्म	२.	कर्म	**आदानम्**	१४.	लेने-देने की क्रिया शक्ति हुई
चिकीर्षया ।	३.	करने की इच्छा से	**उभय**	१२.	दोनों के
तयोः	८.	उन दोनों में	**आश्रयम् ॥**	१३.	सहारे

श्लोकार्थ—अनेक प्रकार के कर्म करने की इच्छा से उस विराट् पुरुष के दोनों हाथ उग आये तथा उन दोनों में ग्रहण करने की शक्ति इन्द्र देवता और दोनों के सहारे लेने-देने की क्रिया शक्ति उत्पन्न हुई

पञ्चविंशः श्लोकः

गतिं जिगीषतः पादौ रुरुहातेऽभिकामिकाम् ।
पद्भ्यां यज्ञः स्वयं हव्यं कर्मभिः क्रियते नृभिः ।।२५।।

गतिम् जिगीषतः पादौ, रुरुहाते अभिकामिकाम् ।
पद्भ्याम् यज्ञः स्वयम् हव्यम्, कर्मभिः क्रियते नृभिः ।।

२.	जाने की	यज्ञः	८.	यज्ञ पुरुष विष्णु दे (प्रकट हुये)
३.	इच्छा होने पर			
४.	दोनों चरण	स्वयम्	७	साक्षात्
५.	उत्पन्न हुये	हव्यम्	११.	यज्ञ सामग्री
गम् । १.	विराट् पुरुष को	कर्मभिः	१०.	चलकर
	(अभीष्ट स्थान पर)	क्रियते	१२.	एकत्रित करता है
६.	दोनों चरणों के साथ	नृभिः ।।	९.	मनुष्य (जिससे)

विराट् पुरुष को अभीष्ट स्थान पर जाने की इच्छा होने पर दोनों चरण उत्पन्न दोनों चरणों के साथ साक्षात् यज्ञ पुरुष विष्णु देवता प्रकट हुये: मनुष्य जिससे च सामग्री एकत्रित करता है ।

षड्विंशः श्लोकः

निरभिद्यत शिश्नो वै प्रजानन्दामृतार्थिनः ।
उपस्थ आसीत् कामानां प्रियं तदुभयाश्रयम् ।।२६।।

निरभिद्यत शिश्नः वै, प्रजा आनन्द अमृत अर्थिनः ।
उपस्थः आसीत् कामानाम्, प्रियम् तद् उभय आश्रयम् ।।

७.	उत्पन्न हुआ	उपस्थः	८.	(उसमें) जननेन्द्रिय
६.	लिङ्ग	आसीत्	९.	प्रकट हुई (तथा)
५.	विराट् पुरुष में	कामानाम्	१३.	काम
१.	सन्तान	प्रियम्	१४.	सुख (प्रकट हुआ)
२.	रति सुख (और)	तद्	१०.	उन
३.	स्वर्ग की	उभय	११.	दोनों के
४.	कामना से	आश्रयम् ।।	१२.	सहारे होने वाला

सन्तान, रति सुख और स्वर्ग की कामना से विराट् पुरुष में लिङ्ग उत्पन्न हुआ उ नेन्द्रिय प्रकट हुई तथा उन दोनों के सहारे होने वाला काम सुख प्रकट हुआ ।

सप्तविंशः श्लोकः

उत्तिसृक्षोर्धातुमलं निरभिद्यत वै गुदम् ।
ततः पायुस्ततो मित्र उत्सर्ग उभयाश्रयः ।।२७।।

उत्तिसृक्षोः धातु मलम्, निरभिद्यत वै गुदम् ।
ततः पायुः ततः मित्रः, उत्सर्गः उभय आश्रयः ।।

४. त्याग की इच्छा होने पर	ततः, पायुः	७.	उससे, गुदा इन्द्रिय
२. शरीरिक	ततः	८.	और
३. मल के	मित्रः	९.	मित्र देवता
६. उत्पन्न हुआ	उत्सर्गः	१०.	उत्पन्न हुये
१. उस विराट पुरुष की	उभय	११.	उन दोनों के
५. गुदाद्वार	आश्रयः ।।	१२.	सहारे (मल त्याग की क्रिया होती है)

स विराट् पुरुष की शरीरिक मल के त्याग की इच्छा होने पर गुदाद्वार उत्पन्न हुआ, सो गुदा इन्द्रिय और मित्र देवता उत्पन्न हुये । उन दोनों के सहारे मल-त्याग की क्रिया ती है ।

अष्टाविंशः श्लोकः

आसिसृप्सोः पुरः पुर्या नाभिद्वारमपानतः ।
तत्रापानस्ततो मृत्युः पृथक्त्वमुभयाश्रयम् ।।२८।।

आसिसृप्सोः पुरः पुर्याः, नाभिद्वारम् अपानतः ।
तत्र अपानः ततः मृत्युः, पृथक्त्वम् उभय आश्रयम् ।।

४. प्रवेश करने की इच्छा होने पर	अपानः	७.	अपान वायु
३. दूसरे शरीर में	ततः	८.	और
२. एक शरीर से	मृत्युः	९.	मृत्यु देवता (प्रकट हुये)
५. नाभिद्वार (उत्पन्न हुआ)	पृथक्त्वम्	१२.	प्राण और अपान का बिछो
१. (पुरुष को) अपान मार्ग के द्वारा	उभय	१०.	उन दोनों के
६. उसमें	आश्रयम् ।।	११.	सहारे से

विराट् पुरुष को अपान मार्ग के द्वारा एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करने की इच्छ होने पर नाभिद्वार उत्पन्न हुआ, उसमें अपान वायु और मृत्यु देवता प्रकट हुये । उन दोन के सहारे से प्राण और अपान का बिछोह होता है ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

आदित्सोरन्नपानानामासन् कुक्ष्यन्त्रनाडयः ।
नद्यः समुद्राश्च तयोस्तुष्टिः पुष्टिस्तदाश्रये ॥२९॥

आदित्सोः अन्न पानानाम्, आसन् कुक्षि अन्त्र नाडयः ।
नद्यः समुद्राः च तयोः, तुष्टिः पुष्टिः तद आश्रये ॥

३. ग्रहण करने की इच्छा होने पर		नद्यः	८.	नदी
		समुद्राः	१०.	देवता समुद्र
१. (विराट् पुरुष को) अन्न और		च	९.	और (उनके)
२. जल		तयोः	१२.	उन दोनों का विष
७. उत्पन्न हुईं		तुष्टिः	१३.	तृप्ति (और)
४. कोख		पुष्टिः	१४.	पोषण प्रकट हुये
५. आँतें (और)		तद्, आश्रये ॥	११.	उनके, सहारे
६. नाडियाँ				

ाट् पुरुष को अन्न और जल ग्रहण करने की इच्छा होने पर कोख, आँतें औ
न्न हुईं। उनके साथ नदी और उनके देवता समुद्र और उनके सहारे उन दोनो
त तथा पोषण प्रकट हुये।

त्रिंशः श्लोकः

निदिध्यासोरात्ममायां हृदयं निरभिद्यत ।
ततो मनस्ततश्चन्द्रः संकल्पः काम एव च ॥३०॥

निदिध्यासोः आत्म मायाम्, हृदयम् निरभिद्यत ।
ततः मनः ततः चन्द्रः, संकल्पः कामः एव च ॥

३. विचार करने की इच्छा की तब	ततः	८.	उससे
१. (जब उन्होंने) अपनी	चन्द्रः	९.	अधिदेवता चन्द्र (
२. माया पर	संकल्पः	१०.	संकल्प
४. (उनका) हृदय	कामः	१२.	कामना
५. उत्पन्न हुआ	एव	१३.	(उसका) कार्य है
६. उससे	च ॥	११.	और
७. मन (और)			

उन्होंने अपनी माया पर विचार करने की इच्छा की, तब उनका हृदय उत्
से मन और उससे अधिदेवता चन्द्रमा प्रकट हुए। संकल्प और कामना उसका

एकत्रिंश: श्लोक:

त्वक्‌चर्ममांसरुधिरमेदोमज्जास्थिधातवः ।
भूम्यप्तेजोमयाः सप्त प्राणो व्योमाम्बुवायुभिः ॥३१॥

त्वक् चर्म मांस रुधिर, मेदः मज्जा अस्थि धातवः ।
भूमि अप तेजोमयाः सप्त, प्राणः व्योम अम्बु वायुभिः ॥

१	त्वचा	**भूमि**	१०.	पृथ्वी
२	चमड़ी	**अप**	११.	जल (और)
३	मांस	**तेजोमयाः**	१२.	तेज से निर्मित है
४	रुधिर	**सप्त**	८.	ये सात
५	मेदा	**प्राणः**	१६.	प्राण (उत्पन्न हुअ
६.	वसा	**व्योम**	१३.	आकाश
७	हड्डी	**अम्बु**	१४.	जल (और)
६	शारीरिक धातुयें	**वायुभिः ॥**	१५.	वायु से

ा, चमड़ी, मास, रुधिर, मेदा वसा, हड्डी, ये सात शारीरिक धातुयें पृथ्वी से निर्मित हैं तथा आकाश, जल और वायु से प्राण उत्पन्न हुआ है।

द्वात्रिंश: श्लोक:

गुणात्मकानीन्द्रियाणि भूतादिप्रभवा गुणाः ।
मनः सर्वविकारात्मा बुद्धिर्विज्ञानरूपिणी ॥३२॥

गुण आत्मकानि इन्द्रियाणि, भूत आदि प्रभवाः गुणाः ।
मनः सर्व विकार आत्मा, बुद्धिः विज्ञान रूपिणी ॥

२.	शब्दादि गुणों को	**मनः**	८.	मन
३	ग्रहण करती हैं	**सर्व, विकार**	६.	सभी, विकारो क
१.	श्रोत्रादि सभी इन्द्रियाँ	**आत्मा**	१०.	कारण है (और)
५	पञ्चमहाभूतों का	**बुद्धिः**	११.	बुद्धि
६	कारण अहंकार से	**विज्ञान**	१२.	पदार्थों का ज्ञान
७.	उत्पन्न हुये हैं	**रूपिणी ॥**	१३.	कराने वाली है
४	शब्दादि गुण			

ादि सभी इन्द्रियां शब्दादि गुणों को ग्रहण करती हैं। शब्दादि गुण पञ्च-महाभूत ार से उत्पन्न हुये हैं। मन सभी विकारों का कारण है और बुद्धि पदा ने वाली है।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

एतद्भगवतो रूपं स्थूलं ते व्याहृतं मया ।
मह्यादिभिश्चावरणैरष्टभिर्बहिरावृतम् ॥३३॥

एतद् भगवतः रूपम्, स्थूलम् ते व्याहृतम् मया ।
मही आदिभिः च आवरणैः, अष्टभिः बहिः आवृतम् ॥

इस	मही	१०.	पृथ्वी (जल, तेज, आकाश, अहंकार, और प्रकृति)
विराट् भगवान् के			
रूप को			
विशाल	आदिभिः	११.	इन
तुम्हें	च	८.	यह
सुनाया	आवरणैः	१३.	आवरणों से
मैंने	अष्टभिः	१२.	आठ
	बहिः	९.	बाहर से
	आवृतम् ।	१४.	ढका है

ट् भगवान् के विशाल रूप को मैंने तुम्हें सुनाया; यह बाहर से पृथ्वी, जल
काश, अहंकार, बुद्धि और प्रकृति इन आठ आवरणों से ढका है।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अतः परं सूक्ष्मतममव्यक्तं निर्विशेषणम् ।
अनादिमध्यनिधनं नित्यं वाङ्मनसः परम् ॥३४॥

अतः परम् सूक्ष्मतमम्, अव्यक्तम् निर्विशेषणम् ।
अनादि मध्य निधनम्, नित्यम् वाक् मनसः परम् ॥

इससे	मध्य	७.	मध्य (और)
परे (भगवान् का जो)	निधनम्	८.	अन्त से रहित (तथा)
अति सूक्ष्म रूप है (वह)	नित्यम्	९.	तीनों कालों में सत्य है
नहीं दिखाई देने वाला।	वाक्	१०.	वाणी (और)
विशेष धर्मों से हीन	मनसः	११.	मन से भी
आदि	परम् ॥	१२.	उसका वर्णन नहीं हो

भगवान् का जो अति सूक्ष्म रूप है, वह नहीं दिखाई देने वाला, विशेष धर्मों से
य और अन्त से रहित तथा तीनों कालों में सत्य है। वाणी और मन से भी
। हो सकता है।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अमुनी भगवद्रूपे मया ते अनुवर्णित।
उभे अपि न गृह्णन्ति मायासृष्टे विपश्चितः ॥३५॥

पदच्छेद—

अमुनी भगवद् रूपे, मया ते अनुवर्णिते।
उभे अपि न गृह्णन्ति, माया सृष्टे विपश्चितः ॥

शब्दार्थ—

अमुनी	४. इन दोनों		उभे	१०.	इन दोनों
भगवद्	३. भगवान् के		अपि	११.	ही रूपों को
रूपे	५. रूपों का		न	१२.	नहीं
मया	१. मैंने		गृह्णन्ति	१३	स्वीकार करते हैं
ते	२. तुम्हें		माया	८	माया से
अनुवर्णिते।	६- वर्णन सुनाया है		सृष्टे	९.	रचित
			विपश्चितः ॥	७.	विद्वद् जन

श्लोकार्थ—मैंने तुम्हें भगवान् के इन दोनों ही रूपों का वर्णन सुनाया है। विद्वद् जन माया से रचित इन दोनों ही रूपों को स्वीकार नहीं करते हैं।

षट्त्रिंशः श्लोकः

स वाच्यवाचकतया भगवान् ब्रह्मरूपधृक्।
नामरूपक्रिया धत्ते सकर्माकर्मकः परः ॥३६॥

पदच्छेद—

सः वाच्य वाचकतया, भगवान् ब्रह्मरूप धृक्।
नाम रूप क्रियाः धत्ते, सकर्म अकर्मकः परः ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वे	नामरूप	१०.	नाम रूप (और)
वाच्य	६. अर्थ (और)	क्रियाः	११.	क्रिया को
वाचकतया	७. शब्द के रूप में	धत्ते	१२.	धारण करते हैं
भगवान्	२. भगवान्	सकर्म	५.	क्रियाशील होते हैं
ब्रह्म रूप	८. विराट् पुरुष का रूप	अकर्मकः	४.	निष्क्रिय हैं (अपनी शक्ति से)
धृकः।	९. धारण करके	परः ॥	३.	वस्तुतः

श्लोकार्थ—वे भगवान् वस्तुतः निष्क्रिय हैं, अपनी शक्ति से क्रियाशील होते हैं। वे अर्थ और शब्द के रूप में विराट पुरुष का रूप धारण करके नाम, रूप और क्रिया को धारण करते हैं।

सप्तत्रिंश: श्लोक:

प्रजापतीन्मनून् देवानृषीन् पितृगणान् पृथक् ।
सिद्धचारणगन्धर्वान् विद्याध्रासुरगुह्यकान् ॥३७॥

पदच्छेद—

प्रजापतीन् मनून् देवान्, ऋषीन् पितृ गणान् पृथक् ।
सिद्ध चारण गन्धर्वान्, विद्याध्रा असुर गुह्यकान् ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतीन्	१.	प्रजापति	**सिद्ध**	६.	सिद्ध
मनून्	२.	मनु	**चारण**	७.	चारण
देवान्	३.	देवता	**गन्धर्वान्**	८.	गन्धर्व
ऋषीन्	४.	ऋषि	**विद्याध्रा**	९.	विद्याधर
पितृ गणान्	५.	पितर गण	**असुर**	१०.	असुर (और)
पृथक् ।	१२.	अलग-अलग (भगवान् के रूप हैं)	**गुह्यकान् ॥**	११.	यक्ष (ये)

श्लोकार्थ—प्रजापति, मनु, देवता, ऋषि, पितर गण, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, विद्याधर, असुर और यक्ष, ये अलग-अलग भगवान् के रूप हैं ।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

किन्नराप्सरसो नागान् सर्पान् किम्पुरुषोरगान् ।
मातृ रक्षःपिशाचांश्च प्रेतभूतविनायकान् ॥३८॥

पदच्छेद—

किन्नर अप्सरसः नागान्, सर्पान् किम्पुरुष उरगान् ।
मातृः रक्षः पिशाचान् च, प्रेत भूत विनायकान् ॥

शब्दार्थ—

किन्नर	१.	किन्नर	**मातृः**	७.	मातृकायें
अप्सरसः	२.	अप्सरायें	**रक्षः**	८.	राक्षस
नागान्	३.	नाग	**पिशाचान्**	९.	पिशाच
सर्पान्	४.	सर्प	**च**	१३.	ये सब भगवान् के रूप हैं
किम्पुरुष	५.	किम्पुरुष	**प्रेत**	१०.	प्रेत
उरगान् ।	६.	उरग	**भूत**	११.	भूत (और)
			विनायकान् ॥	१२.	विनायक

श्लोकार्थ—किन्नर, अप्सरायें, नाग, सर्प, किम्पुरुष, उरग, मातृकायें, राक्षस, पिशाच, प्रेत, भूत और विनायक; ये सब भगवान् के रूप हैं ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कूष्माण्डोन्मादवेतालान् यातुधानान् ग्रहानपि ।
खगान्मृगान् पशून् वृक्षान् गिरीन्नृप सरीसृपान् ॥३९॥

पदच्छेद—

कूष्माण्ड उन्माद वेतालान्, यातुधानान् ग्रहान् अपि ।
खगान् मृगान् पशून् वृक्षान्, गिरीन् नृप सरीसृपान् ॥

शब्दार्थ—

कूष्माण्ड	२.	कूष्माण्ड	खगान्	७.	पक्षी
उन्माद	३.	उन्माद	मृगान्	८.	मृग
वेतालान्	४.	वेताल	पशून्	९.	पशु
यातुधानान्	५.	यातुधान	वृक्षान्	१०	वृक्ष
ग्रहान्	६.	ग्रह	गिरीन्	११.	पर्वत (और)
अपि ।	१३.	भी (भगवान् के रूप हैं)	नृप	१.	हे राजन् !
			सरीसृपान् ॥	१२.	सरीसृप (ये सब)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कूष्माण्ड, उन्माद, वेताल, यातुधान, ग्रह, पक्षी, मृग, पशु, वृक्ष, पर्वत और सरीसृप ये सब भी भगवान् के रूप हैं।

चत्वारिंशः श्लोकः

द्विविधाश्चतुर्विधा येऽन्ये जलस्थलनभौकसः ।
कुशलाकुशला मिश्राः कर्मणां गतयस्त्विमाः ॥४०॥

पदच्छेद—

द्विविधाः चतुर्विधाः ये अन्ये, जल स्थल नभ ओकसः ।
कुशल अकुशलाः मिश्राः, कर्मणाम् गतयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

द्विविधाः	२.	दो प्रकार के (चर और अचर)	कुशल	११.	शुभ
चतुर्विधाः	३.	चार प्रकार के	अकुशलाः	१२.	अशुभ (और)
ये	१.	जो	मिश्राः	१३.	मिश्रित
अन्ये	४.	जितने (भी)	कर्मणाम्	१४.	कर्मों के
जल	५.	जलचर	गतयः	१५.	फल हैं
स्थल	६.	थलचर	तु	१०.	तो
नभ	७.	नभ चर	इमाः ॥	९.	ये सब
ओकसः ।	८.	जीव हैं			

श्लोकार्थ—जो दो प्रकार के चर और अचर तथा चार प्रकार के जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उदिभज् जितने भी जलचर, थलचर और नभचर जीव हैं, ये सब तो शुभ, अशुभ और मिश्रित कर्मों के फल हैं।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

सत्त्वं रजस्तम इति त्रिस्रः सुरनृनारकाः ।
तत्राप्येकैकशो राजन् भिद्यन्ते गतयस्त्रिधा ।
यदैकैकतरोऽन्याभ्यां स्वभाव उपहन्यते ॥४१॥

सत्त्वम् रजः तमः इति, त्रिस्रः सुर नृ नारकाः ।
तत्र अपि एकैकशः राजन्, भिद्यन्ते गतयः त्रिधा ।
यदा एकैकतरः अन्याभ्याम्, स्वभावः उपहन्यते ॥

२.	सत्त्वगुण	राजन्	१.	हे परीक्षित !
३.	रजोगुण और तमोगुण के	भिद्यन्ते	१४.	भेद हो जाते हैं
४.	भेद से	गतयः, त्रिधा	१३.	योनि के, तीन प्रकार के
६.	तीन (योनियाँ हैं)	यदा, एकैकतरः	८.	जब, एक-एक गुण का
५.	देवता, मनुष्य और नारकीय	अन्याभ्याम्	१०.	दूसरे दो गुणों से
७.	उनमें, भी	स्वभावः	९.	स्वभाव
१२.	प्रत्येक	उपहन्यते ॥	११.	दब जाता है (तब)

परीक्षित ! सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण के भेद से देवता, मनुष्य और नारकीय
नियाँ हैं । उनमें भी जब एक-एक गुण का स्वभाव दूसरे दो गुणों से दब जाता है तब प्र
ोनि के तीन प्रकार के भेद और हो जाते हैं ।

द्विचत्वारिंश: श्लोक:

स एवेदं जगद्धाता भगवान् धर्मरूपधृक् ।
पुष्णाति स्थापयन् विश्वं तिर्यङ्नरसुरात्मभिः ॥४२॥

सः एव इदम् जगत् धाता, भगवान् धर्मरूप धृक् ।
पुष्णाति स्थापयन् विश्वम्, तिर्यक् नर सुर आत्मभिः ॥

१.	वे	पुष्णाति	१४.	पालन-पोषण करते हैं
२.	ही	स्थापयन्	१३.	रक्षा करते हुये (उसका)
४.	इस	विश्वम्	१२.	संसार की
५.	संसार को	तिर्यक्	१०.	पशु-पक्षी के
६.	धारण करने के लिये	नर	९.	मनुष्य और
३.	भगवान्	सुर	८.	देवता
७.	धर्म स्वरूप विष्णु का रूप	आत्मभिः ॥	११.	रूप में अवतार लेते हैं (त
८.	धारण करते हैं			

ही भगवान् इस संसार को धारण करने के लिये धर्म स्वरूप विष्णु का रूप धारण करते
वता, मनुष्य और पशु-पक्षी के रूप में अवतार लेते हैं तथा संसार की रक्षा करते हुये उ
ालन-पोषण करते हैं ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

ततः कालाग्निरुद्रात्मा यत्सृष्टमिदमात्मनः ।
संनियच्छति कालेन घनानीकमिवानिलः ।।४३।।

पदच्छेद—

ततः कालाग्निः रुद्र आत्मा, यत् सृष्टम् इदम् आत्मनः ।
सन्नियच्छति कालेन, घन अनीकम् इव अनिलः ।।

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके बाद	सन्नियच्छति	९.	संहार करते हैं
कालाग्नि, रुद्र	३.	कालरूप, रूद्र का	**कालेन**	२.	प्रलयकाल के समय (वे)
आत्मा	४.	स्वरूप धारण करके			
यत्	७.	जो	घन	१२.	बादलों के
सृष्टम्	६.	रचित	अनीकम्	१३.	झुण्ड को (हटा देता है)
इदम्	८.	यह विश्व है (उसका)	इव	१०	जैसे
आत्मनः ।	५.	अपने से	अनिलः ।।	११.	वायु

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रलय काल के समय वे भगवान् कालरूप रुद्र का स्वरूप धारण करके अपने से रचित जो यह विश्व है, उसका संहार करते हैं। जैसे वायु बादलो के झुण्ड को हटा देता है।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इत्थंभावेन कथितो भगवान् भगवत्तमैः ।
नेत्थंभावेन हि परं द्रष्टुमर्हन्ति सूरयः ।।४४।।

पदच्छेद—

इत्थम् भावेन कथितः, भगवान् भगवत्तमैः ।
न इत्थम् भावेन हि परम्, द्रष्टुम् अर्हन्ति सूरयः ।।

शब्दार्थ—

इत्थम्	३.	इसी	**इत्थम्**	८.	इसी
भावेन	४.	रूप में	**भावेन**	९.	रूप में
कथितः	५.	वर्णन किया है	**हि**	१३.	क्योंकि (वे इससे परे हैं)
भगवान्	२.	भगवान् का	**परम्**	६.	किन्तु
भगवत्तमैः ।	१.	महात्माओं ने	**द्रष्टुम्**	११.	देखना
न	१०.	नहीं	**अर्हन्ति**	१२.	चाहते हैं
			सूरयः ।।	७.	ज्ञानी जन (उन्हें)

श्लोकार्थ—महात्माओं ने भगवान् का इसी रूप में वर्णन किया है, किन्तु ज्ञानी जन उन्हें इसी रूप में नहीं देखना चाहते हैं; क्योंकि वे भगवान् इससे भी परे हैं।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

नास्य कर्मणि जन्मादौ परस्यानुविधीयते ।
कर्तृत्वप्रतिषेधार्थं माययारोपितं हि तत् ॥४५॥

न अस्य कर्मणि जन्म आदौ, परस्य अनुविधीयते ।
कर्तृत्व प्रतिषेधार्थम्, मायया आरोपितम् हि तत् ॥

नहीं	कर्तृत्व	८.	कर्तापन का
इस	प्रतिषेधार्थम्	९.	निषेध करने के लिये
कर्म से	मायया	११.	माया के द्वारा
जगत् की सृष्टि	आरोपितम्	१३.	आरोप किया गया है
पालन और संहार रूप	हि	१०.	ही
परमात्मा का (सम्बन्ध)	तत् ॥	१२.	उस सम्बन्ध का
जोड़ा गया है (वरन)			

सृष्टि, पालन और संहाररूप कर्म से इस परमात्मा का सम्बन्ध नहीं जो
कर्तापन का निषेध करने के लिये ही माया के द्वारा उस सम्बन्ध का आरोप

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

अयं तु ब्रह्मणः कल्पः सविकल्प उदाहृतः ।
विधिः साधारणो यत्र सर्गाः प्राकृतवैकृताः ॥४६॥

अयम् तु ब्रह्मणः कल्पः, सविकल्पः उदाहृतः ।
विधिः साधारणः यत्र, सर्गाः प्राकृत वैकृताः ॥

यह (मैंने)	विधिः	७.	सृष्टि का क्रम
किन्तु (महाकल्प में)	साधारणः	८.	एक सा है
ब्रह्मा के	यत्र	६.	इन दोनों कल्पों मे
महाकल्प का	सर्गाः	१२.	सृष्टि होती है
बीच के कल्प के साथ	प्राकृत	१०	प्रकृति से लेकर
वर्णन किया है	वैकृताः ॥	११.	चराचर प्राणियों तक

ह्मा के महाकल्प का, बीच के कल्प के साथ वर्णन किया है। इन दोनो क
क्रम एकसा है। किन्तु महाकल्प में प्रकृति से लेकर चराचर प्राणियों तक क

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

परिमाणं च कालस्य कल्पलक्षणविग्रहम् ।
यथा पुरस्ताद् व्याख्यास्ये पाद्मं कल्पमथो शृणु ॥४७॥

पदच्छेद—

परिमाणम् च कालस्य, कल्प लक्षण विग्रहम् ।
यथा पुरस्ताद् व्याख्यास्ये, पाद्मम कल्पम् अथो शृणु ॥

शब्दार्थ—

परिमाणम्	२.	माप का	यथा	७.	क्रम से
च	३.	और	पुरस्ताद्	८.	आगे
कालस्य	१.	काल के	व्याख्यास्ये	९.	वर्णन करूँगा
कल्प	४.	कल्प के	पाद्मम्	११.	पाद्म
लक्षण	५.	स्वरूप (एवं)	कल्पम्	१२.	कल्प का
विग्रहम् ।	६.	मन्वन्तरों का	अथो	१०.	अब (आप)
			शृणु ॥	१३.	वर्णन सुनें

श्लोकार्थ—काल के माप का और कल्प के स्वरूप एवं मन्वन्तरों का क्रम से आगे वर्णन करूँगा । अब आप पाद्म-कल्प का वर्णन सुनें ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

शौनक उवाच—

यदाह नो भवान् सूत क्षत्ता भागवतोत्तमः ।
चचार तीर्थानि भुवस्त्यक्त्वा बन्धून् सुदुस्त्यजान् ॥४८॥

पदच्छेद—

यद आह नः भवान् सूत, क्षत्ता भागवत उत्तमः ।
चचार तीर्थानि भुवः, त्यक्त्वा बन्धून् सुदुस्त्यजान् ॥

शब्दार्थ—

यद्	५.	कि	उत्तमः ।	६.	परम
आह	४.	कहा है	चचार	१४.	भ्रमण किया था
नः	३.	हमसे	तीर्थानि	१३.	तीर्थों में
भवान्	२.	आपने	भुवः	१२.	पृथ्वी के
सूत	१.	हे सूत जी !	त्यक्त्वा	११.	छोड़कर
क्षत्ता	८.	विदुर जी ने	बन्धून्	१०.	कुटुम्बियों को
भागवत	७.	भगवद् भक्त	सुदुस्त्यजान् ॥	९.	अत्यन्त प्रेमी

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आपने हमसे कहा है कि परम भगवद् भक्त विदुर जी ने अत्यन्त प्रेमी कुटुम्बियों को छोड़कर पृथ्वी के तीर्थों में भ्रमण किया था ।

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

कुत्र कौषारवेस्तस्य संवादोऽध्यात्मसंश्रितः ।
यद्वा स भगवांस्तस्मै पृष्टस्तत्त्वमुवाच ह ।।४९।।

कुत्र कौषारवेः तस्य, संवादः अध्यात्म संश्रितः ।
यद् वा सः भगवान् तस्मै, पृष्टः तत्त्वम् उवाच ह ।।

कहाँ पर हुई थी	वा	७.	तथा
मैत्रेय जी के साथ	सः, भगवान्	८.	उन, भगवान् मैत
उन विदुर जी को	तस्मै	९.	उन विदुर जी के
बात-चीत	पृष्टः	१०.	पूछने पर (किस)
अध्यात्म तत्त्व के	तत्त्वम्	१२.	तत्त्व का
सम्बन्ध में	उवाच	१३.	वर्णन किया
किस	ह ।।	१४.	था

के साथ अध्यात्म तत्त्व के सम्बन्ध में उन विदुर जी की बातचीत कहाँ
भगवान् मैत्रेय जी ने उन विदुर जी के पूछने पर किस तत्त्व का वर्णन कि

पञ्चाशः श्लोकः

ब्रूहि नस्तदिदं सौम्य विदुरस्य विचेष्टितम् ।
बन्धुत्यागनिमित्तं च तथैवागतवान् पुनः ।।५०।।

ब्रूहि नः तद् इदम् सौम्य, विदुरस्य विचेष्टितम् ।
बन्धु त्याग निमित्तम् च, तथैव आगतवान् पुनः ।।

वर्णन करें (उन्होंने)	बन्धु	८.	कुटुम्बियों को
हम लोगों से	त्याग	१०.	छोड़ा था
उस	निमित्तम्	९.	किस कारण से
अब	च	११.	और
साधु स्वभाव हे सूत जी !	तथैव	१३.	उसी प्रकार
विदुर जी के	आगतवान्	१४.	लौट आये
चरित्र का	पुनः ।।	१२.	फिर से (क्यों)

ाव हे सूत जी ! अब विदुर जी के उस चरित्र का हम लोगों से वर्णन क
को किस कारण से छोड़ा था और फिर से क्यों उसी प्रकार लौट आये

एकपञ्चाशः श्लोकः

राज्ञा परीक्षिता पृष्टो यदवोचन्महामुनिः ।
तद्वोऽभिधास्ये शृणुत राज्ञः प्रश्नानुसारतः ।।५१।।

राज्ञा परीक्षिता पृष्टः, यद् अवोचत् महामुनिः ।
तद् वः अभिधास्ये शृणुत, राज्ञः प्रश्न अनुसारतः ।।

१	राजा	तद्, वः	१०.	उसे, आ
२.	परीक्षित् के	अभिधास्ये	११.	बताऊँगा।
३	प्रश्न करने पर	शृणत	१२.	सुनें
५	जो	राज्ञः	७.	राजा के
६	उत्तर दिया था	प्रश्न	८.	प्रश्न के
४.	श्री शुकदेव मुनि ने	अनुसारतः ।।	९.	अनुसार

: परीक्षित् के प्रश्न करने पर श्री शुकदेव मुनि ने जो उत्तर दिया था,
ार उसे आप लोगों को बताऊँगा, सुनें।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
प्रश्नविधिर्नाम दशमः अध्यायः ।।१०।।

इति द्वितीयः स्कन्धः परिपूर्णः

ॐ ॐ ॐ
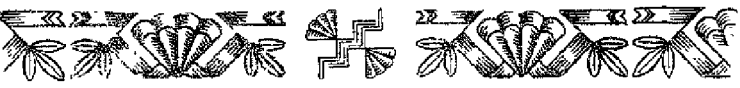
श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

तृतीयः स्कन्धः

सर्वेश्वरं हरिं कृष्णं भक्तिगम्यं परात्परम् ।
वन्दे भक्तिप्रदं नित्यं मायाध्वान्तनिवारकम् ॥
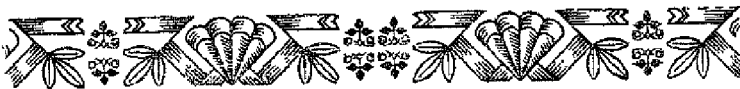
ॐ तत्सत्

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

तृतीयः स्कन्धः

अथ प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

एवमेतत् पुरा पृष्टो मैत्रेयो भगवान् किल ।
क्षत्त्रा वनं प्रविष्टेन त्यक्त्वा स्वगृहमृद्धिमत् ॥१॥

एवम् एतत् पुरा पृष्टः, मैत्रेयः भगवान् किल ।
क्षत्त्रा वनम् प्रविष्टेन, त्यक्त्वा स्व गृहम् ऋद्धिमत् ॥

१२ इसी प्रकार		क्षत्त्रा	६.	विदुर जी ने
१३. यह प्रश्न		वनम्	७.	वन में
१. पहले की		प्रविष्टेन	८.	गये हुये
१४. किया था		त्यक्त्वा	६.	छोड़कर
११. मैत्रेय जी से		स्व	४.	अपने
१० भगवान्		गृहम्	५.	घर को
२ बात है (कि)		ऋद्धिमत् ॥	३.	धन-धान्य से सम्पन्न

शुकदेव जी कहते हैं, हे परीक्षित् ! पहले की बात है कि धन-धान्य से सम्पन्न अ
छोड़कर वन में गये हुये विदुर जी ने भगवान् मैत्रेय जी से इसी प्रकार य
या था ।

द्वितीयः श्लोकः

यद्वा अयं मन्त्रकृद्वो भगवानखिलेश्वरः ।
पौरवेन्द्रगृहं हित्वा प्रविवेशात्मसात्कृतम् ॥२॥

यद् वा अयम् मन्त्रकृत् वः, भगवान् अखिल ईश्वरः ।
पौरवेन्द्र गृहम् हित्वा, प्रविवेश आत्मसात् कृतम् ॥

५ जब	पौरवेन्द्र	८.	दुर्योधन के
३. ये	गृहम्	६.	घर को
७. दूत बनकर गये थे (तब)	हित्वा	१०.	छोड़कर (उन्होंने)
६. आप लोगों का	प्रविवेश	११.	(विदुर जी के घर में) किया था
४. भगवान् श्री कृष्ण			
१. सब के	आत्मसात्	१२.	(और उन्हें) अपना
२. स्वामी	कृतम्	१३.	बनाया था

के स्वामी ये भगवान् श्री कृष्ण जब आप लोगों का दूत बन कर गये थे, तब दु
: को छोड़कर उन्होंने विदुर जी के घर में निवास किया था और उन्हें अपना बना

तृतीयः श्लोकः

राजोवाच—

कुत्र क्षत्तुर्भगवता मैत्रेयेणास सङ्गमः ।
कदा वा सह संवाद एतद्वर्णय नः प्रभो ॥३॥

पदच्छेद—

कुत्र क्षत्तुः भगवता, मैत्रेयेण आस सङ्गमः ।
कदा वा सह संवादः, एतद् वर्णय नः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

कुत्र	५.	कहाँ पर	वा	८.	और
क्षत्तुः	२.	विदुर जी की	सह	१०.	उनके साथ
भगवता	३.	भगवान्	संवादः	११.	बातचीत (हुई थी)
मैत्रेयेण	४.	मैत्रेय जी के साथ	एतद्	१२.	यह
आस	७.	हुई थी	वर्णय	१४.	बताइये
सङ्गमः ।	६.	भेंट	नः	१३.	हमें
कदा	९.	कब	प्रभो ।	१.	हे स्वामी

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् ने कहा, हे स्वामी ! विदुर जी की भगवान् मैत्रेय जी के साथ कहाँ पर भेंट हुई थी और कब उनके साथ बातचीत हुई थी ? यह हमें बताइये ।

चतुर्थः श्लोकः

न ह्यल्पार्थोदयस्तस्य विदुरस्यामलात्मनः ।
तस्मिन् वरीयसि प्रश्नः साधुवादोपबृंहितः ॥४॥

पदच्छेद—

न हि अल्प अर्थ उदयः तस्य, विदुरस्य अमल आत्मनः ।
तस्मिन् वरीयसि प्रश्नः, साधुवाद उपबृंहितः ॥

शब्दार्थ—

न हि	११.	नहीं (किया होगा)	आत्मनः ।	२.	अन्तःकरण वाले
अल्प	७.	थोड़े	अस्मिन्	५.	महात्मा
अर्थ	८.	प्रयोजन को	वरीयसि	६.	मैत्रेय जी से
उदयः	९.	बताने वाला	प्रश्नः	१०.	प्रश्न
तस्य	३.	उन	साधुवाद	१२.	(क्योंकि वह प्रश्न) अभिनन्दन पूर्वक
विदुरस्य	४.	विदुर जी ने			
अमल	१.	शुद्ध	उपबृंहितः ॥	१३	सम्मानित किया गया था

श्लोकार्थ—शुद्ध अन्तःकरण वाले उन विदुर जी ने महात्मा मैत्रेय जी से थोड़े प्रयोजन को बताने वाला प्रश्न नहीं किया होगा; क्योंकि वह प्रश्न अभिनन्दन पूर्वक सम्मानित किया गया था ।

पञ्चमः श्लोकः

स एवमृषिवर्योऽयं पृष्टो राज्ञा परीक्षिता ।
प्रत्याह तं सुबहुवित्प्रीतात्मा श्रूयतामिति ॥५॥

सः एवम् ऋषि वर्यः अयम्, पृष्टः राज्ञा परीक्षिता ।
प्रत्याह तम् सुबहुवित्, प्रीत आत्मा श्रूयताम् इति ॥

९.	उन शुकदेव जी ने	प्रत्याह	१३.	उत्तर दिया
३.	इस प्रकार	तम्	१२.	उन्हें
८.	मुनि, श्रेष्ठ	सुबहुवित्	६.	सर्वज्ञ (एवम्)
५.	उस समय	प्रीति आत्मा	७.	प्रसन्न चित्त
४.	पूछने पर	श्रूयताम्	१०.	सुनें
१.	राजा	इति ॥	११.	ऐसा
२.	परीक्षित् के			

त जी ने कहा, हे ऋषियों ! राजा परीक्षित् के इस प्रकार पूछने पर उस
वम् प्रसन्नचित्त मुनि श्रेष्ठ उन शुकदेव जी ने सुनें, ऐसा उन्हें उत्तर दिया ।

षष्ठः श्लोकः

यदा तु राजा स्वसुतानसाधून्, पुष्णन्नधर्मेण विनष्टदृष्टिः ।
भ्रातुर्यविष्ठस्य सुतान् विबन्धून्, प्रवेश्य लाक्षाभवने ददाह ॥६॥

यदा तु राजा स्व सुतान् असाधून्, पुष्णन् अधर्मेण विनष्ट दृष्टिः ।
भ्रातुः यविष्ठस्य सुतान् विबन्धून्, प्रवेश्य लाक्षा भवने ददाह ॥

१.	जब	भ्रातुः	१०.	भाई पाण्डु के
३.	राजा धृतराष्ट्र ने	यविष्ठस्य	९.	छोटे
५	अपने	सुतान्	१२.	पुत्रों को
७.	पुत्रों का	विबन्धून्,	११.	अनाथ
६.	दुष्ट	प्रवेश्य	१४.	भेज कर
८.	पालन करते हुये	लाक्षाभवने	१३.	लाक्षा गृह में
४.	अन्याय से	ददाह ॥	१५.	आग लगवा दी
२.	अन्धे			

शुकदेव जी ने कहा, हे परीक्षित् ! जब अन्धे राजा धृतराष्ट्र ने अन्याय से
ा पालन करते हुये छोटे भाई पाण्डु के अनाथ पुत्रों को लाक्षा गृह में भेज क
ी थी ।

सप्तमः श्लोकः

यदा सभायां कुरुदेवदेव्याः, केशाभिमर्शं सुतकर्म गर्ह्यम् ।
न वारयामास नृपः स्नुषायाः, स्वास्रैर्हरन्त्याः कुचकुङ्कुमानि ॥७॥

यदा सभायाम् कुरुदेव देव्याः, केश अभिमर्शम् सुत कर्म गर्ह्यम् ।
न वारयामास नृपः स्नुषायाः, स्व अस्रैः हरन्त्याः कुच कुङ्कुमानि ॥

१. जब	न	१७.	नहीं
२. राजसभा में	वारयामास	१८.	निषेध किया था
६. युधिष्ठिर की	नृपः	१३.	राजा धृतराष्ट्र ने
१०. पटरानी (द्रौपदी) के	स्नुषायाः,	८.	(अपनी) पुत्र वधू
११. बालों को (दुःशासन ने)	स्व	३.	अपने
१२. खींचा था (उस समय)	अस्रैः	४.	आँसुओं से
१४. पुत्र के	हरन्त्याः	७.	धोती हुई
१६. कर्म का	कुच	५.	वक्षःस्थल में लगे
१५. निन्दित	कुङ्कुमानिः ॥	६.	केसर को

ब राजसभा में अपने आँसुओं से वक्षः स्थल में लगे केसर को धोती हुई अपनी पुत्रव धिष्ठिर की पटरानी द्रौपदी के बालों को दुःशासन ने खींचा था; उस समय राजा पुत्र के निन्दित कर्म का निषेध नहीं किया था ।

अष्टमः श्लोकः

द्यूते त्वधर्मेण जितस्य साधोः, सत्यावलम्बस्य वनागतस्य ।
न याचतोऽदात्समयेन दायं, तमो जुषाणो यदजातशत्रोः ॥८॥

द्यूते तु अधर्मेण जितस्य साधोः, सत्य अवलम्बस्य वन आगतस्य ।
न याचतः अदात् समयेन दायम्, तमः जुषाणः यत् अजातशत्रोः ॥

१. जूए में	न	१३.	नहीं
६. तथा	याचतः	१२.	माँगने पर (दुर्योधन
२. अन्याय से	अदात्	१४.	लौटाया था
३. हराये गये	समयेन	११.	प्रतिज्ञानुसार
८. महात्मा	दायम्,	१०.	राज्य भाग को
४. सत्य का	तमः, जुषाणः	१६.	मोह से, मोहित (थ
५. सहारा लिये हुये	यत्	१५.	क्योंकि (वह)
७. वन से आये हुये	अजातशत्रोः ॥	९.	युधिष्ठिर के

ए मे अन्याय से हराये गये, सत्य का सहारा लिये हुये तथा वन से आये हुये धिष्ठिर के राज्य भाग को प्रतिज्ञानुसार माँगने पर दुर्योधन ने नहीं लौटाया था, क ह से मोहित था ।

नवम: श्लोक:

यदा च पार्थप्रहितः सभायां, जगद्गुरुर्यानि जगाद कृष्णः ।
न तानि पुंसाममृतायनानि, राजोरु मेने क्षतपुण्यलेशः ॥ ९ ॥

यदा च पार्थ प्रहितः सभायाम्, जगद् गुरुः यानि जगाद कृष्णः ।
न तानि पुंसाम् अमृत अयनानि, राजा उरु मेने क्षत पुण्य लेशः ॥

२	जब	न	१६.	नहीं
१	तथा	तानि	१४.	उन (वचनों) का
३	युधिष्ठिर के द्वारा भेजे गये	पुंसाम्, अमृत	१२.	मनुष्यों को, अमृत
६	राज सभा में	अयनानि,	१३.	मधुर लगने वाले
४.	जगद् गुरु भगवान्	राजा	९.	राजा धृतराष्ट्र ने
७	जिन वचनों को	उरु	१५.	बिल्कुल भी
८	कहे (उस समय)	मेने	१७.	आदर किया था
५	श्री कृष्ण	क्षत	११	क्षीण हो जाने से
		पुण्य लेशः ॥	१०.	सारा पुण्य

जब युधिष्ठिर के द्वारा भेजे गये जगद्गुरु भगवान् श्री कृष्ण राजसभा में जि
कहे, उस समय राजा धृतराष्ट्र ने सारा पुण्य क्षीण हो जाने से, मनुष्यों को अमृत
र लगने वाले उन वचनों का बिल्कुल भी आदर नहीं किया था ।

दशम: श्लोक:

यदोपहूतो भवनं प्रविष्टो, मन्त्राय पृष्टः किल पूर्वजेन ।
अथाह तन्मन्त्रदृशां वरीयान्, यन्मन्त्रिणो वैदुरिकं वदन्ति ॥ १० ॥

यदा उपहूतः भवनम् प्रविष्टः, मन्त्राय पृष्टः किल पूर्वजेन ।
अथ आह तत् मन्त्र दृशाम् वरीयान्, यत् मन्त्रिणः वैदुरिकम् वदन्ति ॥

१.	जब	अथ	७.	तब
६	बुलाये गये	आह	१३.	दी थी
९.	राज भवन में	तत्	१२.	वह (सम्मति)
१०	प्रवेश किया (और)	मन्त्र दृशाम्	३.	मन्त्रियों में
५	सलाह के लिये	वरीयान्,	४.	श्रेष्ठ (विदुर जी)
११.	भाई के पूछने पर	यत् मन्त्रिणः	१४.	जिसे, नीतिशास्त्र के
८	उन्होंने	वैदुरिकम्	१५.	विदुर नीति
२	बड़े भाई (धृतराष्ट्र) के द्वारा	वदन्ति ॥	१६.	कहते हैं

बड़े भाई धृतराष्ट्र के द्वारा मन्त्रियों में श्रेष्ठ विदुर जी सलाह के लिये बु
उन्होंने राज भवन में प्रवेश किया और भाई के पूछने पर वह सम्मति दी थ
तिशास्त्र के जानकार 'विदुर नीति' कहते हैं ।

एकादशः श्लोकः

अजातशत्रोः प्रतियच्छ दायं, तितिक्षतो दुर्विषहं तवागः ।
सहानुजो यत्र वृकोदराहिः, श्वसन् रुषा यत्त्वमलं बिभेषि ।। ११ ।

पदच्छेद— **अजातशत्रोः प्रतियच्छ दायम्, तितिक्षतः दुर्विषहम् तव आगः ।**
सह अनुजः यत्र वृकोदर अहिः, श्वसन् रुषा यत् त्वम् अलम् बिभेषि ।।

शब्दार्थ—

अजातशत्रोः	५.	महात्मा युधिष्ठिर के	**यत्र**	८.	जिस (युधिष्ठिर के प
प्रतियच्छ	७.	लौटा दो	**वृकोदर**	१०.	भीमसेन रूपी
दायम्,	६.	राज्य भाग को	**अहिः,**	११.	नाग
तितिक्षतः	४.	सहन करने वाले	**श्वसन्**	१३.	फुंफकार मार रहा है
दुर्विषहम्	२.	असहनीय	**रुषा**	१२.	क्रोध से
तव	१.	तुम्हारे	**यत्, त्वम्**	१४.	जिससे, तुम
आगः ।	३.	अपराध को	**अलम्**	१५.	बहुत
सह अनुजः	९.	छोटे भाइयों के साथ	**बिभेषि ।।**	१६.	डरते हो

श्लोकार्थ—विदुर जी ने कहा, तुम्हारे असहनीय अपराध को सहन करने वाले महात्मा युधिष्ि
राज्य भाग को लौटा दो । जिस युधिष्ठिर के पक्ष में छोटे भाइयों के साथ भीमसेन रूपी
क्रोध से फुंफकार मार रहा है, जिससे तुम बहुत डरते हो ।

द्वादशः श्लोकः

पार्थांस्तु देवो भगवान् मुकुन्दो, गृहीतवान् सक्षितिदेवदेवः ।
आस्ते स्वपुर्यां यदुदेवदेवो, विनिर्जिताशेषनृदेवदेवः ।।१२।।

पदच्छेद— **पार्थान् तु देवः भगवान् मुकुन्दः, गृहीतवान् स क्षितिदेव देवः ।**
आस्ते स्व पुर्याम् यदु देव देवः, विनिर्जित अशेष नृदेव देवः ।।

शब्दार्थ—

पार्थान्	३.	पाण्डवों को	**आस्ते**	१६.	विद्यमान हैं
तु	५.	और (इस समय)	**स्व**	१४.	अपनी (राजधानी)
देवः	१.	पूज्य	**पुर्याम्**	१५.	द्वारका पुरी में
भगवान् मुकुन्दः,	२.	भगवान् श्री कृष्ण ने	**यदुदेव**	९.	यादवों के
गृहीतवान्	४.	अपना लिया है	**देवः,**	१०	आराध्य (वे भगवान्)
स	१३.	साथ	**विनिर्जित**	८.	जीत कर
क्षितिदेव	११	ब्राह्मणों (और)	**अशेष, नृदेव**	६.	सम्पूर्ण, राजा
देवः ।	१२.	देवताओं के	**देवः ।।**	७.	महाराजाओं को

श्लोकार्थ—पूज्य भगवान् श्री कृष्ण ने पाण्डवों को अपना लिया है और इस समय सम्पूर्ण राजा
राजाओं को जीत कर यादवों के आराध्य वे भगवान् ब्राह्मणों और देवताओं के साथ
राजधानी द्वारका पुरी में विद्यमान हैं ।

त्रयोदशः श्लोकः

स एष दोषः पुरुषद्विडास्ते, गृहान् प्रविष्टो यमपत्यमत्या ।
पुष्णासि कृष्णाद् विमुखो गतश्री-स्त्यजाश्वशैवं कुलकौशलाय ।।१३।।
सः एषः दोषः पुरुष द्विड् आस्ते, गृहान् प्रविष्टः यम् अपत्य मत्या ।
पुष्णासि कृष्णात् विमुखः गत श्रीः, त्यज अश्व शैवम् कुल कौशलाय ।।

४. वही, यह		पुष्णासि	३.	पाल रहे हैं
५. पापी (तथा)		कृष्णात्	१०.	श्री कृष्ण से
६. मनुष्य द्वेषी		विमुखः	११.	अलग होने के कारण
९. बैठा है (आप)		गत	१३.	हीन हो रहे हैं (अत)
७. घर में		श्रीः,	१२.	कान्ति
८. प्रवेश करके		त्यज	१६.	त्याग दें
१. जिसे (आप) पुत्र		अश्व, शैवम्	१४.	घोड़े के, बच्चे मूर्ख को
२. समझ कर		कुल कौशलाय।।	१५.	कुरुवंश के कल्याण के

से आप पुत्र समझ कर पाल रहे है, वही यह पापी तथा मनुष्य-द्वेषी घर में प्रवेश ठा है। आप श्री कृष्ण से अलग होने के कारण कान्तिहीन हो रहे हैं, अतः इस च्चे मूर्ख दुर्योधन को कुरुवंश के कल्याण के लिये त्याग दें।

चतुर्दशः श्लोकः

इत्यूचिवांस्तत्र सुयोधनेन, प्रवृद्धकोपस्फुरिताधरेण ।
असत्कृतः सत्स्पृहणीयशीलः, क्षत्ता सकर्णानुजसौबलेन ।।१४।।
इति ऊचिवान् तत्र सुयोधनेन, प्रवृद्ध कोप स्फुरित अधरेण ।
असत्कृतः सत् स्पृहणीय शीलः, क्षत्ता सकर्ण अनुज सौबलेन ।।

५ ऐसा	असत्कृतः	१६.	तिरस्कार किया था
६ कहा	सत्	१.	सज्जनों से
७. (तदनन्तर) वहाँ पर	स्पृहणीय	२.	इच्छित
११ दुर्योधन ने	शीलः,	३.	स्वभाव वाले
१२. बढ़े हुये	क्षत्ता	४.	विदुर जी ने
१३. क्रोध के कारण	सकर्ण	८.	कर्ण
१४. फड़कते	अनुज	९.	दुःशासन और
१५. होठ से	सौबलेन ।।	१०.	मामा शकुनि के साथ

ज्जनों से इच्छित स्वभाव वाले विदुर जी ने ऐसा कहा। तदनन्तर वहाँ पर कर्ण, दु ौर मामा शकुनि के साथ दुर्योधन ने बढ़े हुये क्रोध के कारण फड़कते होठ से उन वि ा तिरस्कार किया था।

पञ्चदशः श्लोकः

कः एनमत्रोपजुहाव जिह्मं, दास्याः सुतं यद् बलिनैव पुष्टः ।
तस्मिन् प्रतीपः परकृत्य आस्ते, निर्वास्यतामाशु पुराच्छ्वसानः ।।१५।।

कः एनम् अत्र उपजुहाव जिह्मम्, दास्याः सुतम् यत् बलिना एव पुष्टः ।
तस्मिन् प्रतीपः परकृत्ये आस्ते, निर्वास्यताम् आशु पुरात् श्वसानः ।।

४	किसने	**तस्मिन्**	९.	उसी का
१.	इस	**प्रतीपः**	१०.	विरोध करता हुआ
५	यहाँ पर	**परकृत्ये**	११.	शत्रु के काम को
६	बुलाया था (यह)	**आस्ते,**	१२.	बना रहा है (अतः इसे
२	कुटिल	**निर्वास्यताम्**	१६	निकाल दो
३	दासी, पुत्र को	**आशु**	१५.	तत्काल
७	जिसके, अन्न से	**पुरात्**	१४.	नगर से
८	ही, बड़ा हुआ है	**श्वसानः ।।**	१३.	जीते-जी

कुटिल दासी पुत्र को किसने यहाँ पर बुलाया था ? यह जिसके अन्न से ही बड़ा हु
ी का विरोध करता हुआ शत्रु के काम को बना रहा है, अतः इसे जीते-जी नग
काल निकाल दो ।

षोडशः श्लोकः

स इत्थमत्युल्बणकर्णबाणै-र्भ्रातुः पुरो मर्मसु ताडितोऽपि ।
स्वयं धनुर्द्वारि निधाय मायां, गतव्यथोऽयादुरु मानयानः ।। १६ ।।

सः इत्थम् अति उल्बण कर्ण बाणैः, भ्रातुः पुरः मर्मसु ताडितः अपि ।
स्वयम् धनुः द्वारि निधाय मायाम्, गत व्यथः अयात् उरु मानयानः ।।

१.	वे (विदुर जी)	**स्वयम्**	१४.	अपने आप
३.	इस प्रकार	**धनुः, द्वारि**	१५.	धनुष को, द्वार पर
६	अत्यन्त	**निधाय**	१६.	रख कर
७	कठोर वचनों से	**मायाम्,**	११.	भगवान् की माया को
४	कानों को	**गत व्यथः**	१०.	दुःखित नहीं हुये (और)
५	बाण के समान लगने वाले	**अयात्**	१७.	(नगर से) निकल गये
२	भाई (धृतराष्ट्र) के, सामने	**उरु**	१२.	प्रबल
८	हृदय में	**मानयानः ।।**	१३.	मानते हुये
९	चोट खाकर, भी			

दुर जी भाई धृतराष्ट्र के सामने इस प्रकार कानों को बाण के समान लगने वाले अ
र वचनों से हृदय में चोट खाकर भी दुःखित नहीं हुये और भगवान् की माया को
ते हुये अपने आप धनुष को द्वार पर रख कर नगर से निकल गये ।

सप्तदशः श्लोकः

स निर्गतः कौरवपुण्यलब्धो, गजाह्वयात्तीर्थपदः पदानि ।
अन्वाक्रमत् पुण्यचिकीर्षयोर्व्यां, स्वधिष्ठितो यानि सहस्रमूर्तिः ॥१७

सः निर्गतः कौरव पुण्य लब्धः, गजाह्वयात् तीर्थपदः पदानि ।
अन्वाक्रमत् पुण्य चिकीर्षया उर्व्याम्, सु अधिष्ठितः यानि सहस्र मूर्तिः ॥

३.	वे विदुर जी	अन्वाक्रमत	११.	भ्रमण किया
५	निकल गये (उन्होंने)	पुण्य	७.	धर्म करने की
१.	कौरवों को	चिकीर्षया	८.	इच्छा से
२.	भाग्य से, प्राप्त हुये	उर्व्याम्,	६.	पृथ्वी पर
४.	हस्तिनापुर से	सु अधिष्ठितः	१४.	विराजमान हैं
९.	तीर्थरूपी, पैर वाले भगवान् के	यानि	१२.	जहाँ पर
१०.	(उन) क्षेत्रों में	सहस्र मूर्तिः ॥	१३.	(भगवान्) की अ

रवों को भाग्य से प्राप्त हुये वे विदुर जी हस्तिनापुर से निकल गये । उन्हों र्म करने की इच्छा से तीर्थ रूपी पैर वाले भगवान् के उन क्षेत्रों में भ्रमण कि गवान् की अनन्त मूर्तियाँ विराजमान हैं ।

अष्टादशः श्लोकः

पुरेषु पुण्योपवनाद्रिकुञ्जे-ष्वपङ्कतोयेषु सरित्सरःसु ।
अनन्तलिङ्गैः समलंकृतेषु, चचार तीर्थायतनेष्वनन्यः ॥१८॥

पुरेषु पुण्य उपवन अद्रि कुञ्जेषु, अपङ्क तोयेषु सरित् सरः सु ।
अनन्त लिङ्गैः समलङ्कृतेषु, चचार तीर्थ आयतनेषु अनन्यः ॥

२.	नगर	सरःसु ।	१०.	तालाबों में (तथ
३.	पवित्र	अनन्त	११.	अनेक
४.	बगीचे	लिङ्गैः	१२.	मूर्तियों से
५.	पर्वत	समलङ्कृतेषु,	१३.	सुशोभित
६.	लता-झुण्ड	चचार	१६.	विचरते रहे
७.	निर्मल	तीर्थ	१४.	तीर्थों और
८.	जलवाली	आयतनेषु	१५.	मन्दिरों में
९.	नदियों (और)	अनन्यः ॥	१.	(विदुर जी) अ

दुर जी अकेले ही नगर, पवित्र बगीचे, पर्वत, लता-झुण्ड, निर्मल जल वाली तालाबों में तथा अनेक मूर्तियों से सुशोभित तीर्थों और मन्दिरों में विचरते रहे ।

एकोनविंश: श्लोक:

गां पर्यटन् मेध्यविविक्तवृत्तिः, सदाप्लुतोऽधःशयनोऽवधूतः ।
अलक्षितः स्वैरवधूतवेषो, व्रतानि चेरे हरितोषणानि ।।१९।।
गाम् पर्यटन् मेध्य विविक्ति वृत्तिः, सदा आप्लुतः अधः शयनः अवधूतः ।
अलक्षितः स्वैः अवधूत वेषः, व्रतानि चेरे हरि तोषणानि ।।

११.	पृथ्वी पर	अलक्षितः	४.	छिपकर
१२.	घूमते रहे (एवं)	स्वैः	३.	अपने लोगों से
९.	पवित्र, और सादा	अवधूत	१.	(विदुर जी) अवधूत क
१०.	आहार करते हुये	वेषः,	२.	वेष धारण करके (अत
५.	हमेशा	व्रतानि	१५.	व्रतों को
६.	तीर्थों में स्नान करते	चेरे	१६.	करते रहे
७.	भूमि पर, शयन करते (तथा)	हरि	१३.	भगवान् को
८.	शृंगार से रहित होकर	तोषणानि ।।	१४	प्रसन्न करने वाले

दुर जी अवधूत का वेश धारण करके अतः अपने लोगों से छिप कर हमेशा तीर्थों मे
रते, भूमि पर शयन करते तथा शृंगार से रहित होकर पवित्र और सादा आहार
पृथ्वी पर घूमते रहे एवम् भगवान् को प्रसन्न करने वाले व्रतों को करते रहे ।

विंश: श्लोक:

इत्थं व्रजन् भारतमेव वर्षं, कालेन यावद्गतवान् प्रभासम् ।
तावच्छशास क्षितिमेकचक्रा-मेकातपत्रामजितेन पार्थः ।।२०।।
इत्थम् व्रजन् भारतम् एव वर्षम्, कालेन यावत् गतवान् प्रभासम् ।
तावत् शशास क्षितिम् एकचक्राम्, एक आतपत्राम् अजितेन पार्थः ।।

१.	(विदुर जी) इस प्रकार	प्रभासम् ।	८.	प्रभास क्षेत्र में
५.	घूमते हुये	तावत्	१०.	उस समय
२.	भारत	शशास	१६.	शासन कर रहे थे
४.	ही	क्षितिम्	१३.	पृथ्वी पर
३.	वर्ष में	एक चक्राम्,	१४.	अखण्ड (एवम्)
६.	कुछ समय के बाद	एक आतपत्राम्	१५.	एक छत्र
७.	जब	अजितेन	११.	श्रीकृष्ण की सहायता से
९.	पहुँचे	पार्थः ।।	१२.	महाराज युधिष्ठिर

र जी इस प्रकार भारतवर्ष में ही घूमते हुये कुछ समय के बाद जब प्रभास क्षे
े, उस समय भगवान् श्री कृष्ण की सहायता से महाराज युधिष्ठिर पृथ्वी पर अ
ु एकछत्र शासन कर रहे थे ।

एकविंशः श्लोकः

तत्राथ शुश्राव सुहृद्विनष्टिं, वनं यथा वेणुजवह्निसंश्रयम् ।
संस्पर्धया दग्धमथानुशोचन्, सरस्वतीं प्रत्यगियाय तूष्णीम् ॥२

पदच्छेद— तत्र अथ शुश्राव सुहृद् विनष्टिम्, वनम् यथा वेणुज वह्नि संश्रयम् ।
संस्पर्धया दग्धम् अथ अनुशोचन्, सरस्वतीम् प्रत्यग् इयाय तूष्णीम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	८. वहाँ पर (विदुर जी)		संस्पर्धया	२.	(आपस की) रगड
अथ	७. उसी प्रकार		दग्धम्	६.	जल जाता है
शुश्राव	१०. सुने (और)		अथ	११.	तत्पश्चात्
सुहृद्, विनष्टिम्	९. बान्धवों के, विनाश को		अनुशोचन्,	१२.	शोक करते हुये
वनम्	५. सारा जंगल		सरस्वतीम्	१४.	सरस्वती नदी के
यथा	१. जैसे		प्रत्यग्	१५.	तट पर
वेणुज	३. बाँसों से उत्पन्न		इयाय	१६.	आ गये
वह्नि, संश्रयम् ।	४. अग्नि के, सहारे		तूष्णीम् ॥	१३.	चुपचाप

श्लोकार्थ— जैसे आपस की रगड़ के कारण बाँसों से उत्पन्न अग्नि के सहारे सारा जंगल ज
उसी प्रकार वहाँ पर विदुर जी बान्धवों के विनाश को सुने और तत्पश्चात् शोव
चुपचाप सरस्वती नदी के तट पर आ गये ।

द्वाविंशः श्लोकः

तस्यां त्रितस्योशनसो मनोश्च, पृथोरथाग्नेरसितस्य वायोः ।
तीर्थं सुदासस्य गवां गुहस्य, यच्छ्राद्धदेवस्य स आसिषेवे ॥२२॥

पदच्छेद—
तस्याम् त्रितस्य उशनसः मनोः च, पृथोः अथ अग्नेः असितस्य वायोः ।
तीर्थम् सुदासस्य गवाम् गुहस्य, यत् श्राद्ध देवस्य सः आसिषेवे ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	१. सरस्वती नदी के तट पर	तीर्थम्	१४.	तीर्थ थे (उनका)
त्रितस्य	२. त्रित	सुदासस्य	८.	सुदास
उशनसः	३. उशना	गवाम्	९.	गऊ
मनोः, च,	४. मनु, और	गुहस्य,	१०.	गुह
पृथोः	५. पृथु	यत्	१३.	जो
अथ	११. तथा	श्राद्धदेवस्य	१२.	श्राद्ध देव से सम्ब
अग्नेः,असितस्य	६. अग्नि, असित	सः	१५.	उन्होंने
वायोः ।	७. वायु	आसिषेवे ॥	१६.	सेवन किया

श्लोकार्थ—सरस्वती नदी के तट पर त्रित, उशना, मनु और पृथु, अग्नि, असित, वायु, सुदास
तथा श्राद्ध देव से सम्बन्धित जो तीर्थ थे उनका उन्होंने सेवन किया ।

त्रयोविंशः श्लोकः

अन्यानि चेह द्विजदेवदेवैः, कृतानि नानायतनानि विष्णोः ।
प्रत्यङ्गमुख्याङ्कितमन्दिराणि, यद्दर्शनात् कृष्णमनुस्मरन्ति ॥२३॥

पदच्छेद— अन्यानि च इह द्विजदेव देवैः, कृतानि नाना आयतनानि विष्णोः ।
प्रति अङ्ग मुख्य अङ्कित मन्दिराणि, यत् दर्शनात् कृष्णम् अनुस्मरन्ति ॥

शब्दार्थ—

अन्यानि	२.	इसके अतिरिक्त (विदुर जी)	प्रति	९.	प्रत्येक
च	१.	तथा	अङ्ग मुख्य	११.	प्रधान आयुध
इह, द्विजदेव	३.	पृथ्वी पर, ब्राह्मणों और	अङ्कित	१२.	बनाये गये थे
देवैः,	४.	देवताओं के द्वारा	मन्दिराणि,	१०.	मन्दिरों के शिखरों पर
कृतानि	५.	स्थापित किये गये	यत्	१३.	जिनके
नाना	७.	अनेक	दर्शनात्	१४.	दर्शन से
आयतनानि	८.	मन्दिरों में गये (जहाँ)	कृष्णम्	१५.	भगवान् श्रीकृष्ण का
विष्णोः ।	६.	भगवान् विष्णु के	अनुस्मरन्ति ॥	१६	तत्काल स्मरण हो जाता

श्लोकार्थ—तथा इसके अतिरिक्त विदुर जी पृथ्वी पर ब्राह्मणों और देवताओं के द्वारा स्थापित किये भगवान् विष्णु के अनेक मन्दिरों में गये, जहाँ प्रत्येक मन्दिरों के शिखरों पर भगवान प्रधान आयुध बनाये गये थे, जिनके दर्शनसे भगवान् श्री कृष्ण का तत्काल स्मरण हो जाता

चतुर्विंशः श्लोकः

ततस्त्वतिव्रज्य सुराष्ट्रमृद्धं, सौवीरमत्स्यान् कुरुजाङ्गलांश्च ।
कालेन तावद्यमुनामुपेत्य, तत्रोद्धवं भागवतं ददर्श ॥२४॥

पदच्छेद— ततः तु अतिव्रज्य सुराष्ट्रम् ऋद्धम्, सौवीर मत्स्यान् कुरु जाङ्गलान् च ।
कालेन तावत् यमुनाम् उपेत्य, तत्र उद्धवम् भागवतम् ददर्श ॥

शब्दार्थ—

ततः तु	१.	तत्पश्चात् (विदुर जी)	कालेन	९.	कुछ समय के बाद (जब)
अतिव्रज्य	८.	चलकर	तावत्	१२.	तब
सुराष्ट्रम्	३.	सौराष्ट्र	यमुनाम्	१०.	यमुना नदी के तट पर
ऋद्धम्,	२.	धन-धान्य से पूर्ण	उपेत्य,	११.	पहुँचे
सौवीर	४.	सौवीर देश	तत्र	१३.	वहां पर (उन्होंने)
मत्स्यान्	५.	मत्स्य देश	उद्धवम्	१५.	उद्धव जी को
कुरु जाङ्गलान्	७.	कुरुजांगल देशों से	भागवतम्	१४	भगवद् भक्त
च ।	६.	और	ददर्श ॥	१६.	देखा

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् विदुर जी धन-धान्य से पूर्ण सौराष्ट्र, सौवीर, मत्स्य और कुरुजांगल देशों चलकर कुछ समय के बाद जब यमुना नदी के तट पर पहुँचे, तब वहाँ पर उन्होंने भग. भक्त उद्धव जी को देखा।

पञ्चविंशः श्लोकः

स वासुदेवानुचरं प्रशान्तं, बृहस्पतेः प्राक् तनयं प्रतीतम् ।
आलिङ्ग्य गाढं प्रणयेन भद्रं, स्वानामपृच्छद् भगवत्प्रजानाम् ॥२५

पदच्छेद— सः वासुदेव अनुचरम् प्रशान्तम्, बृहस्पतेः प्राक् तनयम् प्रतीतम् ।
आलिङ्ग्य गाढम् प्रणयेन भद्रम्, स्वानाम् अपृच्छत् भगवत् प्रजानाम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उन (विदुर जी) ने	आलिङ्ग्य	११.	आलिंगन करके
वासुदेव	२.	भगवान् श्री कृष्ण के	गाढम्	१०.	प्रगाढ़
अनुचरम्	३.	सेवक	प्रणयेन	९.	प्रेम पूर्वक
प्रशान्तम्,	४.	अतिशान्त स्वभाव वाले (तथा)	भद्रम्,	१५.	कुशल
बृहस्पतेः	५.	आचार्य बृहस्पति के	स्वानाम्	१४.	स्वजनों का
प्राक्	६.	प्राचीन	अपृच्छत्	१६.	पूछा
तनयम्	७.	शिष्य के रूप में	भगवत्	१२.	भगवान् और उन
प्रतीतम् ।	८.	प्रख्यात (उद्धव जी) का	प्रजानाम् ॥	१३.	आश्रित

श्लोकार्थ—उन विदुर जी ने भगवान् श्रीकृष्ण के सेवक, अतिशान्त स्वभाव वाले तथा आचार्य के प्राचीन शिष्य के रूप में प्रख्यात उद्धव जी का प्रेम पूर्वक प्रगाढ़ आलिगन करके और उनके आश्रित स्वजनों का कुशल पूछा ।

षड्विंशः श्लोकः

कच्चित्पुराणौ पुरुषौ स्वनाभ्य-पाद्मानुवृत्त्येह किलावतीर्णौ ।
आसात उर्व्याः कुशलं विधाय, कृतक्षणौ कुशलं शूरगेहे ॥२६॥

पदच्छेद— कच्चित् पुराणौ पुरुषौ स्वनाभ्य, पाद्म अनुवृत्त्या इह किल अवतीर्णौ ।
आसाते उर्व्याः कुशलम् विधाय, कृत क्षणौ कुशलम् शूर गेहे ॥

शब्दार्थ—

कच्चित्	८.	क्या (वे)	आसाते	१६.	हैं
पुराणौ	१.	पुरातन	उर्व्याः, कुशलम्	९.	पृथ्वी का, कल्याण
पुरुषौ	२.	पुरुष (बलराम और श्री कृष्ण जी)	विधाय,	१०.	करके
			कृत	१२.	देते हुये
स्व, नाभ्य,	३.	अपनी नाभि के कमल से उत्पन्न	क्षणौ	११.	(सब को) आनन्द
			कुशलम्	१५.	कुशल से
पाद्म, अनुवृत्त्या	४.	ब्रह्मा जी की, प्रार्थना से	शूर	१३.	वसुदेव जी के
इह	६.	इस जगत् में	गेहे ॥	१४.	घर में
किल	५.	ही			
अवतीर्णौ ।	७.	अवतरित हुये हैं			

श्लोकार्थ—पुरातन पुरुष बलराम और श्री कृष्ण जी अपनी नाभि के कमल से उत्पन्न ब्र प्रार्थना से ही इस जगत् में अवतरित हुए हैं । क्या वे पृथ्वी का कल्याण करके सब देते हुये वसुदेव जी के घर में कुशल से हैं ?

सप्तविंशः श्लोकः

कच्चित्कुरूणां परमः सुहृन्नो, भामः स आस्ते सुखमङ्ग शौरिः।
यो वै स्वसॄणां पितृवद्ददाति, वरान् वदान्यो वरतर्पणेन ॥२७॥

पदच्छेद— कच्चित् कुरूणाम् परमः सुहृत् नः, भामः सः आस्ते सुखम् अङ्ग शौरिः।
यः वै स्वसॄणाम् पितृवत् ददाति, वरान् वदान्यः वर तर्पणेन ॥

शब्दार्थ—

कच्चित्	७.	क्या	यः	११.	जो (वसुदेव जी)
कुरूणाम्, परमः	३.	कुरुवंशियों के, अत्यन्त	वै	१६.	निश्चय ही
सुहृत्	४.	हितैषी	स्वसॄणाम्	१३.	बहिन कुन्ती इ
नः,	२.	हम	पितृवत्	१२.	पिता के समान
भामः, सः	५.	पूज्य, वे	ददाति,	१८.	देते रहते हैं
आस्ते	९.	हैं	वरान्	१७.	इच्छित वस्तुओं
सुखम्	८.	सुखपूर्वक	वदान्यः	१०.	उदार हृदय
अङ्ग	१.	हे तात !	वर	१४.	स्वामियों को
शौरिः।	६.	वसुदेव जी	तर्पणेन ॥	१५.	प्रसन्न करते हुये

श्लोकार्थ—हे तात ! हम कुरुवंशियों के अत्यन्त हितैषी पूज्य वे वसुदेव जी क्या सुखपूर्वक हृदय जो वसुदेव जी पिता के समान बहिन कुन्ती इत्यादि को और उनके स प्रसन्न करते हुये निश्चय ही इच्छित वस्तुओं को देते रहते हैं।

अष्टाविंशः श्लोकः

कच्चिद्वरूथाधिपतिर्यदूनां, प्रद्युम्न आस्ते सुखमङ्ग वीरः।
यं रुक्मिणी भगवतोऽभिलेभे, आराध्य विप्रान् स्मरमादिसर्गे ॥२८॥

पदच्छेद— कच्चित् वरूथ अधिपतिः यदूनाम्, प्रद्युम्नः आस्ते सुखम् अङ्ग वीरः।
यम् रुक्मिणी भगवतः अभिलेभे, आराध्य विप्रान् स्मरम् आदिसर्गे ॥

शब्दार्थ—

कच्चित्	६.	क्या	यम्	११.	जिन्हें
वरूथ, अधिपतिः	३.	सेना के, सेनापति	रुक्मिणी	१२.	रुक्मिणी जी ने
यदूनाम्,	२.	यादवों की	भगवतः	१५.	भगवान् से
प्रद्युम्नः	५.	प्रद्युम्न जी	अभिलेभे,	१६.	प्राप्त किया था
आस्ते	८.	हैं	आराध्य	१४.	आराधना करके
सुखम्	७.	सुख से	विप्रान्	१३.	ब्राह्मणों की
अङ्ग	१.	हे तात !	स्मरम्	१०.	कामदेव (थे और
वीरः।	४.	महाबली	आदिसर्गे ॥	९.	(जो) पूर्व जन्म मे

श्लोकार्थ—हे तात ! यादवों की सेना के सेनापति महाबली प्रद्युम्न जी क्या सुख से हैं ? जो कामदेव थे और जिन्हें रुक्मिणी जी ने ब्राह्मणों की आराधना करके भगवान् से प्राप्त

एकोनत्रिंश: श्लोक:

कच्चित्सुखं सात्वतवृष्णिभोज-दाशार्हकाणामधिपः स आस्ते ।
यमभ्यषिञ्चच्छतपत्रनेत्रो, नृपासनाशां परिहृत्य दूरात् ॥२९॥

कच्चित् सुखम् सात्वत वृष्णि भोज, दाशार्हकाणाम् अधिपः सः आस्ते ।
यम् अभ्यषिञ्चत् शतपत्र नेत्रः, नृप आसन आशाम् परिहृत्य दूरात् ॥

कच्चित्	७. क्या	आस्ते ।	९. हैं (जिन्होंने)
सुखम्	८. सुख से	यम्	१५. उनका
सात्वत	१. सात्वत	अभ्यषिञ्चत्	१६. राज्याभिषेक किया था
वृष्णि	२. वृष्णि	शतपत्र नेत्रः,	१४. कमलनयन श्री कृष्ण ने
भोज	३. भोज और	नृप आसन	१०. राजगद्दी की
दाशार्हकाणाम्	४. दाशार्हवंशी यादवों के	आशाम्	११. आशा को
अधिपः	५. स्वामी	परिहृत्य	१३. छोड़ दिया था (किन्तु)
सः	६. वे (उग्रसेन जी)	दूरात् ॥	१२. सर्वथा

सात्वत, वृष्णि, भोज और दाशार्हवंशी यादवों के स्वामी वे उग्रसेन जी क्या सुख से है जिन्होंने राजगद्दी की आशा को सर्वथा छोड़ दिया था, किन्तु कमल नयन भगवान् श्री कृ ने उनका राज्याभिषेक किया था ।

त्रिंश: श्लोक:

कच्चिद्धरेः सौम्य सुतः सदृक्ष, आस्तेऽग्रणी रथिनां साधु साम्बः ।
असूत यं जाम्बवती व्रताढ्या, देवं गुहं योऽम्बिकया धृतोऽग्रे ॥३०॥

कच्चित् हरेः सौम्य सुतः सदृक्षः, आस्ते अग्रणीः रथिनाम् साधु साम्बः ।
असूत यम् जाम्बवती व्रत आढ्या, देवम् गुहम् अम्बिकया धृतः अग्रे ॥

कच्चित्	८. क्या	असूत	१४. उत्पन्न किया था (त
हरेः	४. भगवान् श्री कृष्ण के	यम्, जाम्बवती	११. जिन्हें, जाम्बवती जी
सौम्य	१. हे मनस्वी (उद्धव जी !)	व्रत	१३. व्रत करके
सुतः	६. पुत्र	आढ्या	१२. अनेक
सदृक्षः	५. समान (गुणवान्)	देवम्	१८. स्वामी
आस्ते	१०. हैं	गुहम्	१९. कार्तिकेय के रूप मे
अग्रणीः	३. आगे रहने वाले (तथा)	यः	१५. जिन्हें
रथिनाम्	२ महारथियों में	अम्बिकया	१७. पार्वती जी ने
साधु	९. कुशल से	धृतः	२०. धारण किया था
साम्बः	७. साम्ब जी	अग्रे ॥	१६. पूर्व जन्म में

हे मनस्वी उद्धव जी ! महारथियों में आगे रहने वाले तथा भगवान् श्री कृष्ण के समान गु वान् पुत्र साम्ब जी क्या कुशल से हैं ? जिन्हें जाम्बवती जी ने अनेक व्रत करके उत्पन्न कि था तथा जिन्हें पूर्व जन्म मे पावती जी ने स्वामी कार्तिकेय के रूप में धारण किया था ।

एकत्रिंशः श्लोकः

क्षेमं स कच्चिद्युयुधान आस्ते, यः फाल्गुनाल्लब्धधनूरहस्यः ।
लेभेऽञ्जसाधोक्षजसेवयैव, गतिं तदीयां यतिभिर्दुरापाम् ॥३१॥

पदच्छेद— क्षेमम् सः कच्चित् युयुधानः आस्ते, यः फाल्गुनात् लब्ध धनुः रहस्यः ।
लेभे अञ्जसा अधोक्षज सेवया एव, गतिम् तदीयाम् यतिभिः दुरापाम् ॥

शब्दार्थ—

क्षेमम्	८. कुशल पूर्वक	रहस्यः ।	२. रहस्यों के साथ
सः	५. वे	लेभे	१५. प्राप्त किया था (जो)
कच्चित्	७. क्या	अञ्जसा	१४. अनायास
युयुधानः	६. सात्यिकी	अधोक्षज	१०. भगवान् श्री कृष्ण की
आस्ते,	९. हैं (उन्होंने)	सेवया, एव,	११. सेवा से, ही
यः, फाल्गुनात्	१. जिन्होंने, अर्जुन से	गतिम्	१३. स्थिति को
लब्ध	४. शिक्षा प्राप्त की थी	तदीयाम्	१२. उस
धनुः	३. धनुर्विद्या की	यतिभिः, दुरापाम्॥	१६. योगियों को, भी दुर्लभ (ह

श्लोकार्थ—जिन्होंने अर्जुन से रहस्यों के साथ धनुर्विद्या की शिक्षा प्राप्त की थी, वे सात्यिकी क्या कुश पूर्वक हैं ? उन्होंने भगवान् श्री कृष्ण की सेवा से ही उस स्थिति को अनायास प्राप्त किय किया था, जो योगियों को भी दुलभ है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

कच्चिद् बुधः स्वस्त्यनमीव आस्ते, श्वफल्कपुत्रो भगवत्प्रपन्नः ।
यः कृष्णपादाङ्कितमार्गपांसु-ष्वचेष्टत प्रेमविभिन्नधैर्यः ॥३२॥

पदच्छेद— कच्चित् बुधः स्वस्ति अनमीवः आस्ते, स्वफल्क पुत्रः भगवत् प्रपन्नः ।
यः कृष्ण पाद अङ्कित मार्ग पांसुषु, अचेष्टत प्रेम विभिन्न धैर्यः ॥

शब्दार्थ—

कच्चित	१. क्या	यः	९. जो
बुधः	५. विद्वान् (अक्रूर जी)	कृष्ण पाद	१२. भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों
स्वस्ति	७. कुशल से	अङ्कित	१३. चिह्नित
अनमीवः	६. स्वस्थ और	मार्ग	१४. (व्रज के) रास्ते की
आस्ते,	८. हैं	पांसुषु,	१५. रज में
स्वफल्क पुत्रः	४. स्वफल्क के पुत्र	अचेष्टत	१६. लोटने लगे थे
भगवत्	२. भगवान् के	प्रेम	१०. प्रेम में
प्रपन्नः ।	३. शरणागत	विभिन्न धैर्यः ॥	११. अधीर होकर

श्लोकार्थ—क्या भगवान् के शरणागत, स्वफल्क के पुत्र, विद्वान् अक्रूर जी स्वस्थ और कुशल से हैं ? ज प्रेम में अधीर हो कर भगवान् श्री कृष्ण के चरणों से चिह्नित व्रज के रास्ते की रज लोटने लगे थे ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कच्चिच्छिवं देवकभोजपुत्र्या, विष्णुप्रजाया इव देवमातुः ।
या वै स्वगर्भेण दधार देवं, त्रयी यथा यज्ञवितानमर्थम् ॥३३॥

पदच्छेद— **कच्चित् शिवम् देवक भोज पुत्र्याः, विष्णु प्रजायाः इव देव मातुः ।**
या वै स्व गर्भेण दधार देवम्, त्रयी यथा यज्ञ वितानम् अर्थम् ॥

शब्दार्थ—

कच्चित्	८.	हैं न	**या**	९.	जिन्होंने
शिवम्	७.	अच्छी प्रकार से	**वै**	१२.	उसी प्रकार से
देवक	५.	राजा देवक जी	**स्वगर्भेण**	१०.	अपने गर्भ में
भोज	४.	भोजवंशी	**दधार**	१३.	धारण किया था
पुत्र्याः,	६.	पुत्री (देवकी जी)	**देवम्,**	११.	भगवान् श्रीकृष्ण को
विष्णु, प्रजायाः	१.	विष्णु को, उत्पन्न करने वाली	**त्रयी**	१५.	चारों वेद
इव	३.	समान	**यथा**	१४.	जैसे
देव मातुः ।	२.	देवमाता अदिति के	**यज्ञ, वितानम्**	१६.	यज्ञ के, विस्तारक
			अर्थम् ॥	१७.	अर्थ को (धारण किये हैं)

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु को उत्पन्न करने वाली देवमाता अदिति के समान भोजवंशी राजा देवक पुत्री देवकी जी अच्छी प्रकार से हैं न ? जिन्होंने अपने गर्भ में भगवान् श्री कृष्ण को उ प्रकार से धारण किया था, जैसे चारों वेद यज्ञ के विस्तारक अर्थ को धारण किये हैं।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अपिस्विदास्ते भगवान् सुखं वो, यः सात्वतां कामदुघोऽनिरुद्धः ।
यमामनन्ति स्म ह शब्दयोनिं, मनोमयं सत्त्वतुरीयतत्त्वम् ॥३४॥

पदच्छेद— **अपिस्वित् आस्ते भगवान् सुखम् वः, यः सात्वताम् कामदुघः, अनिरुद्धः ।**
यम् आमनन्ति स्म ह शब्द योनिम्, मनोमयम् सत्त्व तुरीय तत्त्वम् ॥

शब्दार्थ—

अपिस्वित्	६.	क्या	**यम्**	९.	जिन्हें
आस्ते	८.	हैं	**आमनन्ति स्म**	१६.	माना गया है
भगवान्	४.	भगवान्	**ह**	११.	और
सुखम्	७.	सुखपूर्वक	**शब्द, योनिम्,**	१०.	वेद का, कारण
वः,	२.	आप जैसे	**मनोमयम्**	१५.	मन का अधिष्ठाता
यः	१.	जो	**सत्त्व**	१२.	सत्त्वगुण वाले
सात्वताम् कामदुघः	३.	भक्त वांछा-कल्पतरु हैं वे	**तुरीय**	१३.	(अन्तःकरण का) चौथा
अनिरुद्धः ।	५.	अनिरुद्ध जी	**तत्त्वम् ॥**	१४.	अंश

श्लोकार्थ—जो आप जैसे भक्तजनों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं, वे भगवान् अनिरुद्ध जी सुखपूर्वक हैं ? जिन्हें वेद का कारण और सत्त्वगुण वाले अन्तःकरण का चौथा अंश, मन अधिष्ठाता माना गया है।

हृदीकसत्यात्मजचारुदेष्ण गदादय स्वस्ति चरन्ति सौम्य ॥३५

पदच्छेद— अपिस्वित अन्ये च निज आत्म दैवम्, अनन्य वृत्त्या समनुव्रता ये ।
हृदीक सत्य। आत्मज चारुदेष्ण गद आदय स्वस्ति चरन्ति सौम्य ॥

शब्दार्थ—

अपिस्वित्	१४.	क्या	हृदीक	७.	हृदीक
अन्ये	१३.	दूसरे (भगवान् के) पुत्र	सत्या, आत्मज	८.	सत्यभामा के, पुत्र
च	१२.	और	चारुदेष्ण,	९.	चारुदेष्ण
निज, आत्म	३.	अपने, हृदयेश्वर	गद	१०.	गद
दैवम्,	४.	भगवान् श्री कृष्ण का	आदयः	११.	इत्यादि
अनन्य वृत्त्या	५.	अनन्य भाव से	स्वस्ति	१५.	कुशल से
समनुव्रताः	६.	अनुकरण करने वाले हैं (वे)	चरन्ति	१६.	हैं
ये ।	२.	जो	सौम्य ॥	१.	सौम्य स्वभाव व. उद्धव जी !

श्लोकार्थ—सौम्य स्वभाव वाले हे उद्धव जी ! जो अपने हृदयेश्वर भगवान् श्री कृष्ण का [illegible] से अनुकरण करने वाले हैं; वे हृदीक, सत्यभामा के पुत्र चारुदेष्ण, गद इत्[illegible] भगवान् के दूसरे पुत्र क्या कुशल से हैं ?

षट्त्रिंश: श्लोक:

अपि स्वदोर्भ्यां विजयाच्युताभ्यां, धर्मेण धर्मः परिपाति सेतुम् ।
दुर्योधनोऽतप्यत यत्सभायां, साम्राज्यलक्ष्म्या विजयानुवृत्त्या ॥३६॥

पदच्छेद— अपि स्व दोर्भ्याम् विजय अच्युताभ्याम्, धर्मेण धर्मः परिपाति सेतुम् ।
दुर्योधनः अतप्यत यत् सभायाम्, साम्राज्य लक्ष्म्या विजय अनुवृत्त्या ॥

शब्दार्थ—

अपि	१.	क्या	दुर्योधनः	११.	दुर्योधन
स्व, दोर्भ्याम्	५.	अपनी, भुजाओं से	अतप्यत	१६.	दुःखी हुआ था
विजय	३.	अर्जुन (और)	यत्	९.	जिनकी
अच्युताभ्याम्,	४.	श्री कृष्ण रूपी	सभायाम्,	१०.	राजसभा में
धर्मेण	७	धर्मपूर्वक	साम्राज्य	१२.	(उनके) राज्य
धर्मः	२.	धर्मराज युधिष्ठर	लक्ष्म्या	१३.	वैभव से (और)
परिपाति	८.	पालन कर रहे हैं	विजय	१४.	सर्वत्र
सेतुम् ।	६.	मर्यादा का	अनुवृत्त्या ॥	१५.	जीत के कारण

श्लोकार्थ—क्या धर्मराज युधिष्ठिर अर्जुन और श्रीकृष्ण रूपी अपनी भुजाओं से मर्यादा का पालन कर रहे हैं ? जिनकी मयदानव द्वारा बनाई गई राजसभा में दुर्योधन [illegible] वैभव से और सर्वत्र जीत के कारण दुःखी हुआ था ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

किं वा कृताघेष्वघमत्यमर्षी, भीमोऽहिवद्दीर्घतमं व्यमुञ्चत् ।
यस्याङ्घ्रिपातं रणभूर्न सेहे, मार्गं गदायाश्चरतो विचित्रम् ।।३७।।

पदच्छेद— **किम् वा कृत अघेषु अघम् अति अमर्षी, भीमः अहिवत् दीर्घतमम् व्यमुञ्चत् ।**
यस्य अङ्घ्रि पातम् रण भूः न सेहे, मार्गम् गदायाः चरतः विचित्रम् ।।

शब्दार्थ—

किम् वा	५.	क्या	**यस्य**	१४.	जिस (भीमसेन) के
कृत	२.	करने वालों के प्रति	**अङ्घ्रि**	१५.	चरणों की
अघेषु	१.	अपराध	**पातम्**	१६.	चोट को
अघम्	८.	(अपने) क्रोध को	**रण, भूः**	१७.	युद्ध, भूमि
अति, अमर्षी,	३	अत्यन्त, असहनशील	**न, सेहे**	१८.	नहीं, सह सकी थी
भीमः	४.	भीमसेन ने	**मार्गम्**	१२.	युद्ध
अहिवत्	६.	साँप के समान	**गदायाः**	११.	गदा
दीर्घतमम्	७.	लम्बे समय से चले आ रहे	**चरतः**	१३.	करते हुये
व्यमुञ्चत् ।	९	छोड़ दिया है	**विचित्रम् ।।**	१०.	अद्भुत

श्लोकार्थ—अपराध करने वालों के प्रति अत्यन्त असहनशील भीमसेन ने क्या साँप के समान लम्बे समय से चले आ रहे अपने क्रोध को छोड़ दिया है ? अद्भुत गदा युद्ध करते हुये जिस भीमसेन के चरणों की चोट को युद्ध भूमि नहीं सह सकी थी ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

कच्चिद्यशोधा रथयूथपानां, गाण्डीवधन्वोपरतारिरास्ते ।
अलक्षितो यच्छरकूटगूढो, मायाकिरातो गिरिशस्तुतोष ।।३८।।

पदच्छेद— **कच्चित् यशोधाः रथ यूथपानाम्, गाण्डीव धन्वा उपरत अरिः आस्ते ।**
अलक्षितः यत् शर कूट गूढः, माया किरातः गिरिशः तुतोष ।।

शब्दार्थ—

कच्चित्	५.	क्या	**अलक्षितः**	१२.	नहीं दिखाई देते हुये
यशोधाः	३.	यश को बढ़ाने वाले	**यत्, शर**	९.	जिनके बाणों के
रथ	१.	महारथियों और	**कूट**	१०.	जाल में
यूथपानाम्,	२.	सेनापतियों के	**गूढः,**	११.	छिपे हुये (अतः)
गाण्डीव, धन्वा	४.	गाण्डीव, धनुर्धर (अर्जुन)	**माया**	१४.	वेषधारी
उपरत	७.	नष्ट हो जाने से	**किरातः**	१३.	किरात
अरिः	६.	शत्रुओं के	**गिरिशः**	१५.	भगवान् शंकर
आस्ते ।	८.	(सकुशल) हैं	**तुतोष ।।**	१६.	प्रसन्न हुये थे

श्लोकार्थ—महारथियों और सेनापतियों के यश को बढ़ाने वाले गाण्डीव धनुर्धर अर्जुन क्या श[illegible] नष्ट हो जाने से सकुशल हैं ? जिनके बाणों के जाल में छिपे हुए अतः नहीं दिखा[illegible] किरात वेषधारी भगवान् शंकर प्रसन्न हुये थे

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यमावुतस्वित्तनयौ पृथायाः, पार्थैर्वृतौ पक्ष्मभिरक्षिणीव ।
रेमात उद्दाय मृधे स्वरिक्थं, परात्सुपर्णाविव वज्रिवक्त्रात् ।।३९।।

पदच्छेद— **यमौ उतस्वित् तनयौ पृथायाः, पार्थैः वृतौ पक्ष्मभिः अक्षिणी इव ।**
रेमाते उद्दाय मृधे स्व रिक्थम्, परात् सुपर्णौ इव वज्रि वक्त्रात् ।।

शब्दार्थ—

यमौ	७.	(माद्री के) जुड़वे पुत्र	**रेमाते**	१६.	सुशोभित हुये थे
उतस्वित्	८.	कुशल से तो हैं	**उद्दाय**	१५.	छीन कर
तनयौ	६.	पालन किये गये	**मृधे**	१२.	युद्ध में
पृथायाः,	५.	कुन्ती के द्वारा	**स्वरिक्थम्,**	१४.	अपने राज्य भाग को
पार्थैः	३.	पुत्र युधिष्ठिरादि से	**परात्**	१३.	शत्रुओं से
वृतौ	४.	रक्षित (तथा)	**सुपर्णौ इव**	११.	दो गरुड़ के समान (वे दोनों)
पक्ष्मभिः	१.	पलकों से (रक्षित)	**वज्रि**	९.	इन्द्र के
अक्षिणी, इव ।	२.	आँखों के, समान	**वक्त्रात् ।।**	१०.	मुख से (अमृत अपहारी)

श्लोकार्थ—पलकों से रक्षित आँखों के समान कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिरादि से रक्षित तथा कुन्ती के द्वारा पालन किये गये माद्री के जुड़वे पुत्र नकुल और सहदेव कुशल से तो हैं ? इन्द्र के मुख से अमृत छीन लेने वाले दो गरुड़ के समान वे दोनों युद्ध में शत्रुओं से अपने राज्य भाग को छीन कर सुशोभित हुये थे ।

चत्वारिंशः श्लोकः

अहो पृथापि ध्रियतेऽर्भकार्थे, राजर्षिवर्येण विनापि तेन ।
यस्त्वेकवीरोऽधिरथो विजिग्ये, धनुर्द्वितीयः ककुभश्चतस्रः ।।४०।।

पदच्छेद— **अहो पृथा अपि ध्रियते अर्भक अर्थे, राजर्षि वर्येण विना अपि तेन ।**
यः तु एकवीरः अधिरथः विजिग्ये, धनुः द्वितीयः ककुभः चतस्रः ।।

शब्दार्थ—

अहो, पृथा	१.	अरे (बेचारी), कुन्ती	**यः**	९.	जिस
अपि	७.	ही	**तु**	१२.	ही
ध्रियते	८.	जीवन धारण किये है	**एकवीरः**	११.	अकेले
अर्भक अर्थे,	६.	बालकों के लिए	**अधिरथः**	१०.	महारथी (पाण्डु) ने
राजर्षि	३.	राजर्षि	**विजिग्ये,**	१७.	जीत लिया था
वर्येण	४.	श्रेष्ठ (पाण्डु के)	**धनुः**	१४.	धनुष से
विना, अपि	५.	विरह में, भी	**द्वितीयः**	१३.	केवल
तेन ।	२.	उन	**ककुभः**	१६.	दिशाओं को
			चतस्रः ।।	१५.	चारों

श्लोकार्थ—अरे बेचारी कुन्ती उन राजर्षि-श्रेष्ठ पाण्डु के विरह में भी बालकों के लिये ही जीवन धारण किये है जिस महारथी पाण्डु ने अकेले ही केवल धनुष से चारों दिशाओं को जीत लिया था

एकचत्वारिंशः श्लोकः

सौम्यानुशोचे तमधःपतन्तं, भ्रात्रे परेताय विदुद्रुहे यः।
निर्यापितो येन सुहृत्स्वपुर्या, अहं स्वपुत्रान् समनुव्रतेन ॥४१॥

पदच्छेद— **सौम्य अनुशोचे तम् अधःपतन्तम्, भ्रात्रे परेताय विदुद्रुहे यः।**
निर्यापितः येन सुहृत् स्वपुर्याः, अहम् स्व पुत्रान् समनुव्रतेन ॥

शब्दार्थ—

सौम्य	१.	सौम्य स्वभाव वाले	**निर्यापितः**	१६.	निकलवा दिया
अनुशोचे	४.	(मैं) शोक कर रहा हूँ	**येन**	९.	जिन्होंने
तम्	३.	उन (धृतराष्ट्र) के प्रति	**सुहृत्**	१४.	हितचिन्तक को
अधः, पतन्तम्,	२.	अधः पतन को, प्राप्त	**स्वपुर्याः,**	१५.	अपनी राजधानी से
भ्रात्रे	७.	भाई (पाण्डु के पुत्रों) से	**अहम्**	१३.	मुझ
परेताय	६.	परलोक वासी	**स्व**	१०.	अपने
विदुद्रुहे	८.	विरोध किया (तथा)	**पुत्रान्**	११.	पुत्रों की
यः।	५.	जिन्होंने	**समनुव्रतेन ॥**	१२.	बात मान कर

श्लोकार्थ—सौम्य स्वभाव वाले हे उद्धव जी! अधः पतन को प्राप्त उन धृतराष्ट्र के प्रति मैं शोक कर रहा हूँ, जिन्होंने परलोक वासी भाई पाण्डु के पुत्रों से विरोध किया तथा जिन्होंने अपने पुत्रों की बात मान कर मुझ हितचिन्तक को अपनी राजधानी से निकलवा दिया था।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽहं हरेर्मर्त्यविडम्बनेन, दृशो नृणां चालयतो विधातुः।
नान्योपलक्ष्यः पदवीं प्रसादा-च्चरामि पश्यन् गतविस्मयोऽत्र ॥४२॥

पदच्छेद— **सः अहम् हरेः मर्त्य विडम्बनेन, दृशः नृणाम् चालयतः विधातुः।**
न अन्य उपलक्ष्यः पदवीम् प्रसादात्, चरामि पश्यन् गत विस्मयः अत्र ॥

शब्दार्थ—

सः, अहम्	१०.	वही मैं	**उपलक्ष्यः**	९.	देखता हुआ
हरेः	६.	भगवान् श्री कृष्ण की	**पदवीम्**	८.	महिमा को
मर्त्य, विडम्बनेन,	१.	मनुष्य, शरीर से	**प्रसादात्,**	७.	कृपा से (उनकी)
दृशः	३.	बुद्धि को	**चरामि**	१६.	विचरण कर रहा हूँ
नृणाम्	२.	मनुष्यों की	**पश्यन्**	१४.	देखा जाता हुआ
चालयतः	४.	मोहित करने वाले,	**गत**	१२.	रहित होकर (तथा)
विधातुः।	५.	संसार के रचियता	**विस्मयः**	११.	आश्चर्य और शोक से
न, अन्य	१३.	नहीं, दूसरों से	**अत्र ॥**	१५.	यहाँ पर

श्लोकार्थ—मनुष्य शरीर से मनुष्यों की बुद्धि को मोहित करने वाले, संसार के रचयिता भगवान् श्री कृष्ण की कृपा से उनकी महिमा को देखता हुआ वही मैं आश्चर्य और शोक से रहित होकर तथा दूसरों से नहीं देखा जाता हुआ यहाँ पर विचरण कर रहा हूँ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नूनं नृपाणां त्रिमदोत्पथानां, महीं मुहुश्चालयतां चमूभिः ।
वधात्प्रपन्नार्तिजिहीर्षयेशो-ऽप्युपैक्षताघं भगवान् कुरूणाम् ।।४३।।

पदच्छेद— नूनम् नृपाणाम् त्रिमद उत्पथानाम्, महीम् मुहुः चालयताम् चमूभिः ।
वधात् प्रपन्न आर्ति जिहीर्षया ईशः, अपि उपैक्षत अघम् भगवान् कुरूणाम् ।।

शब्दार्थ—

नूनम्	१०.	ही	प्रपन्न, आर्ति	८.	शरणागत भक्तों के, दुःख को
नृपाणाम्	३.	राजाओं का (तथा)	जिहीर्षया	९.	दूर करने की इच्छा से
त्रिमद	१.	तीनों मदों के कारण	ईशः,	१२.	समर्थ होने पर
उत्पथानाम्,	२.	कुमार्ग गामी	अपि	१३.	भी
महीम्, मुहुः	४.	पृथ्वी को, बार-बार	उपैक्षत	१६	सहते रहे
चालयताम्	५.	कँपा देने वाली	अघम्	१५.	अपराध को (इतने दिनों तक)
चमूभिः ।	६.	(उनकी) सेनाओं का	भगवान्	११.	भगवान् श्री कृष्ण
वधात्	७.	एक साथ वध करके	कुरूणाम् ।।	१४.	कौरवों के

श्लोकार्थ—धन, विद्या और जाति तीनों मदों के कारण कुमार्गगामी राजाओं का तथा पृथ्वी को बार-बार कँपा देने वाली उनकी सेनाओं का एक साथ वध करके शरणागत भक्तों के दुःख को दूर करने की इच्छा से ही भगवान् श्री कृष्ण समर्थ होने पर भी कौरवों के अपराध को इतने दिनों तक सहते रहे ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

अजस्य जन्मोत्पथनाशनाय, कर्माण्यकर्तुर्ग्रहणाय पुंसाम् ।
नन्वन्यथा कोऽर्हति देहयोगं, परो गुणानामुत कर्मतन्त्रम् ।।४४।।

पदच्छेद— अजस्य जन्म उत्पथ नाशनाय, कर्माणि अकर्तुः ग्रहणाय पुंसाम् ।
ननु अन्यथा कः अर्हति देह योगम्, परः गुणानाम् उत कर्म तन्त्रम् ।।

शब्दार्थ—

अजस्य, जन्म	१. अजन्मा भगवान् का, जन्म	कः	११.	कौन (व्यक्ति)
उत्पथ, नाशनाय,	२. दुष्टों के, विनाश के लिये	अर्हति	१५.	चाहेगा
कर्माणि	५. कर्म	देह, योगम्,	१४.	शरीर, बन्धन को
अकर्तुः	४. अकर्ता भगवान् के	परः	१०.	ऊपर उठा हुआ
ग्रहणाय	७. आकर्षित करने के लिये (हैं)	गुणानाम्	९.	तीनों गुणों से
पुंसाम् ।	६. मनुष्यों को	उत	१६.	फिर (भगवान् की क्या)
ननु	३. और	कर्म	१२.	कर्म के
अन्यथा	८. नहीं तो	तन्त्रम् ।।	१३.	पराधीन

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् का जन्म कुमार्गगामियों के विनाश के लिये और अकर्ता भगवान् के कर्म मनुष्यों को आकर्षित करने के लिये हैं, नहीं तो तीनों गुणों से ऊपर उठा हुआ कौन व्यक्ति कर्म के पराधीन शरीर बन्धन को चाहेगा ? फिर भगवान की तो बात ही क्या है ?

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तस्य प्रपन्नाखिललोकपाना—मवस्थितानामनुशासने स्वे ।
अर्थाय जातस्य यदुष्वजस्य, वार्तां सखे कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥४५॥

पदच्छेद—

तस्य प्रपन्न अखिल लोकपानाम्, अवस्थितानाम् अनुशासने स्वे ।
अर्थाय जातस्य यदुषु अजस्य, वार्ताम् सखे कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१२.	उन	**अर्थाय**	८.	कल्याण के लिये (ही)
प्रपन्न	७.	परम भक्तों के	**जातस्य**	११	उत्पन्न हुये
अखिल	५	सम्पूर्ण	**यदुषु**	१०.	यदुकुल में
लोकपानाम्,	६.	लोकपालों (और)	**अजस्य,**	९.	अजन्मा होकर (भी)
अवस्थितानाम्	४.	आये हुये	**वार्ताम्**	१४.	लीलायें
अनुशासने	३.	शरण में	**सखे**	१.	हे सखे !
स्वे ।	२.	अपनी	**कीर्तय**	१५.	सुनावें
			तीर्थ, कीर्तेः ॥	१३.	पवित्र, कीर्ति (श्री कृष्ण) की

श्लोकार्थ—हे सखे ! अपनी शरण में आये हुये सम्पूर्ण लोकपालों और परम भक्तों के कल्याण के लिये ही अजन्मा होकर भी यदुकुल में उत्पन्न हुये उन पवित्र कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलायें सुनावें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे विदुरोद्धवसंवादे प्रथमः अध्यायः ॥१॥

ॐ श्रीगणेशाय नम

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

अथ द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— इति भागवतः पृष्टः, क्षत्त्रा वार्तां प्रियाश्रयाम् ।
प्रतिवक्तुं न चोत्सेह, औत्कण्ठ्यात्स्मारितेश्वरः ।।१।।

पदच्छेद— इति भागवतः पृष्टः, क्षत्त्रा वर्ताम् प्रिय आश्रयाम् ।
प्रतिवक्तुम् न च उत्सेहे, औत्कण्ठ्यात् स्मारित ईश्वरः ।।

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	प्रतिवक्तुम्	१२.	उत्तर देने में (वे)
भागवतः	७.	परम भक्त (उद्धव जी को)	न	१३.	नहीं
पृष्टः,	६.	पूछने पर	च	१०.	और
क्षत्त्रा	२.	विदुर जी के द्वारा	उत्सेहे,	१४.	समर्थ हो सके
वार्ताम्	५.	लीला	औत्कण्ठ्यात्	११.	हृदय भर जाने के कारण
प्रिय	३.	परम प्रिय भगवान् श्रीकृष्ण से	स्मारित	६.	स्मरण हो आया
आश्रयाम् ।	४.	सम्बन्धित	ईश्वरः ।।	८.	भगवान् श्री कृष्ण का

श्लोकार्थ—इस प्रकार विदुर जी के द्वारा परम प्रिय भगवान् श्रीकृष्ण से सम्बन्धित लीला पूछने परम भगवद् भक्त उद्धव जी को भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण हो आया और प्रेम से हृदय जाने के कारण उत्तर देने में वे समर्थ नहीं हो सके ।

द्वितीयः श्लोकः

यः पञ्चहायनो मात्रा, प्रातराशाय याचितः ।
तन्नैच्छद्रचयन् यस्य, सपर्यां बाललीलया ।।२।।

पदच्छेद—

यः पञ्चहायनः मात्रा, प्रातराशाय याचितः ।
तत् न ऐक्षत् रचयन् यस्य, सपर्याम् बाल लीलया ।।

शब्दार्थ—

यः	२.	जो (उद्धव जी)	न	१२.	नहीं
पञ्च, हायनः	१.	पांच, वर्ष की अवस्था में	ऐक्षत्	१३.	इच्छा करते थे
मात्रा,	८.	माता के द्वारा	रचयन्	७.	लगे रहते थे (और)
प्रातराशाय	६.	कलेवे के लिये	यस्य,	५.	जिस (भगवान् श्रीकृष्ण)
याचितः ।	१०.	बार-बार कहे जाने पर (भी)	सपर्याम्	६.	सेवा में
तत्	११.	उसकी	बाल	३.	बाल
			लीलया।।	४.	क्रीडा के माध्यम से

श्लोकार्थ—पाँच वर्ष की अवस्था में जो उद्धव जी बाल क्रीड़ा के माध्यम से जिस भगवान् श्रीकृष्ण सेवा में लगे रहते थे और माता के द्वारा कलेवे के लिये बार-बार कहे जाने पर भी उ इच्छा नहीं करते थे ।

तृतीयः श्लोकः

स कथं सेवया तस्य, कालेन जरसं गतः ।
पृष्टो वार्तां प्रतिब्रूयाद्भर्तुः पादावनुस्मरन् ।।३।।

सः कथम् सेवया तस्य, कालेन जरसम् गतः ।
पृष्टः वार्ताम् प्रतिब्रूयात्, भर्तुः पादौ अनुस्मरन् ।।

वही (उद्धव जी)	**पृष्टः**	११.	पूछने पर भी (वे)
कैसे	**वार्ताम्**	१०.	कृष्ण लीला के बारे में
सेवा करते-करते	**प्रतिब्रूयात्**	१३.	उत्तर दे सकते थे
भगवान् श्री कृष्ण की	**भर्तुः**	७.	(अपने) स्वामी श्री कृष्ण
समय के साथ	**पादौ**	८.	चरणों में
बुढ़ापे को	**अनुस्मरन् ।।**	९.	लीन थे (अतः)
प्राप्त हो गये थे (वे)			

व जी भगवान् श्री कृष्ण की सेवा करते-करते समय के साथ बुढ़ापे को प्राप्त हो पने स्वामी श्री कृष्ण के चरणों में लीन थे, अतः कृष्ण लीला के बारे में पूछने पे उत्तर दे सकते थे ?

चतुर्थः श्लोकः

स मुहूर्तमभूत्तूष्णीं कृष्णाङ्घ्रिसुधया भृशम् ।
तीव्रेण भक्तियोगेन निमग्नः साधु निर्वृतः ।।४।।

सः मुहूर्तम् अभूत् तूष्णीम्, कृष्ण अङ्घ्रि सुधया भृशम् ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, निमग्नः साधु निर्वृतः ।।

वे (उद्धव जी)	**भृशम् ।**	७.	अत्यन्त
दो घड़ी तक	**तीव्रेण**	२.	तीव्र
रहे	**भक्ति योगेन,**	३.	भक्ति योग के द्वारा
मौन	**निमग्नः**	८.	डूबे हुये
भगवान् श्री कृष्ण के	**साधु**	९.	परम
चरणारविन्द के	**निर्वृतः ।।**	१०.	आनन्द मग्न थे (अत)
अमृत रस में			

जी तीव्र भक्ति योग के द्वारा भगवान् श्री कृष्ण के चरणारविन्द के अमृत रस बे हुये परम आनन्द मग्न थे, अतः दो घड़ी तक मौन रहे ।

पञ्चमः श्लोकः

पुलकोद्भिन्नसर्वाङ्गो मुञ्चन्मीलद्दृशा शुचः ।
पूर्णार्थो लक्षितस्तेन स्नेहप्रसरसम्प्लुतः ॥५॥

पदच्छेद—

पुलक उद्भिन्न सर्व अङ्गः, मुञ्चत् मीलत् दृशा शुचः ।
पूर्ण अर्थः लक्षितः तेन, स्नेह प्रसर सम्प्लुतः ॥

शब्दार्थ—

पुलक	३.	रोंगटे	शुचः ।	७.	आंसुओं की धारा
उद्भिन्न	४	खड़े हो गये थे (और उनकी)	पूर्ण अर्थः	१३.	कृत-कृत्य
सर्व	१.	(उद्धव जी के) सारे	लक्षितः	१४.	माना
अङ्गः,	२.	शरीर में	तेन,	१२.	विदुर जी ने
मुञ्चत्	८.	बह रही थी (इस प्रकार)	स्नेह	९.	प्रेम के
मीलत्	५.	मुँदी हुई	प्रसर	१०.	प्रवाह में
दृशा	६.	आंखों से	सम्प्लुतः ॥	११.	डूबे हुये (उद्धव जी को)

श्लोकार्थ—उद्धव जी के सारे शरीर में रोंगटे खड़े हो गये थे और उनकी मुँदी हुई आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। इस प्रकार प्रेम के प्रवाह में डूबे हुये उद्धव जी को विदुर जी ने कृत-कृत्य माना।

षष्ठः श्लोकः

शनकैर्भगवल्लोकान्नृलोकं पुनरागतः ।
विमृज्य नेत्रे विदुरं प्रत्याहोद्धव उत्स्मयन् ॥६॥

पदच्छेद—

शनकैः भगवत् लोकात्, नृ लोकम् पुनः आगतः ।
विमृज्य नेत्रे विदुरम्, प्रत्याह उद्धवः उत्स्मयन् ॥

शब्दार्थ—

शनकैः	५.	धीरे-धीरे	विमृज्य	९.	पोछ कर
भगवत्	३.	भगवान् के	नेत्रे	८.	आंखो को
लोकात्,	४	प्रेमधाम से	विदुरम्,	११.	विदुर जी से
नृ लोकम्	६.	मनुष्य लोक में	प्रत्याह	१२.	बोले
पुनः	१.	तदनन्तर	उद्धवः	२	उद्धव जी
आगतः ।	७.	उतर आये (और)	उत्स्मयन् ॥	१०.	विस्मित होते हुये

श्लोकार्थ—तदनन्तर उद्धव जी भगवान् के प्रेमधाम से धीरे-धीरे मनुष्य लोक में उतर आये और आंखों को पोछ कर विस्मित होते हुये विदुर जी से बोले

सप्तमः श्लोकः

कृष्णद्युमणिनिम्लोचे गीर्णेष्वजगरेण ह ।
किं नु नः कुशलं ब्रूयां गतश्रीषु गृहेष्वहम् ।।७।।

कृष्ण द्युमणि निम्लोचे, गीर्णेषु अजगरेण ह ।
किम् नु नः कुशलम् ब्रूयाम्, गत श्रीषु गृहेषु अहम् ।।

श्रीकृष्ण रूप	नः	११.	उनकी
सूर्य के	कुशलम्	१३.	कुशल
अस्त हो जाने से	ब्रूयाम्,	१४.	बताऊँ
निगल लिया है (और वे)	गत	८.	रहित हो गये है
काल रूप अजगर ने	श्रीषु	७.	शोभा से
अतः	गृहेषु	४.	हमारे घरों को
क्या	अहम् ।।	१०.	मैं

रूप सूर्य के अस्त हो जाने से हमारे घरों को काल रूप अजगर ने निगल
ोभा से रहित हो गये हैं, अतः मैं उनकी क्या कुशल बताऊँ ।

अष्टमः श्लोकः

दुर्भगो बत लोकोऽयं यदवो नितरामपि ।
ये संवसन्तो न विदुर्हरिं मीना इवोडुपम् ।।८।।

दुर्भगः बत लोकः अयम्, यदवः नितराम् अपि ।
ये संवसन्तः न विदुः, हरिम् मीनाः इव उडुपम् ।।

अभागा है	संवसन्तः	६.	साथ रहते हुये भी
दुःख की बात है कि	न	११.	नहीं
ससार	विदुः,	१२.	पहचान सके
यह	हरिम्	१०.	भगवान् श्रीकृष्ण को
यादव लोग तो	मीनाः	१४.	मछलियाँ (समुद्र में)
अधिक (अभागे हैं)	इव	१३	जैसे
और भी	उडुपम् ।।	१५.	चन्द्रमा को (नहीं ज
जो			

ात है कि यह संसार अभागा है । यादव लोग तो और भी अधिक अभा
हुये भी भगवान् श्रीकृष्ण को नहीं पहचान सके । जैसे मछलियां समुद्र
द्रमा को नहीं जान सकीं

नवमः श्लोकः

इङ्गितज्ञाः पुरुप्रौढा एकारामाश्च सात्वताः ।
सात्वतामृषभं सर्वे भूतावासममंसत ।।९।।

इङ्गितज्ञाः पुरु प्रौढाः, एक आरामाः च सात्वताः ।
सात्वताम् ऋषभम् सर्वे, भूत आवासम् अमंसत ।।

२	मनोभावों को जानने वाले	सात्वताम्	११.	(केवल) यादवों मे
३	बड़े	ऋषभम्	१२.	प्रधान
४	बुद्धिमान्	सर्वे,	८.	वे सभी
६	एक साथ	भूत	९.	प्राणि मात्र के
७	खेलने वाले (थे)	आवासम्	१०.	आश्रय (श्री कृष्ण)
५.	और	अमंसत ।।	१३.	मानते रहे
१	यादव लोग			

लोग मनोभावों को जानने वाले, बड़े बुद्धिमान् और एक साथ खेलने वाले प्राणि-मात्र के आश्रय भगवान् श्री कृष्ण को केवल यादवों में प्रधान मानते रहे ।

दशमः श्लोकः

देवस्य मायया स्पृष्टा ये चान्यदसदाश्रिताः ।
भ्राम्यते धीर्न तद्वाक्यैरात्मन्युप्तात्मनो हरौ ।।१०।।

देवस्य मायया स्पृष्टाः, ये च अन्यत् असत् आश्रिताः ।
भ्राम्यते धीः न तद् वाक्यैः, आत्मनि उप्त आत्मनः हरौ ।।

२.	भगवान् की	भ्राम्यते	१६.	भ्रम में पड़ती थी
३	माया से	धीः	१४.	बुद्धि
४	मोहित	न	१५.	नहीं
५	जो	तद्	९.	उनके
१	किन्तु	वाक्यैः,	१०.	निन्दित वचनों से
६	दूसरे (शिशुपाल आदि)	आत्मनि	११.	आत्म रूप
७	अन्याय मार्ग पर	उप्त-आत्मनः	१३.	भक्ति करने वालो की
८	चलने वाले थे	हरौ ।।	१२.	भगवान् श्री कृष्ण में

भगवान् की माया से मोहित जो दूसरे शिशुपाल आदि अन्याय मार्ग पर चलने े निन्दित वचनों से आत्मरूप भगवान् श्रीकृष्ण में भक्ति करने वाले महात्माओं मे नहीं पड़ती थी ।

एकादशः श्लोकः

प्रदर्श्यातप्ततपसामवितृप्तदृशां नृणाम् ।
आदायान्तरधाद्यस्तु स्वबिम्बं लोकलोचनम् ।।११।।

प्रदर्श्य अतप्त तपसाम्, अवितृप्त दृशाम् नृणाम् ।
आदाय अन्तरधात् यः तु, स्व बिम्बम् लोक लोचनम् ।।

५. दर्शन देकर		अन्तरधात्	१४.	अन्तर्धान हो गये
३. नहीं करने वाले		यः	१	वे (भगवान् श्री कृष्ण)
२. तपस्या		तु	६.	तथा
८ तृप्त किये बिना (ही)		स्व	११.	अपने
७ उनके नेत्रों को		बिम्बम्	१२	श्री विग्रह को
४. मनुष्यों को (भी)		लोक	६	तीनों लोकों को
१३. छिपा कर		लोचनम् ।।	१०	मोहने वाले

गवान् श्री कृष्ण तपस्या नहीं करने वाले मनुष्यों को भी दर्शन देकर तथा उनके नेत्रे
किये बिना ही तीनों लोकों को मोहने वाले अपने श्री विग्रह को छिपा कर अन्तर्धा
।

द्वादशः श्लोकः

यन्मर्त्यलीलौपयिकं स्वयोग—मायाबलं दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः, परं पदं भूषणभूषणाङ्गम् ।।१२।।

यत् मर्त्य लीला औपयिकम् स्व योग, माया बलम् दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनम् स्वस्य च सौभग ऋद्धेः, परम् पदम् भूषण भूषण अङ्गम् ।।

७. जिस (श्री विग्रह) को	विस्मापनम्	१०.	आश्चर्यचकित (रहते
५. मनुष्य, लीला के	स्वस्य	६.	(उससे) स्वयं (भी)
६. योग्य	च	१३	तथा
१. अपनी	सौभग, ऋद्धेः,	११.	सौभाग्य (और), सुन्दर
२. वैष्णवी शक्ति के	परम्, पदम्	१२.	सबसे उत्तम, स्थान
३. प्रभाव को	भूषण	१५.	आभूषणों का भी
४. दिखाते हुये (भगवान् ने)	भूषण	१६	आभूषण (था)
८. धारण किया था	अङ्गम् ।।	१४.	शरीर के

नी वैष्णवी शक्ति के प्रभाव को दिखाते हुये भगवान् ने मनुष्य लीला के योग्य
विग्रह को धारण किया था, उससे स्वयं भी आश्चर्य चकित रहते थे । वह सौभाग्य
दरता का सबसे उत्तम स्थान तथा शरीर के आभूषणों का भी आभूषण था ।

त्रयोदशः श्लोकः

यद्धर्मसूनोर्बत राजसूये, निरीक्ष्य दृक्स्वस्त्ययनं त्रिलोकः ।
कार्त्स्न्येन चाद्येह गतं विधातु-रर्वाक्सृतौ कौशलमित्यमन्यत ।।१३।।

यत् धर्म सूनोः बत राजसूये, निरीक्ष्य दृक् स्वस्त्ययनम् त्रिलोकः ।
कार्त्स्न्येन च अद्य इह गतम् विधातुः, अर्वाक् सृतौ कौशलम् इति अमन्यत ।।

७.	जिस (श्री विग्रह) को	**कार्त्स्न्येन**	१५.	पूरी तरह से
३.	धर्मराज युधिष्ठिर के	**च**	१०.	कि
१	आश्चर्य है कि	**अद्य, इह**	१४.	आज, इसी रूप मे
४.	राजसूय यज्ञ में	**गतम्**	१६.	समा गई है
८.	देखकर	**विधातुः,**	११.	ब्रह्मा की
५.	आँखों के लिये	**अर्वाक्**	१२.	अब तक की
६.	कल्याणकारी	**सृतौ, कौशलम्**	१३.	सृष्टि रचना की
२.	तीनों लोकों के लोगों ने	**इति, अमन्यत ।।**	९.	ऐसा, माना था

श्चर्य है कि तीनों लोकों के लोगों ने धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आखो ल्याणकारी जिस श्री विग्रह को देख कर ऐसा माना था कि ब्रह्मा की अब तक वना की चतुराई आज इसी रूप में पूरी तरह से समा गई है ।

चतुर्दशः श्लोकः

यस्यानुरागप्लुतहासरास-लीलावलोकप्रतिलब्धमानाः ।
व्रजस्त्रियो दृग्भिरनुप्रवृत्त-धियोऽवतस्थुः किल कृत्यशेषाः ।।१४।।

यस्य अनुराग प्लुत हास रास, लीला अवलोक प्रतिलब्ध मानाः ।
व्रज स्त्रियः दृग्भिः अनुप्रवृत्त, धियः अवतस्थुः किल कृत्य शेषाः ।।

१.	जिस (भगवान् श्रीकृष्ण) की	**व्रज, स्त्रियः**	९.	व्रज की गोपियाँ
२.	प्रेम से	**दृग्भिः**	१०.	दृष्टि से
३.	परिपूर्ण	**अनुप्रवृत्त,**	१२.	(उन्हीं में) लगा क
४.	हँसी	**धियः**	११	अपने ध्यान को
५.	विनोद (और)	**अवतस्थुः**	१६.	बैठी ही रहती थ
६	तिरछी	**किल**	१३.	तथा
७.	चितवन से	**कृत्य**	१४.	सारा काम-काज
ाः।८.	सम्मानित की गई	**शेषाः ।।**	१५.	छोड़ कर

स भगवान् श्रीकृष्ण की प्रेम से परिपूर्ण हँसी, विनोद और तिरछी चितवन से स ी गई व्रज की गोपियां दृष्टि से अपने ध्यान को उन्हीं में लगा कर तथा सारा क ोड़ कर बैठी ही रहती थी ।

पञ्चदश: श्लोक:

स्वशान्तरूपेष्वितरैः स्वरूपै-रभ्यर्द्यमानेष्वनुकम्पितात्मा ।
परावरेशो महदंशयुक्तो, ह्यजोऽपि जातो भगवान् यथाग्निः ।।१५।।

पदच्छेद— स्व शान्त रूपेषु इतरैः स्वरूपैः, अभ्यर्द्यमानेषु अनुकम्पित आत्मा ।
पर अवर ईशः महत् अंश युक्तः, हि अजः अपि जातः भगवान् यथा अग्निः ।।

शब्दार्थ—

स्व	७.	अपने (भक्तों को)	ईशः	२.	स्वामी
शान्त रूपेषु	६.	शान्त स्वरूप	महत्, अंश	१२.	महान् अंश, बलराम जी के
इतरैः	४	अशान्त	युक्तः, हि	१३.	साथ, ही
स्वरूपैः,	५.	स्वरूप (असुरों) से	अजः, अपि	११.	अजन्मा होने पर, भी
अभ्यर्द्यमानेषु	८	पीड़ित देखे (और)	जातः	१४.	उत्पन्न हुये
अनुकम्पित	९	दया से द्रवित	भगवान्	३.	भगवान् श्री कृष्ण
आत्मा ।	१०.	होकर	यथा	१५	जैसे (काष्ठ से)
पर अवर	१.	चराचर के	अग्निः ।।	१६.	अग्नि उत्पन्न होती है

श्लोकार्थः—चराचर के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण अशान्त स्वरूप असुरों से शान्त स्वरूप अपने भक्तों को पीड़ित देखे और दया से द्रवित होकर अजन्मा होने पर भी अपने महान् अंश बलराम जी के साथ ही उत्पन्न हुये । जैसे काष्ठ से अग्नि उत्पन्न होती है ।

षोडश: श्लोक:

मां खेदयत्येतदजस्य जन्म, विडम्बनं यद्वसुदेवगेहे ।
व्रजे च वासोऽरिभयादिवस्वयं, पुराद् व्यवात्सीद् यदनन्तवीर्यः ।।१६।।

पदच्छेद— माम् खेदयति एतद् अजस्य जन्म, विडम्बनम् यद् वसुदेव गेहे ।
व्रज च वासः अरि भयात् इव स्वयम्, पुरात् व्यवात्सीत् यद् अनन्त वीर्यः ।।

शब्दार्थ—

माम्	१५.	मुझे	च	१०.	और
खेदयति	१६.	बेचैन कर रही हैं	वासः	९	छिप कर रहना
एतद्	१४.	ये (सब लीलाएँ)	अरि, भयात्	६.	शत्रु कंस के, भय से
अजस्य	१	अजन्मा भगवान् का	इव	५.	मानो
जन्म,विडम्बनम्	४.	जन्म लेने की, लीला करना	स्वयम्,	७	अपने आप
यद्	२.	जो	पुरात्,व्यवात्सीत्	१३.	मथुरा पुरी से, भागजाना है
वसुदेव, गेहे ।	३.	वसुदेव जी के घर में	यद्	१२.	जो (कालयवन के डर से)
व्रजे	८.	व्रज में	अनन्त वीर्यः	११.	अनन्त शक्तिशाली होकर

श्लोकार्थ :—अजन्मा होकर भी भगवान् का जो वसुदेव जी के घर में जन्म लेने की लीला करना है मानो शत्रु कंस के भय से अपने आप व्रज में छिप कर रहना है और अनन्त शक्तिशाली होकर भी जो कालयवन के डर से मथुरा पुरी से भाग जाना है, ये सब लीलायें मुझे बेचैन कर रही हैं ।

सप्तदश: श्लोक:

दुनोति चेतः स्मरतो ममैतद्, यदाह पादावभिवन्द्य पित्रोः ।
तताम्ब कंसादुरुशङ्कितानां, प्रसीदतं नोऽकृतनिष्कृतीनाम् ॥१७॥

पदच्छेद—

दुनोति चेत स्मरतः मम एतद्, यद् आह पादौ अभिवन्द्य पित्रोः ।
तात अम्ब कंसात् उरु शङ्कितानाम्, प्रसीदतम् नः अकृत निष्कृतीनाम् ॥

शब्दार्थ—

दुनोति	१६	दुःख हो रहा है	**तात, अम्ब**	५.	हे तात ! हे मात !
चेतः	१५.	मन में (बहुत)	**कंसात्**	६.	कंस से
स्मरतः, मम	१४.	स्मरण करते हुये, मेरे	**उरु**	७	बहुत
एतद्,	१३.	इसका	**शङ्कितानाम्,**	८.	डरे हुये (तथा आपकी
यद्, आह	४.	जो (यह), कहा था (कि)	**प्रसीदतम्**	१२	प्रसन्न होवें
पादौ	२.	चरणों की	**नः**	१०.	मुझ
अभिवन्द्य	३.	वन्दना करके (भगवान् ने)	**अकृत**	९.	सेवा न करने वाले
पित्रोः ।	१.	माता-पिता के	**निष्कृतीनाम् ॥**	११.	अपराधी पर (आप)

श्लोकार्थ—माता-पिता के चरणों की वन्दना करके भगवान् ने जो यह कहा था कि 'हे तात ! हे कंस से बहुत डरे हुये तथा आपकी सेवा न करने वाले मुझ अपराधी पर आप प्रस इसका स्मरण करते हुये मेरे मन में बहुत दुःख हो रहा है ।

अष्टादश: श्लोक:

को वा अमुष्याङ्घ्रिसरोजरेणुं, विस्मर्तुमीशीत पुमान् विजिघ्रन् ।
यो विस्फुरद्भ्रूविटपेन भूमे—र्भारं कृतान्तेन तिरश्चकार ॥१८॥

पदच्छेद—

कः वा अमुष्य अङ्घ्रि सरोज रेणुम्, विस्मर्तुम् ईशीत पुमान् विजिघ्रन् ।
यः विस्फुरत् भ्रू विटपेन भूमेः, भारम् कृतान्तेन तिरश्चकार ॥

शब्दार्थ—

कः	१३.	कौन	**यः**	१.	जिन्होंने
वा	१५.	उन्हें	**विस्फुरत्**	३.	फड़कती
अमुष्य	९.	उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के	**भ्रू**	४.	भौंहों के
अङ्घ्रि, सरोज	१०.	चरण, कमल के	**विटपेन**	५.	विलास से
रेणुम्,	११.	पराग का	**भूमेः,**	६.	पृथ्वी के
विस्मर्तुम्, ईशीत	१६	भूल, सकेगा	**भारम्**	७	बोझ को
पुमान्	१४.	पुरुष	**कृतान्तेन**	२	काल रूप
विजिघ्रन् ।	१२.	सेवन करता हुआ	**तिरश्चकार ॥**	८.	उतार दिया

श्लोकार्थ—जिन्होंने कालरूप फड़कती भौंहों के विलास से पृथ्वी के बोझ को उतार दिया, उन श्रीकृष्ण के चरण कमल के पराग का सेवन करता हुआ कौन पुरुष उन्हें भूल सकेगा ?

एकोनविंश: श्लोक:

दृष्टा भवद्भिर्ननु राजसूये, चैद्यस्य कृष्णं द्विषतोऽपि सिद्धिः ।
यां योगिनः संस्पृहयन्ति सम्यग्, योगेन कस्तद्विरहं सहेत ।।१९।।

पदच्छेद—

दृष्टा भवद्भिः ननु राजसूये, चैद्यस्य कृष्णम् द्विषतः अपि सिद्धिः ।
याम् योगिनः संस्पृहयन्ति सम्यग्, योगेन कः तद् विरहम् सहेत ।।

शब्दार्थ—

दृष्टा	८.	देखी होगी	**याम्**	११.	जिस (उत्तम गति) की
भवद्भिः	२.	आप लोगों ने	**योगिनः**	९.	योगीजन (भी)
ननु	७.	संभवतः	**संस्पृहयन्ति**	१२.	इच्छा करते हैं (अतः)
राजसूये,	१.	(युधिष्ठिर के) राजसूय यज्ञ में	**सम्यग्, योगेन**	१०.	तीव्र, योग के द्वारा
चैद्यस्य	५.	शिशुपाल की	**कः**	१३	कौन (व्यक्ति)
कृष्णम्	३.	भगवान् श्रीकृष्ण से	**तद्**	१४.	उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के
द्विषतः, अपि	४	वैर करने पर, भी	**विरहम्**	१५.	वियोग को
सिद्धिः ।	६	उत्तम गति	**सहेत ।।**	१६.	सह सकता है

श्लोकार्थ—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आप लोगों ने भगवान् श्रीकृष्ण से वैर करने पर भी शिशुपाल की उत्तम गति संभवतः देखी होगी । योगीजन भी तीव्र योग के द्वारा जिस उत्तम गति की इच्छा करते हैं । अतः कौन व्यक्ति उन भगवान् श्रीकृष्ण के वियोग को सह सकता है ।

विंश: श्लोक:

तथैव चान्ये नरलोकवीरा, य आहवे कृष्णमुखारविन्दम् ।
नेत्रैः पिबन्तो नयनाभिरामं, पार्थास्त्रपूताः पदमापुरस्य ।।२०।।

पदच्छेद—

तथैव च अन्ये नरलोक वीराः, ये आहवे कृष्ण मुख अरविन्दम् ।
नेत्रैः पिबन्तः नयन अभिरामम्, पार्थ अस्त्र पूताः पदम् आपुः अस्य ।।

शब्दार्थ—

तथैव, च	१.	उसी प्रकार, और	**नेत्रैः, पिबन्तः**	११	आँखों से, पान करते हुये
अन्ये	३.	दूसरे	**नयन**	७.	नेत्रों को
नरलोक	४.	मनुष्य लोक के	**अभिरामम्,**	८.	सुन्दर लगने वाले
वीराः	५.	योद्धा थे (वे)	**पार्थ, अस्त्र**	१२.	अर्जुन के, गाण्डीव धनुष से
ये	२.	जो	**पूताः**	१३.	पवित्र होकर
आहवे	६	युद्ध में	**पदम्**	१५.	धाम को
कृष्ण मुख	९.	भगवान् श्रीकृष्ण के मुख	**आपुः**	१६.	प्राप्त कर लिये थे
अरविन्दम् ।	१०.	कमल का	**अस्य ।।**	१४.	इन के

श्लोकार्थ—उसी प्रकार और जो दूसरे मनुष्य-लोक के योद्धा थे, वे युद्ध में नेत्रों को सुन्दर लगने वाले भगवान् श्रीकृष्ण के मुख-कमल का आंखों से पान करते हुये अर्जुन के गाण्डीव धनुष से पवित्र होकर इनके धाम को प्राप्त कर लिये थे ।

बलिं हरद्भिश्चिरलोकपालैः, किरीटकोट्येडितपादपीठः ॥२१॥

पदच्छेद

स्वयम् तु असाम्य अतिशय त्रि अधीश, स्वाराज्य लक्ष्म्या आप्त समस्त काम ।
बलिम् हरद्भिः चिर लोकपालैः, किरीट कोट्या ईडित पाद पीठः ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्	३.	(भगवान् श्रीकृष्ण) स्वयं	**बलिम्**	१०.	भेंट-पूजा
तु	५.	तथा	**हरद्भिः**	११.	चढ़ाते हुये
असाम्य	१.	बराबर और	**चिर,लोकपालैः,**	९.	असंख्य; लोकपाल
अतिशयः	२.	अधिक महिमा वालों से रहित	**किरीट**	१२.	मुकुटों के
त्रि अधीशः,	४.	तीनों लोकों के अधिपति हैं	**कोट्या**	१३.	अग्रभाग से (उनके)
स्वाराज्य,लक्ष्म्या	६.	अपनी राज्य लक्ष्मी के कारण	**ईडित**	१६.	प्रणाम करते रहते है
आप्त	८	परिपूर्ण हैं	**पाद**	१४.	चरणों की
समस्त, कामः ।	७.	सभी कामनाओं से	**पीठः ॥**	१५.	चौकी को

श्लोकार्थ—बराबर और अधिक महिमा वालों से रहित भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं तीनों लोकों के अ
हैं तथा अपनी राज्यलक्ष्मी के कारण सभी कामनाओं से परिपूर्ण हैं। असंख्य लोकपा
पूजा चढ़ाते हुये मुकुटों के अग्रभाग से उनके चरणों की चौकी को प्रणाम करते रहते है

द्वाविंशः श्लोकः

तत्तस्य कैङ्कर्यमलं भृतान्नो, विग्लापयत्यङ्ग यदुग्रसेनम् ।
तिष्ठन्निषण्णं परमेष्ठिधिष्ण्ये, न्यबोधयद्देव निधारयेति ॥२२॥

पदच्छेद—

तत् तस्य कैङ्कर्यम् अलम् भृताम् नः, विग्लापयति अङ्ग यद् उग्रसेनम् ।
तिष्ठन् निषण्णम् परमेष्ठि धिष्ण्ये, न्यबोधयत् देव निधारय इति ॥

शब्दार्थ—

तत्	१२.	वह कहना	**उग्रसेनम् ।**	४.	उग्रसेन के सामने
तस्य	११.	उनका	**तिष्ठन्**	५.	खड़े होकर
कैङ्कर्यम्	१३.	सेवा-टहल	**निषण्णम्**	३.	आसीन
अलम्	१५.	बहुत	**परमेष्ठि, धिष्ण्ये**	२.	राजा के, सिंहासन पर
भृताम्, नः,	१४.	करने वाले, हम (सेवकों) को	**न्यबोधयत्**	७.	निवेदन करते थे
विग्लापयति	१६.	व्यथित कर देता है	**देव**	९	हे महाराज !
अङ्ग	१.	हे तात ! (भगवान श्रीकृष्ण)	**निधारय**	१०.	मेरी प्रार्थना सुनें
यद्	६.	जो	**इति ॥**	८.	कि

श्लोकार्थ—हे तात ! भगवान् श्रीकृष्ण राजा के सिंहासन पर आसीन उग्रसेन के सामने खड़े होक
निवेदन करते थे कि 'हे महाराज ! मेरी प्रार्थना सुनें' उनका वह कहना सेवा-टहल
वाले हम सेवकों को बहुत व्यथित कर देता है।

त्रयोविंश: श्लोक:

अहो बकी यं स्तनकालकूटं, जिघांसयापाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं, कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ।।२३।।

पदच्छेद—

अहो बकी यम् स्तन कालकूटम्, जिघांसया अपाययत् अपि असाध्वी ।
लेभे गतिम् धात्री उचिताम् ततः अन्यम्, कम् वा दयालुम् शरणम् व्रजेम ।।

शब्दार्थ—

अहो, बकी	१.	अरे ! पूतना ने	लेभे	११.	प्राप्त की थी
यम्	२.	जिन (भगवान् श्रीकृष्ण) को	गतिम्	१०.	उत्तम गति
स्तन	४.	स्तनों में	धात्री, उचिताम्	९.	धाय के, योग्य
कालकूटम्,	५.	हलाहल विष लगाकर	ततः, अन्यम्,	१२.	अतः उनके, अति
जिघांसया	३.	मारने की इच्छा से	कम्	१४.	किस
अपाययत्	६.	(दूध) पिलाया (किन्तु)	वा	१३.	और
अपि	८.	भी (उसने जिनसे)	दयालुम्	१५.	कृपालु की
असाध्वी ।	७.	पापिनी होने पर	शरणम्,व्रजेम।।	१६.	शरण, ग्रहण करें

श्लोकार्थ—अरे ! पूतना ने जिन भगवान् श्रीकृष्ण को मारने की इच्छा से स्तनों में हलाहल कर दूध पिलाया, किन्तु पापिनी होने पर भी उसने जिनसे धाय के योग्य उत्तम की । अतः उनके अतिरिक्त और किस कृपालु की शरण ग्रहण करें ।

चतुर्विंश: श्लोक:

मन्येऽसुरान् भागवतांस्त्र्यधीशे, संरम्भमार्गाभिनिविष्टचित्तान् ।
ये संयुगेऽचक्षत तार्क्ष्यपुत्र-मंसे सुनाभायुधमापतन्तम् ।।२४।।

पदच्छेद—

मन्ये असुरान् भागवतान् त्रि अधीशे, संरम्भ मार्ग अभिनिविष्ट चित्तान् ।
ये संयुगे अचक्षत तार्क्ष्यपुत्रम्, अंसे सुनाभ आयुधम् आपतन्तम् ।।

शब्दार्थ—

मन्ये	८.	मानता हूँ	ये	९.	जिन्होंने
असुरान्	६.	असुरों को (मैं)	संयुगे	१०.	युद्ध में
भागवतान्	७	भगवद् भक्त	अचक्षत	१६.	देखा था
त्रि, अधीशे,	१.	तीनों लोकों के, स्वामी में	तार्क्ष्यपुत्रम्,	१५.	गरुड़ को
संरम्भ	२.	क्रोध के	अंसे	१३.	कन्धे पर बैठा क
मार्ग	३.	द्वारा	सुनाभ	११.	सुदर्शन चक्र
अभिनिविष्ट	५.	लगाये हुये	आयुधम्	१२.	धारी भगवान् श्री
चित्तान् ।	४.	मन को	आपतन्तम् ।।	१४.	झपटते हुये

श्लोकार्थ—तीनों लोकों के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण में क्रोध के द्वारा मन को लगाये हुये अ भगवाद् भक्त मानता हूँ, जिन्होंने युद्ध में सुदर्शन चक्रधारी भगवान् श्रीकृष्ण क बैठा कर झपटते हुये गरुड़ को देखा था ।

पञ्चविंशः श्लोकः

वसुदेवस्य देवक्यां जातो भोजेन्द्रबन्धने ।
चिकीर्षुर्भगवानस्याः शमजेनाभियाचितः ।।२५।।

वसुदेवस्य देवक्याम्, जातः भोजेन्द्र बन्धने ।
चिकीर्षुः भगवान् अस्याः, शम् अजेन अभियाचितः ।।

९	वसुदेव जी की (पत्नी)	**चिकीर्षुः**	६.	करने के लिये (ही)
१०.	देवकी के गर्भ से	**भगवान्**	३.	भगवान् श्रीकृष्ण ने
११.	अवतार लिया था	**अस्याः,**	४.	इस (पृथ्वी) का
७.	भोजराज कंस के	**शम्**	५.	कल्याण
८	कारागार में	**अजेन**	१.	ब्रह्मा जी के द्वारा
		अभियाचितः ।।	२.	प्रार्थना करने पर

ा जी के द्वारा प्रार्थना करने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने इस पृथ्वी का कल्याण करने भोजराज कस के कारागार में वसुदेव जी की पत्नी देवकी के गर्भ से अवता

षड्विंशः श्लोकः

ततो नन्दव्रजमितः पित्रा कंसाद्विबिभ्यता ।
एकादश समास्तत्र गूढार्चिः सबलोऽवसत् ।।२६।।

ततः नन्द व्रजम् इतः, पित्रा कंसात् विबिभ्यता ।
एकदश समाः तत्र, गूढ अर्चिः सबलः अवसत् ।।

१.	उस समय	**एकादश**	१२.	ग्यारह
६.	नन्द बाबा के	**समाः**	१३.	वर्ष की आयु तक
७.	व्रज में (पहुँचा दिया)	**तत्र,**	८.	वहां पर (भगवान् ने
५.	(भगवान् श्रीकृष्ण को) वहाँ से	**गूढ**	१०.	छिपा कर
४.	पिता वसुदेव जी ने	**अर्चिः**	९.	अपने प्रभाव को
२.	कंस से	**सबलः**	११.	बलराम जी के साथ
३	डरते हुये	**अवसत् ।।**	१४.	निवास किया था

समय कंस से डरते हुये पिता वसुदेव जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को वहाँ से नन्द मे पहुँचा दिया। वहाँ पर भगवान् ने अपने प्रभाव को छिपा कर बलराम जी रह वर्ष की आयु तक निवास किया।

सप्तविंश: श्लोक:

परीतो वत्सपैर्वत्सांश्चारयन् व्यहरद्विभुः ।
यमुनोपवने कूजद् द्विजसंकुलिताङ्घ्रिपे ।।२७।।

परीतः वत्सपैः वत्सान्, चारयन् व्यहरत् विभुः ।
यमुना उपवने कूलत्, द्विज संकुलित अङ्घ्रिपे ।।

साथ	**यमुना**	५.	यमुना नदी के
ग्वालों के	**उपवने**	६.	उपवन में
बछड़ों को	**कूजत्,**	१.	(वहां) कलरव
चराते हुये	**द्विज**	२.	पक्षियों के झुण
विहार किया था	**संकुलित**	३.	व्याप्त
भगवान् श्रीकृष्ण ने	**अङ्घ्रिपे ।।**	४.	वृक्षों वाले

व करते पक्षियों के झुण्ड से व्याप्त वृक्षों वाले यमुना नदी के उपवन
। भगवान् श्रीकृष्ण ने ग्वालों के साथ विहार किया था ।

अष्टाविंश: श्लोक:

कौमारीं दर्शयंश्चेष्टां प्रेक्षणीयां व्रजौकसाम् ।
रुदन्निव हसन्मुग्धबालसिंहावलोकनः ।।२८।।

कौमारीम् दर्शयन् चेष्टाम्, प्रेक्षणीयाम् व्रज ओकसाम् ।
रुदन् इव हसन् मुग्ध, बाल सिंह अवलोकनः ।।

बाल	**रुदन्**	११.	कभी रोते थे
दिखाते हुये श्री कृष्ण	**इव**	१२.	कभी
लीला	**हसन्**	१३.	हँसते थे
मनोहर	**मुग्ध,**	४.	भोले
व्रज	**बाल**	५.	बच्चे के
वासियों को	**सिंह**	३.	सिंह के
	अवलोकनः ।।	६.	समान

यों को सिंह के भोले बच्चे के समान मनोहर बाल-लीला दिखाते
कभी रोते थे और कभी हँसते थे ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स एव गोधनं लक्ष्म्या निकेतं सितगोवृषम् ।
चारयन्ननुगान् गोपान् रणद्वेणुररीरमत् ॥२९॥

पदच्छेद—

सः एव गोधनम् लक्ष्म्याः, निकेतम् सित गोवृषम् ।
चारयन् अनुगान् गोपान्, रणत् वेणुः अरीरमत् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	(कुछ बड़े होने पर) वे	**चारयन्**	८.	चराते हुये
एव	२.	ही (भगवान् श्रीकृष्ण)	**अनुगान्**	९.	अपने साथी
गोधनम्	७.	गौओं को	**गोपान्,**	१०.	ग्वालों को
लक्ष्म्याः,	५.	शोभा की	**रणत्**	१२.	तान से
निकेतम्	६.	मूर्ति	**वेणुः**	११.	वंशी की
सित	३.	सफेद	**अरीरमत् ॥**	१३.	रिझाते थे
गोवृषम् ।	४.	बैलों (और)			

श्लोकार्थ—कुछ बड़े होने पर वे ही भगवान् श्रीकृष्ण सफेद बैलों और शोभा की मूर्ति गौओं को चराते हुये अपने साथी ग्वालों को वंशी की तान से रिझाते थे ।

त्रिंशः श्लोकः

प्रयुक्तान् भोजराजेन मायिनः कामरूपिणः ।
लीलया व्यनुदत्तांस्तान् बालः क्रीडनकानिव ॥३०॥

पदच्छेद—

प्रयुक्तान् भोजराजेन, मायिनः कामरूपिणः ।
लीलया व्यनुदत् तान् तान्, बालः क्रीडनकान् इव ॥

शब्दार्थ—

प्रयुक्तान्	२.	भेजे गये (तथा)	**व्यनुदत्**	७.	मार डाला था
भोजराजेन,	१.	भोजराज कंस के द्वारा	**तान्-तान्**	५.	उन-उन (राक्षसों) को
मायिनः	४.	मायावी	**बालः**	९.	बालक
कामरूपिणः ।	३.	मनमाना रूप बदलने वाले	**क्रीडनकान्**	१०.	खिलौनों को (तोड़ डालता है)
लीलया	६.	(भगवान् श्रीकृष्ण ने) खेल-खेल में ही	**इव ॥**	८.	जैसे

श्लोकार्थ—भोजराज कंस के द्वारा भेजे गये तथा मनमाना रूप धारण करने वाले मायावी उन-उन राक्षसों को भगवान् श्रीकृष्ण ने खेल-खेल में ही मार डाला था, जैसे बालक खिलौनों को तोड़ डालता है ।

एकत्रिंश: श्लोक:

विपन्नान् विषपानेन निगृह्य भुजगाधिपम् ।
उत्थाप्यापाययद्गावस्तत्तोयं प्रकृतिस्थितम् ।।३१।।

विपन्नान् विष पानेन, निगृह्य भुजग अधिपम् ।
उत्थाप्य अपाययत् ,गावः, तत् तोयम् प्रकृति स्थितम् ।।

मरी हुयी		**उत्थाप्य**	८.	जीवित करके (श्री
जहर मिला हुआ जल		**अपाययत्**	१०.	पीने योग्य बनाया
पीने से		**गावः,**	७.	गउओं को
दमन करके (तथा)		**तत्**	६.	कालिय दह के
कालिय नाग का		**तोयम्**	१०.	जल को
नागराज		**प्रकृति स्थितम्**	११.	निर्दोष

कालिय नाग का दमन करके तथा जहर मिला हुआ जल पीने से मरी हुयी
त करके भगवान् श्रीकृष्ण ने कालियदह के जल को निर्दोष पीने योग्य बना

द्वात्रिंश: श्लोक:

अयाजयद्गोसवेन गोपराजं द्विजोत्तमैः ।
वित्तस्य चोरुभारस्य चिकीर्षन् सद्व्ययं विभुः ।।३२।।

अयाजयत् गोसवेन, गोपराजम् द्विज उत्तमैः ।
वित्तस्य च उरु भारस्य, चिकीर्षन् सद् व्ययम् विभुः ।।

गोयज्ञ कराया था		**च**	१.	तदनन्तर
गोवर्धन पूजा रूप		**उरु भारस्य**	३.	बढ़े हुये
गोपराज नन्द बाबा से		**चिकीर्षन्**	७.	कराने की इच्छा से
ब्राह्मणों के द्वारा		**सद्**	५.	सन्मार्ग में
श्रेष्ठ		**व्ययम्**	६.	व्यय
धन का		**विभुः ।।**	२.	भगवान् श्रीकृष्ण ने

भगवान् श्रीकृष्ण ने बढ़े हुये धन का सन्मार्ग में व्यय कराने की इच्छा
द्वारा गोपराज नन्द बाबा से गोवर्धन पूजा रूप गोयज्ञ कराया था ।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

वर्षतीन्द्रे व्रजः कोपाद्भग्नमानेऽतिविह्वलः ।
गोत्रलीलातपत्रेण त्रातो भद्रानुगृह्णता ।।३३।।

पदच्छेद—

वर्षति इन्द्रे व्रजः कोपात्, भग्नमाने अति विह्वलः ।
गोत्र लीला आतपत्रेण, त्रातः भद्र अनुगृह्णता ।।

शब्दार्थ—

वर्षति	४.	मूसलाधार वर्षा करने लगे	गोत्र	९.	गोवर्धन पर्वत को उठा कर
इन्द्रे	३.	देवराज इन्द्र (उस समय)	लीला	८.	खेल-खेल में
व्रजः	१२.	व्रजवासियों की	आतपत्रेण,	७.	छत्ते के समान
कोपात्,	२.	क्रोध के कारण	त्रातः	१३.	रक्षा की थी
भग्नमाने	१.	(उससे) मान भंग समझ कर	भद्र	५.	हे विदुर जी ! (उस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने)
अति	१०.	बहुत			
विह्वलः ।	११.	घबड़ाये हुये	अनुगृह्णता ।।	६.	कृपा करके

श्लोकार्थ—उस कर्म से मान भंग समझ कर क्रोध के कारण देवराज इन्द्र उस समय मूसलाधार वर्षा करने लगे । हे विदुर जी ! उस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने कृपा करके छत्ते के समान खेल-खेल में गोवर्धन पर्वत को उठा कर बहुत घबड़ाये हुये व्रजवासियों की रक्षा की थी ।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

शरच्छशिकरैर्मृष्टं मानयन् रजनीमुखम् ।
गायन् कलपदं रेमे स्त्रीणां मण्डलमण्डनः ।।३४।।

पदच्छेद—

शरत् शशि करैः मृष्टम्, मानयन् रजनी मुखम् ।
गायन् कल पदम् रेमे, स्त्रीणाम् मण्डल मण्डनः ।।

शब्दार्थ—

शरत्	१.	शरद् ऋतु के	गायन्	८.	गाते हुये (भगवान् ने)
शशि	२.	चन्द्रमा की	कल पदम्	७.	मनोहर गीत
करैः	३.	चाँदनी से	रेमे,	१२.	रासलीला की थी
मृष्टम्	४.	चमकती	स्त्रीणाम्	९.	स्त्रियों के
मानयन्	६.	सम्मान करते हुये (तथा)	मण्डल	१०.	समूह को
रजनी मुखम् ।	५.	संध्या का	मण्डनः ।।	११.	सुशोभित किया था और

श्लोकार्थ—शरद् ऋतु के चन्द्रमा की चाँदनी से चमकती सन्ध्या का सम्मान करते हुये तथा मनोहर गीत गाते हुये भगवान् श्रीकृष्ण ने स्त्रियों के समूह को सुशोभित किया था और रासलीला की थी ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे द्वितीयः अध्यायः ।।२।।

तृतीय. स्कन्धः

अथ तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

१—

ततः स आगत्य पुरं स्वपित्रोश्चिकीर्षया शं बलदेवसंयुतः ।
निपात्य तुङ्गाद्रिपुयूथनाथं हतं व्यकर्षद् व्यसुमोजसोर्व्याम् ।।१।।

ततः सः आगत्य पुरम् स्व पित्रोः, चिकीर्षया शम् बलदेव संयुतः ।
निपात्य तुङ्गात् रिपु यूथ नाथम्, हतम् व्यकर्षद् व्यसुम् ओजसा उर्व्याम् ।।

१.	उसके बाद, श्री कृष्ण	**निपात्य**	१२.	पटक कर
८.	पधारे (वहां पर उन्होंने)	**तुङ्गात्**	११.	ऊँचे सिंहासन ने
७.	मथुरा पुरी में	**रिपु**	६.	शत्रु
२.	अपने माता-पिता को	**यूथ, नाथम**	१०.	समूह के, स्वामी कंस
४.	देने की इच्छा से	**हतम्**	१३.	मार डाला (तथा)
३.	सुख	**व्यकर्षत्**	१६.	घसीटा था
५.	बलराम जी के	**व्यसुम्**	१४.	(उसके) शव को
६.	साथ	**ओजसा, उर्व्याम्**	१५.	बड़े जोर से, पृथ्वी पर

सके बाद भगवान् श्रीकृष्ण अपने माता-पिता देवकी-वसुदेव को सुख देने की इच्छा लराम जी के साथ मथुरापुरी में पधारे । वहाँ पर उन्होंने शत्रु समूह के स्वामी कंस चे सिंहासन से पटक कर मार डाला तथा उसके शव को बड़े जोर से पृथ्वी पर घसीटा थ

द्वितीयः श्लोकः

सान्दीपनेः सकृत्प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम् ।
तस्मै प्रादाद्वरं पुत्रं मृतं पञ्जजनोदरात् ।।२।।

सान्दीपनेः सकृत् प्रोक्तम्, ब्रह्म अधीत्य सविस्तरम् ।
तस्मै प्रादात् वरम् पुत्रम्, मृतम् पञ्चजन उदरात् ।।

१.	(भगवान् ने) सान्दीपनि मुनि के	**तस्मै**	१२.	उन्हें (जीवित रूप में)
		प्रादात्	१३.	प्रदान किया था
२.	मात्र एक बार के	**वरम्**	७.	दक्षिणा के रूप में
३.	उच्चारण से	**पुत्रम् ,**	९	पुत्र को
४.	वेद का	**मृतम्**	८	(उनके) मरे हुये
६.	अध्ययन कर लिया (तथा)	**पञ्चजन**	१०.	पञ्चजन नामक राक्षस के
५.	साङ्गोपांग	**उदरात् ।।**	११.	पेट से निकाल कर

वान् ने सान्दीपनि मुनि के मात्र एक बार उच्चारण से वेद का सांगोपांग अध्ययन क ा तथा दक्षिणा के रूप में उनके मरे हुये पुत्र को पञ्चजन नामक राक्षस के पेट से निकाल उन्हें जीवित रूप में प्रदान किया था। ।

तृतीयः श्लोकः

समाहुता भीष्मककन्यया ये, श्रियः सवर्णेन बुभूषयैषाम् ।
गान्धर्ववृत्त्या मिषतां स्वभागं, जह्रे पदं मूर्ध्नि दधत्सुपर्णः ।।३।।

पदच्छेद— **समाहुताः भीष्मक कन्यया ये, श्रियः सवर्णेन बुभूषया एषाम् ।**
गान्धर्व वृत्त्या मिषताम् स्वभागम्, जह्रे पदम् मूर्ध्नि दधत् सुपर्णः ।।

शब्दार्थ—

समाहुताः	६.	बुलाया था	**वृत्त्या**	१३.	विधि से (विवाह किया और)
भीष्मक	२.	पिता भीष्मक की	**मिषताम्**	८.	देखते-देखते
कन्यया	३.	पुत्री रुक्मिणी के साथ	**स्वभागम्,**	१४.	अपनी, अंशभूता रुक्मिणी का
ये,	५.	जिन (शिशुपालादि) को	**जह्रे**	१५.	अपहरण किया
श्रियः, सवर्णेन	१.	रुक्मिणी के, भाई रुक्मी ने	**पदम्**	१०.	पैर
बुभूषया	४.	विवाह कराने की इच्छा से	**मूर्ध्नि**	९.	(उनके) मस्तक पर
एषाम् ।	७.	उनके	**दधत्**	११.	रखकर (भगवान् श्रीकृष्ण ने)
गान्धर्व	१२.	गान्धर्व	**सुपर्णः ।।**	१६	(जैसे) गरुड़ (अमृत कलश हर लिये थे)

श्लोकार्थ—रुक्मिणी के भाई रुक्मी ने पिता भीष्मक की पुत्री रुक्मिणी के साथ विवाह कराने की इच्छा से जिन शिशुपालादि को बुलाया था, उनके देखते-देखते उनके मस्तक पर पैर रख कर भगवान् श्रीकृष्ण ने गान्धर्व विधि से विवाह किया और अपनी अंश भूता रुक्मिणी जी का अपहरण किया। जैसे गरुड़ अमृत कलश हर लिये थे।

चतुर्थः श्लोकः

ककुद्मतोऽविद्धनसो दमित्वा, स्वयंवरे नाग्नजितीमुवाह ।
तद्भग्नमानानपि गृध्यतोऽज्ञाञ्जघ्नेऽक्षतः शस्त्रभृतः स्वशस्त्रैः ।।४।।

पदच्छेद— **ककुद्मतः अविद्धनसः दमित्वा, स्वयंवरे नाग्नजितीम् उवाह,**
तद् भग्नमानान् अपि गृध्यतः अज्ञान्, जघ्ने अक्षतः शस्त्रभृतः स्व शस्त्रैः ।।

शब्दार्थ—

ककुद्मतः	३.	ऊँची डीलवाले (बैलों) को	**अपि**	१०.	तथा
अविद्धनसः	२.	बिना नथे	**गृध्यतः**	९.	छीनने की इच्छा वाले
दमित्वा,	४.	नाथ कर (भगवान् श्रीकृष्णने)	**अज्ञान्**	१२.	मूर्ख राजाओं को
स्वयंवरे	१.	स्वयंवर में	**जघ्ने**	१६.	मार डाला था
नाग्नजितीम्	५.	नाग्नजिती (सत्या) के साथ	**अक्षतः**	१३.	स्वयं बिना घायल हुये
उवाह ।	६	विवाह किया था	**शस्त्रभृतः**	११.	शस्त्रधारी
तद्	७.	उससे	**स्व**	१४	अपने
भग्नमानान्	८.	मान भङ्ग होने के कारण	**शस्त्रैः ।।**	१५.	शस्त्रों से

श्लोकार्थ—स्वयंवर में बिना नथे ऊँची डील वाले सात बैलों को नाथ कर भगवान् श्रीकृष्ण ने नाग्नजिती (सत्या) के साथ विवाह किया था। उससे मान भङ्ग होने के कारण छीनने की इच्छा वाले तथा शस्त्रधारी मूर्ख राजाओं को स्वयं बिना घायल हुये अपने शस्त्रों से मार डाला था

पञ्चमः श्लोकः

प्रियं प्रभुर्ग्राम्य इव प्रियाया, विधित्सुराच्छंद् द्युतरुं यदर्थे ।
वज्र्याद्रवत्तं सगणो रुषान्धः, क्रीडामृगो नूनमयं वधूनाम् ॥५॥

प्रियम् प्रभुः ग्राम्यः इव प्रियायाः, विधित्सुः आच्छंत् द्युतरुम् यद् अर्थे ।
वज्री आद्रवत् तम् सगणः रुषा अन्धः, क्रीडामृगः नूनम् अयम् वधूनाम् ॥

४. प्रसन्न		**वज्री**	१०.	इन्द्र ने
२. भगवान् श्रीकृष्ण		**आद्रवत्**	१३.	आक्रमण कर दिया
१. विलासी पुरुष के, समान		**तम्**	१२.	उनके ऊपर
३. सत्यभामा को		**सगणः**	११.	सेना के साथ
५. करने की इच्छा से		**रुषा, अन्धः,**	९.	क्रोध से, अन्धा होकर
८. उठा लाये (उस समय)		**क्रीडामृगः**	१७.	खिलौना बना हुआ था
७. कल्प वृक्ष		**नूनम्**	१५.	निश्चय ही
६. उनके, लिये		**अयम्**	१४.	(क्योंकि) यह
		वधूनाम् ॥	१६.	अपनी स्त्रियों का

सी पुरुष के समान भगवान् श्रीकृष्ण सत्यभामा को प्रसन्न करने की इच्छा से कल्पवृक्ष उठा लाये थे। उस समय क्रोध से अन्धा होकर इन्द्र ने सेना के साथ उनके मण कर दिया, क्योंकि यह निश्चय ही अपनी स्त्रियों का खिलौना बना हुआ था।

षष्ठः श्लोकः

सुतं मृधे खं वपुषा ग्रसन्तं, दृष्ट्वा सुनाभोन्मथितं धरित्र्या ।
आमन्त्रितस्तत्तनयाय शेषं, दत्त्वा तदन्तःपुरमाविवेश ॥६॥

सुतम् मृधे खम् वपुषा ग्रसन्तम्, दृष्ट्वा सुनाभ उन्मथितम् धरित्र्या ।
आमन्त्रितः तत् तनयाय शेषम्, दत्त्वा तद् अन्तःपुरम् आविवेश ॥

५. पुत्र		**आमन्त्रितः**	९.	प्रार्थना की (तदनन्तर)
१. युद्ध में		**तत्**	१०.	(भगवान् श्रीकृष्ण ने) उ
३. आकाश को		**तनयाय**	११.	पुत्र (भगदत्त) को
२. (अपने) शरीर से		**शेषम्,**	१२.	बचा हुआ राज्य
४. ढक देने वाले		**दत्त्वा**	१३.	देकर
७. देख कर		**तद्**	१४.	उसके
६. भौमासुर को, मारा गया		**अन्तः पुरम्**	१५.	रनिवास में
८. पृथ्वी ने		**आविवेश ॥**	१६.	प्रवेश किया था

अपने शरीर से आकाश को ढक देने वाले पुत्र भौमासुर को मारा गया देखकर पृ ना की थी। तदनन्तर भगवान् श्री कृष्ण ने उसके पुत्र भगदत्त को बचा हुआ रा सके रनिवास में प्रवेश किया था।

सप्तमः श्लोकः

तत्राहृतास्ता नरदेवकन्याः, कुजेन दृष्ट्वा हरिमार्तबन्धुम् ।
उत्थाय सद्यो जगृहुः प्रहर्ष-व्रीडानुरागप्रहितावलोकैः ।।७।।

पदच्छेद—

तत्र आहृताः ताः नरदेव कन्याः, कुजेन दृष्ट्वा हरिम् आर्त बन्धुम् ।
उत्थाय सद्यः जगृहुः प्रहर्ष, व्रीडा अनुराग प्रहित अवलोकैः ।।

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ पर	**उत्थाय**	६.	खड़ी होकर
आहृताः, ताः	३.	हर कर लाई गई, उन	**सद्यः**	१५.	तत्काल (पति
नरदेव	४.	राजाओं की	**जगृहुः**	१६.	वरण कर लिए
कन्याः,	५.	कुमारियों ने	**प्रहर्ष,**	१०.	महान् हर्ष
कुजेन	२.	भौमासुर के द्वारा	**व्रीडा**	११.	लज्जा (और)
दृष्ट्वा	८.	देखा तथा	**अनुराग**	१२.	प्रेम
हरिम्	७.	भगवान् श्रीकृष्ण को	**प्रहित**	१३.	पूर्ण
आर्त, बन्धुम् ।	६.	दुःखियों के, सहायक	**अवलोकैः ।।**	१४.	चितवन से (उ

श्लोकार्थ—वहाँ पर भौमासुर के द्वारा हर कर लाई गई उन राजाओं की कुमारियो ने
सहायक भगवान् श्रीकृष्ण को देखा तथा खड़ी होकर महान् हर्ष, लज्जा
चितवन से उनका तत्काल पतिरूप में वरण कर लिया ।

अष्टमः श्लोकः

आसां मुहूर्त एकस्मिन्नानागारेषु योषिताम् ।
सविधं जगृहे पाणीननुरूपः स्वमायया ।।८।।

पदच्छेद—

आसाम् मुहूर्ते एकस्मिन्, नाना आगारेषु योषिताम् ।
सविधम् जगृहे पाणीन्, अनुरूपः स्व मायया ।।

शब्दार्थ—

आसाम्	८.	इन	**सविधम्**	१०.	विधिपूर्वक
मुहूर्ते	७.	शुभ-समय में	**जगृहे**	१२.	ग्रहण किया था
एकस्मिन्,	६.	एक ही	**पाणीन्,**	११.	पाणि
नाना	४.	(भगवान् श्रीकृष्ण ने) अनेक	**अनुरूपः**	३.	अनेक रूप होक
आगारेषु	५.	महलों में	**स्व**	१.	अपनी
योषिताम् ।	६.	राजकुमारियों का	**मायया ।।**	२.	माया से

श्लोकार्थ—अपनी माया से अनेक रूप हो कर भगवान् श्रीकृष्ण ने अनेक महलों में एक ही श
इन राजकुमारियों का विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया था ।

नवमः श्लोकः

तास्वपत्यान्यजनयदात्मतुल्यानि सर्वतः ।
एकैकस्यां दश दश प्रकृतेर्विबुभूषया ॥९॥

पदच्छेद—

तासु अपत्यानि अजनयत्, आत्म तुल्यानि सर्वतः ।
एकैकस्याम् दश दश, प्रकृतेः विबुभूषया ॥

शब्दार्थ—

तासु	३.	(भगवान् श्रीकृष्ण) उन	सर्वतः ।	५.	सभी तरह से
अपत्यानि	९.	पुत्र	एकैकस्याम्	४.	प्रत्येक स्त्रियों के गर्भ से
अजनयत्,	१०.	उत्पन्न किये	दश-दश,	८.	दस-दस
आत्म	६.	अपने	प्रकृतेः	१.	अपनी लीला का
तुल्यानि	७.	समान	विबुभूषया ॥	२.	विस्तार करने की इच्छा से

श्लोकार्थ—अपनी लीला का विस्तार करने की इच्छा से भगवान् श्रीकृष्ण उन प्रत्येक स्त्रियों के गर्भ से सभी तरह अपने समान दस-दस पुत्र उत्पन्न किये ।

दशमः श्लोकः

कालमागधशाल्वादीननीकै रुन्धतः पुरम् ।
अजीघनत्स्वयं दिव्यं स्वपुंसां तेज आदिशत् ॥१०॥

पदच्छेद—

काल मागध शाल्व आदीन्, अनीकैः रुन्धतः पुरम् ।
अजीघनत् स्वयम् दिव्यम्, स्व पुंसाम् तेजः आदिशत् ॥

शब्दार्थ—

काल	१.	काल यवन	अजीघनत्	१३.	मरवाया था
मागध	२.	जरासन्ध (और)	स्वयम्,	८.	भगवान् श्रीकृष्ण ने
शाल्व	३.	शाल्व	दिव्यम्,	१०.	अलौकिक
आदीन्,	४.	इत्यादि राजाओं की	स्व पुंसाम्	९.	अपने लोगों को
अनीकैः	५.	सेनाओं के द्वारा	तेजः	११.	शक्ति
रुन्धतः	७.	घेरे जाने पर	आदिशत् ॥	१२.	देकर (उन्हें)
पुरम् ।	६.	मथुरा और द्वारकापुरी के			

श्लोकार्थ—काल यवन, जरासन्ध और शाल्व इत्यादि राजाओं की सेनाओं के द्वारा मथुरा और द्वारकापुरी के घेरे जाने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने लोगों को अलौकिक शक्ति देकर उन्हें मरवाया था ।

एकादश: श्लोक:

शम्बरं द्विविदं बाणं मुरं बल्वलमेव च।
अन्यांश्च दन्तवक्त्रादीनवधीत्कांश्च घातयत् ॥११॥

शम्बरम् द्विविदम् बाणम्, मुरम् बल्वलम् एव च।
अन्यान् च दन्तवक्त्र आदीन्, अवधीत् कान् च घातयत् ॥

(भगवान् श्रीकृष्ण ने) शम्बर	**अन्यान्**	९.	दूसरे
द्विविद	**च**	८.	और
बाण	**दन्तवक्त्र**	१०.	दन्तवक्त्र
मुर	**आदीन्,**	११.	इत्यादि दुष्टों को
बल्वल	**अवधीत्**	१२.	स्वयं मारा था
इसी प्रकार	**कान्**	१४.	कुछ को (दूसरो से
तथा	**च**	१३.	और
	घातयत् ॥	१५.	मरवाया था

श्रीकृष्ण ने शम्बर, द्विविद, बाण, मुर, बल्वल तथा इसी प्रकार और दूसरे दुष्टों को स्वयं मारा था और कुछ को दूसरों से मरवाया था।

द्वादश: श्लोक:

अथ ते भ्रातृपुत्राणां पक्षयोः पतितान्नृपान्।
चचाल भूः कुरुक्षेत्रं येषामापततां बलैः ॥१२॥

अथ ते भ्रातृ पुत्राणाम्, पक्षयोः पतितान् नृपान्।
चचाल भूः कुरुक्षेत्रम्, येषाम आपतताम् बलैः ॥

इसके बाद	**चचाल**	१३.	डगमगाने लगी थी
(उन्होंने) आपके	**भूः**	१२.	पृथ्वी
भाई धृतराष्ट्र और पाण्डु के	**कुरुक्षेत्रम्**	८.	कुरुक्षेत्र में
पुत्रों का	**येषाम्**	१०.	जिन (राजाओं) के
पक्ष लेकर	**आपतताम्**	११.	आने पर
आये हुये	**बलैः ॥**	९.	(अपनी) सेना के स
राजाओं को (मरवाया था)			

द उन्होंने आपके भाई धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रों का पक्ष लेकर को मरवाया था। कुरुक्षेत्र में अपनी सेना के साथ जिन राजाओं के आने लगी थी।

त्रयोदश: श्लोक:

स कर्णदुश्शासनसौबलानां, कुमन्त्रपाकेन हतश्रियायुषम् ।
सुयोधनं सानुचरं शयानं, भग्नोरुमुर्व्यां न ननन्द पश्यन् ॥१३

पदच्छेद— **सः कर्ण दुःशासन सौबलानाम्, कुमन्त्र पाकेन हत श्री आयुषम् ।**
सुयोधनम् स अनुचरम् शयानम्, भग्न उरुम् उर्व्याम् न ननन्द पश्यन् ॥

शब्दार्थ—

सः	१५.	वे (भगवान् श्रीकृष्ण)	**सुयोधनम्**	८.	दुर्योधन को
कर्ण	१.	कर्ण	**स अनुचरम्**	११.	(अपने) साथियो के
दुःशासन	२.	दुःशासन (और)	**शयानम्,**	१३.	मरा पड़ा
सौबलानाम्,	३.	शकुनि की	**भग्न**	१०.	टूट जाने से
कुमन्त्र, पाकेन	४.	दुष्ट सलाह के, फलस्वरूप	**उरुम्**	९.	जाँघ के
हत	७.	नष्ट हो चुकी थी (उस)	**उर्व्याम्**	१२.	पृथ्वी पर
श्री	५.	जिसकी शोभा और	**न, ननन्द**	१६.	नहीं, सन्तुष्ट हुये थे
आयुषम् ।	६.	आयु	**पश्यन् ॥**	१४.	देख कर (भी)

श्लोकार्थ—कर्ण, दुःशासन और शकुनि की दुष्ट सलाह के फलस्वरूप जिसकी शोभा और आयु चुकी थी, उस दुर्योधन को जाँघ के टूट जाने से अपने साथियों के साथ पृथ्वी पर देख कर भी वे भगवान् श्रीकृष्ण सन्तुष्ट नहीं हुये थे ।

चर्तुदश: श्लोक:

कियान् भुवोऽयं क्षपितोरुभारो, यद्द्रोणभीष्मार्जुनभीममूलैः ।
अष्टादशाक्षौहिणिको मदंशै—रास्ते बलं दुर्विषहं यदूनाम् ॥१४॥

पदच्छेद— **कियान् भुवः अयम् क्षपित उरु भारः, यद् द्रोण भीष्म अर्जुन भीम मूलैः ।**
अष्टादश अक्षौहिणिकः मद् अंशैः, आस्ते बलम् दुर्विषहम् यदूनाम् ॥

शब्दार्थ—

कियान्	१०.	(यह) कितना है ? (क्योंकि)	**अष्टादश**	५.	अठारह
भुवः	७.	पृथ्वी का	**अक्षौहिणिकः**	६.	अक्षौहिणी सेना रूप
अयम्	५.	यह	**मद्**	११.	मेरे
क्षपित	९.	नष्ट हुआ है	**अंशैः,**	१२.	अंश से उत्पन्न
उरु, भारः,	८.	भारी, बोझ	**आस्ते**	१६.	बचा ही है
यद्	३.	जो	**बलम्**	१५.	दल (तो अभी)
द्रोण, भीष्म	१.	द्रोण, भीष्म	**दुर्विषहम्**	१४.	असहनीय
अर्जुन भीम मूलैः	२.	अर्जुन (और), भीम के द्वारा	**यदूनाम् ॥**	१३.	यादवों का

श्लोकार्थ—भगवान् ने सोचा कि द्रोण, भीष्म, अर्जुन और भीम के द्वारा जो यह अठारह अ सेना रूप पृथ्वी का भारी बोझ नष्ट हुआ है, यह कितना है ? क्योंकि मेरे अंश से यादवों का असहनीय दल तो अभी बचा ही है ।

पञ्चदशः श्लोकः

मिथो यदैषां भविता विवादो, मध्वामदाताम्रविलोचनानाम् ।
नैषां वधोपाय इयानतोऽन्यो मय्युद्यतेऽन्तर्दधते स्वयं स्म ।।१५।।

मिथः यदा एषाम् भविता विवादः, मधु आमद आताम्र विलोचनानाम् ।
न एषाम् वध उपायः इयान् अतः अन्यः, मयि उद्यते अन्तर्दधते स्वयम् स्म ।।

मिथः	६. आपस में	**न**	१३.	नहीं है (उस समय)
यदा	५ जब	**एषाम्, वध**	१०.	इनके, विनाश का
एषाम्	४ इन (यादवों) का	**उपायः**	११.	कारण होगा
भविता	८ होगा	**इयान्**	६.	यही
विवादः	७ कलह	**अतः, अन्यः,**	१२.	इसके, अतिरिक्त और
मधु आमद	१ शराब के नशे से	**मयि, उद्यते**	१४.	मेरे, संकल्प मात्र से
आताम्र	२. लाल	**अन्तर्दधते**	१६.	अन्तर्धान हो जायेंगे
विलोचनानाम्	३ आंखों वाले	**स्वयम्, स्म ।।**	१५.	अपने आप, ही

शराब के नशे से लाल आँखों वाले इन यादवों का जब आपस में कलह होगा, यही इनके विनाश का कारण होगा, इसके अतिरिक्त और कारण नहीं है। उस समय ये यादव मेरे संकल्प मात्र से अपने आप ही अन्तर्धान हो जायेंगे।

षोडशः श्लोकः

एवं सञ्चिन्त्य भगवान् स्वराज्ये स्थाप्य धर्मजम् ।
नन्दयामास सुहृदः साधूनां वर्त्म दर्शयन् ।।१६।।

एवम् सञ्चिन्त्य भगवान्, स्वराज्ये स्थाप्य धर्मजम् ।
नन्दयामास सुहृदः, साधूनाम् वर्त्म दर्शयन् ।।

एवम्	१. ऐसा	**नन्दयामास**	११.	आनन्दित किया था
सञ्चिन्त्य	२ विचार कर	**सुहृदः,**	१०.	सम्बन्धियों को
भगवान्	३. भगवान् श्रीकृष्ण ने	**साधूनाम्**	७.	महात्माओं का
स्वराज्ये	५ अपने राज्य में	**वर्त्म**	८.	मार्ग
स्थाप्य	६ प्रतिष्ठित किया (तथा)	**दर्शयन् ।।**	६.	दिखाते हुये
धर्मजम्	४. धर्मराज युधिष्ठर को			

ऐसा विचार कर भगवान् श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठर को अपने राज्य में प्रतिष्ठित किया तथा महात्माओं का मार्ग दिखाते हुये सम्बन्धियों को आनन्दित किया था।

सप्तदश: श्लोक:

उत्तरायां धृतः पूरोर्वंशः साध्वभिमन्युना ।
स वै द्रौण्यस्त्रसंछिन्नः पुनर्भगवता धृतः ।।१७।।

उत्तरायाम् धृतः पूरोः, वंशः साधु अभिमन्युना ।
सः वै द्रौणि अस्त्र संछिन्नः, पुनः भगवता धृतः ।।

उत्तरा के गर्भ में	**वै**	११. किन्तु
बीज स्थापित किया था	**द्रौणि**	८. अश्वत्थामा के
पुरु	**अस्त्र**	९. ब्रह्मास्त्र से
वंश का (जो)	**संछिन्नः,**	१०. नष्ट हो गया था
सुन्दर	**पुनः**	१३. (उसे) फिर से
अभिमन्यु ने	**भगवता**	१२. भगवान् श्रीकृष्ण ने
वह	**धृतः ।।**	१४. बचा लिया

ने उत्तरा के गर्भ में पुरुवंश का जो सुन्दर बीज स्थापित किया था, वह अश्व
त्र से नष्ट हो गया था; किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने उसे फिर से बचा लिया ।

अष्टादश: श्लोक:

अयाजयद्धर्मसुतमश्वमेधैस्त्रिभिर्विभुः ।
सोऽपि क्ष्मामनुजै रक्षन् रेमे कृष्णमनुव्रतः ।।१८।।

अयाजयत् धर्मसुतम्, अश्वमेधैः त्रिभिः विभुः ।
सः अपि क्ष्माम् अनुजैः रक्षन्, रेमे कृष्णम् अनुव्रतः ।।

यज्ञ कराये थे	**अपि**	७. भी
धर्मराज युधिष्ठिर से	**क्ष्माम्**	११. पृथ्वी की
अश्वमेध	**अनुजैः,**	१०. भाइयों के साथ
तीन	**रक्षन्**	१२. रक्षा करते हुये
भगवान् श्रीकृष्ण ने	**रेमे**	१३. आनन्द से रहने लगे
वे युधिष्ठिर	**कृष्णम्**	८. भगवान् श्रीकृष्ण के
	अनुव्रतः ।।	९. अनुगामी होकर

ीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर से तीन अश्वमेध यज्ञ कराये थे । वे युधि
ीकृष्ण के अनुगामी होकर भाइयों के साथ पृथ्वी की रक्षा करते हुये आ
।

एकोनविंश: श्लोक:

भगवानपि विश्वात्मा लोकवेदपथानुगः ।
कामान् सिषेवे द्वार्वत्यामसक्तः सांख्यमास्थितः ।।१६।।

भगवान् अपि विश्व आत्मा, लोक वेद पथ अनुगः ।
कामान् सिषेवे द्वार्वत्याम्, असक्तः सांख्यम् आस्थितः ।।

भगवान् श्री कृष्ण	**अनुगः ।**	८.	पालन करते हुये
भी	**कामान्**	१०.	सभी भोगों को
सबकी	**सिषेवे**	११.	भोगे (किन्तु)
आत्मा	**द्वार्वत्याम्,**	६.	द्वारकापुरी में रह कर
लोक और	**असक्तः**	१४.	आसक्त नहीं हुये
वेद की	**सांख्यम्**	१२.	ज्ञानमार्ग में
मर्यादा का	**आस्थितः ।।**	१३.	स्थिति रहने से (वे उनमे)

त्मा भगवान् श्रीकृष्ण भी लोक और वेद की मर्यादा का पालन करते हुये द्वारकापु सभी भोगों को भोगे, किन्तु ज्ञानमार्ग में स्थित रहने से वे उनमें आसक्त नहीं हुये

विंश: श्लोक:

स्निग्धस्मितावलोकेन वाचा पीयूषकल्पया ।
चरित्रेणानवद्येन श्रीनिकेतेन चात्मना ।।२०।।

स्निग्ध स्मित अवलोकेन, वाचा पीयूष कल्पया ।
चरित्रेण अनवद्येन, श्रीनिकेतेन च आत्मना ।।

(भगवान् श्रीकृष्ण ने) मधुर	**चरित्रेण**	८.	चरित्र
मुसकान	**अनवद्येन,**	७.	निर्मल
मनोहर चितवन	**श्री**	१०.	शोभा का
वाणी	**निकेतेन**	११.	निवास स्थान
सुधा	**च**	६.	और
मयी	**आत्मना ।।**	१२.	अपने श्री विग्रह से (सबक आनन्दित किया था)

श्री कृष्ण ने मधुर मुसकान, मनोहर चितवन, सुधामयी वाणी, निर्मल चरि ा का निवास स्थान अपने श्रीविग्रह से सबको आनन्दित किया था ।

एकविंशः श्लोकः

इमं लोकममुं चैव रमयन् सुतरां यदून् ।
रेमे क्षणदया दत्तक्षणस्त्रीक्षणसौहृदः ॥२१॥

पदच्छेद—

इमम् लोकम् अमुम् च एव, रमयन् सुतराम् यदून् ।
रेमे क्षणदया दत्त, क्षण स्त्री क्षण सौहृदः ॥

शब्दार्थ—

इमम्	१.	(उन्होंने श्रीविग्रह से) इस	**यदून् ।**	७.	यादवों को
लोकम्	२.	लोक	**रेमे**	१४.	विहार किया
अमुम्	४.	परलोक को	**क्षणदया**	९.	रात्रि में
च	३.	और	**दत्त,**	१३.	देते हुये
एव,	५.	तथा	**क्षण**	१२.	आनन्द
रमयन्	८.	आनन्दित करते हुये (एवम्)	**स्त्री, क्षण**	१०.	अपनी पत्नियों को, क्षणिक
सुतराम्	६.	विशेष रूप से	**सौहृदः ॥**	११.	सुख का

श्लोकार्थ—उन्होंने अपने श्रीविग्रह से इस लोक और परलोक को तथा विशेष रूप से यादवों को आनन्दित करते हुये एवम् रात्रि में अपनी पत्नियों को क्षणिक सुख का आनन्द देते हुये विहार किया ।

द्वाविंशः श्लोकः

तस्यैवं रममाणस्य संवत्सरगणान् बहून् ।
गृहमेधेषु योगेषु विरागः समजायत ॥२२॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् रममाणस्य, संवत्सर गणान् बहून् ।
गृहमेधेषु योगेषु, विरागः समजायत ॥

शब्दार्थ—

तस्य	५.	उन्हें	**गृहमेधेषु**	६.	गृहस्थ आश्रम के
एवम्	१.	इस प्रकार	**योगेषु,**	७.	भोग पदार्थों से
रममाणस्य,	४.	विहार करते-करते	**विरागः**	८.	वैराग्य
संवत्सर गणान्	३.	वर्षों तक	**समजायत ॥**	९.	उत्पन्न हो गया
बहून् ।	२.	बहुत			

श्लोकार्थ—इस प्रकार बहुत वर्षों तक विहार करते-करते उन्हें गृहस्थ आश्रम के भोग पदार्थों से वैराग्य उत्पन्न हो गया ।

त्रयोविंश: श्लोक:

दैवाधीनेषु कामेषु दैवाधीनः स्वयं पुमान् ।
को विस्रम्भेत योगेन योगेश्वरमनुव्रतः ।।२३।।

दैव अधीनेषु कामेषु, दैव अधीनः स्वयम् पुमान् ।
कः विस्रम्भेत योगेन, योगेश्वरम् अनुव्रतः ।।

२	भगवान् के	**पुमान् ।**	५.	जीव (भी)
३	वश में हैं (तथा)	**कः**	११.	कौन व्यक्ति (भोग पदार्थो) मे
१	सारे भोग पदार्थ	**विस्रम्भेत**	१२.	विश्वास कर सकता है
६	भगवान् के	**योगेन,**	८.	भक्ति योग के द्वारा
७	वश में है (अतः)	**योगेश्वरम्**	९.	योगिराज श्रीकृष्ण का
४	अपने आप	**अनुव्रतः ।।**	१०.	अनुगमन करने वाला

भोग पदार्थ भगवान् के वश में हैं तथा अपने आप जीव भी भगवान् के वश में है, अत
; योग के द्वारा योगिराज श्रीकृष्ण का अनुगमन करने वाला कौन व्यक्ति भोग पदार्थ
ाश्वास कर सकता है ?

चतुर्विंश: श्लोक:

पुर्यां कदाचित्क्रीडद्भिर्यदुभोजकुमारकैः ।
कोपिता मुनयः शेपुर्भगवन्मतकोविदाः ।।२४।।

पुर्याम् कदाचित् क्रीडद्भिः, यदु भोज कुमारकैः ।
कोपिताः मुनयः शेपुः, भगवत् मत कोविदाः ।।

२.	द्वारका पुरी में,	**कोपिताः**	८.	क्रुद्ध कर दिया (जिससे)
१	एक बार	**मुनयः**	७.	ऋषियों को
६	खेल-खेल में	**शेपुः,**	१२.	शाप दे डाला
३	यदुकुल और	**भगवत्**	९.	भगवान् की
४	भोजवंश के	**मत**	१०.	इच्छा को
५	बालकों ने	**कोविदाः ।।**	११.	जानने वाले (उन ऋषि ने उन्हें)

ार द्वारका पुरी में यदुकुल और भोज वंश के बालकों ने खेल-खेल में ऋषियों को क्रु
दिया था, जिससे भगवान् की इच्छा को जानने वाले उन ऋषियों ने उन्हें शाप दे डाला

पञ्चविंश: श्लोक:

ततः कतिपयैर्मासैर्वृष्णिभोजान्धकादयः ।
ययुः प्रभासं संहृष्टा रथैर्देवविमोहिताः ।।२५।।

पदच्छेद—

ततः कतिपयैः मासैः, वृष्णि भोज अन्धक आदयः ।
ययुः प्रभासम् संहृष्टाः, रथैः देव विमोहिताः ।।

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	**ययुः**	१३.	गये
कतिपयैः	२.	कुछ	**प्रभासम्**	१२.	प्रभास क्षेत्र में
मासैः,	३.	महीनों के बाद	**संहृष्टाः,**	१०.	प्रसन्न होकर
वृष्णि	६.	वृष्णि	**रथैः**	११.	रथों से
भोज	७.	भोज (और)	**देव**	४.	भाग्य वश
अन्धक	८.	अन्धक वंश के	**विमोहिताः ।।**	५.	मोहित हुये
आदयः ।	९.	यादव गण			

श्लोकार्थ—तदनन्तर कुछ महीनों के बाद भाग्यवश मोहित हुये वृष्णि, भोज और अन्धक वंश के यादव गण प्रसन्न होकर रथों से प्रभास क्षेत्र में गये ।

षड्विंश: श्लोक:

तत्र स्नात्वा पितृन्देवानृषींश्चैव तदम्भसा ।
तर्पयित्वाथ विप्रेभ्यो गावो बहुगुणा ददुः ।।२६।।

पदच्छेद—

तत्र स्नात्वा पितृन् देवान्, ऋषीन् च एव तद् अम्भसा ।
तर्पयित्वा अथ विप्रेभ्यः, गावः बहुगुणाः ददुः ।।

शब्दार्थ—

तत्र	१.	(उन्होंने) वहाँ पर	**अम्भसा ।**	४.	जल से
स्नात्वा	२.	स्नान करके	**तर्पयित्वा**	१०.	तर्पण किया
पितृन्	५.	पितरों	**अथ**	११.	तथा
देवान्,	६.	देवताओं	**विप्रेभ्यः,**	१२.	ब्राह्मणों को
ऋषीन्,	८.	ऋषियों का	**गावः**	१४.	गायों का
च	७.	और	**बहुगुणाः**	१३.	उत्तम
एव	९.	भी	**ददुः ।।**	१५.	दान दिया
तद्	३.	उसके			

श्लोकार्थ—उन्होंने वहाँ पर स्नान करके उसके जल से पितरों, देवताओं और ऋषियों का भी तर्पण किया तथा ब्राह्मणों को उत्तम गायों का दान दिया ।

सप्तविंश: श्लोक:

हिरण्यं रजतं शय्यां वासांस्यजिनकम्बलान् ।
यानं रथानिभान् कन्या धरां वृत्तिकरीमपि ॥२७॥

हिरण्यम् रजतम् शय्याम्, वासांसि अजिन कम्बलान् ।
यानम् रथान् इभान् कन्याः, धराम् वृत्ति करीम् अपि ॥

१.	(ब्राह्मणों को) सोना	**रथान्**	८.	रथ
२.	चाँदी	**इभान्**	९.	हाथी
३.	पलंग	**कन्याः,**	१०.	कन्यायें
४.	वस्त्र	**धराम्**	१४.	भूमि का (दान दिय
५.	मृगचर्म	**वृत्ति**	१२.	जीविका
६.	कम्बल	**करीम्**	१३.	चला सकने वाली
७.	पालकी	**अपि ॥**	११.	तथा

यादवों ने ब्राह्मणों को सोना, चाँदी, पलंग, वस्त्र, मृगचर्म, कम्बल, पालकी, र
कन्यायें तथा जीविका चला सकने वाली भूमि का दान दिया ।

अष्टाविंश: श्लोक:

अन्नं चोरुरसं तेभ्यो दत्त्वा भगवदर्पणम् ।
गोविप्रार्थासवः शूराः प्रणेमुर्भुवि मूर्धभिः ॥२८॥
अन्नम् च उरु रसम् तेभ्यः, दत्त्वा भगवत् अर्पणम् ।
गो विप्र अर्थ असवः शूराः, प्रणेमुः भुवि मूर्धभिः ॥

४.	अन्न	**गो**	९.	गऊ (और)
१.	तथा (उन्होंने)	**विप्र**	१०.	ब्राह्मणों के
२.	नाना प्रकार का	**अर्थ**	११.	निमित्त
३.	सरस	**असवः**	१२.	जीने वाले
७.	उन ब्राह्मणों को	**शूराः,**	१३.	वीर (यादवों ने)
८.	दिया (तदनन्तर)	**प्रणेमुः**	१६.	प्रणाम किया
५.	भगवान् को	**भुवि**	१४.	पृथ्वी पर
६.	समर्पित किया (और)	**मूर्धभिः ॥**	१५.	मस्तक टेककर

तथा उन्होंने नाना प्रकार का सरस अन्न भगवान् को समर्पित किया और उन ब्रा
दिया । तदनन्तर गऊ और ब्राह्मणों के निमित्त जीने वाले वीर यादवों ने पृथ्वी प
टेक कर प्रणाम किया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे तृतीयः अध्यायः ॥ ३ ॥

तृतीयः स्कन्धः

अथ चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

अथ ते तदनुज्ञाता भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ।
तया विभ्रंशितज्ञाना दुरुक्तैर्मर्म पस्पृशुः ॥१॥

अथ ते तद् अनुज्ञाताः, भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ।
तया विभ्रंशित ज्ञानाः, दुरुक्तैः मर्म पस्पृशुः ॥

उसके बाद	**वारुणीम्॥**	७.	मदिरा का
उन (यादवों) ने	**तया**	९.	उससे
उन (ब्राह्मणों) से	**विभ्रंशित**	११.	भ्रष्ट हो जाने के क
अनुमति पाकर	**ज्ञानाः,**	१०.	बुद्धि
भोजन किया	**दुरुक्तैः**	१२.	दुर्वचनों के द्वारा
पान किया	**मर्म**	१३.	(एक दूसरे के) हृद
और	**पस्पृशुः ॥**	१४.	चोट पहुँचाने लगे

द उन ब्राह्मणों से अनुमति पाकर उन यादवों ने भोजन किया और मदिरा
उससे बुद्धि भ्रष्ट हो जाने के कारण वे दुर्वचनों के द्वारा एक दूसरे के हृद
लगे ।

द्वितीयः श्लोकः

तेषां मैरेयदोषेण विषमीकृतचेतसाम् ।
निम्लोचति रवावासीद्वेणूनामिव मर्दनम् ॥२॥

तेषाम् मैरेय दोषेण, विषमीकृत चेतसाम् ।
निम्लोचति रवौ आसीत्, वेणूनाम् इव मर्दनम् ॥

यादवों में	**निम्लोचति**	७.	अस्त होने तक
मदिरा के	**रवौ**	६.	सूर्य के
नशे से	**आसीत्,**	११.	होने लगी
बदली हुई	**वेणूनाम्**	८.	बाँसों (में रगड़) के
बुद्धि वाले	**इव**	९.	समान
	मर्दनम् ॥	१०.	(आपस में) मार क

नशे से बदली हुई बुद्धि वाले यादवों में सूर्य के अस्त होने तक बाँसों मे
स में मार-काट होने लगी ।

तृतीयः श्लोकः

भगवान् स्वात्ममायाया गतिं तामवलोक्य सः ।
सरस्वतीमुपस्पृश्य वृक्षमूलमुपाविशत् ।।३।।

भगवान् स्वात्म मायायाः, गतिम् ताम् अवलोक्य सः ।
सरस्वतीम् उपस्पृश्य, वृक्ष मूलम् उपाविशत् ।।

२.	भगवान् श्रीकृष्ण	सः ।	१.	उस समय
३	अपनी	सरस्वतीम्	८.	सरस्वती नदी
४	माया की	उपस्पृश्य,	९.	आचमन करके
६	लीला को	वृक्ष	१०.	एक वृक्ष के
५.	उस विचित्र	मूलम्	११.	नीचे
७	देख कर	उपाविशत् ।।	१२.	बैठ गये

समय भगवान् श्रीकृष्ण अपनी माया की उस विचित्र लीला को देख कर
ल से आचमन करके एक वृक्ष के नीचे बैठ गये ।

चतुर्थः श्लोकः

अहं चोक्तो भगवता प्रपन्नार्तिहरेण ह ।
बदरीं त्वं प्रयाहीति स्वकुलं संजिहीर्षुणा ।।४।।

अहम् च उक्तः भगवता, प्रपन्न आर्ति हरेण ह ।
बदरीम् त्वम् प्रयाहि इति, स्वकुलम् संजिहीर्षुणा ।।

९	मुझसे	ह ।	७.	ही
८	उस समय	बदरीम्	१३.	बदरिकाश्रम
१०	कहा था	त्वम्	१२.	तुम
४	भगवान् श्रीकृष्ण ने	प्रयाहि	१४.	चले जाओ
१	शरणागत भक्तों के	इति,	११.	कि
२	दुःख को	स्वकुलम्	५.	अपने वंश के
३	दूर करने वाले	संजिहीर्षुणा ।।	६.	संहार की इच

: शरणागत भक्तों के दुःख को दूर करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने
इच्छा से ही उस समय मुझसे कहा था कि तुम बदरिकाश्रम चले जाओ ।

एकविंशः श्लोकः

सोऽहं तद्दर्शनाह्लादवियोगार्तियुतः प्रभो ।
गमिष्ये दयितं तस्य बदर्याश्रममण्डलम् ॥२१॥

पदच्छेद—

सः अहम् तद् दर्शन आह्लाद, वियोग आर्ति युतः प्रभो ।
गमिष्ये दयितम् तस्य, बदरी आश्रम मण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

सः	८.	वही	युतः	७.	दुःखी
अहम्	९.	मैं	प्रभो ।	१.	हे विदुर जी !
तद्	२.	उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के	गमिष्ये	१४.	जा रहा हूँ
दर्शन	३.	दर्शन से	दयितम्	११.	प्रिय
आह्लाद	४.	प्रसन्न और	तस्य	१०.	उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के
वियोग	५.	(उनके) वियोग के	बदरी आश्रम	१२.	बदरिकाश्रम
आर्ति	६.	दुःख से	मण्डलम् ॥	१३.	क्षेत्र को

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उन भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन से प्रसन्न और उनके वियोग के दुःख से दुःखी वही मैं उन भगवान् श्रीकृष्ण के प्रिय बदरिकाश्रम क्षेत्र को जा रहा हूँ ।

द्वाविंशः श्लोकः

यत्र नारायणो देवो नरश्च भगवानृषिः ।
मृदु तीव्रं तपो दीर्घं तेपाते लोकभावनौ ॥२२॥

पदच्छेद—

यत्र नारायणः देवः, नरः च भगवान् ऋषिः ।
मृदु तीव्रम् तपः दीर्घम्, तेपाते लोक भावनौ ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिस (बदरिकाश्रम) में	मृदु	१०.	सौम्य
नारायणः	३.	नारायण	तीव्रम्	११.	कठोर (और)
देवः,	४.	देव	तपः	१३.	तपस्या
नरः	६.	नर	दीर्घम्,	१२.	बड़ी लम्बी
च	५.	और	तेपाते	१४.	किये थे
भगवान्	२.	भगवान्	लोक	८.	संसार के
ऋषिः ।	७.	ऋषि	भावनौ ॥	९.	कल्याण के लिये

श्लोकार्थ—जिस बदरिकाश्रम में भगवान् नारायण देव और नर ऋषि संसार के कल्याण के लिये सौम्य, कठोर और बडी लम्बी तपस्या किये थे ।

त्रयोविंश: श्लोक:

इत्युद्धवादुपाकर्ण्य सुहृदां दु:सहं वधं ।
ज्ञानेनाशमयत्क्षत्ता शोकमुत्पतितं बुध: ।।२३।।

इति उद्धवात् उपाकर्ण्य, सुहृदाम् दु:सहम् वधम् ।
ज्ञानेन अशमयत् क्षत्ता, शोकम् उत्पतितम् बुध: ।।

इस प्रकार	ज्ञानेन	९.	आत्मज्ञान के द्व
उद्धवजी से	अशमयत्	१२.	शान्त किया था
सुन कर	क्षत्ता,	८.	विदुर जी ने
सम्बन्धियों के	शोकम्	११.	शोक को
असहनीय	उत्पतितम्	१०.	(अपने) बढ़े हुये
विनाश को	बुध: ।।	७.	ज्ञानी

र उद्धव जी से सम्बन्धियों के असहनीय विनाश को सुन कर ज्ञानी
ान के द्वारा अपने बढ़े हुये शोक को शान्त किया था ।

चतुर्विंश: श्लोक:

स तं महाभागवतं व्रजन्तं कौरवर्षभ: ।
विश्रम्भादभ्यधत्तेदं मुख्यं कृष्णपरिग्रहे ।।२४।।

स: तम् महा भागवतम्, व्रजन्तम् कौरव ऋषभ: ।
विश्रम्भात् अभ्यधत्त इदम्, मुख्यम् कृष्ण परिग्रहे ।।

उन (विदुर जी) ने	विश्रम्भात्	११.	विश्वास पूर्वक
उन (उद्धव जी) से	अभ्यधत्त	१३.	कहा
परम	इदम्,	१२.	यह
भगवद् भक्त	मुख्यम्	६.	प्रधान (एवम्)
जाते हुये	कृष्ण	४.	भगवान् श्रीकृष्ण
कौरवों में	परिग्रहे ।।	५.	अनुचरों में
श्रेष्ठ			

श्रेष्ठ उन विदुर जी ने भगवान् श्रीकृष्ण के अनुचरों में प्रधान एवम् प
उद्धव जी से जाते हुये विश्वास पूर्वक यह-कहा ।

पञ्चविंशः श्लोकः

विदुर उवाच—

ज्ञानं परं स्वात्मरहः प्रकाशं, यदाह योगेश्वर ईश्वरस्ते ।
वक्तुं भवान्नोऽर्हति यद्धि विष्णोर्भृत्याः स्वभृत्यार्थकृतश्चरन्ति ॥२५॥

पदच्छेद—

ज्ञानम् परम् स्व आत्म रहः प्रकाशम्, यद् आह योगेश्वरः ईश्वरः ते ।
वक्तुम् भवान् नः अर्हति यद् हि विष्णोः, भृत्याः स्वभृत्य अर्थकृतः चरन्ति ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	६. ज्ञान	वक्तुम्	१०. बताने में
परम्	५. परम	भवान्, नः	९. (उसे) आप, हमें
स्व आत्म	२. अपनी आत्मा के	अर्हति, यद्	११. समर्थ हैं, क्योंकि
रहः	३. छिपे रहस्य को	हि	१५. ही
प्रकाशम्, यद्	४. बताने वाला, जो	विष्णोः, भृत्याः	१२. भगवान् श्री हरि के,
आह	८. कहा था	स्वभृत्य	१३. अपने सेवकों के
योगेश्वरः, ईश्वरः	१. योगिराज, भगवान् श्रीकृष्ण ने	अर्थकृतः	१४. प्रयोजन की सिद्धि
ते ।	७. आपसे	चरन्ति ॥	१६. विचरते हैं

श्लोकार्थ—योगिराज भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी आत्मा के छिपे रहस्य को बताने वाला जो प आपसे कहा था, उसे आप हमें बताने में समर्थ हैं। क्योंकि भगवान् श्रीहरि के से अपने सेवकों के प्रयोजन की सिद्धि के लिये ही विचरते हैं।

षड्विंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—

ननु ते तत्त्वसंराध्य ऋषिः कौषारवोऽन्ति मे ।
साक्षाद्भगवताऽऽदिष्टो मर्त्यलोकं जिहासता ॥२६॥

पदच्छेद—

ननु ते तत्त्व संराध्यः, ऋषिः कौषारवः अन्ति मे ।
साक्षात् भगवता आदिष्टः, मर्त्यलोकम् जिहासता ॥

शब्दार्थ—

ननु	५. अवश्य	मे ।	११. मेरे
ते	१. (हे विदुर जी !) आप	साक्षात्	९. स्वयम्
तत्त्व	२. आत्म तत्त्व के ज्ञान के लिये	भगवता	१०. भगवान् श्रीकृष्ण ने
संराध्यः,	६. आराधना करें	आदिष्टः,	१३. आज्ञा दी थी
ऋषिः	४. ऋषि की	मर्त्यलोकम्	७. मृत्यु लोक को
कौषारवः	३. मैत्रेय	जिहासता ॥	८. छोड़ते समय
अन्ति	१२. सामने (उन्हें उपदेश करने की)		

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! आप आत्म तत्त्व के ज्ञान के लिये मैत्रेय ऋषि की अवश्य आराधन मृत्यु लोक को छोड़ते समय स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने मेरे सामने उन्हें आपको उपदे की आज्ञा दी थी ।

सप्तविंश: श्लोक:

श्रीशुक उवाच—

इति सह विदुरेण विश्वमूर्ते-र्गुणकथया सुधया प्लावितोरुतापः ।
क्षण मिव पुलिने यमस्वसुस्तां, समुषित औपगविर्निशां ततोऽगात् ॥२७

पदच्छेद— **इति सह विदुरेण विश्वमूर्तेः, गुण कथया सुधया प्लावित उरु तापः ।**
क्षणम् इव पुलिने यमस्वसुः ताम्, समुषितः औपगविः निशाम् ततः अगात् ॥

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार		**क्षणम्, इव**	१४. एक क्षण के, समा
सह	३. साथ		**पुलिने**	११. किनारे
विदुरेण	२. विदुर जी के		**यमस्वसुः**	१०. यमुना जी के
विश्वमूर्तेः,	४. भगवान् श्री कृष्ण की		**ताम्,**	१२ उस (पूरी)
गुण, कथया	६. लीला, चर्चा से		**समुषितः**	१५. बिता कर
सुधया	५. अमृतमयी		**औपगविः**	७. उद्धव जी का
प्लावित	९. शान्त हो गया (और वे)		**निशाम्**	१३. रात को
उरु, तापः ।	८. (शोक जनित) महान्, कष्ट		**ततः, अगात् ॥**	१६. (सबेरे) वहाँ से, च

श्लोकार्थ—इस प्रकार विदुर जी के साथ भगवान् श्रीकृष्ण की अमृतमयी लीला चर्चा से उद्धव
शोक जनित महान् कष्ट शान्त हो गया और वे यमुना जी के किनारे उस पूरो रात
क्षण के समान बिता कर सबेरे वहाँ से आगे चल दिये।

अष्टाविंश: श्लोक:

राजोवाच—

निधनमुपगतेषु वृष्णिभोजे-ष्वधिरथयूथपयूथपेषु मुख्यः ।
स तु कथमवशिष्ट उद्धवो यद्धरिरपि तत्यज आकृतिं त्र्यधीशः ॥२८॥

पदच्छेद— **निधनम् उपगतेषु वृष्णि भोजेषु, अधिरथ यूथप यूथपेषु मुख्यः ।**
सः तु कथम् अवशिष्टः उद्धवः यद्, हरिः अपि तत्यज आकृतिम् त्रि अधीशः ॥

शब्दार्थ—

निधनम्, उपगतेषु	५. मृत्यु को, प्राप्त हो गये	**कथम्, अवशिष्टः**	१६. कैसे, बचे रहे
वृष्णि	३. वृष्णि कुल (और)	**उद्धवः**	१५. उद्धव जो
भोजेषु,	४. भोजवंशी यादव (जब)	**यद्,**	६. यहाँ तक कि
अधिरथ	१. महारथियों (तथा)	**हरिः, अपि**	९. भगवान् श्री कृष्ण ने
यूथप, यूथपेषु	२. सेनापतियों के भी, सेनापति	**तत्यज**	११ त्याग दिया
मुख्यः ।	१३. (यादवों में) प्रधान	**आकृतिम्**	१०. (अपने) श्री विग्रह [illegible]
सः	१४. वे	**त्रि**	७. त्रिलोकी के
तु	१२. तो फिर	**अधीशः ॥**	८. स्वामी

श्लोकार्थ—महारथियों तथा सेनापतियों के भी सेनापति वृष्णिकुल और भोजवंशी यादव जब म
प्राप्त हो गये, यहाँ तक कि त्रिलोकी के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण ने भी अपने श्री वि
त्याग दिया तो फिर यादवों में प्रधान वे उद्धव जो कैसे बचे रहे ?

एकोनत्रिंश: श्लोक:

श्रीशुक उवाच—

ब्रह्मशापापदेशेन कालेनामोघवाञ्छितः ।
संहृत्य स्वकुलं नूनं त्यक्ष्यन्देहमचिन्तयत् ।।२९।।

पदच्छेद—

ब्रह्म शाप अपदेशेन, कालेन अमोघ वाञ्छितः ।
संहृत्य स्वकुलम् नूनम्, त्यक्ष्यन् देहम् अचिन्तयत् ।।

शब्दार्थ—

ब्रह्म, शाप	४	ब्राह्मणों के, शाप के	**संहृत्य**	७	संहार करके
अपदेशेन,	५.	बहाने से	**स्वकुलम्**	६.	अपने कुल का
कालेन	३.	काल रूप	**नूनम्,**	१०.	निश्चय ही (यह)
अमोघ	१	सफल	**त्यक्ष्यन्**	९.	छोड़ते समय
वाञ्छितः ।	२.	इच्छा वाले (श्री कृष्ण ने)	**देहम्**	८	(अपने) शरीर को
			अचिन्तयत् ।।	११.	सोचा

श्लोकार्थ—सफल इच्छा वाले भगवान् श्री कृष्ण ने कालरूप ब्राह्मणों के शाप के बहाने से अपने कुल का संहार करके अपने शरीर को छोड़ते समय निश्चय ही यह सोचा ।

त्रिंश: श्लोक:

अस्माल्लोकादुपरते मयि ज्ञानं मदाश्रयम् ।
अर्हत्युद्धव एवाद्धा सम्प्रत्यात्मवतां वरः ।।३०।।

पदच्छेद—

अस्मात् लोकात् उपरते, मयि ज्ञानम् मत् आश्रयम् ।
अर्हति उद्धवः एव अद्धा, सम्प्रति आत्मवताम् वरः ।।

शब्दार्थ—

अस्मात्	२.	इस	**अर्हति**	१४.	अधिकारी हैं
लोकात्	३	लोक से	**उद्धवः**	८.	उद्धव जी
उपरते,	५.	चले जाने पर	**एव**	९.	ही
मयि	४.	मेरे	**अद्धा,**	१३.	सच्चे
ज्ञानम्	१२.	(अध्यात्म) ज्ञान के	**सम्प्रति**	१.	अब
मत्	१०.	मुझसे	**आत्मवताम्**	६.	आत्म ज्ञानियों में
आश्रयम् ।	११.	सम्बन्धित	**वरः ।।**	७.	श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—अब इस लोक से मेरे चले जाने पर आत्म ज्ञानियों में श्रेष्ठ उद्धव जी ही मुझसे सम्बन्धित अध्यात्म ज्ञान के सच्चे अधिकारी हैं ।

एकत्रिंशः श्लोकः

नोद्धवोऽण्वपि मन्न्यूनो यद् गुणैर्नार्दितः प्रभुः ।
अतो मद्वयुनं लोकं ग्राहयन्निह तिष्ठतु ।।३१।।

न उद्धवः अणु अपि मत् न्यूनः, यद् गुणैः न अर्दितः प्रभुः ।
अतः मत् वयुनम् लोकम्, ग्राहयन् इह तिष्ठतु ।।

नहीं हैं	अर्दितः	६.	आधीन
उद्धव जी	प्रभुः ।	७.	जितेन्द्रिय (हैं औ
अणुमात्र, भी	अतः	११.	इसलिये (वे)
मुझसे	मत्, वयुनम्,	१३.	मेरे, ज्ञान को
कम	लोकम्,	१२.	संसार में
क्योंकि (वे)	ग्राहयन्	१४.	सिखाते हुये
विषयों के	इह	१५.	यहीं पर
नहीं हैं	तिष्ठतु ।।	१६.	रहें

मुझसे अणुमात्र भी कम नहीं हैं, क्योंकि वे जितेन्द्रिय हैं और विषयो
इसलिये वे संसार में मेरे ज्ञान को सिखाते हुये यहीं पर रहें ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

एवं त्रिलोकगुरुणा सन्दिष्टः शब्दयोनिना ।
बदर्याश्रममासाद्य हरिमीजे समाधिना ।।३२।।

एवम् त्रिलोक गुरुणा, सन्दिष्टः शब्द योनिना ।
बदरी आश्रमम् आसाद्य, हरिम् ईजे समाधिना ।।

इस प्रकार	बदरी आश्रमम्	७.	बदरिकाश्रम में
तीनों लोकों के	आसाद्य,	८.	जाकर
गुरु (भगवान् श्री कृष्ण) का	हरिम्	१०.	भगवान् श्री हरि
सन्देश पाकर (उद्धव जी)	ईजे	११.	उपासना करने ल
वेद के	समाधिना ।।	९.	समाधि के द्वारा
कारण (तथा)			

र वेद के कारण तथा तीनों लोकों के भगवान् श्री कृष्ण का सन्देश पाकर
मम में जाकर समाधि के द्वारा भगवान् श्री हरि की उपासना करने लगे ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

विदुरोऽप्युद्धवाच्छ्रुत्वा कृष्णस्य परमात्मनः ।
क्रीडयोपात्तदेहस्य कर्माणि श्लाघितानि च ॥३३॥

विदुरः अपि उद्धवात् श्रुत्वा, कृष्णस्य परमात्मनः ।
क्रीडया उपात्त देहस्य, कर्माणि श्लाघितानि च ॥

विदुर जी ने	क्रीडया	४.	लीला के लिये
भी	उपात्त	६.	धारण करने वाले
उद्धव जी से	देहस्य,	५.	शरीर
सुना	कर्माणि	११.	लीलाओं को
श्री कृष्ण की	श्लाघितानि	९.	प्रशंसा को
भगवान्	च ॥	१०.	और

ने भी उद्धव जी से लीला के लिये शरीर धारण करने वाले भगवान् श्री
। और लीलाओं को सुना ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

देहन्यासं च तस्यैवं धीराणां धैर्यवर्धनम् ।
अन्येषां दुष्करतरं पशूनां विक्लवात्मनाम् ॥३४॥

देह न्यासम् च तस्य एवम्, धीराणाम् धैर्य वर्धनम् ।
अन्येषाम् दुष्करतरम्, पशूनाम् विक्लव आत्मनाम् ॥

(अपना) शरीर	वर्धनम् ।	७.	बढ़ाने वाला है
त्याग	अन्येषाम्	१२.	अन्य मनुष्यों के ।
तथा	दुष्करतरम्,	१३.	बड़ा कठिन है
भगवान् श्री कृष्ण का	पशूनाम्	९.	पशुओं के समान
इस प्रकार	विक्लव	१०.	भय से
धीर पुरुषों के	आत्मनाम् ॥	११.	भयभीत
साहस को			

ी कृष्ण का इस प्रकार अपना शरीर त्याग धीर पुरुषों के साहस को
शुओं के समान भय से भयभीत अन्य मनुष्यों के लिये बड़ा कठिन है ।

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

आत्मानं च कुरुश्रेष्ठ कृष्णेन मनसेक्षितम् ।
ध्यायन् गते भागवते, रुरोद प्रेमविह्वलः ।।३५।।

आत्मानम् च कुरुश्रेष्ठ, कृष्णेन मनसा ईक्षितम् ।
ध्यायन् गते भागवते, रुरोद प्रेम विह्वलः ।।

३.	मुझे	**ध्यायन्**	७.	सोचकर (विदुर
६	ऐसा	**गते**	९.	चले जाने पर
१	हे परीक्षित् !(अन्त समय में)	**भागवते,**	८.	महाभागवत (उ
२	भगवान् श्री कृष्ण ने	**रुरोद**	१२	रोने लगे
४.	मन से	**प्रेम**	१०.	प्रेम में
५	स्मरण किया है	**विह्वलः ।।**	११.	व्याकुल होकर

रीक्षित् ! अन्त समय में भगवान् श्री कृष्ण ने मुझे मन से स्मरण किया है,
: विदुर जी महाभागवत उद्धव जी के चले जाने पर प्रेम में व्याकुल होकर रोने

षट्त्रिंश: श्लोक:

कालिन्द्याः कतिभिः सिद्ध अहोभिर्भरतर्षभः ।
प्रापद्यत स्वःसरितं यत्र मित्रासुतो मुनिः ।।३६।।

कलिन्द्याः कतिभिः सिद्धः, अहोभिः भरतर्षभः ।
प्रापद्यत स्वः सरितम्, यत्र मित्रासुतः मुनिः ।।

३.	यमुना जी से (चलकर)	**प्रापद्यत**	७.	पहुँचे
४	कुछ	**स्वः, सरितम्**	६.	स्वर्ग नदी गंगाजी
१	सिद्ध	**यत्र**	८.	जहाँ
५	दिनों में	**मित्रासुतः**	९.	मैत्रेय
२.	विदुर जी	**मुनिः ।।**	१०.	ऋषि रहते थे

विदुर जी यमुना नदी से चल कर कुछ दिनों में स्वर्ग नदी गंगा जी के तट
मैत्रेय ऋषि रहते थे ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे चतुर्थः अध्याय ।।४।।

तृतीयः स्कन्धः

अथ पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

द्वारि द्युनद्या ऋषभः कुरूणां, मैत्रेयमासीनमगाधबोधम् ।
क्षत्तोपसृत्याच्युतभावशुद्धः, पप्रच्छ सौशील्यगुणाभितृप्तः ।।१।।

द्वारि द्युनद्याः ऋषभः कुरूणाम्, मैत्रेयम् आसीनम् अगाध बोधम् ।
क्षत्ता उपसृत्य अच्युत भाव शुद्धः, पप्रच्छ सौशील्य गुण अभितृप्तः ।।

हरिद्वार में	उपसृत्य	१२.	पास जाकर
गंगा जी के तट पर	अच्युत	१.	भगवान् श्री कृष्ण की
श्रेष्ठ	भाव	२.	भक्ति से
कुरुवंशियों में	शुद्धः,	३.	पवित्र अन्तःकरण वाले
मैत्रेय जी के	पप्रच्छ	१६.	(उनसे) पूछा
बैठे हुये	सौशील्य	१३	(उनके) विनम्रता
परम, ज्ञानी	गुण	१४.	(आदि) गुणों से
विदुर जी ने	अभितृप्तः ।।	१५.	बहुत प्रसन्न होते हुये

श्री कृष्ण की भक्ति से पवित्र अन्तःकरण वाले और कुरुवंशियों में श्रेष्ठ विदुर
मे गंगा जी के तट पर बैठे हुये परम ज्ञानी मैत्रेय जी के पास जाकर उनके वि
णो से बहुत प्रसन्न होते हुये उनसे पूछा ।

द्वितीयः श्लोकः

सुखाय कर्माणि करोति लोको, न तैः सुखं वान्यदुपारमं वा ।
विन्देत भूयस्तत एव दुःखं, यदत्र युक्तं भगवान् वदेन्नः ।।२।।

सुखाय कर्माणि करोति लोकः, न तैः सुखम् वा अन्यत् उपारमम् वा ।
विन्देत भूयः ततः एव दुःखम्, यत् अत्र युक्तम् भगवान् वदेत् नः ।।

सुख पाने के लिये	विन्देत	११.	पाते है
कर्म, करते हैं	भूयः, ततः	९.	उससे, और अधिक
लोग	एव, दुःखम्,	१०.	ही, दुःख
नहीं (होती है)	यत्	१२.	इसलिये
उनसे, सुख (नहीं मिलता)	अत्र, युक्तम्	१५.	इस विषय में, उचित
किन्तु	भगवान्	१३.	हे भगवन् ! आप
दु खों की, शान्ति (भी)	वदेत्	१६.	बतावें
और	नः ।।	१४.	हमें

पाने के लिये कर्म करते हैं, किन्तु उनसे सुख नहीं मिलता और दुःखों की
होती है, उल्टे उससे और अधिक ही दुःख पाते हैं । इसलिये आप हमें इस
बात बतावें ।

तृतीयः श्लोकः

जनस्य कृष्णाद्विमुखस्य दैवा-दधर्मशीलस्य सुदुःखितस्य ।
अनुग्रहायेह चरन्ति नूनं, भूतानि भव्यानि जनार्दनस्य ।।३।।

पदच्छेद—

जनस्य कृष्णात् विमुखस्य दैवात्, अधर्म शीलस्य सुदुःखितस्य ।
अनुग्रहाय इह चरन्ति नूनम्, भूतानि भव्यानि जनार्दनस्य ।।

शब्दार्थ—

जनस्य	७.	लोगों का	**अनुग्रहाय**	८.	कल्याण करने के लिये
कृष्णात्	२.	भगवान् श्री कृष्ण से	**इह**	१०.	इस संसार में
विमुखस्य	३	विमुख हुये	**चरन्ति**	१४.	विचरण करते हैं
दैवात्,	१.	दुर्भाग्यवश	**नूनम्,**	९.	ही
अधर्म	४.	पाप	**भूतानि**	१३.	भक्तगण
शीलस्य	५.	परायण (अतः)	**भव्यानि**	१२.	भाग्यशाली
सुदुःखितस्य ।	६.	सदा दुःख पाने वाले	**जनार्दनस्य ।।**	११.	भगवान् श्री हरि के

श्लोकार्थ—दुर्भाग्यवश भगवान् श्रीकृष्ण से विमुख हुये, पाप परायण अतः सदा दुःख पाने वाले लोग कल्याण करने के लिये ही इस संसार में भगवान् श्री हरि के भाग्यशाली भक्तगण वि. करते हैं ।

चतुर्थः श्लोकः

तत्साधुवर्यादिश वर्त्म शं नः, संराधितो भगवान् येन पुंसाम् ।
हृदि स्थितो यच्छति भक्तिपूते, ज्ञानं सतत्त्वाधिगमं पुराणम् ।।४।।

पदच्छेद—

तत् साधुवर्य आदिश वर्त्म शम् नः, संराधितः भगवान् येन पुंसाम् ।
हृदि स्थितः यच्छति भक्ति पूते, ज्ञानम् सतत्त्व अधिगमम् पुराणम् ।।

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये	**पुंसाम् ।**	१०.	मनुष्यों के
साधुवर्य	२.	हे साधु शिरोमणे ! आप	**हृदि, स्थितः**	११.	हृदय में, विराजमान ह
आदिश	६.	उपदेश करें	**यच्छति**	१६.	देते हैं
वर्त्म	५.	मार्ग का	**भक्ति, पूते,**	९.	भक्ति से, पवित्र
शम्	४.	कल्याणकारी	**ज्ञानम्**	१५.	ज्ञान
नः,	३.	हमें	**सतत्त्व**	१२.	अपने स्वरूप को
राधितः,भगवान्	८.	प्रसन्न होकर, भगवान् श्री हरि	**अधिगमम्**	१३.	बताने वाला
येन	७.	जिससे	**पुराणम् ।।**	१४.	सनातन

श्लोकार्थ—इसलिये हे साधु शिरोमणे ! आप हमें कल्याणकारी मार्ग का उपदेश करें, जिससे होकर भगवान् श्री हरि भक्ति से पवित्र मनुष्यों के हृदय में विराजमान होते हैं और स्वरूप को बताने वाला सनातन ज्ञान देते हैं ।

पञ्चमः श्लोकः

करोति कर्माणि कृतावतारो, यान्यात्मतन्त्रो भगवांस्त्र्यधीशः ।
यथा ससर्जाग्र इदं निरीहः, संस्थाप्य वृत्तिं जगतो विधत्ते ।।५।।

करोति कर्माणि कृत अवतारः, यानि आत्म तन्त्रः भगवान् त्रि अधीशः ।
यथा ससर्ज अग्रे इदम् निरीहः, संस्थाप्य वृत्तिम् जगतः विधत्ते ।।

८. करते हैं	यथा	९.	जिस प्रकार
७. लीलाओं को	ससर्ज	१३.	सृष्टि करते हैं (और इसे)
५. लेकर	अग्रे, इदम्	११.	कल्प के प्रारम्भ में, इस
४. अवतार	निरीहः,	१०.	अकर्ता होने पर भी
६. जिन	संस्थाप्य	१४.	स्थापित करके
१. परम, स्वतन्त्र	वृत्तिम्	१५.	(जीवों की) जीविका का
३. भगवान् श्री हरि	जगतः	१२.	संसार की
२ त्रिलोकी नाथ	विधत्ते ।।	१६.	निर्माण करते हैं (उसे बतावें

। स्वतन्त्र, त्रिलोकीनाथ, भगवान् श्री हरि अवतार लेकर जिन लीलाओं को करते है, जिर
ार अकर्ता होने पर भी कल्प के प्रारम्भ में इस संसार की सृष्टि करते हैं और इसे स्थापि
के जीवों की जीविका का निर्माण करते हैं; उसे बतावें ।

षष्ठः श्लोकः

यथा पुनः स्वे ख इदं निवेश्य, शेते गुहायां स निवृत्तवृत्तिः ।
योगेश्वराधीश्वर एक एत-दनुप्रविष्टो बहुधा यथाऽऽसीत् ।।६।।

यथा पुनः स्वे खे इदम् निवेश्य, शेते गुहायाम् सः निवृत्त वृत्तिः ।
योगेश्वर अधीश्वरः एकः एतद्, अनुप्रविष्टः बहुधा यथा आसीत् ।।

४. जिस प्रकार	वृत्तिः ।	१.	सृष्टि क्रिया से
६. फिर से	योगेश्वर	११.	योगिराजों के
५. अपने, हृदयाकाश में	अधीश्वरः	१२.	स्वामी (वे भगवान्)
७. इस (विश्व) को, लीन करके	एकः, एतद्	१३.	अकेले ही, इस (जगत्) में
९. शयन करते हैं (तथा)	अनुप्रविष्टः	१४.	प्रवेश करके
८. योग निद्रा में	बहुधा	१५.	अनेक रूपों में
३. वे (भगवान्)	यथा	१०.	जिस प्रकार
२. विरत होने पर	आसीत् ।।	१६.	प्रकट होते हैं (उसे बतावें)

ट क्रिया से विरत होने पर वे भगवान् जिस प्रकार अपने हृदयाकाश में फिर से इस विश्
लीन करके योग निद्रा में शयन करते हैं तथा जिस प्रकार योगिराजों के स्वामी
वान् अकेले ही इस जगत् में प्रवेश करके अनेक रूपों में प्रकट होते हैं; उसे बतावें ।

सप्तमः श्लोकः

क्रीडन् विधत्ते द्विजगोसुराणां, क्षेमाय कर्माण्यवतारभेदैः ।
मनो न तृप्यत्यपि शृण्वतां नः, सुश्लोकमौलेश्चरितामृतानि ।।७।।

क्रीडन् विधत्ते द्विज गो सुराणाम्, क्षेमाय कर्माणि अवतार भेदैः ।
मनः न तृप्यति अपि शृण्वताम् नः, सुश्लोक मौलेः चरित अमृतानि ।।

३	लीला करते हुये (श्री हरि)	मनः	१५.	मन
८	करते हैं	न तृप्यति	१६.	तृप्त नहीं हो रहा है
४	ब्राह्मणों, गउओं (और)	अपि	१३.	भी
५.	देवताओं के	शृण्वताम्	१२.	पान करते रहने पर
६	कल्याण के लिये	नः,	१४.	हमारा
७.	अनेक कर्मों को	सुश्लोक	९.	यशस्वियों के
२.	अवतारों में	मौलेः	१०.	मुकुट मणि (उन श्री हरि)
१.	अनेक	चरित,अमृतानि	११.	लीला रूपी, सुधा रस का

अनेक अवतारों में लीला करते हुये श्री हरि ब्राह्मणों, गउओं और देवताओं के कल्याण अनेक कर्मों को करते हैं। यशस्वियों के मुकुट मणि उन श्री हरि के लीला रूपी सु… का पान करते रहने पर भी हमारा मन तृप्त नहीं हो रहा है।

अष्टमः श्लोकः

यैस्तत्त्वभेदैरधिलोकनाथो, लोकानलोकान् सहलोकपालान् ।
अचीक्लृपद्यत्र हि सर्वसत्त्व-निकायभेदोऽधिकृतः प्रतीतः ।।८।।

यैः तत्त्व भेदैः अधिलोकनाथः, लोकान् अलोकान् सह लोकपालान् ।
अचीक्लृपत् यत्र हि सर्व सत्त्व, निकाय भेदः अधिकृतः प्रतीतः ।।

२	किन	अचीक्लृपत्	९.	रचना की है
४	तत्त्वों से	यत्र हि	१०.	जहाँ पर
३.	भिन्न-भिन्न	सर्व	१३.	सभी
१	लोकपतियों के स्वामी ने	सत्त्व,	१४.	जीवों के
७	लोकों (और)	निकाय	१२.	समुदायों के
८	अलोकों की	भेदः	११.	भिन्न-भिन्न
६	साथ	अधिकृतः	१५.	(भिन्न-भिन्न) अधिकार
५	लोकपालों के	प्रतीतः ।।	१६.	स्पष्ट मालुम पड़ते हैं

…पतियों के स्वामी श्री हरि ने किन भिन्न-भिन्न तत्त्वों से लोकपालों के साथ लोकों … …कों की रचना की है ? जहाँ पर भिन्न-भिन्न समुदायों के सभी जीवों के भिन्न-भि… …कार स्पष्ट मालुम पड़ते हैं।

नवम: श्लोक:

येन प्रजानामुत आत्मकर्म-रूपाभिधानां च भिदां व्यधत्त ।
नारायणो विश्वसृडात्मयोनि-रेतच्च नो वर्णय विप्रवर्य ॥९॥

येन प्रजानाम् उत आत्म कर्म, रूप अभिधानाम् च भिदाम् व्यधत्त ।
नारायणः विश्व सृट् आत्मयोनिः, एतद् च नः वर्णय विप्रवर्य ॥

५. जिस साधन से	**नारायणः**	४.	भगवान् श्री हरि ने
६. जीवों की	**विश्व**	१.	संसार को
७. तथा (उनके) स्वभाव	**सृट्**	२.	बनाने वाले
८. कर्म, रूप और	**आत्मयोनिः,**	३.	स्वयम्भू
९. नामों की	**एतद् च**	१४.	उसे
१०. एवम्	**नः**	१५.	हमें
११. (उनके) भेदों की	**वर्णय**	१६.	बतावें
१२. रचना की है	**विप्रवर्य ॥**	१३.	हे मुनिवर !

सार को बनाने वाले स्वयम्भू भगवान् श्री हरि ने जिस साधन से जीवों की तथ
भाव, कर्म, रूप और नामों की एवम् उनके भेदों की रचना की है; हे मुनिवर !
तावे ।

दशम: श्लोक:

परावरेषां भगवन् व्रतानि, श्रुतानि मे व्यासमुखादभीक्ष्णम् ।
अतृप्नुम क्षुल्लसुखावहानां, तेषामृते कृष्णकथामृतौघात् ॥१०॥

परावेरषाम् भगवन् व्रतानि, श्रुतानि मे व्यास मुखात् अभीक्ष्णम् ।
अतृप्नुम क्षुल्ल सुख आवहानाम्, तेषाम् ऋते कृष्ण कथा अमृत ओघात् ॥

५. परात्पर श्री हरि के	**अतृप्नुम**	१६.	तृप्ति नहीं हो रही है
१. हे मुनिवर !	**क्षुल्ल**	१२.	तुच्छ
६. अनेक धर्मों को	**सुख**	१३.	सुखों को
८. सुना है (किन्तु)	**आवहानाम्,**	१४.	देने वाले
४. मैंने	**तेषाम्**	१५.	उन धर्मों से (मुझे)
२. भगवान् वेद व्यास के	**ऋते**	११.	छोड़ कर
३. मुख से	**कृष्ण, कथा**	९.	भगवान् श्रीहरि के,
७. निरन्तर	**अमृत,ओघात्॥**	१०.	सुधारस के, प्रवाह

मुनिवर ! भगवान् वेद व्यास के मुख से मैंने परात्पर श्री हरि के अनेक धर्मों को
ना है, किन्तु भगवान् श्री हरि के कथा रूपी सुधारस के प्रवाह को छोड़ कर तुच्छ
ने वाले उन धर्मों से मुझे तृप्ति नहीं हो रही है ।

एकादशः श्लोकः

कस्तृप्नुयात्तीर्थपदोऽभिधानात्, सत्रेषु वः सूरिभिरीड्यमानात् ।
यः कर्णनाडीं पुरुषस्य यातो, भयप्रदां गेहरतिं छिनत्ति ॥११

कः तृप्नुयात् तीर्थपदः अभिधानात्, सत्रेषु वः सूरिभिः ईड्यमानात् ।
यः कर्णनाडीम् पुरुषस्य यातः, भव प्रदाम् गेह रतिम् छिनत्ति ॥

७	कौन	**यः**	९.	जो
८	तृप्त हो सकता है	**कर्णनाडीम्**	११.	कान की नाड़ी मे
५.	पवित्र नाम वाले श्रीहरि के	**पुरुषस्य**	१०.	मनुष्य के
६.	गुणानुवाद से	**यातः,**	१२.	पहुँच कर
२	ज्ञानयज्ञों में	**भव, प्रदाम्**	१३.	जन्म-मरण को, देने
१.	आप लोगों के	**गेह**	१४.	घर की
३	महात्माओं के द्वारा	**रतिम्**	१५.	आसक्ति को
४	प्रशंसित	**छिनत्ति ॥**	१६.	काट देता है

लोगों के ज्ञान-यज्ञों में महात्माओं के द्वारा प्रशंसित पवित्र नाम वाले श्री हरि
द से कौन तृप्त हो सकता है ? जो मनुष्य के कान की नाड़ी में पहुँच कर, जन्म-
वाली घर की आसक्ति को काट देता है ।

द्वादशः श्लोकः

मुनिर्विवक्षुर्भगवद्गुणानां, सखापि ते भारतमाह कृष्णः ।
यस्मिन्नृणां ग्राम्यसुखानुवादै-र्मतिर्गृहीता नु हरेः कथायाम् ॥१२

मुनिः विवक्षुः भगवद् गुणानाम्, सखा अपि ते भारतम् आह कृष्णः ।
यस्मिन् नृणाम् ग्राम्य सुख अनुवादैः, मतिः गृहीता नु हरेः कथायाम् ॥

३	मुनिवर	**यस्मिन्**	९.	जिसमें
६.	वर्णन की इच्छा से	**नृणाम्**	१२.	मनुष्यों की
,५	भगवान् श्रीहरि के गुणों के	**ग्राम्य, सुख**	१०.	विषयों के, सुखो
२	मित्र	**अनुवादैः**	११.	वर्णन करके
७.	ही	**मतिः**	१३.	बुद्धि
१	आपके	**गृहीता**	१६.	लगाई गई है
८.	महाभारत ग्रन्थ, रचा है	**नु**	१५.	ही
४	वेद व्यास जी ने	**हरेः,कथायाम्॥**	१४.	श्रीहरि की, कथ

ाके मित्र मुनिवर वेदव्यास जी ने भगवान् श्री हरि के गुणों के वर्णन की ः
ःभारत ग्रन्थ रचा है, जिसमें विषयों के सुखों का वर्णन करके मनुष्यों की बु
कथा की ओर ही लगाई गई है ।

त्रयोदशः श्लोकः

सा श्रद्दधानस्य विवर्धमाना, विरक्तिमन्यत्र करोति पुंसः ।
हरेः पदानुस्मृतिनिर्वृतस्य, समस्तदुःखात्ययमाशु धत्ते ॥१३॥

सा श्रद्धधानस्य विवर्धमाना, विरक्तिम् अन्यत्र करोति पुंसः ।
हरेः पद अनुस्मृति निर्वृतस्य, समस्त दुःख अत्ययम् आशु धत्ते ॥

१. वह बुद्धि		**पद**	९.	चरणों के
२. श्रद्धालु		**अनुस्मृति**	१०.	ध्यान में
४. बढ़ती हुई		**निर्वृतस्य,**	११.	आनन्द मग्न (उस म
६. वैराग्य		**समस्त**	१२.	सम्पूर्ण
५. विषयों से		**दुःख**	१३.	कष्टों का
७. उत्पन्न करती है (तदनन्तर)		**अत्ययम्**	१५.	नाश
३. मनुष्यों के (हृदय में)		**आशु**	१४.	तत्काल
८. (वह) श्री हरि के		**धत्ते ॥**	१६.	कर देती है

वान् की ओर लगी हुई वह बुद्धि श्रद्धालु मनुष्यों के हृदय में बढ़ती हुई विषयों से
न्न करती है । तदनन्तर वह श्री हरि के चरणों के ध्यान में आनन्द मग्न उस
पूर्ण कष्टों का तत्काल नाश कर देती है ।

चतुर्दशः श्लोकः

ताञ्छोच्यशोच्यनाविदोऽनुशोचे, हरेः कथायां विमुखानघेन ।
क्षिणोति देवोऽनिमिषस्तु येषा-मायुर्वृथावादगतिस्मृतीनाम् ॥१४॥

तान् शोच्य शोच्यान् अविदः अनुशोचे, हरेः कथायाम् विमुखान् अघेन ।
क्षिणोति देवः अनिमिषः तु येषाम्, आयुः वृथा वाद गति स्मृतीनाम् ॥

५. उन, तुच्छों से भी	**क्षिणोति**	१६.	नष्ट कर रहे हैं
६. तुच्छ	**देवः**	११.	भगवान्
७. अज्ञानी जनों के लिये	**अनिमिषः**	१०.	काल
८. मुझे खेद हो रहा है	**तु**	९.	क्योंकि
२. भगवान् श्री हरि की	**येषाम्,**	१४.	उन लोगों की
३. कथा से	**आयुः**	१५.	आयु को
४. विरत रहने वाले	**वृथा, वाद**	१२.	व्यर्थ के, वाद
१. पाप के कारण	**गति,स्मृतीनाम्॥**	१३.	विवाद (और)चिन्त

के कारण भगवान् श्री हरि की कथा से विरत रहने वाले उन तुच्छों से भी तुच्छ
ो के लिये मुझे खेद हो रहा है, क्योंकि काल भगवान् व्यर्थ के वाद-विवाद औ
नगे हुये उन लोगों की आयु को नष्ट कर रहे हैं ।

पञ्चदश: श्लोक:

तदस्य कौषारव शर्म दातुर्हरेः कथामेव कथासु सारम् ।
उद्धृत्य पुष्पेभ्य इवार्तबन्धो, शिवाय नः कीर्तय तीर्थकीर्तेः ।।१५

तद् अस्य कौषारव शर्म दातुः, हरेः कथाम् एव कथासु सारम् ।
उद्धृत्य पुष्पेभ्यः इव आर्तबन्धो, शिवाय नः कीर्तय तीर्थ कीर्तेः ।।

इसलिये	**उद्धृत्य**	६.	निकालता है (उसी
उन	**पुष्पेभ्यः**	५.	फूलों से (सार अंश)
हे मैत्रेय जी ! आप (हम)	**इव**	४.	जैसे (भँवरा)
कल्याण	**आर्त बन्धो,**	२.	दीनों के हितैषी हैं
कारी (और)	**शिवाय**	८.	कल्याण के लिये
श्री हरि की	**नः**	७.	हमारे
कथा, ही	**कीर्तय**	१६.	सुनावें
कथाओं में से, सारभूत	**तीर्थ कीर्तेः ।।**	११.	पवित्र नामधारी

ी ! आप हम दीनों के हितैषी हैं, इसलिये जैसे भँवरा फूलों से सार अंश निक
प्रकार हमारे कल्याण के लिये कल्याणकारी और पवित्र नामधारी उन श्री
ं से सारभूत कथा ही सुनावें ।

षोडश: श्लोक:

स विश्वजन्मस्थितिसंयमार्थे, कृतावतारः प्रगृहीतशक्तिः ।
चकार कर्माण्यतिपूरुषाणि, यानीश्वरः कीर्तय तानि मह्यम् ।।१

सः विश्व जन्म स्थिति संयमार्थे, कृत अवतारः प्रगृहीत शक्तिः ।
चकार कर्माणि अतिपूरुषाणि, यानि ईश्वरः कीर्तय तानि मह्यम् ।।

उन (भगवान्)	**चकार**	१३.	की थीं (अब)
संसार की, उत्पत्ति	**कर्माणि**	१२.	लीलायें
पालन (और)	**अतिपूरुषाणि,**	११.	अलौकिक
संहार के लिये	**यानि**	१०.	जो
धारण करके	**ईश्वरः**	२.	सर्वेश्वर ने
राम, कृष्णादि अवतार	**कीर्तय**	१६.	सुनावें
स्वीकार करने के उपरान्त	**तानि**	१४.	उन्हें
(अपनी) माया शक्ति को	**मह्यम् ।।**	१५.	मुझे

ान् सर्वेश्वर ने संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये अपनी मा
ार करने के उपरान्त राम, कृष्णादि अवतार धारण करके जो अलौकिक
अब उन्हें मुझे सुनावें ।

सप्तदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

स एवं भगवान् पृष्टः क्षत्त्रा कौषारविर्मुनिः ।
पुंसां निःश्रेयसार्थेन तमाह बहु मानयन् ॥१७॥

पदच्छेद—

सः एवम् भगवान् पृष्टः, क्षत्त्रा कौषारविः मुनिः ।
पुंसाम् निःश्रेयस अर्थेन, तम् आह बहु मानयन् ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	उन	पुंसाम्	१.	मनुष्यों के
एवम्	५.	इस प्रकार	निःश्रेयस	२.	परम कल्याण
भगवान्	९.	भगवान्	अर्थेन,	३.	के लिये
पृष्टः,	६.	पूछे जाने पर	तम्	११.	उनका
क्षत्त्रा	४.	विदुर जी के द्वारा	आह	१४.	कहा था
कौषारविः	१०.	मैत्रेय जी ने	बहु	१२.	बहुत
मुनिः ।	८.	मुनिवर	मानयन् ॥	१३.	सम्मान करते हुये

श्लोकार्थ—श्री शुकदेव मुनि ने कहा, हे राजन् ! मनुष्यों के परम कल्याण के लिये विदुर जी के द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर उन मुनिवर भगवान् मैत्रेय जी ने उनका बहुत सम्मान करते हुये कहा था ।

अष्टादशः श्लोकः

साधु पृष्टं त्वया साधो लोकान् साध्वनुगृह्णता ।
कीर्तिं वितन्वता लोके आत्मनोऽधोक्षजात्मनः ॥१८॥

पदच्छेद—

साधु पृष्टम् त्वया साधो, लोकान् साधु अनुगृह्णता ।
कीर्तिम् वितन्वता लोके, आत्मनः अधोक्षज आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

साधु	६.	अच्छी बात	कीर्तिम्	१२.	सुयश
पृष्टम्	७.	पूछी है (इससे)	वितन्वता	१३.	फैलेगा
त्वया	२.	आपने	लोके,	११.	संसार में
साधो,	१.	हे साधु स्वभाव उद्धव जी !	आत्मनः	१०.	आपका
लोकान्	३.	लोगों पर	अधोक्षज	८.	भगवान् श्री हरि को
साधु	४.	अत्यन्त	आत्मनः ॥	९.	सर्वस्व मानने वाले
अनुगृह्णता ।	५.	कृपा करके			

श्लोकार्थ—हे साधु स्वभाव उद्धव जी ! आपने लोगों पर अत्यन्त कृपा करके अच्छी बात पूछी है । इससे भगवान् श्री हरि को सर्वस्व मानने वाले आपका संसार में सुयश फैलेगा ।

एकोनविंश: श्लोक:

नैतच्चित्रं त्वयि क्षत्तर्बादरायणवीर्यजे ।
गृहीतोऽनन्यभावेन यत्त्वया हरिरीश्वरः ।।१९।।

न एतद् चित्रम् त्वयि क्षत्तः, बादरायण वीर्यजे ।
गृहीतः अनन्य भावेन, यत् त्वया हरिः ईश्वरः ।।

७. नहीं है	**गृहीतः**	१४.	स्वीकार किया है
५. यह (कोई)	**अनन्य**	१०.	अनन्य
६. आश्चर्य	**भावेन,**	११.	भाव से
४. आपके विषय में	**यत्**	८.	क्योंकि
१. हे विदुर जी !	**त्वया**	९.	आपने
२. भगवान् वेद व्यास के	**हरिः**	१३.	श्री हरि को (ही)
३ वीर्य से उत्पन्न	**ईश्वरः ।।**	१२.	भगवान्

वदुर जी ! भगवान् वेद व्यास के वीर्य से उत्पन्न आपके विषय में यह कोई आ
क्योंकि आपने अनन्य भाव से भगवान् श्री हरि को ही स्वीकार किया है।

विंश: श्लोक:

माण्डव्यशापाद्भगवान् प्रजासंयमनो यमः ।
भ्रातुः क्षेत्रे भुजिष्यायां जातः सत्यवतीसुतात् ।।२०।।

माण्डव्य शापात् भगवान्, प्रजा संयमनः यमः ।
भ्रातुः क्षेत्रे भुजिष्यायाम्, जातः सत्यवती सुतात् ।।

५. माण्डव्य ऋषि के	**भ्रातुः**	९.	भाई (विचित्र वीर्य
६ शाप के कारण	**क्षेत्रे**	११.	दासी के गर्भ में
३. भगवान्	**भुजिष्यायाम्,**	१०.	भोगपत्नी
१ (आप) जीवों को	**जातः**	१२.	उत्पन्न हुये हैं
२ दण्ड देने वाले (साक्षात्)	**सत्यवती**	७.	सत्यवती
४ यमराज हैं	**सुतात् ।।**	८.	नन्दन (वेद व्यास

जीवों को दण्ड देने वाले साक्षात् भगवान् यमराज हैं। माण्डव्य ऋषि के शाप
वती नन्दन वेद व्यास के वीर्य से भाई विचित्र वीर्य की भोगपत्नी दासी के गर्भ
है।

एकविंश: श्लोक:

भवान् भगवतो नित्यं सम्मतः सानुगस्य च ।
यस्य ज्ञानोपदेशाय माऽऽदिशद्भगवान् व्रजन् ॥२१॥

च्छेद—

भवान् भगवतः नित्यम्, सम्मतः स अनुगस्य च ।
यस्य ज्ञान उपदेशाय, मा आदिशत् भगवान् व्रजन् ॥

ादार्थ—

ान्	१.	आप	यस्य	८	(अतः) आपको
ावतः	२.	भगवान् के	ज्ञान	९.	आत्मज्ञान का
त्यम्,	६.	सदा	उपदेशाय,	१०.	उपदेश देने के लिये
मतः	७.	प्रिय हैं	मा	१३.	मुझे
	४.	उनके	आदिशत्	१४.	आदेश दिया था
ुगस्य	५.	भक्तों के	भगवान्	१२.	भगवान् श्रीकृष्ण ने
।	३.	और	व्रजन् ॥	११.	(अपने धाम) जाते समय

ोकार्थ—आप भगवान् के और उनके भक्तों के सदा प्रिय हैं, अतः आपको आत्मज्ञान का उपदेश देने के लिये अपने धाम जाते समय भगवान् श्रीकृष्ण ने मुझे आदेश दिया था ।

द्वाविंश: श्लोक:

अथ ते भगवल्लीला योगमायोपबृंहिताः ।
विश्वस्थित्युद्भवान्तार्था वर्णयाम्यनुपूर्वशः ॥२२॥

दच्छेद—

अथ ते भगवत् लीलाः, योगमाया उपबृंहिताः ।
विश्व स्थिति उद्भव अन्त अर्थाः, वर्णयामि अनुपूर्वशः ॥

ब्दार्थ—

अथ	१.	अब मैं	विश्व	५.	जगत् की
ते	२.	आपसे	स्थिति	७.	पालन (और)
भगवत्	१०.	भगवान् श्रीहरि की	उद्भव	६.	उत्पत्ति
लीलाः,	११.	लीलाओं का	अन्त	८.	संहार
योगमाया	३.	योगमाया शक्ति के द्वारा	अर्थाः,	९.	करने वाली
उपबृंहिताः ।	४.	विस्तारित	वर्णयामि	१३.	वर्णन करता हूँ
			अनुपूर्वशः ॥	१२.	क्रम से

श्लोकार्थ—अब मैं आपसे योगमाया शक्ति के द्वारा विस्तारित जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाली भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का क्रम से वर्णन करता हूँ ।

त्रयोविंशः श्लोकः

भगवानेक आसेदमग्र आत्माऽऽत्मनां विभुः ।
आत्मेच्छानुगतावात्मा नानामत्युपलक्षणः ॥२३॥

भगवान् एकः आस इदम्, अग्रे आत्मा आत्मनाम् विभुः ।
आत्म इच्छा अनुगतौ आत्मा, नाना मति उपलक्षणः ॥

७. भगवान् श्री हरि		**आत्म**	१०.	अपनी
५. एक		**इच्छा**	११.	इच्छा से (और)
८. विद्यमान थे		**अनुगतौ**	१५.	युक्त था
१. इस (जगत्) की		**आत्मा,**	९.	(उस समय वह) परमात्मा
२. सृष्टि के पूर्व		**नाना**	१४.	अनेकता से
४ आत्मा		**मति**	१२.	वृत्तियों के
३ आत्माओं के		**उपलक्षणः॥**	१३.	सम्बन्ध से प्रतीत होने वाल
६ पूर्ण परमात्मा				

जगत् की सृष्टि के पूर्व सभी आत्माओं के आत्मा एक पूर्ण परमात्मा भगवान् श्री ह[illegible] ‍मान थे। उस समय वह परमात्मा अपनी इच्छा से और वृत्तियों के सम्बन्ध से प्रती[illegible] वाली अनेकता से युक्त था।

चतुर्विंशः श्लोकः

स वा एष तदा द्रष्टा नापश्यद् दृश्यमेकराट् ।
मेनेऽसन्तमिवात्मानं सुप्तशक्तिरसुप्तदृक् ॥२४॥

सः वा एषः तदा द्रष्टा, न अपश्यत् दृश्यम् एकराट् ।
मेने असन्तम् इव आत्मानम्, सुप्त शक्तिः असुप्त दृक् ॥

४. प्रसिद्ध	**मेने**	१२.	समझा था (उस समय उसकी
६. परमात्मा ने	**असन्तम्**	१०.	असत् के
५. इस	**इव**	११.	समान
१. उस समय	**आत्मानम्,**	९.	अपने को
३ द्रष्टा रूप में	**सुप्त**	१४.	सोई हुई थी (किन्तु)
८. नहीं, देखा (और)	**शक्तिः**	१३.	माया शक्ति
७. संसार को	**असुप्त**	१६.	प्रकाशित (था)
२. स्वयं प्रकाशमान (तथा)	**दृक्॥**	१५.	ज्ञान

समय स्वयं प्रकाशमान तथा द्रष्टा रूप में प्रसिद्ध इस परमात्मा ने संसार को नहीं दे[illegible] अपने को असत् के समान समझा था। उस समय उसकी माया शक्ति सोई हुई थी [illegible]तु ज्ञान प्रकाशित था।

पञ्चविंशः श्लोकः

सा वा एतस्य संद्रष्टुः शक्तिः सदसदात्मिका ।
माया नाम महाभाग ययेदं निर्ममे विभुः ॥२५॥

पदच्छेद —

सा वा एतस्य संद्रष्टुः, शक्तिः सद् असद् आत्मिका ।
माया नाम महाभाग, यया इदम् निर्ममे विभुः ॥

शब्दार्थ —

सा वा	४.	वही	**माया**	८.	माया
एतस्य	३	इस (परमात्मा) की	**नाम**	९.	नाम की
संद्रष्टुः,	२.	(सबको) देखने वाले	**महाभाग,**	१.	हे महाभाग विदुर जी !
शक्तिः	१०.	शक्ति (है)	**यया**	११.	जिसके द्वारा
सद्	५.	भाव (और)	**इदम्**	१३.	इस (जगत्-प्रपञ्च) को
असद्	६.	अभाव	**निर्ममे**	१४.	रचा है
आत्मिका ।	७.	स्वरूप वाली	**विभुः ॥**	१२.	भगवान् श्री हरि ने

श्लोकार्थ—हे महाभाग विदुर जी ! सबको देखने वाले इस परमात्मा की वही भाव और अभाव स्वरूप वाली माया नाम की शक्ति है, जिसके द्वारा भगवान् श्री हरि ने इस जगत्-प्रपञ्च को रचा है।

षड्विंशः श्लोकः

कालवृत्त्या तु मायायां गुणमय्यामधोक्षजः ।
पुरुषेणात्मभूतेन वीर्यमाधत्त वीर्यवान् ॥२६॥

पदच्छेद —

काल वृत्त्या तु मायायाम्, गुणमय्याम् अधोक्षजः ।
पुरुषेण आत्म भूतेन, वीर्यम् आधत्त वीर्यवान् ॥

शब्दार्थ —

काल	३.	काल	**पुरुषेण**	१०.	पुरुष रूप से
वृत्त्या	४.	शक्ति के द्वारा	**आत्म**	८.	अपने
तु	५.	ही	**भूतेन,**	९.	अंशभूत
मायायाम्,	७.	माया में	**वीर्यम्**	११	बीज को
गुणमय्याम्	६.	त्रिगुण स्वरूप वाली	**आधत्त**	१२.	स्थापित किया था
अधोक्षजः ।	२.	भगवान् श्रीहरि ने	**वीर्यवान् ॥**	१.	शक्तिशाली

श्लोकार्थ—शक्तिशाली भगवान् श्री हरि ने काल शक्ति के द्वारा ही त्रिगुण स्वरूप वाली माया में अपने अंशभूत पुरुष रूप से बीज को स्थापित किया था।

सप्तविंश: श्लोक:

ततोऽभवन्महत्तत्त्वमव्यक्तात्कालचोदितात् ।
विज्ञानात्माऽऽत्मदेहस्थं विश्वं व्यञ्जंस्तमोनुदः ।।२७।।

ततः अभवत् महत्तत्त्वम्, अव्यक्तात् काल चोदितात् ।
विज्ञान आत्मा आत्म देहस्थम्, विश्वम् व्यञ्जन् तमः नुदः ।।

तदनन्तर		**आत्मा**	८.	स्वरूप वाला
प्रकट हुआ		**आत्म**	९.	अपने
महत्तत्त्व		**देहस्थम्,**	१०.	शरीर में सूक्ष्म
अव्यक्त माया से		**विश्वम्**	११.	संसार को
काल शक्ति की		**व्यञ्जन्**	१२.	व्यक्त करने व
प्रेरणा होने पर		**तमः**	१३.	अज्ञान का
(वह) विशेष ज्ञान		**नुदः ।।**	१४.	नाशक था

काल शक्ति की प्रेरणा होने पर अव्यक्त माया से महत्तत्त्व प्रकट हुआ
.ूप वाला, अपने शरीर में सूक्ष्म रूप से स्थित संसार को व्यक्त करने
ा नाशक था ।

अष्टाविंश: श्लोक:

सोऽप्यंशगुणकालात्मा भगवद्दृष्टिगोचरः ।
आत्मानं व्यकरोदात्मा विश्वस्यास्य सिसृक्षया ।।२८।।

सः अपि अंश गुण काल आत्मा, भगवत् दृष्टि गोचरः ।
आत्मानम् व्यकरोत् आत्मा, विश्वस्य अस्य सिसृक्षया ।।

वह (महत्तत्त्व)		**गोचरः ।**	९.	पड़ने पर
भी		**आत्मानम्**	१४.	अपने में
चिदाभास		**व्यकरोत्**	१५.	विकार उत्पन्न
तीनों गुण (और)		**आत्मा,**	१३.	स्वयम्
काल शक्ति के		**विश्वस्य**	११.	संसार की
सयोग से उत्पन्न		**अस्य**	१०.	इस
भगवान् श्री हरि की		**सिसृक्षया ।।**	१२.	सृष्टि के लिये
दृष्टि				

ा, तीनों गुण और काल शक्ति के संयोग से उत्पन्न वह महत्तत्त्व
की दृष्टि पड़ने पर इस संसार की सृष्टि के लिये स्वयं अपने में वि

एकोनत्रिंश: श्लोक:

महत्तत्त्वाद्विकुर्वाणादहंतत्त्वं व्यजायत ।
कार्यकारणकर्त्रात्मा भूतेन्द्रियमनोमयः ॥२९॥

महत् तत्त्वात् विकुर्वाणात्, अहंतत्त्वम् व्यजायत ।
कार्य कारण कर्तृ आत्मा, भूत इन्द्रिय मनोमयः ॥

२.	महत्तत्त्व से	कारण	७.	कारण रूप
१.	विकार होने पर	कर्तृ	९.	कर्ता
३.	अहंकार	आत्मा,	१०.	स्वरूप
४.	उत्पन्न हुआ (वह)	भूत	६.	पञ्चमहाभूत का
५.	कार्य रूप	इन्द्रिय	८.	दसों इन्द्रियों का
		मनोमयः ॥	११.	मन का (उत्पादव

र होने पर महत्तत्व से अहंकार उत्पन्न हुआ। वह कार्यरूप पञ्च महाभूत दसों इन्द्रियों का और कर्ता स्वरूप मन का उत्पादक है।

त्रिंश: श्लोक:

वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिधा ।
अहंतत्त्वाद्विकुर्वाणान्मनो वैकारिकादभूत् ।
वैकारिकाश्च ये देवा अर्थाभिव्यञ्जनं यतः ॥३०॥

वैकारिकः तैजसः च, तामसः च इति अहम् त्रिधा ।
अहंतत्त्वात् विकुर्वाणात्, मनः वैकारिकात् अभूत् ।
वैकारिकाः च ये देवाः, अर्थ अभिव्यञ्जनम् यतः ॥

ः १. सात्त्विक, राजस	वैकारिकात्	८.	सात्त्विक (अहंक
२. और, तामस	अभूत्	१३.	उत्पन्न हुये
५. उस	वैकारिकाः	११.	सात्त्विक
३. भेद से, अहंकार	च, ये	१०.	एवम्, जो
४. तीन प्रकार का है	देवाः	१२.	देवता हैं (वे)
६. अहंकार में	अर्थ	१५.	पदार्थों का
७. विकार होने पर	अभिव्यञ्जनम्	१६.	ज्ञान होता है
९. मन	यतः ॥	१४.	जिनसे

त्विक, राजस और तामस भेद से अहंकार तीन प्रकार का है। उस अहंक पर सात्त्विक अहंकार से मन एवम् जो सात्त्विक देवता हैं, वे उत्पन्न हुये; ज्ञान होता है।

एकत्रिंशः श्लोकः

तैजसानीन्द्रियाण्येव ज्ञानकर्ममयानि च ।
तामसो भूतसूक्ष्मादिर्यतः खं लिङ्गमात्मनः ।।३१।।

तैजसानि इन्द्रियाणि एव, ज्ञान कर्ममयानि च ।
तामसः भूत सूक्ष्म आदिः, यतः खम् लिङ्गम् आत्मनः ।।

तैजस अहंकार से	**भूत**	८.	पञ्च महाभूतों का
इन्द्रियाँ	**सूक्ष्म**	१०.	पञ्च तन्मात्राएँ (उत्पन्न
ही (उत्पन्न हुई)	**आदिः,**	९.	कारण
ज्ञानेन्द्रिय	**यतः**	११.	जिससे
कर्मेन्द्रिय (ये)	**खम्**	१४.	आकाश (उत्पन्न हुआ)
और	**लिङ्गम्**	१३.	बोध कराने वाला
तामस अहंकार से	**आत्मनः ।।**	१२.	परमात्मा का

कार से ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय, ये इन्द्रियाँ ही उत्पन्न हुईं । तामस अहंकार से का कारण पञ्च तन्मात्राएँ उत्पन्न हुईं; जिससे परमात्मा का बोध कराने उत्पन्न हुआ ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

कालमायांशयोगेन भगवद्वीक्षितं नभः ।
नभसोऽनुसृतं स्पर्शं विकुर्वन्निर्ममेऽनिलम् ।।३२।।

काल माया अंश योगेन, भगवत् वीक्षितम् नभः ।
नभसः अनुसृतम् स्पर्शम्, विकुर्वन् निर्ममे अनिलम् ।।

काल	**नभसः**	७.	आकाश से
माया (और)	**अनुसृतम्**	९.	उत्पन्न हुई (उसमें)
पुरुष के संयोग से	**स्पर्शम्,**	८.	स्पर्श तन्मात्रा
भगवान् की	**विकुर्वन्**	१०.	विकार होने पर (उसने
दृष्टि पड़ी (तब)	**निर्ममे**	१२.	उत्पन्न किया
आकाश पर (जब)	**अनिलम् ।।**	११.	वायु को

या और पुरुष के संयोग से आकाश पर जब भगवान् की दृष्टि पड़ी तब आका त्रा उत्पन्न हुई । उसमें विकार होने पर उसने वायु को उत्पन्न किया ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अनिलोऽपि विकुर्वाणो नभसोरुबलान्वितः ।
ससर्ज रूपतन्मात्रं ज्योतिर्लोकस्य लोचनम् ॥३३॥

पदच्छेद—

अनिलः अपि विकुर्वाणः, नभसा उरु बल अन्वितः ।
ससर्ज रूप तन्मात्रम्, ज्योतिः लोकस्य लोचनम् ॥

शब्दार्थ—

अनिलः	४.	वायु ने	ससर्ज	८.	उत्पन्न किया (जिससे)
अपि	५.	भी	रूपतन्मात्रम्,	७.	रूप तन्मात्रा को
विकुर्वाणः,	६.	विकार होने पर	ज्योतिः	११.	तेज (उत्पन्न हुआ)
नभसा	१.	आकाश के साथ	लोकस्य	९.	संसार का
उरु, बल	२.	महान्, शक्ति	लोचनम् ॥	१०.	प्रकाशक
अन्वितः ।	३.	सम्पन्न			

श्लोकार्थ—आकाश के साथ महान् शक्ति सम्पन्न वायु ने भी विकार होने पर रूप-तन्मात्रा को उत्पन्न किया, जिससे संसार का प्रकाशक तेज उत्पन्न हुआ ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अनिलेनान्वितं ज्योतिर्विकुर्वत्परवीक्षितम् ।
आधत्ताम्भो रसमयं, कालमायांशयोगतः ॥३४॥

पदच्छेद—

अनिलेन अन्वितम् ज्योतिः, विकुर्वत् पर वीक्षितम् ।
आधत्त अम्भः रसमयम्, काल माया अंश योगतः ॥

शब्दार्थ—

अनिलेन	६.	वायु से	अम्भः	११.	जल को
अन्वितम्	७.	युक्त	रसमयम्,	१०.	रस तन्मात्रा वाले
ज्योतिः,	८.	तेज ने	काल	१.	काल
विकुर्वत्	९.	विकार होते ही	माया	२.	माया (और)
पर, वीक्षितम् ।	५.	भगवान् की, दृष्टि पड़ने पर	अंश	३.	पुरुष के
आधत्त	१२.	उत्पन्न किया था	योगतः ॥	४.	प्रभाव के कारण

श्लोकार्थ—काल, माया और पुरुष के प्रभाव के कारण भगवान् की दृष्टि पड़ने पर वायु से युक्त तेज ने विकार होते ही रस-तन्मात्रा वाले जल को उत्पन्न किया था ।

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

ज्योतिषाम्भोऽनुसंसृष्टं विकुर्वद्ब्रह्मवीक्षितम् ।
महीं गन्धगुणामाधात्कालमायांशयोगतः ॥३५॥

ज्योतिषा अम्भः अनुसंसृष्टम्, विकुर्वत् ब्रह्म वीक्षितम् ।
महीम् गन्ध गुणाम् आधात्, काल माया अंश योगतः ॥

६	तेज से	महीम्	१२.	पृथ्वी को
८.	जल ने	गन्ध	१०.	गन्ध
७	मिले हुये	गुणाम्	११.	गुण वाली
९	विकार होने पर	आधात्,	१३.	उत्पन्न किया था
४	भगवान् की	काल	१.	काल
५	दृष्टि पड़ने पर	माया	२.	माया (और)
		अंशयोगतः ॥	३.	पुरुष के प्रभाव से

, माया और पुरुष के प्रभाव से भगवान् की दृष्टि पड़ने पर तेज से मिले
ार होने पर गन्ध गुण वाली पृथ्वी को उत्पन्न किया था ।

षट्त्रिंश: श्लोक:

भूतानां नभआदीनां यद्यद्भव्यावरावरम् ।
तेषां परानुसंसर्गाद्यथासंख्यं गुणान् विदुः ॥३६॥

भूतानाम् नभः आदीनाम्, यद्-यद् भव्य अवर-अवरम् ।
तेषाम् पर अनुसंसर्गात्, यथासंख्यम् गुणान् विदुः ॥

३.	पञ्च महाभूतों में	तेषाम्	७.	उनमें
१.	आकाश	पर	८.	(अपने) कारण क
२	इत्यादि	अनुसंसर्गात्,	९.	सम्बन्ध होने से
५.	जो-जो तत्त्व	यथासंख्यम्	१०.	क्रम से (उन्हें)
६	उत्पन्न हुये हैं	गुणान्	११.	(कारण के) गुणो
४	एक के बाद एक	विदुः ॥	१२.	समझना चाहिये

ाश इत्यादि पञ्च महाभूतों में एक के बाद एक जो-जो तत्त्व उत्पन्न हुये है,
ण का सम्बन्ध होने से क्रम से उन्हें कारण के गुणों से भी युक्त समझना चाहि

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एते देवाः कला विष्णोः कालमायांशलिङ्गिनः ।
नानात्वात्स्वक्रियानीशाः प्रोचुः प्राञ्जलयो विभुम् ।।३७।।

पदच्छेद—

एते देवाः कलाः विष्णोः, काल माया अंश लिङ्गिनः ।
नानात्वात् स्वक्रिया अनीशाः, प्रोचुः प्राञ्जलयः विभुम् ।।

शब्दार्थ—

एते	५.	ये (अभिमानी)	**लिङ्गिनः ।**	४.	बोध कराने वाले
देवाः	६.	देवगण	**नानात्वात्**	९.	अनेक होने से
कलाः	८.	कला (हैं ये)	**स्वक्रिया**	१०.	अपनी क्रिया मे
विष्णोः,	७.	भगवान् विष्णु की	**अनीशाः,**	११.	असमर्थ होने के क
काल	१.	काल	**प्रोचुः**	१४.	बोले
माया	२.	माया (और)	**प्राञ्जलयः**	१२.	हाथ जोड़ कर
अंश	३.	पुरुष का	**विभुम् ।।**	१३.	भगवान् से

श्लोकार्थ—काल, माया और पुरुष का बोध कराने वाले ये अभिमानी देवगण भगवान् कला हैं। ये अनेक होने से अपनी क्रिया में असमर्थ होने के कारण हाथ जोड़ क से बोले।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

देवा ऊचुः—

नमाम ते देव पदारविन्दं, प्रपन्नतापोपशमातपत्रम् ।
यन्मूलकेता यतयोऽञ्जसोरु, संसारदुःखं बहिरुत्क्षिपन्ति ।।३८।।

पदच्छेद—

नमाम ते देव पद अरविन्दम्, प्रपन्न ताप उपशम आतपत्रम् ।
यद् मूल केताः यतयः अञ्जसा उरु, संसार दुःखम् बहिः उत्क्षिपन्ति ।।

शब्दार्थ—

नमाम	७.	नमस्कार करते हैं	**मूल, केताः**	९.	तलवे का, आश्रय
ते	५.	आपके	**यतयः**	१०.	मुनिजन
देव	१.	हे भगवान् !	**अञ्जसा**	१४.	अनायास
पद, अरविन्दम्	६.	चरण, कमलों में (हम)	**उरु,**	१२.	महान्
प्रपन्न, ताप	२.	शरणागत जनों के कष्ट को	**संसार**	११.	जगत के
उपशम	३.	शान्त करने में	**दुःखम्**	१३.	कष्ट को
आतपत्रम् ।	४.	छत्र के समान	**बहिः**	१५.	बाहर
यद्	८.	जिस आपके	**उत्क्षिपन्ति ।।**	१६.	फेंक देते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! शरणागत जनों के कष्ट को शान्त करने में छत्र के समान आपके में हम नमस्कार करते हैं। जिस आपके तलवे का आश्रय लेकर मुनिजन ज कष्ट को अनायास बाहर फेंक देते हैं।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

धातर्यदस्मिन् भव ईश जीवास्—तापत्रयेणोपहृता न शर्म ।
आत्मँल्लभन्ते भगवंस्तवाङ्घ्रि—च्छायां सविद्यामत आश्रयेम ॥३९॥
धातः यद् अस्मिन् भवे ईश जीवाः, ताप त्रयेण उपहृताः न शर्म ।
आत्मन् लभन्ते भगवन् तव अङ्घ्रि, छायाम् सविद्याम् अतः आश्रयेम ॥

१	हे जगत्कर्ता	आत्मन्	११.	हे परमात्मन् !
३	क्योंकि, इस	लभन्ते	९.	पा सकते हैं
४	संसार में	भगवन्, तव	१२.	हे भगवन् ! आपके
२	जगदीश्वर !	अङ्घ्रि,	१३.	चरणों की
७.	प्राणी	छायाम्	१५.	छाया की (हम)
५	तीनों, तापों से	सविद्याम्	१४.	विद्यामयी
६	पीड़ित	अतः	१०.	इसलिये
८.	कल्याण को, नहीं	आश्रयेम ॥	१६.	शरण लेते हैं

गत्कर्ता जगदीश्वर ! क्योंकि इस संसार में तीनों तापों से पीड़ित प्राणी क
पा सकते हैं, इसलिये हे परमात्मन् ! हे भगवन् ! आपके चरणों की विद्याम
हम शरण लेते हैं ।

चत्वारिंशः श्लोकः

मार्गन्ति यत्ते मुखपद्मनीडैश्—छन्दःसुपर्णैर्ऋषयो विविक्ते ।
यस्याघमर्षोदसरिद्वरायाः, पदं पदं तीर्थपदः प्रपन्नाः ॥४०॥
मार्गन्ति यत् ते मुख पद्म नीडैः, छन्दः सुपर्णैः ऋषयः विविक्ते ।
यस्य अघ मर्ष उद सरित् वरायाः, पदम् पदम् तीर्थपदः प्रपन्नाः ॥

७	अनुसन्धान करते हैं (तथा जो)	अघ, मर्ष	९.	पाप, विनाशन
६	जिन (चरणों) का	उद	१०.	जल वाली
३	आपके, मुख	सरित्	१२.	नदी गंगाजी का
४	कमल को, आश्रय बना कर	वरायाः,	११.	श्रेष्ठ
५	वेदमन्त्र रूपी, पक्षियों के द्वारा	पदम्	१३.	उद्गम स्थान (है)
२	मुनिजन	पदम्	८.	चरण
१.	एकान्त स्थान में रह कर	तीर्थपदः	१४.	(उन) पवित्र चरण
५	आपके	प्रपन्नाः ॥	१६.	(हम) शरणागत है

न्त स्थान में रह कर मुनिजन आपके मुख कमल को आश्रय बना कर वेद
यों के द्वारा जिन चरणों का अनुसन्धान करते हैं तथा जो चरण पाप विन
ी श्रेष्ठ नदी गंगा जी का उद्गम स्थान हैं, उन पवित्र चरणों वाले आपके ह
है ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

यच्छ्रद्धया श्रुतवत्या च भक्त्या, संमृज्यमाने हृदयेऽवधाय ।
ज्ञानेन वैराग्यबलेन धीरा, व्रजेम तत्तेऽङ्घ्रिसरोजपीठम् ॥४१॥

यत् श्रद्धया श्रुतवत्या च भक्त्या, संमृज्यमाने हृदये अवधाय ।
ज्ञानेन वैराग्य बलेन धीराः, व्रजेम तत् ते अङ्घ्रि सरोज पीठम् ॥

जिसे, श्रद्धा	वैराग्य	१३	वैराग्य से
श्रवण आदि	बलेन	१४.	पुष्ट हुये
और	धीराः,	१६.	योगी (हो जाते है)
भक्ति के द्वारा	**व्रजेम**	५.	शरण लेते हैं
निर्मल किये हुये	तत्	२.	उस
अन्तःकरण में	ते	१.	(हम लोग) आपके
धारण करके (लोग)	अङ्घ्रि, सरोज	३.	चरण, कमल की
ज्ञान के द्वारा	पीठम् ॥	४.	चौकी की

आपके उस चरण कमल की चौकी की शरण लेते हैं, जिसे श्रद्धा और श्रवण
द्वारा निर्मल किये हुये अन्तःकरण में धारण करके लोग वैराग्य से पुष्ट हुये
ी हो जाते हैं ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

विश्वस्य जन्मस्थितिसंयमार्थे, कृतावतारस्य पदाम्बुजं ते ।
व्रजेम सर्वे शरणं यदीश, स्मृतं प्रयच्छत्यभयं स्वपुंसाम् ॥४

विश्वस्य जन्म स्थिति संयम अर्थे, कृत अवतारस्य पद अम्बुजम् ते ।
व्रजेम सर्वे शरणम् यद् ईश, स्मृतम् प्रयच्छति अभयम् स्व पुंसाम् ॥

ससार की	**सर्वे**	६.	हम सब
उत्पत्ति, पालन और	शरणम्	१०.	आश्रय
सहार के, लिये	यद्	१२.	जो चरण-कमल
लेने वाले	ईश,	१.	हे जगदीश !
अवतार	स्मृतम्	१३.	स्मरण करते ही
चरण, कमल का	प्रयच्छति	१६.	प्रदान करते हैं
आपके	अभयम्	१५.	अभय पद
लेते हैं	स्व, पुंसाम् ॥	१४.	अपने, भक्तों को

श ! संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये अवतार लेने वाले आप
ा हम सब आश्रय लेते है; जो चरण-कमल स्मरण करते ही अपने भक्तों
न करते हैं ।

त्रिचत्वारिंश: श्लोक:

यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे, ममाहमित्यूढदुराग्रहाणाम् ।
पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां, भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम् ।।४३।।

पदच्छेद— यत् सानुबन्धे असति देह गेहे, मम अहम् इति ऊढ दुराग्रहाणाम् ।
पुंसाम् सुदूरम् वसतः अपि पुर्याम्, भजेम तत् ते भगवन् पद अब्जम् ।।

शब्दार्थ—

यत्	११.	जो	सुदूरम्	१२.	अत्यन्त दूर हैं
सानुबन्धे,असति	३.	सम्बन्धी, तुच्छ वस्तुओं में	वसतः, अपि	१०.	रहने पर, भी
देह, गेहे,	२.	शरीर, घर (और उनसे)	पुर्याम्,	६.	शरीर में (सदा)
मम	४.	ममता (तथा)	भजेम	१६.	भजन करते हैं
अहम्, इति	५.	अहंकार के, कारण	तत्	१४.	उन्हीं
ऊढ	७.	करने वाले	ते	१३.	(हम) आपके
दुराग्रहाणाम् ।	६.	हठ	भगवन्	१.	हे भगवन् !
पुंसाम्	८.	लोगों के	पद, अब्जम् ।।	१५.	चरण, कमलों का

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! शरीर, घर और उनसे सम्बन्ध रखने वाली तुच्छ वस्तुओं में ममता तथा के कारण हठ करने वाले लोगों के शरीर में सदा रहने पर भी जो अत्यन्त दूर हैं, हम उन्हीं चरण-कमलों का भजन करते हैं।

चतुश्चत्वारिंश: श्लोक:

तान् वै ह्यसद्वृत्तिभिरक्षिभिर्ये, पराहृतान्तर्मनसः परेश ।
अथो न पश्यन्त्युरुगाय नूनं, ये ते पदन्यासविलासलक्ष्म्याः ।।४४।।

पदच्छेद— तान् वै हि असद् वृत्तिभिः अक्षिभिः ये, पराहृत अन्तर्मनसः परेश ।
अथो न पश्यन्ति उरुगाय नूनम्, ये ते पद न्यास विलास लक्ष्म्याः ।।

शब्दार्थ—

तान्	१०.	उन्हें	अथो	८.	उन चरणों को
वै हि	६.	ही	न, पश्यन्ति	१३.	नहीं, देखते हैं
असद्, वृत्तिभिः	४.	विषयों में, आसक्त	उरुगाय	१.	विशाल कीर्ति वाले
अक्षिभिः	५.	इन्द्रियों के कारण	नूनम्,	१२.	निश्चय ही
ये,	३.	जो लोग	ये	१४.	जो भक्तजन
पराहृत	६.	दूर कर दिये हैं	ते	११.	वे (भक्तजन)
अन्तर्मनसः	७.	अपने अन्तःकरण से	पद, न्यास	१६.	चरणों को, रखने की
परेश ।	२.	हे परमेश्वर !	विलास	१५.	हाव-भाव से
			लक्ष्म्याः ।।	१७.	शोभा को (जानते हैं)

श्लोकार्थ—विशाल कीर्ति वाले हे परमेश्वर ! जो लोग विषयों में आसक्त इन्द्रियों के कारण अन्तःकरण से उन चरणों को दूर कर दिये हैं, उन्हें वे भक्तजन निश्चय ही नहीं देखते भक्तजन हाव-भाव से चरणों को रखने की शोभा को जानते हैं।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

पानेन ते देव कथासुधायाः, प्रवृद्धभक्त्या विशदाशया ये ।
वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं, यथाञ्जसान्वीयुरकुण्ठधिष्ण्यम् ।।४

पानेन ते देव कथा सुधायाः, प्रवृद्ध भक्त्या विशद आशयाः ये ।
वैराग्य सारं प्रतिलभ्य बोधम्, यथा अञ्जसा अन्वीयुः अकुण्ठ धिष्ण्यम् ।।

पान करने से	वैराग्य, सारम्	६.	वैराग्य, उत्पादक
आपके	प्रतिलभ्य	११.	प्राप्त करके
हे प्रभो !	बोधम्,	१०.	ज्ञान को
लीलारूप, अमृत का	यथा	१२.	जिस प्रकार
बढी हुई, भक्ति के कारण	अञ्जसा	१३.	अनायास (ही)
निर्मल हो गया है (वे भक्तजन)	अन्वीयुः	१६.	प्राप्त कर लेते है
अन्तःकरण	अकुण्ठ	१४.	वैकुण्ठ
जिनका	धिष्ण्यम् ।।	१५.	लोक को

आपके लीलारूप अमृत का पान करने से बढ़ी हुई भक्ति के कारण जिन र्मल हो गया है, वे भक्तजन वैराग्य उत्पादक ज्ञान को प्राप्त करके जि ही वैकुण्ठ लोक को प्राप्त कर लेते हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

तथापरे चात्मसमाधियोग—बलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम् ।
त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति, तेषां श्रमः स्यान्न तु सेवया ते

तथा अपरे च आत्म समाधि योग, बलेन जित्वा प्रकृतिम् बलिष्ठाम् ।
त्वाम् एव धीराः पुरुषम् विशन्ति, तेषाम् श्रमः स्यात् न तु सेवया ते ।।

उस प्रकार से, दूसरे	धीराः	२.	योगीजन (भी)
अन्तर यह है कि	पुरुषम्	६.	आदि पुरुष में
चित्त, निरोध रूप समाधि	विशन्ति,	११.	लीन होते हैं
योग के प्रभाव से	तेषाम्, श्रमः,	१३.	उन्हें, परिश्रम
जीत कर	स्यात्	१४.	होता है
माया को	न	१८.	श्रम नहीं होता
अत्यन्त बलवती	तु	१५.	किन्तु
आप	सेवया,	१७.	सेवा भक्ति से
ही	ते ।।	१६.	आपकी,

: से दूसरे योगीजन भी चित्त-निरोध रूप समाधि-योग के प्रभाव स ाया को जीतकर आप आदि पुरुष में ही लीन होते हैं। अन्तर यह ोता है- किन्तु आपकी सेवा भक्ति से श्रम नहीं होता ।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तत्ते वयं लोकसिसृक्षयाऽऽद्य, त्वयानुसृष्टास्त्रिभिरात्मभिः स्म ।
सर्वे वियुक्ताः स्वविहारतन्त्रं, न शक्नुमस्तत्प्रतिहर्तवे ते ॥४७॥

पदच्छेद— तत् ते वयम् लोक सिसृक्षया आद्य, त्वया अनुसृष्टाः त्रिभिः आत्मभिः स्म ।
सर्वे वियुक्ताः स्व विहार तन्त्रम्, न शक्नुमः तत् प्रतिहर्तवे ते ॥

शब्दार्थ—

तत्	११.	इसलिये (हम)	सर्वे	८.	हम सभी
ते	२.	अपनी	वियुक्ताः	१०.	अलग-अलग (हैं)
वयम्	४.	हम लोगों को	स्व, विहार	१२.	आपकी, लीला के
लोक, सिसृक्षया	३.	विश्व, रचना की इच्छा से	तन्त्रम्	१३.	अधीन
आद्य, त्वया	१.	हे आदि पुरुष ! आपने	न	१७.	नहीं
अनुसृष्टाः	६.	बनाया	शक्नुमः	१८.	समर्थ हो रहे हैं
त्रिभिः	५.	तीन गुणों से	तत्	१४.	उस विश्व को
आत्मभिः	६.	अपने स्वभाव से	प्रतिहर्तवे	१६.	समर्पित करने मे
स्म ।	७.	है	ते ॥	१५.	आपको

श्लोकार्थ—हे आदि पुरुष ! आपने अपनी विश्व रचना की इच्छा से हम लोगों को तीन गुणो
है । हम सभी अपने स्वभाव से अलग-अलग हैं । इसलिये हम आपकी लीला के
विश्व को आपको समर्पित करने मे समर्थ नहीं हो रहे हैं ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यावद्बलिं तेऽज हराम काले, यथा वयं चान्नमदाम यत्र ।
यथोभयेषां त इमे हि लोका, बलिं हरन्तोऽन्नमदन्त्यनूहाः ॥४८॥

पदच्छेद— यावद् बलिम् ते अज हराम काले, यथा वयम् च अन्नम् अदाम यत्र ।
यथा उभयेषाम् ते इमे हि लोकाः, बलिम् हरन्तः अन्नम् अदन्ति अनूहाः ॥

शब्दार्थ—

यावद्	७.	जिससे (स्वयं)	यथा	६.	तथा
बलिम्, ते	४.	आपकी, भोग पूजा	उभयेषाम्	१४.	हम दोनों को
अज	१.	हे अजन्मा! (ऐसा स्थान बतावें)	ते, इमे	१०.	ये, सब
हराम, काले,	५.	समय से, कर सकें	हि	१२.	भी
यथा	६.	और	लोकाः,	११.	प्राणी
वयम्	३.	हम लोग	बलिम्, हरन्तः	१५.	भोग, समर्पित क
च, अन्नम्, अदाम	८.	भी, भोग, प्राप्त कर सकें	अन्नम्, अदन्ति	१६.	अन्न का, भक्षण
यत्र ।	२.	जहाँ रह कर	अनूहाः ॥	१३.	निर्विघ्नता से

श्लोकार्थ—हे अजन्मा ! ऐसा स्थान बतावें, जहाँ रह कर हम लोग आपकी भोग पूजा समय
और जिससे अपना भी भोग प्राप्त कर सकें तथा ये सब प्राणी भी निर्विघ्नता
को भोग समर्पित करते हुये अपने अन्न का भक्षण कर सकें ।

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

त्वं नः सुराणामसि सान्वयानां, कूटस्थ आद्यः पुरुषः पुराणः ।
त्वं देव शक्त्यां गुणकर्मयोनौ, रेतस्त्वजायां कविमादधेऽजः ॥४९॥

पदच्छेद— त्वम् नः सुराणाम् असि सान्वयानाम्, कूटस्थः आद्यः पुरुषः पुराणः ।
त्वम् देव शक्त्याम् गुण कर्मयोनौ, रेतः तु अजायाम् कविम् आदधे अजः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	३.	आप	शक्त्याम्	१५.	अपनी शक्ति
नः, सुराणाम्	५.	हम, देवताओं के भी	गुण,	१२.	सत्त्वादि गुण और
असि	७.	हैं	कर्म,	१३.	जन्मादि कर्मों की
सान्वयानाम्,	४.	कार्य समूह के साथ-साथ	योनौ,	१४.	कारण भूता
कूटस्थः	१.	निर्विकार	रेतः	१७.	बीज को
आद्यः	६.	आदि कारण	तु	११	ही
पुरुषः, पुराणः ।	२.	सनातन, पुरुष	अजायाम्, कविम्	१६.	माया में, चेतन रूप
त्वम्	१०.	आपने	आदधे	१८.	स्थापित किया था
देव	८.	हे भगवन् !	अजः ॥	९	अजन्मा

श्लोकार्थ—निर्विकार सनातन पुरुष आप कार्य समूह के साथ-साथ हम देवताओं के भी आदि कारण हैं भगवन् ! अजन्मा आपने ही सत्त्वादि गुण और जन्मादि कर्मों की कारणभूता अपनी श माया में चेतन रूप बीज स्थापित किया था ।

पञ्चाशः श्लोकः

ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे, बभूविमात्मन् करवाम किं ते ।
त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या, देव क्रियार्थे यदनुग्रहाणाम् ॥५०॥

पदच्छेद— ततः वयम् सत् प्रमुखाः यदर्थे, बभूविम आत्मन् करवाम किम् ते ।
त्वम् नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या, देव क्रियार्थे यद् अनुग्रहाणाम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	५.	उस विषय में (हम)	त्वम्	१४	आप
वयम्	३	हम देवगण	नः	१३.	हमें
सत्, प्रमुखाः	२	महत्तत्त्व, इत्यादि के अभिमानी	स्वचक्षुः, परदेहि	१६.	अपना ज्ञान, प्रदान करे
यदर्थे, बभूविम	४	जिसके लिये, उत्पन्न हुये हैं	शक्त्या,	१५.	शक्ति के साथ-साथ
आत्मन्	१.	हे परमात्मन् !	देव	९.	हे भगवन् ! (हम)
करवाम	८	करें	क्रियार्थे	१२.	सृष्टि करने के लिये
किम्	७	क्या	यद्	१०.	आपके
ते ।	६.	आपका	अनुग्रहाणाम् ॥	११.	कृपा-पात्र (हैं)

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! महत्तत्त्व इत्यादि के अभिमानी हम देवगण जिस काम के लिये उत्पन्न हुये उस विषय में हम आपका क्या करें ? हे भगवन् ! हम आपके कृपा पात्र हैं । सृष्टि करने लिये हमें आप शक्ति के साथ-साथ अपना ज्ञान भी प्रदान करें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे पञ्चम अध्यायः ॥५॥

तृतीयः स्कन्धः

अथ षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

इति तासां स्वशक्तीनां सतीनामसमेत्य सः ।
प्रसुप्तलोकतन्त्राणां निशाम्य गतिमीश्वरः ॥१॥

इति तासाम् स्व शक्तीनाम्, सतीनाम् असमेत्य सः ।
प्रसुप्त लोक तन्त्राणाम्, निशाम्य गतिम् ईश्वरः ॥

इस प्रकार	प्रसुप्त	८.	असमर्थ
उन	लोक	६.	विश्व की
अपनी शक्तियों की	तन्त्राणाम्,	७.	रचना करने मे
रहती हुई (अतएव)	निशाम्य	१२.	देखी
अलग-अलग रूप में	गतिम्	११.	(असहाय) दशा
उस	ईश्वरः ॥	२.	सर्वशक्तिमान् ने

क्तिमान् ने इस प्रकार अलग-अलग रूप में रहती हुई अतएव विश्व की
उन अपनी शक्तियों की असहाय दशा देखी ।

द्वितीयः श्लोकः

कालसंज्ञां तदा देवीं बिभ्रच्छक्तिमुरुक्रमः ।
त्रयोविंशतितत्त्वानां गणं युगपदाविशत् ॥२॥

काल संज्ञाम् तदा देवीम्, बिभ्रत् शक्तिम् उरुक्रमः ।
त्रयोविंशति तत्त्वानाम्, गणम् युगपत् आविशत् ॥

काल	उरुक्रमः ।	२.	भगवान् त्रिविक्र
नाम की	त्रयोविंशति	८.	तेईस
उस समय	तत्त्वानाम्,	९.	तत्त्वों के
प्रकाशमान	गणम्	१०.	समुदाय में
धारण करके	युगपत्	११.	एक साथ
शक्ति को	आविशत् ॥	१२.	प्रवेश किया था

भगवान् त्रिविक्रम ने काल नाम की प्रकाशमान शक्ति धारण
समुदाय में एक साथ प्रवेश किया था ।

तृतीय: श्लोक:

सोऽनुप्रविष्टो भगवांश्चेष्टारूपेण तं गणम् ।
भिन्नं संयोजयामास सुप्तं कर्म प्रबोधयन् ।।३।।

सः अनुप्रविष्टः भगवान्, चेष्टा रूपेण तम् गणम् ।
भिन्नम् संयोजयामास, सुप्तम् कर्म प्रबोधयन् ।।

उन	गणम् ।	५.	तत्त्व समुदाय में
प्रवेश किया (तथा)	भिन्नम्	३.	अलग हुये
भगवान् श्री हरि ने	संयोजयामास,	१२.	(आपस में) मिला
क्रिया	सुप्तम्	९.	सोये हुये (जीवों
रूप से	कर्म	१०.	अदृष्ट को
उस	प्रबोधयन् ।।	११.	जागृत करके (उ

न् श्री हरि ने अलग हुये उस तत्त्व समुदाय में क्रिया रूप से प्रवेश किया
के अदृष्ट को जागृत करके उन्हें आपस में मिला दिया ।

चतुर्थ: श्लोक:

प्रबुद्धकर्मा दैवेन त्रयोविंशतिको गणः ।
प्रेरितोऽजनयत्स्वाभिर्मात्राभिरधिपूरुषम् ।।४।।

प्रबुद्ध कर्मा दैवेन, त्रयोविंशतिकः गणः ।
प्रेरितः अजनयत् स्वाभिः, मात्राभिः अधिपूरुषम् ।।

जागृत कर दिये जाने पर	प्रेरितः	४.	प्रेरणा पाकर
अदृष्ट के	अजनयत्	१०.	उत्पन्न किया
भगवान् के द्वारा	स्वाभिः,	७.	अपने
तेईस तत्त्वों के	मात्राभिः	८.	अंशों सहित
समुदाय ने	अधिपूरुषम् ।।	९.	विराट् पुरुष को

के द्वारा अदृष्ट के जागृत कर दिये जाने पर प्रेरणा पाकर तेईस तत्त्वों
अंशों सहित विराट् पुरुष को उत्पन्न किया ।

पञ्चमः श्लोकः

परेण विशता स्वस्मिन्मात्रया विश्वसृग्गणः ।
चुक्षोभान्योन्यमासाद्य यस्मिंल्लोकाश्चराचराः ।।५।।

परेण विशता स्वस्मिन्, मात्रया विश्वसृक् गणः ।
चुक्षोभ अन्योन्यम् आसाद्य, यस्मिन् लोकाः चर अचराः ।।

परात्पर भगवान् ने	**चुक्षोभ**	९.	परिवर्तन किया
प्रवेश करके	**अन्योन्यम्**	७	एक दूसरे से
अपने (महत्तत्त्वादि) में	**आसाद्य,**	८.	मिला कर
अशों से	**यस्मिन्**	१०	जिन तत्त्वों मे
संसार की रचना करने वाले	**लोकाः**	१३	संसार (विद्यमान
तत्त्व समुदाय को	**चर**	१२.	चेतन रूप
	अचराः ।।	११.	चड़ और

गवान् ने अंशों से अपने महत्तत्त्वादि में प्रवेश करके संसार की रचना दाय को एक दूसरे से मिला कर परिवर्तन किया, जिन तत्त्वों में जड़ र सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है ।

षष्ठः श्लोकः

हिरण्मयः स पुरुषः सहस्रपरिवत्सरान् ।
आण्डकोश उवासाप्सु सर्वसत्त्वोपबृंहितः ।।६।।

हिरण्मयः सः पुरुषः, सहस्र परिवत्सरान् ।
आण्डकोशे उवास अप्सु, सर्व सत्त्व उपबृंहितः ।।

सुवर्णमय	**आण्डकोशे**	८.	विराट् देह में रू
उस	**उवास**	११.	निवास किया
विराट् पुरुष ने	**अप्सु,**	७.	जल में (स्थित)
एक हजार	**सर्व**	४.	सभी
दिव्य वर्षों तक	**सत्त्व**	५.	जीवों को
	उपबृंहितः ।।	६.	साथ लेकर

उस विराट् पुरुष ने सभी जीवों को साथ लेकर जल में स्थित वि एक हजार दिव्य वर्षों तक निवास किया ।

सप्तमः श्लोकः

स वै विश्वसृजां गर्भो देवकर्मात्मशक्तिमान् ।
विबभाजात्मनाऽऽत्मानमेकधा दशधा त्रिधा ॥७॥

सः वै विश्व सृजाम् गर्भः, देव कर्म आत्म शक्तिमान् ।
विबभाज आत्मना आत्मानम्, एकधा दशधा त्रिधा ॥

वह विराट् पुरुष	**शक्तिमान् ।**	७.	शक्ति से सम्पन्न ('
और	**विबभाज**	१४.	विभक्त किया
ससार की	**आत्मना**	८.	(उसने) अपने आप
रचना करने वाले तत्त्वों से	**आत्मानम्,**	९.	अपने को
उत्पन्न	**एकधा**	१०	एक रूप में
ज्ञान, क्रिया (और)	**दशधा**	११.	दस रूपों में
अपनी	**त्रिधा ॥**	१३.	तीन रूपों में

रचना करने वाले तत्त्वों से उत्पन्न वह विराट् पुरुष ज्ञान, क्रिया और अ
था । उसने अपने आप अपने को एक रूप में, दस रूपों में और तीन रूपो

अष्टमः श्लोकः

एषः ह्यशेषसत्त्वानामात्मांशः परमात्मनः ।
आद्योऽवतारो यत्रासौ भूतग्रामो विभाव्यते ॥८॥

एषः हि अशेष सत्त्वानाम्, आत्मा अंशः परमात्मनः ।
आद्यः अवतारः यत्र असौ, भूत ग्रामः विभाव्यते ॥

यही (विराट् पुरुष)	**आद्यः**	७.	(यह) पहला
सम्पूर्ण	**अवतारः**	८.	अवतार है
जीवों की	**यत्र**	९.	जिसमें
आत्मा है	**असौ,**	११.	वह (स्थूल)
अश (और)	**भूत**	१०.	पञ्च महाभूतो का
परमात्मा का	**ग्रामः**	१२.	समूह
	विभाव्यते ॥	१३.	प्रकट होता है

द् पुरुष परमात्मा का अंश और सम्पूर्ण जीवों की आत्मा है। श्री ह
तार है, जिसमें पञ्च महाभूतों का वह स्थूल समूह प्रकट होता है ।

नवमः श्लोकः

साध्यात्मः साधिदैवश्च साधिभूत इति त्रिधा ।
विराट् प्राणो दशविध एकधा हृदयेन च ॥९॥

पदच्छेद—

साध्यात्मः साधिदैवः च, साधिभूतः इति त्रिधा ।
विराट् प्राणः दशविधः, एकधा हृदयेन च ॥

शब्दार्थ—

साध्यात्मः	२.	आध्यात्मिक	विराट	१.	विराट्पुरुष
साधिदैवः	३.	आधिदैविक	प्राणः	८.	प्राण वायु रूप से
च,	४.	और	दशविधः,	९.	दस प्रकार का
साधिभूतः	५.	आधिभौतिक	एकधा	१२.	एक प्रकार का (है)
इति	६.	रूप से	हृदयेन	११.	हृदय रूप से
त्रिधा ।	७.	तीन प्रकार का	च ॥	१०.	तथा

श्लोकार्थ—वह विराट् पुरुष आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक रूप से तीन प्रकार का, प्राण-वायु रूप से दस प्रकार का तथा हृदय रूप से एक प्रकार का है।

दशमः श्लोकः

स्मरन् विश्वसृजामीशो विज्ञापितमधोक्षजः ।
विराजमतपत्स्वेन तेजसैषां विवृत्तये ॥१०॥

पदच्छेद—

स्मरन् विश्व सृजाम् ईशः, विज्ञापितम् अधोक्षजः ।
विराजम् अतपत् स्वेन, तेजसा एषाम् विवृत्तये ॥

शब्दार्थ—

स्मरन्	४.	स्मरण करके	विराजम्	११.	विराट् पुरुष को
विश्व	१.	संसार की	अतपत्	१२.	जागृत किया था
सृजाम्	२.	रचना करने वाले तत्त्वों की	स्वेन,	९.	अपने
ईशः,	५.	(उनके) अधिपति	तेजसा	१०.	तेज से
विज्ञापितम्	३.	प्रार्थना का	एषाम्	७.	उन्हें
अधोक्षजः ।	६.	भगवान् श्री हरि ने	विवृत्तये ॥	८.	क्रियाशील बनाने के लिये

श्लोकार्थ—संसार की रचना करने वाले तत्त्वों की प्रार्थना का स्मरण करके उनके अधिपति भगवान् श्री हरि ने उन्हें क्रियाशील बनाने के लिये अपने तेज से विराट् पुरुष को जागृत किया था।

एकादशः श्लोकः

अथ तस्याभितप्तस्य कति चायतनानि ह ।
निरभिद्यन्त देवानां तानि मे गदतः शृणु ॥११॥

पदच्छेद—

अथ तस्य अभितप्तस्य, कति च आयतनानि ह ।
निरभिद्यन्त देवानाम्, तानि मे गदतः शृणु ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	निरभिद्यन्त	८.	प्रकट हो गये
तस्य	२.	उस विराट् पुरुष के	देवानाम्,	४.	देवताओं के
अभितप्तस्य,	३.	जागृत हो जाने पर	तानि	९.	उन्हें
कति च	५.	कितने	मे	१०.	मेरी
आयतनानि	७.	स्थान	गदतः	११.	वाणी में
ह ।	६.	ही	शृणु ॥	१२.	सुनें

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस विराट् पुरुष के जागृत हो जाने पर देवताओं के कितने ही स्थान प्रकट हो गये, उन्हें मेरी वाणी में आप सुनें ।

द्वादशः श्लोकः

तस्याग्निरास्यं निर्भिन्नं लोकपालोऽविशत्पदम् ।
वाचा स्वांशेन वक्तव्यं ययासौ प्रतिपद्यते ॥१२॥

पदच्छेद—

तस्य अग्निः आस्यम् निर्भिन्नम्, लोकपालः अविशत् पदम् ।
वाचा स्व अंशेन वक्तव्यम्, यया असौ प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस (विराट् पुरुष) का	वाचा	६.	वाणी के साथ
अग्निः	८.	अग्नि ने	स्व अंशेन	५.	अपने अंश
आस्यम्	२.	पहले मुख	वक्तव्यम्,	१२.	शब्द
निर्भिन्नम्,	३.	उत्पन्न हुआ	यया	१०.	जिससे
लोकपालः	७.	लोकपाल	असौ	११.	वह जीव
अविशत्	९.	प्रवेश किया	प्रतिपद्यते ॥	१३.	बोलता है
पदम् ।	४.	उसमें			

श्लोकार्थ—उस विराट् पुरुष का पहले मुख उत्पन्न हुआ । उसमें अपने अंश वाणी के साथ लोकपाल अग्नि ने प्रवेश किया, जिससे वह जीव शब्द बोलता है ।

त्रयोदशः श्लोकः

निर्भिन्नं तालु वरुणो लोकपालोऽविशद्धरेः ।
जिह्वयांशेन च रसं ययासौ प्रतिपद्यते ।।१३।।

पदच्छेद—

निर्भिन्नम् तालु वरुणः, लोकपालः अविशत् हरेः ।
जिह्वया अंशेन च रसम्, यया असौ प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

निर्भिन्नम्	३.	उत्पन्न हुआ	**जिह्वया**	६.	रसना के साथ
तालु	२.	तालु	**अंशेन**	५.	अपने अंशभूत
वरुणः,	८.	वरुण ने	**च**	४.	उसमें
लोकपालः	७.	लोकपाल	**रसम्,**	१२.	रस का
अविशत्	९.	प्रवेश किया	**यया**	१०.	जिस (रसना) से
हरेः ।	१.	भगवान् का	**असौ**	११.	वह (जीव)
			प्रतिपद्यते ।।	१३.	ग्रहण करता है

श्लोकार्थ—उसके बाद भगवान् का तालु उत्पन्न हुआ। उसमें अपने अंशभूत रसना के साथ लोकपाल वरुण ने प्रवेश किया, जिस रसना से वह जीव रस का ग्रहण करता है।

चतुर्दशः श्लोकः

निर्भिन्ने अश्विनौ नासे विष्णोराविशतां पदम् ।
घ्राणेनांशेन गन्धस्य प्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ।।१४।।

पदच्छेद—

निर्भिन्ने अश्विनौ नासे, विष्णोः आविशताम् पदम् ।
घ्राणेन अंशेन गन्धस्य, प्रतिपत्तिः यतः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

निर्भिन्ने	३.	उत्पन्न हुआ	**घ्राणेन**	६.	घ्राणेन्द्रिय के साथ
अश्विनौ	७.	दोनों अश्विनी कुमारों ने	**अंशेन**	५.	अपने अंशभूत
नासे,	२.	नासा पुट	**गन्धस्य,**	१०.	गन्ध का
विष्णोः	१.	विराट् भगवान् का	**प्रतिपत्तिः**	११.	अनुभव
आविशताम्	८.	प्रवेश किया	**यतः**	९.	जिस (इन्द्रिय) से
पदम् ।	४.	उस स्थान में	**भवेत् ।।**	१२.	होता है

श्लोकार्थ—तदनन्तर विराट् भगवान् का नासा पुट उत्पन्न हुआ। उस स्थान में अपने अंशभूत घ्राणेन्द्रिय के साथ दोनों अश्विनी कुमारों ने प्रवेश किया, जिस इन्द्रिय से गन्ध का अनुभव होता है।

पञ्चदशः श्लोकः

निर्भिन्ने अक्षिणी त्वष्टा लोकपालोऽविशद्विभोः ।
चक्षुषांशेन रूपाणां प्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ॥१५॥

पदच्छेद—

निर्भिन्ने अक्षिणी त्वष्टा, लोकपालः अविशत् विभोः ।
चक्षुषा अंशेन रूपाणाम्, प्रतिपत्तिः यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

निर्भिन्ने	३.	उत्पन्न हुई (उसमें)	चक्षुषा	७.	नेत्रेन्द्रिय के साथ
अक्षिणी	२.	आंखें	अंशेन	६.	अपने अंश
त्वष्टा,	५.	सूर्य ने	रूपाणाम्,	१०.	रूप का
लोकपालः	४.	लोकपाल	प्रतिपत्तिः	११.	ज्ञान
अविशत्	८.	प्रवेश किया	यतः	९.	जिससे
विभोः ।	१.	(तदनन्तर) विराट् भगवान् की	भवेत् ॥	१२.	होता है

श्लोकार्थ—तदनन्तर विराट् भगवान् की आँखें उत्पन्न हुईं। उसमें लोकपाल सूर्य ने अपने अंश नेत्रेन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे रूप का ज्ञान होता है।

षोडशः श्लोकः

निर्भिन्नान्यस्य चर्माणि लोकपालोऽनिलोऽविशत् ।
प्राणेनांशेन संस्पर्शं येनासौ प्रतिपद्यते ॥१६॥

पदच्छेद—

निर्भिन्नानि अस्य चर्माणि, लोकपालः अनिलः अविशत् ।
प्राणेन अंशेन संस्पर्शम्, येन असौ प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

निर्भिन्नानि	३.	उत्पन्न हुई (उसमें)	प्राणेन	७.	प्राण के साथ
अस्य	१.	फिर इसकी	अंशेन	६.	अपनी शक्ति
चर्माणि,	२.	त्वचा	संस्पर्शम्,	११.	स्पर्श का
लोकपालः	४.	लोकपाल	येन	९.	जिससे
अनिलः	५.	वायु ने	असौ	१०.	यह (जीव)
अविशत् ।,	८.	प्रवेश किया	प्रतिपद्यते ॥	१२.	अनुभव करता है

श्लोकार्थ—फिर इस विराट् भगवान् की त्वचा उत्पन्न हुई। उसमें लोकपाल वायु ने अपनी शक्ति प्राण के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव स्पर्श का अनुभव करता है।

सप्तदश: श्लोकः

कर्णावस्य विनिर्भिन्नौ धिष्ण्यं स्वं विविशुर्दिशः।
श्रोत्रेणांशेन शब्दस्य सिद्धिं येन प्रपद्यते ॥१७॥

कर्णौ अस्य विनिर्भिन्नौ, धिष्ण्यम् स्वम् विविशुः दिशः।
श्रोत्रेण अंशेन शब्दस्य, सिद्धिम् येन प्रपद्यते ॥

२	दोनों कान	श्रोत्रेण	८.	श्रवणेन्द्रिय के
१.	(तत्पश्चात्) विराट् भगवान् के	अंशेन	७.	अपनी शक्ति
३.	उत्पन्न हुये	शब्दस्य,	११.	शब्द का
५.	आश्रय में	सिद्धिम्	१२.	श्रवण
४	अपने (उस)	येन	१०.	जिससे
९	प्रवेश किया	प्रपद्यते ॥	१३.	होता है
६	दिशाओं ने			

श्चात् विराट् भगवान् के दोनों कान उत्पन्न हुये। अपने उस आश्रय में दिश
क्ति श्रवणेन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे शब्द का श्रवण होता है।

अष्टादश: श्लोकः

त्वचमस्य विनिर्भिन्नां विविशुर्धिष्ण्यमोषधीः।
अंशेन रोमभिः कण्डूं यैरसौ प्रतिपद्यते ॥१८॥

त्वचम् अस्य विनिर्भिन्नाम्, विविशुः धिष्ण्यम् ओषधीः।
अंशेन रोमभिः कण्डूम्, यैः असौ प्रतिपद्यते ॥

२.	चमड़ी	अंशेन	६.	अपने अंश
१.	(फिर) इस विराट् भगवान् की	रोमभिः	७.	रोमावलियों
३.	उत्पन्न हुई	कण्डूम्,	११.	खुजली का
८.	प्रवेश किया	यैः	९.	जिससे
४.	उसमें	असौ	१०.	यह (जीव)
५.	औषधियों ने	प्रतिपद्यते ॥	१२.	अनुभव करत

र इस विराट् भगवान् की चमड़ी उत्पन्न हुई। उसमें औषधियों ने अपने अं
साथ प्रवेश किया जिससे यह जीव खुजली का अनुभव करता है

एकोनविंशः श्लोकः

मेढ्रं तस्य विनिर्भिन्नं स्वधिष्ण्यं क उपाविशत् ।
रेतसांशेन येनासावानन्दं प्रतिपद्यते ।।१९।।

पदच्छेद—

मेढ्रम् तस्य विनिर्भिन्नम्, स्वधिष्ण्यम् कः उपाविशत् ।
रेतसा अंशेन येन असौ, आनन्दम् प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

मेढ्रम्	२.	जननेन्द्रिय	**रेतसा**	७.	वीर्य के साथ
तस्य	१.	विराट् भगवान् की देह में	**अंशेन**	६.	अपने अंश
विनिर्भिन्नम्,	३.	उत्पन्न हुई	**येन**	९.	जिससे
स्वधिष्ण्यम्	४.	अपने उस आश्रय में	**असौ,**	१०.	यह जीव
कः	५.	प्रजापति ने	**आनन्दम्**	११.	आनन्द का
उपाविशत् ।	८.	प्रवेश किया	**प्रतिपद्यते ।।**	१२.	अनुभव करता है

श्लोकार्थ—उसके बाद विराट् भगवान् की देह में जननेन्द्रिय उत्पन्न हुई। अपने उस आश्रय में प्रजापति ने अपने अंश वीर्य के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव आनन्द का अनुभव करता है।

विंशः श्लोकः

गुदं पुंसो विनिर्भिन्नं मित्रो लोकेश आविशत् ।
पायुनांशेन येनासौ विसर्गं प्रतिपद्यते ।।२०।।

पदच्छेद—

गुदम् पुंसः विनिर्भिन्नम्, मित्रः लोकेशः आविशत् ।
पायुना अंशेन येन असौ, विसर्गम् प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

गुदम्	२.	गुदा	**पायुना**	७.	पायु के साथ
पुंसः	१.	विराट् पुरुष के शरीर में	**अंशेन**	६.	अपने अंश
विनिर्भिन्नम्,	३.	उत्पन्न हुई (उसमें)	**येन**	९.	जिससे
मित्रः	५.	मित्र देवता ने	**असौ,**	१०.	यह (जीव)
लोकेशः	४.	लोकपति	**विसर्गम्**	११.	मल-त्याग
आविशत् ।	८.	प्रवेश किया	**प्रतिपद्यते ।।**	१२.	करता है

श्लोकार्थ—तदनन्तर विराट् पुरुष के शरीर में गुदा उत्पन्न हुई। उसमें लोकपति मित्र देवता ने अपने अंश पायु इन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव मल-त्याग करता है।

एकविंश: श्लोक:

हस्तावस्य विनिर्भिन्नाविन्द्रः स्वर्पतिराविशत् ।
वार्तयांशेन पुरुषो यया वृत्तिं प्रपद्यते ।।२१।।

हस्तौ अस्य विनिर्भिन्नौ, इन्द्रः स्वर्पतिः आविशत् ।
वार्तया अंशेन पुरुषः, यया वृत्तिम् प्रपद्यते ।।

२.	दोनों हाथ	**वार्तया**	७.	आदान-प्रदान के स
१.	(फिर) इस विराट् पुरुष के	**अंशेन**	६.	अपनी शक्ति
३	उत्पन्न हुये (उसमें)	**पुरुष**	१०.	जीव (अपनी)
५	इन्द्र ने	**यया**	९.	जिस (शक्ति) मे
४	देवराज	**वृत्तिम्**	११.	जीविका
८.	प्रवेश किया	**प्रपद्यते ।।**	१२.	प्राप्त करता है

: इस विराट् पुरुष के दोनों हाथ उत्पन्न हुये । उसमें देवराज इन्द्र ने अपनी शक्ति
न के साथ प्रवेश किया, जिस शक्ति से जीव अपनी जीविका प्राप्त करता है ।

द्वाविंश: श्लोक:

पादावस्य विनिर्भिन्नौ लोकेशो विष्णुराविशत् ।
गत्या स्वांशेन पुरुषो यया प्राप्यं प्रपद्यते ।।२२।।

पादौ अस्य विनिर्भिन्नौ, लोकेशः विष्णुः आविशत् ।
गत्या स्वांशेन पुरुषः, यया प्राप्यम् प्रपद्यते ।।

२	दोनों पैर	**गत्या**	७.	गमन शक्ति के सा
१.	इस विराट् भगवान् के	**स्वांशेन**	६.	अपनी अंशभूता
३	उत्पन्न हुये (उसमें)	**पुरुषः,**	१०.	पुरुष
४	लोकेश्वर	**यया**	९.	जिस शक्ति से
५	भगवान् विष्णु ने	**प्राप्यम्**	११.	गन्तव्य स्थान मे
८	प्रवेश किया	**प्रपद्यते।।**	१२.	पहुँचता है

श्चात् इस विराट् भगवान् के दोनों पैर उत्पन्न हुये । उसमें लोकेश्वर भगवान्
नी अंशभूता गमन शक्ति के साथ प्रवेश किया, जिस शक्तिसे पुरुष गन्तव्
चता है ।

त्रयोविंश: श्लोक:

बुद्धिं चास्य विनिर्भिन्नां वागीशो धिष्ण्यमाविशत् ।
बोधेनांशेन बोद्धव्यप्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ।।२३।।

बुद्धिम् च अस्य विनिर्भिन्नाम्, वागीश: धिष्ण्यम् आविशत् ।
बोधेन अंशेन बोद्धव्य, प्रतिपत्ति: यत: भवेत् ।।

३	बुद्धि	बोधेन	७.	ज्ञान शक्ति के साथ
१	तदनन्तर	अंशेन	६.	अपनी अंशभूत
२	इस (विराट् भगवान्) को	बोद्धव्य,	११.	जानने योग्य विषयो
४	उत्पन्न हुई	प्रतिपत्ति:	१२.	ज्ञान
८	वाणी के स्वामी ब्रह्मा ने	यत:	१०.	जिससे
५.	उस आश्रय में	भवेत् ।।	१३	होता है
९	प्रवेश किया			

न्तर इस विराट् भगवान् की बुद्धि उत्पन्न हुई । उस आश्रय में अपनी अंशभूत ज्ञा
ाथ वाणी के स्वामी ब्रह्मा ने प्रवेश किया, जिससे जानने योग्य विषयो क
ा है ।

चतुर्विंश: श्लोक:

हृदयं चास्य निर्भिन्नं चन्द्रमा धिष्ण्यमाविशत् ।
मनसांशेन येनासौ विक्रियां प्रतिपद्यते ।।२४।।

हृदयम् च अस्य निर्भिन्नम्, चन्द्रमा: धिष्ण्यम् आविशत् ।
मनसा अंशेन येन असौ, विक्रियाम् प्रतिपद्यते ।।

३	हृदय	आविशत् ।	९.	प्रवेश किया
१	उसके पश्चात्	मनसा	८.	मन के साथ
२	इस (विराट् भगवान्) का	अंशेन	७.	अपने अंशभूत
४.	उत्पन्न हुआ	येन, असौ,	१०.	जिससे, यह जीव
६.	चन्द्रमा ने	विक्रियाम्	११.	संकल्प-विकल्पादि वि
५.	(उस) आश्रय में	प्रतिपद्यते ।।	१२.	प्राप्त करता है ।

के पश्चात् इस विराट् भगवान् का हृदय उत्पन्न हुआ । उस आश्रय में चन्द्रमा
भूत मन के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव संकल्प-विकल्पादि विकार
ता है ।

पञ्चविंश: श्लोक:

आत्मानं चास्य निर्भिन्नमभिमानोऽविशत्पदम् ।
कर्मणांशेन येनासौ कर्तव्यं प्रतिपद्यते ।।२५।।

आत्मानम् च अस्य निर्भिन्नम्, अभिमानः अविशत् पदम् ।
कर्मणा अंशेन येन असौ, कर्तव्यम् प्रतिपद्यते ।।

३. अहंकार	पदम् ।	५.	उसमें
१. तत्पश्चात्	कर्मणा	८.	क्रिया शक्ति के
२ उस के शरीर में	अंशेन	७.	अपनी अंशभूता
४. उत्पन्न हुआ	येन, असौ,	१०.	जिससे, यह जी
६. रुद्र ने	कर्तव्यम्	११.	अपने कार्य में
९. प्रवेश किया	प्रतिपद्यते।।	१२.	प्रवृत्त होता है

श्चात् उस विराट् भगवान् के शरीर में अहंकार उत्पन्न हुआ .
पनी अंशभूता क्रिया शक्ति के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव अपने क
ा है ।

षड्विंश: श्लोक:

सत्त्वं चास्य विनिर्भिन्नं महान्धिष्ण्यमुपाविशत् ।
चित्तेनांशेन येनासौ विज्ञानं प्रतिपद्यते ।।२६।।

सत्त्वम् च अस्य विनिर्भिन्नम्, महान् धिष्ण्यम् उपाविशत् ।
चित्तेन अंशेन येन असौ, विज्ञानम् प्रतिपद्यते ।।

३. सत्त्वगुण	उपाविशत् ।	९.	प्रवेश किया
१. उसके बाद	चित्तेन	८.	चित्त के साथ
२ उस (विराट् पुरुष) में	अंशेन	७.	अपने अंशभूत
४. उत्पन्न हुआ	येन, असौ	१०.	जिससे, यह जी
६. महत्तत्त्व ब्रह्मा ने	विज्ञानम्	११.	ज्ञान का निश्च
५ उसमें	प्रतिपद्यते ।।	१२.	करता है

े बाद उस विराट् पुरुष में सत्त्वगुण उत्पन्न हुआ । उसमें महत्तत्त्व ब्रह्मा ने
ा के साथ प्रवेश किया जिससे यह जीव ज्ञान का निश्चय करता है ।

सप्तविंशः श्लोकः

शीर्ष्णोऽस्य द्यौर्धरा पद्भ्यां खं नाभेरुदपद्यत ।
गुणानां वृत्तयो येषु प्रतीयन्ते सुरादयः ॥२७॥

शीर्ष्णः अस्य द्यौः धरा पद्भ्याम्, खम् नाभेः उदपद्यत ।
गुणानाम् वृत्तयः येषु, प्रतीयन्ते सुर आदयः ॥

२.	सिर से	उदपद्यत ।	८.	उत्पन्न हुआ
१.	इस (विराट् भगवान्) के	गुणानाम्	१०.	सत्त्व, रज और तमोगु
३.	स्वर्ग लोक	वृत्तयः	११.	प्रधानता वाले (क्रमशः
५.	पृथ्वी (और)	येषु,	९.	जिन लोकों में
४.	दोनों पैरों से	प्रतीयन्ते	१४.	देखे जाते हैं
७.	आकाश	सुर	१२.	देवता
६.	नाभि से	आदयः ॥	१३.	जीव और भूत-प्रेत

(इस विराट् भगवान् के सिर से स्वर्ग लोक, दोनों पैरों से पृथ्वी और नाभि से
न्न हुआ; जिन लोकों में सत्त्व, रज और तमोगुण की प्रधानता वाले क्रमशः देवत
र भूत-प्रेत देखे जाते हैं ।

अष्टाविंशः श्लोकः

आत्यन्तिकेन सत्त्वेन दिवं देवाः प्रपेदिरे ।
धरां रजःस्वभावेन पणयो ये च तानन् ॥२८॥

आत्यन्तिकेन सत्त्वेन, दिवम् देवाः प्रपेदिरे ।
धराम् रजः स्वभावेन, पणयः ये च तान् अनु ॥

२.	अधिकता से	रजः	५.	रजोगुणी
१.	सत्त्वगुण की	स्वभावेन,	६.	स्वभाव के कारण
४.	स्वर्ग लोक में (तथा)	पणयः	७.	मनुष्य
३.	देवता लोग	ये, च	८.	और, जो
१२.	निवास करते हैं	तान्	९.	उनके
११.	पृथ्वी लोक में	अनु ॥	१०.	उपयोगी हैं (वे जी

त्त्वगुण की अधिकता से देवता लोग स्वर्ग लोक में तथा रजोगुणी स्वभाव के कार
और जो उनके उपयोगी हैं, वे जीव पृथ्वी लोक में निवास करते हैं ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तार्तीयेन स्वभावेन भगवन्नाभिमाश्रिताः ।
उभयोरन्तरं व्योम ये रुद्रपार्षदां गणाः ।।२९।।

पदच्छेद—

तार्तीयेन स्वभावेन, भगवत् नाभिम् आश्रिताः ।
उभयोः अन्तरम् व्योम, ये रुद्र पार्षदाम् गणाः ।।

शब्दार्थ—

तार्तीयेन	५.	तमोगुणी	अन्तरम्	८.	मध्य (अर्थात्)
स्वभावेन,	६.	स्वभाव के कारण	व्योम,	११.	अंतरिक्ष लोक में
भगवत्	९.	भगवान् के	ये	१.	जो
नाभिम्	१०.	नाभि स्थान	रुद्र	२.	रुद्र के
आश्रिताः ।	१२.	निवास करते हैं	पार्षदाम्	३.	पार्षद
उभयोः	७.	पृथ्वी और स्वर्ग के	गणाः ।।	४.	गण (हैं वे)

श्लोकार्थ—जो रुद्र के पार्षद गण हैं, वे तमोगुणी स्वभाव के कारण पृथ्वी और स्वर्ग के मध्य अर्थात् भगवान् के नाभि स्थान अंतरिक्ष लोक में निवास करते हैं ।

त्रिंशः श्लोकः

मुखतोऽवर्तत ब्रह्म पुरुषस्य कुरूद्वह ।
यस्तून्मुखत्वाद्वर्णानां मुख्योऽभूद् ब्राह्मणो गुरुः ।।३०।।

पदच्छेद—

मुखतः अवर्तत ब्रह्म, पुरुषस्य कुरूद्वह ।
यः तु उन्मुखत्वात् वर्णानाम्, मुख्यः अभूत् ब्राह्मणः गुरुः ।।

शब्दार्थ—

मुखतः	३.	मुख से	तु	९.	ही
अवर्तत	५.	प्रकट हुआ	उन्मुखत्वात्	८.	मुख से उत्पन्न होने के कारण
ब्रह्म,	४.	ब्राह्मण	वर्णानाम्,	१०.	वर्णों में
पुरुषस्य	२.	विराट् पुरुष के	मुख्यः	११.	प्रधान (और)
कुरुद्वह ।	१.	हे विदुर जी !	अभूत्	१३.	माना गया है
यः	६.	जो	ब्राह्मणः	७.	ब्राह्मण
			गुरुः ।।	१२.	सब का गुरु

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! विराट् पुरुष के मुख से ब्राह्मण प्रकट हुआ, जो ब्राह्मण मुख से उत्पन्न होने के कारण ही वर्णों में प्रधान और सब का गुरु माना गया है ।

एकत्रिंश: श्लोक:

बाहुभ्योऽवर्तत क्षत्रं क्षत्रियस्तदनुव्रतः ।
यो जातस्त्रायते वर्णान् पौरुषः कण्टकक्षतात् ॥३१॥

बाहुभ्यः अवर्तत क्षत्रम्, क्षत्रियः तद् अनुव्रतः ।
यः जातः त्रायते वर्णान्, पौरुषः कण्टक क्षतात् ॥

१.	(विराट् पुरुष की) दोनों भुजाओं में	जातः	८.	उत्पन्न होकर
		त्रायते	१२.	रक्षा करता है
५.	उत्पन्न हुआ	वर्णान्,	११.	सभी वर्णों की
२.	रक्षा शक्ति (और)	पौरुषः	७.	पुरुष से
४.	क्षत्रिय वर्ण	कण्टक	९.	चोर आदि के
३.	उसका, अनुगामी	क्षतात् ॥	१०.	उपद्रवों से
६.	जो			

ाट् पुरुष की दोनों भुजाओं से रक्षा शक्ति और उसका अनुगामी क्षत्रिय वर्ण उत पुरुष से उत्पन्न होकर चोर आदि के उपद्रवों से सभी वर्णों की रक्षा करता है।

द्वात्रिंश: श्लोक:

विशोऽवर्तन्त तस्योर्वोर्लोकवृत्तिकरीर्विभोः ।
वैश्यस्तदुद्भवो वार्ता नृणां यः समवर्तयत् ॥३२॥

विशः अवर्तन्त तस्य ऊर्वोः, लोक वृत्तिकरीः विभोः ।
वैश्यः तद उद्भवः वार्ताम्, नृणाम् यः समवर्तयत् ॥

६.	वैश्य वृत्ति	वैश्यः	११.	वैश्य वर्ण है (वह
७.	उत्पन्न हुई	तद्	८.	उसी (वृत्ति) से
१.	उस	उद्भवः	९.	उत्पन्न
३.	दोनों जंघाओं से	वार्ताम्,	१३.	जीविका का
४.	लोगों की	नृणाम्	१२.	मनुष्यों की
५.	जीविका चलाने वाली	यः	१०.	जो
२.	विराट् पुरुष की	समवर्तयत् ॥	१४.	निर्वाह करता है

। विराट् पुरुष की दोनों जंघाओं से लोगों की जीविका चलाने वाली पन्न हुई। उसी वृत्ति से उत्पन्न जो वैश्य वर्ण है, वह मनुष्यों की जीविका रता है।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

पद्भ्यां भगवतो जज्ञे शुश्रूषा धर्मसिद्धये ।
तस्यां जातः पुरा शूद्रो यद्वृत्त्या तुष्यते हरिः ॥३३॥

पद्भ्याम् भगवतः जज्ञे, शुश्रूषा धर्म सिद्धये ।
तस्याम् जातः पुरा शूद्रः, यद् वृत्त्या तुष्यते हरिः ॥

२	दोनों पैरों से	जातः	१०.	उत्पन्न हुआ
१.	विराट् भगवान् के	पुरा	८.	पहले
६	उत्पन्न हुई	शूद्रः,	९.	शूद्र वर्ण
५.	सेवा वृत्ति	यद्	११.	जिसकी
३.	सभी धर्मों की	वृत्त्या	१२.	सेवा वृत्ति से
४.	सिद्धि के लिये	तुष्यते	१४.	प्रसन्न होते है
७	उससे	हरिः ॥	१३.	भगवान् श्री हरि

राट् भगवान् के दोनों पैरों से सभी धर्मों की सिद्धि के लिये सेवा वृत्ति उत्पन्न ले शूद्र वर्ण उत्पन्न हुआ, जिसकी सेवा वृत्ति से भगवान् श्री हरि प्रसन्न होते है

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

एते वर्णाः स्वधर्मेण यजन्ति स्वगुरुं हरिम् ।
श्रद्धयाऽऽत्मविशुद्ध्यर्थं यज्जाताः सह वृत्तिभिः ॥३४॥

एते वर्णाः स्वधर्मेण, यजन्ति स्व गुरुम् हरिम् ।
श्रद्धया आत्म विशुद्धि अर्थम्, यद् जाताः सह वृत्तिभिः ॥

१.	ये	श्रद्धया	१०.	आदर-पूर्वक
२.	सभी वर्ण	आत्म	६.	(अपने) चित्त को
९.	अपने-अपने कर्त्तव्यों के द्वारा	विशुद्धि	७.	परम पवित्र
१४	पूजन करते हैं	अर्थम्,	८.	करने के लिये
११	अपने	यद्, जाताः	५.	जिससे, उत्पन्न हु
१२.	गुरु (उन)	सह	४.	साथ
१३.	भगवान् श्री हरि का	वृत्तिभिः ॥	३.	(अपनी) शक्तिय

सभी वर्ण अपनी शक्तियों के साथ जिससे उत्पन्न हुये हैं, वे अपने चित्त को ने के लिये अपने-अपने कर्त्तव्यों के द्वारा आदर पूर्वक अपने गुरु उन भगवान् न करते हैं ।

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

एतत्क्षत्तर्भगवतो दैवकर्मात्मरूपिण: ।
क: श्रद्दध्यादुपाकर्तुं योगमायाबलोदयम् ।।३५।।

एतत् क्षत्त: भगवत:, दैव कर्म आत्मरूपिण: ।
क: श्रद्दध्यात् उपाकर्तुम्, योगमाया बल उदयम् ।।

९.	इस रूप का	क:	११.	कौन मनुष्य
१	हे विदुर जी !	श्रद्दध्यात्	१२.	समर्थ हो सक
५.	भगवान् श्रीहरि की	उपाकर्तुम्,	१०.	वर्णन करने मे
२	काल	योगमाया	६.	योग शक्ति वे
३	कर्म और	बल	७.	प्रभाव से
४.	आत्मशक्ति वाले	उदयम् ।।	८.	उत्पन्न

ादुर जी ! काल, कर्म और आत्मशक्ति वाले भगवान् श्री हरि की [योगशा
पन्न इस रूप का वर्णन करने में भला कौन मनुष्य समर्थ हो सकता है ?

षट्त्रिंश: श्लोक:

अथापि कीर्तयाम्यङ्ग यथामति यथाश्रुतम् ।
कीर्तिं हरे: स्वां सत्कर्तुं गिरमन्याभिधासतीम् ।।३६।।

अथापि कीर्तयामि अङ्ग, यथामति यथाश्रुतम् ।
कीर्तिम् हरे: स्वाम् सत् कर्तुम्, गिरम् अन्य अभिधा असतीम् ।।

१.	फिर भी	स्वाम्	६.	अपनी
१४.	वर्णन करता हूँ	सत्	८.	पवित्र
२.	हे प्यारे विदुर जी !	कर्तुम्,	९.	करने के लिये
१०.	बुद्धि के अनुसार (और)	गिरम्	७.	वाणी को
११.	अध्ययन के अनुसार	अन्य	३.	लौकिक
१३.	सुयश का	अभिधा	४.	चर्चाओं से
१२.	भगवान् श्री हरि के	असतीम् ।।	५.	अपवित्र

र भी हे प्यारे विदुर जी ! लौकिक चर्चाओं से अपवित्र अपनी वाणी को
ये बुद्धि के अनुसार और अध्ययन के अनुसार भगवान् श्री हरि के
ता हूँ ।

सप्तत्रिंश: श्लोक:

एकान्तलाभं वचसो नु पुंसां, सुश्लोकमौलेर्गुणवादमाहुः ।
श्रुतेश्च विद्वद्भिरुपाकृतायां, कथासुधायामुपसम्प्रयोगम् ॥३७॥

एकान्त लाभम् वचसः नु पुंसाम्, सुश्लोक मौलेः गुण वादम् आहुः ।
श्रुतेः च विद्वद्भिः उपाकृतायाम्, कथा सुधायाम् उपसम्प्रयोगम् ॥

१४.	परम	आहुः ।	१६.	कहा गया है
१५.	लाभ	श्रुतेः	१३.	कानों का
६.	वाणी का	च	७.	और
४.	ही	विद्वद्भिः	८.	विद्वानों से
५.	मनुष्यों की	उपाकृतायाम्,	९.	प्राप्त
१.	प्रशंसनीयों में	कथा	१०	कथा रूपी
२.	मुकुटमणि (भगवान्) की	सुधायाम्	११.	अमृत रस का
३.	लीलाओं का वर्णन	उपसम्प्रयोगम्॥	१२.	पान करना

[प्र]शंसनीयों में मुकुटमणि भगवान् की लीलाओं का वर्णन ही मनुष्यों की वा[णी] ... विद्वानों से प्राप्त कथा रूपी अमृत-रस का पान करना कानों का परम ... [क]हा गया है।

अष्टत्रिंश: श्लोक:

आत्मनोऽवसितो वत्स महिमा कविनाऽऽदिना ।
संवत्सरसहस्रान्ते धिया योगविपक्वया ॥३८॥

आत्मनः अवसितः वत्स, महिमा कविना आदिना ।
संवत्सर सहस्र अन्ते, धिया योग विपक्वया ॥

१०.	(क्या) परमात्मा के	संवत्सर	५	दिव्य वर्षों की
१२.	वर्णन कर सके	सहस्र	४.	एक हजार
१.	हे विदुर जी !	अन्ते,	६.	तपस्या के बा[द]
११.	सामर्थ्य का	धिया	९.	बुद्धि के द्वारा
३.	कवि ब्रह्मा जी	योग	७.	समाधि में
२.	आदि	विपक्वया ॥	८.	कुशल

हे विदुर जी ! आदि कवि ब्रह्मा जी एक हजार दिव्य वर्षों की तपस्या के बाद स[माधि] ... बुद्धि के द्वारा भी क्या परमात्मा के सामर्थ्य का वर्णन कर सके ?

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अतो भगवतो माया मायिनामपि मोहिनी ।
यत्स्वयं चात्मवर्त्मात्मा न वेद किमुतापरे ॥३९॥

अतः भगवतः माया, मायिनाम् अपि मोहिनी ।
यत् स्वयम् च आत्म वर्त्म आत्मा, न वेद किमुत अपरे ॥

१.	इसलिये	च	१०.	भी
२.	भगवान् की	आत्म	११.	उसकी
३.	माया	वर्त्म	१२.	गति को
४.	मायावियों को	आत्मा,	९.	परमात्मा
५.	भी	न	१३.	नहीं
६.	मोहित करने वाली है	वेद	१४.	जानते हैं (तब)
७.	क्योंकि	किमुत	१६.	बात ही क्या है
८.	अपने आप	अपरे ॥	१५.	दूसरों की तो

इसलिये भगवान् की माया मायावियों को भी मोहित करने वाली हैं, क्योंकि परमात्मा भी उसकी गति को नही जानते हैं, तब दूसरों की तो बात ही क्या है ?

चत्वारिंशः श्लोकः

यतोऽप्राप्य न्यवर्तन्त वाचश्च मनसा सह ।
अहं चान्य इमे देवास्तस्मै भगवते नमः ॥४०॥

यतः अप्राप्य न्यवर्तन्त, वाचः च मनसा सह ।
अहम् च अन्ये इमे देवाः, तस्मै भगवते नमः ॥

१.	जहाँ	अन्ये	७.	दूसरे
२.	नहीं पहुँच कर	इमे	६.	ये
९.	लौट जाते हैं	देवाः,	८.	देवगण (वहाँ से
४.	वाणी, तथा	तस्मै	१०.	उन
३.	मन के, साथ	भगवते	११.	भगवान् श्री ह
५.	अहंकार के देवता रुद्र, और	नमः ॥	१२.	नमस्कार है

-जहाँ नहीं पहुँच कर मन के साथ वाणी तथा अहंकार के देवता रुद्र और ये वहाँ से लौट जाते हैं, उन भगवान् श्री हरि को नमस्कार हो ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे षष्ठः अध्यायः ॥ ६ ॥

तृतीय: स्कन्ध:

अथ सप्तम: अध्याय:

प्रथम: श्लोक:

एवं ब्रुवाणं मैत्रेयं द्वैपायनसुतो बुधः।
प्रीणयन्निव भारत्या विदुरः प्रत्यभाषत ॥१॥

एवम् ब्रुवाणम् मैत्रेयम्, द्वैपायन सुतः बुधः।
प्रीणयन् इव भारत्या, विदुरः प्रत्यभाषत ॥

१.	इस प्रकार	प्रीणयन्	९.	प्रसन्न करते हुये
२	वर्णन करते हुये	इव	१०.	से
३.	मैत्रेय जी से	भारत्या,	८.	सुन्दर शब्दों के द्वारा
४	महर्षि व्यास के	विदुरः	७.	विदुर जी
५.	पुत्र	प्रत्यभाषत ॥	११.	बोले
६.	विद्वान्			

प्रकार वर्णन करते हुये मैत्रेय जी से महर्षि व्यास के पुत्र विद्वान् विदुर जी सुन्दर
ारा उन्हें प्रसन्न करते हुये से बोले।

द्वितीय: श्लोक:

ब्रह्मन्! कथं भगवतश्चिन्मात्रस्याविकारिणः।
लीलया चापि युज्येरन्निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः ॥२॥

ब्रह्मन् कथम् भगवतः, चिन्मात्रस्य अविकारिणः।
लीलया च अपि युज्येरन्, निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः ॥

१.	हे मुनिवर!	च	४.	और
१.	कैसे	अपि	८.	भी
६.	भगवान् में	युज्येरन्,	१२.	सम्बन्ध हो सकता है
२.	ज्ञान-स्वरूप	निर्गुणस्य	५.	गुणातीत
३.	निर्विकार	गुणाः	९.	सत्त्वादि गुणों (तथा)
७.	लीला के लिये	क्रियाः ॥	१०.	कर्मों का

ुनिवर! ज्ञान-स्वरूप, निर्विकार और गुणातीत भगवान् में लीला के लिये भी स
तथा कर्मों का सम्बन्ध कैसे हो सकता है?

तृतीयः श्लोकः

क्रीडायामुद्यमोऽर्भस्य कामश्चिक्रीडिषान्यतः ।
स्वतस्तृप्तस्य च कथं निवृत्तस्य सदान्यतः ॥३॥

पदच्छेद—

क्रीडायाम् उद्यमः अर्भस्य, कामः चिक्रीडिषा अन्यतः ।
स्वतः तृप्तस्य च कथम्, निवृत्तस्य सदा अन्यतः ॥

शब्दार्थ—

क्रीडायाम्	७.	खेल में	स्वतः	२.	स्वयं
उद्यमः	८.	तत्पर	तृप्तस्य, च	३.	पूर्ण काम, और
अर्भस्य,	९.	बालक के (समान)	कथम्,	१२.	कैसे (होगी)
कामः	१०.	कामना (तथा)	निवृत्तस्य	६.	असंग (परमात्मा) की
चिक्रीडिषा	११.	खेलने की इच्छा	सदा	५.	नित्य
अन्यतः ।	१.	दूसरे विषयों से	अन्यतः ।	४.	अन्य विषयों से

श्लोकार्थ—दूसरे विषयों से स्वयं पूर्णकाम और अन्य विषयों से नित्य असंग परमात्मा की खेल में तत्पर बालक के समान कामना तथा खेलने की इच्छा कैसे होगी ?

चतुर्थः श्लोकः

अस्राक्षीद्भगवान् विश्वं गुणमय्याऽऽत्ममायया ।
तथा संस्थापयत्येतद्भूयः प्रत्यपिधास्यति ॥४॥

पदच्छेद—

अस्राक्षीत् भगवान् विश्वम्, गुणमय्या आत्म मायया ।
तथा संस्थापयति एतत्, भूयः प्रत्यपिधास्यति ॥

शब्दार्थ—

अस्राक्षीत्	६.	रचना की है	तथा	७.	उसी से
भगवान्	१.	परमात्मा ने	संस्थापयति	८.	पालन करते हैं
विश्वम्,	५.	संसार की	एतत्,	१०.	इसका
गुणमय्या	३.	तीन गुणों वाली	भूयः	९.	फिर (कैसे उसी से)
आत्म	२.	अपनी	प्रत्यपिधास्यति॥	११.	संहार करेंगे
मायया ।	४.	माया से			

श्लोकार्थ—परमात्मा ने अपनी तीन गुणों वाली माया से संसार की रचना की है, उसी से पालन करते हैं फिर कैसे उसी से इसका संहार करेंगे ?

पञ्चमः श्लोकः

देशतः कालतो योऽसाववस्थातः स्वतोऽन्यतः ।
अविलुप्तावबोधात्मा स युज्येताजया कथम् ॥५॥

पदच्छेद—

देशतः कालतः यः असौ, अवस्थातः स्वतः अन्यतः ।
अविलुप्त अवबोध आत्मा, सः युज्येत अजया कथम् ॥

शब्दार्थ—

देशतः	३.	देश	**अविलुप्त**	८.	अविनाशी
कालतः	४.	काल (और)	**अवबोध**	६.	ज्ञान
यः	१.	जो	**आत्मा,**	१०.	स्वरूप (है)
असौ,	२.	वह (परमात्मा)	**सः**	११.	वह
अवस्थातः	५.	अवस्था से	**युज्येत**	१४.	सम्बन्ध करेगा
स्वतः	६.	स्वयं (या)	**अजया**	१३.	माया के साथ
अन्यतः ।	७.	दूसरों से	**कथम् ।**	१२.	कैसे

श्लोकार्थ--जो वह परमात्मा देश, काल और अवस्था से स्वयं या दूसरों से अविनाशी, ज्ञान स्वरूप है; वह कैसे माया के साथ सम्बन्ध करेगा ?

षष्ठः श्लोकः

भगवानेक एवैष सर्वक्षेत्रेष्ववस्थितः ।
अमुष्य दुर्भगत्वं वा क्लेशो वा कर्मभिः कुतः ॥६॥

पदच्छेद—

भगवान् एकः एव एषः, सर्व क्षेत्रेषु अवस्थितः ।
अमुष्य दुर्भगत्वम् वा, क्लेशः वा कर्मभिः कुतः ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	२.	परमात्मा	**अमुष्य**	८.	उसमें
एकः	३.	अकेले	**दुर्भगत्वम्**	१०.	दीनता
एव	४.	ही	**वा,**	११.	अथवा
एषः,	१.	यह	**क्लेशः**	१२.	कष्ट
सर्व	५.	सभी	**वा**	१४.	सम्भव है
क्षेत्रेषु	६.	शरीरों में	**कर्मभिः**	६.	कर्मों से
अवस्थितः ।	७.	विराजमान	**कुतः ॥**	१३.	कैसे

श्लोकार्थ—यह परमात्मा अकेले ही सभी शरीरों में विराजमान है। उसमें कर्मों से दीनता अथवा कष्ट कैसे सम्भव है ?

सप्तमः श्लोकः

एतस्मिन्मे मनो विद्वन् खिद्यतेऽज्ञानसङ्कटे ।
तन्नः पराणुद विभो कश्मलं मानसं महत् ॥७॥

पदच्छेद—

एतस्मिन् मे मनः विद्वन्, खिद्यते अज्ञान सङ्कटे ।
तद् नः पराणुद विभो, कश्मलम् मानसम् महत् ॥

शब्दार्थ—

एतस्मिन्	२.	इस	**तद्**	८.	इसलिये
मे	५.	मेरा	**नः**	१०.	हमारे
मनः	६.	मन	**पराणुद**	१४.	दूर करें
विद्वन्	१.	हे ज्ञानी मैत्रेय जी !	**विभो,**	९.	हे भगवन् ! आप
खिद्यते	७.	खिन्न हो रहा है	**कश्मलम्**	१३.	कष्ट को
अज्ञान	३.	अज्ञान के	**मानसम्**	११.	मन के
सङ्कटे ।	४.	संकट में पड़ कर	**महत् ॥**	१२.	महान्

श्लोकार्थ—हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! इस अज्ञान के संकट में पड़ कर मेरा मन खिन्न हो रहा है, इसलिये हे भगवन् ! आप हमारे मन के महान् कष्ट को दूर करें ।

अष्टमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

स इत्थं चोदितः क्षत्त्रा तत्त्वजिज्ञासुना मुनिः ।
प्रत्याह भगवच्चित्तः स्मयन्निव गतस्मयः ॥८॥

पदच्छेद—

सः इत्थम् चोदितः क्षत्त्रा, तत्त्व जिज्ञासुना मुनिः ।
प्रत्याह भगवत् चित्तः, स्मयन् इव गत स्मयः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	वे	**प्रत्याह**	१४.	बोले
इत्थम्	४.	इस प्रकार	**भगवत्**	८.	भगवान् में
चोदितः	५.	पूछने पर	**चित्तः,**	९.	मन लगा कर (तथा)
क्षत्त्रा,	३.	विदुर जी के द्वारा	**स्मयन्**	१२.	मुसकराते हुये
तत्त्व	१.	तत्त्वों को	**इव**	१३.	से
जिज्ञासुना	२.	जानने के इच्छुक	**गत**	११.	रहित होकर
मुनिः ।	७.	मैत्रेय जी	**स्मयः ॥**	१०.	अहंकार से

श्लोकार्थ—तत्त्वों को जानने के इच्छुक विदुर जी के द्वारा इस प्रकार पूछने पर वे मैत्रेय जी भगवान् में मन लगा कर तथा अहंकार से रहित होकर मुसकराते हुये से बोले ।

नवमः श्लोकः

सेयं भगवतो माया यन्नयेन विरुध्यते ।
ईश्वरस्य विमुक्तस्य कार्पण्यमुत बन्धनम् ।।९।।

सा इयम् भगवतः माया, यत् नयेन विरुध्यते ।
ईश्वरस्य विमुक्तस्य, कार्पण्यम् उत बन्धनम् ।।

८.	वह	विरुध्यते ।	१२.	विपरीत प्रतीत होती है
७.	यही	ईश्वरस्य	१.	सबके स्वामी का
६.	भगवान् की	विमुक्तस्य,	४.	बन्धनों से रहित होने पर भी
९.	माया है	कर्पण्यम्	२.	दीन होना
१०	जो	उत	३.	तथा
११.	युक्ति से	बन्धनम् ।।	५.	बन्धन युक्त होना

ा के स्वामी का दीन होना तथा बन्धनों से रहित होने पर भी बन्धन युक्त होना, भगवान् यही वह माया है; जो युक्ति से विपरीत प्रतीत होती है ।

दशमः श्लोकः

यदर्थेन विनामुष्य पुंस आत्मविपर्ययः ।
प्रतीयत उपद्रष्टुः स्वशिरश्छेदनादिकः ।।१०।।

यत् अर्थेन विना अमुष्य, पुंसः आत्म विपर्ययः ।
प्रतीयते उपद्रष्टुः, स्वशिरः छेदन आदिकः ।।

१	जिस प्रकार	विपर्ययः ।	१२.	मिथ्या धर्मों की प्रतीति होती है
७.	ज्ञान के	प्रतीयते	६.	प्रतीति होती है(उसी प्रकार)
८.	विना	उपद्रष्टुः,	२.	स्वप्न देखने वाले को
९.	उस	स्वशिरः	३.	अपने सिर का.
१०	पुरुष को	छेदन	४.	कटना
११.	आत्मा में	आदिकः ।।	५.	इत्यादि (मिथ्या)

स प्रकार स्वप्न देखने वाले को अपने सिर का कटना इत्यादि मिथ्या प्रतीति होती है, उसी कार ज्ञान के विना उस पुरुष को आत्मा में मिथ्या धर्मों की प्रतीति होती है ।

एकादशः श्लोकः

यथा जले चन्द्रमसः कम्पादिस्तत्कृतो गुणः ।
दृश्यतेऽसन्नपि द्रष्टुरात्मनोऽनात्मनो गुणः ।।११।।

पदच्छेद—

यथा जले चन्द्रमसः, कम्प आदिः तत् कृतः गुणः ।
दृश्यते असन् अपि द्रष्टुः, आत्मनः अनात्मनः गुणः ।।

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	दृश्यते	१०.	दिखलाई पड़ती हैं उसी प्र
जले	२.	जल में स्थित	असन्	६.	न होने पर
चन्द्रमसः,	३.	चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब में	अपि	७.	भी
कम्प, आदिः	४.	कम्पन, इत्यादि	द्रष्टुः,	११.	साक्षी
तत्	८.	जल की चंचलता के	आत्मनः	१२.	परमात्मा में
कृतः	६.	कारण	अनात्मनः	१३.	शरीर आदि के
गुणः ।	५.	क्रियायें	गुणः ।।	१४.	धर्म (मिथ्या होने पर दिखलाई पड़ते हैं)

श्लोकार्थ—जैसे जल में स्थित चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब में कम्पन इत्यादि क्रियायें न होने पर भी जल चंचलता के कारण दिखलाई पड़ती हैं, उसी प्रकार साक्षी परमात्मा में शरीर आदि के मिथ्या होने पर भी दिखलाई पड़ते हैं ।

द्वादशः श्लोकः

स वै निवृत्तिधर्मेण वासुदेवानुकम्पया ।
भगवद्भक्तियोगेन तिरोधत्ते शनैरिह ।।१२।।

पदच्छेद—

सः वै निवृत्ति धर्मेण, वासुदेव अनुकम्पया ।
भगवत् भक्ति योगेन, तिरोधत्ते शनैः इह ।।

शब्दार्थ—

सः	६.	वह	भगवत्	६.	भगवान् के
वै	१०.	मिथ्या प्रतीति	भक्ति	७.	भक्ति
निवृत्ति	२.	निष्काम	योगेन,	८.	योग के द्वारा (पुरुष की)
धर्मेण,	३.	धर्म के साथ-साथ	तिरोधत्ते	१२.	समाप्त हो जाती है
वासुदेव	४.	भगवान् श्रीकृष्ण की	शनैः	११.	धीरे-धीरे
अनुकम्पया ।	५.	कृपा से प्राप्त	इह ।।	१.	इस संसार में

श्लोकार्थ—इस संसार में निष्काम धर्म के साथ-साथ भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से प्राप्त भगवान् भक्ति योग के द्वारा पुरुष की वह मिथ्या प्रतीति धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है ।

त्रयोदशः श्लोकः

यदेन्द्रियोपरामोऽथ द्रष्ट्रात्मनि परे हरौ।
विलीयन्ते तदा क्लेशाः संसुप्तस्येव कृत्स्नशः ॥१३॥

यदा इन्द्रिय उपरामः अथ, द्रष्ट्रात्मनि परे हरौ।
विलीयन्ते तदा क्लेशाः, संसुप्तस्य इव कृत्स्नशः ॥

२.	जब	विलीयन्ते	७.	विलीन हो जाती है
३.	इन्द्रियाँ	तदा	८.	तब
४	विषयों से विराग लेकर	क्लेशाः,	१२.	कष्ट (समाप्त हो,
१	तदनन्तर	संसुप्तस्य	९.	गाढ़ निद्रा में सोये
५	साक्षी	इव	१०.	भाँति (मनुष्य के)
६	परमात्मा, श्री हरि में	कृत्स्नशः ॥	११.	सभी प्रकार के

न्तर जब इन्द्रियाँ विषयों से विराग लेकर साक्षी परमात्मा श्री हरि में विलीन तब गाढ़ निद्रा में सोये हुये की भाँति मनुष्य के सभी प्रकार के कष्ट स है।

चतुर्दशः श्लोकः

अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते, गुणानुवादश्रवणं मुरारेः।
कुतः पुनस्तच्चरणारविन्द-परागसेवारतिरात्मलब्धा ॥१४॥

अशेष संक्लेश शमम् विधत्ते, गुण अनुवाद श्रवणम् मुरारेः।
कुतः पुनः तत् चरण अरविन्द, पराग सेवा रतिः आत्म लब्धा ॥

५	सम्पूर्ण	कुतः	१६.	कहना ही क्या है
६	दुःखों को	पुनः	९.	तो फिर
७	दूर	तत्	१०.	उनके
८..	कर देता है	चरण, अरविन्द,	११.	पाद, पद्म की
२.	लीलाओं का	पराग, सेवा	१२.	धूली के, सेवन में
३	वर्णन करना (और)	रतिः	१३.	अनुराग
४	सुनना	आत्म	१५.	पुरुष का
१.	(जब) भगवान् श्रीकृष्ण की	लब्धा ॥	१४.	प्राप्त करने वाले

भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन करना और सुनना सम्पूर्ण दुःखों क है, तो फिर उनके पाद पद्म की धूली के सेवन में अनुराग प्राप्त करने वाले ना ही क्या है ?

पञ्चदशः श्लोकः

संछिन्नः संशयो मह्यं तव सूक्तासिना विभो ।
उभयत्रापि भगवन्मनो मे सम्प्रधावति ॥१५॥

संछिन्नः संशयः मह्यम्, तव सूक्त असिना विभो ।
उभयत्र अपि भगवन्, मनः मे सम्प्रधावति ॥

७.	छिन्न-भिन्न हो गया है	उभयत्र अपि	११.	भगवान् की स्वतन्त्रता और जीव की परतन्त्रता इन दोनों ही विषयों को
६.	संदेह			
५	मेरा			
२.	आपके	भगवन्,	८.	हे मुनिवर ! (अब)
३	उत्तम वचन रूपी	मनः	१०.	बुद्धि
४	तलवार से	मे	९.	मेरी
१	हे भगवन् !	सम्प्रधावति ॥	१२.	खूब समझ रही है

गवन् ! आपके उत्तम वचन रूपी तलवार से मेरा संदेह छिन्न-भिन्न हो गया है। हे वर ! अब मेरी बुद्धि भगवान् की स्वतन्त्रता और जीव की परतन्त्रता इन दोनों ही विषयों खूब समझ रही है।

षोडशः श्लोकः

साध्वेतद् व्याहृतं विद्वन्नात्ममायायनं हरेः ।
आभात्यपार्थं निर्मूलं विश्वमूलं न यद्बहिः ॥१६॥

साधु एतद् व्याहृतम् विद्वन्, आत्ममाया अयनम् हरेः ।
आभाति अपार्थम् निर्मूलम्, विश्वमूलम् न यद् बहिः ॥

३.	ठीक ही	आभाति	१०.	प्रतीत हो रहा है (क्योंकि)
२.	यह	अपार्थम्	८.	मिथ्या (और)
४.	कहा है (कि)	निर्मूलम्,	९.	निराधार होने पर भी
१.	हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! आपने	विश्वमूलम्	११.	संसार का मूल कारण
६.	अपनी माया के	न	१४.	नहीं (है)
७.	कारण ही (यह संसार)	यद्	१२.	जिस माया के
५.	भगवान् श्री हरि की	बहिः ॥	१३.	अतिरिक्त कुछ

ानी मैत्रेय जी ! आपने यह ठीक ही कहा है कि भगवान् श्री हरि की अपनी माया के ण ही यह संसार मिथ्या और निराधार होने पर भी प्रतीत हो रहा है, क्योंकि संसार मूल कारण जिस माया के अतिरिक्त कुछ नही है

सप्तदशः श्लोकः

यश्च मूढतमो लोके यश्च बुद्धेः परं गतः ।
तावुभौ सुखमेधेते क्लिश्यत्यन्तरितो जनः ॥१७॥

यः च मूढतमः लोके, यः च बुद्धेः परम् गतः ।
तौ उभौ सुखम् एधेते, क्लिश्यति अन्तरितः जनः ॥

२.	जो	गतः ।	७.	प्राप्त कर लिया है
४.	और	तौ, उभौ	८.	वे, दोनों
३.	अत्यन्त अज्ञानी है	सुखम्	९.	आनन्द
१.	संसार में	एधेते,	१०.	प्राप्त करते हैं
५.	जिसने	क्लिश्यति	१४.	कष्ट पाते हैं
११.	तथा	अन्तरितः	१२.	बीच के संदेह करने
६.	बुद्धि से, परे परमात्मा को	जनः ॥	१३.	लोग

ार में जो अत्यन्त अज्ञानी है और जिसने बुद्धि से परे परमात्मा को प्राप्त कर
दोनों आनन्द प्राप्त करते हैं तथा बीच के सन्देह करने वाले लोग कष्ट पाते हैं ।

अष्टादशः श्लोकः

अर्थाभावं विनिश्चित्य प्रतीतस्यापि नात्मनः ।
तां चापि युष्मच्चरणसेवयाहं पराणुदे ॥१८॥

अर्थ अभावम् विनिश्चित्य, प्रतीतस्य अपि न आत्मनः ।
ताम् च अपि युष्मत् चरण, सेवया अहम् पराणुदे ॥

५.	पदार्थों के	च	८.	तथा (अब)
६.	अभाव का	अपि	१३.	भी
७.	निश्चय कर लिया है	युष्मत्	९.	आपके
३.	प्रतीत होने वाले	चरण,	१०	चरण कमलों की
२.	केवल	सेवया	११.	सेवा से
४.	आत्मा से भिन्न शरीरादि	अहम्	१.	मैंने (संसार में)
१२.	उस प्रतीति को	पराणुदे ॥	१४.	समाप्त कर रहा

ने ससार में केवल प्रतीत होने वाले आत्मा से भिन्न शरीरादि पदार्थों के अभाव
र लिया है तथा अब आपके चरण कमलों की सेवा से उस प्रतीति को भी
हा हूँ ।

एकोनविंशः श्लोकः

यत्सेवया भगवतः कूटस्थस्य मधुद्विषः ।
रतिरासो भवेत्तीव्रः पादयोर्व्यसनार्दनः ॥१९॥

पदच्छेद—

यत् सेवया भगवतः, कूटस्थस्य मधुद्विषः ।
रतिरासः भवेत् तीव्रः, पादयोः व्यसन अर्दनः ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिन संतों की	रतिरासः	८.	अनुराग
सेवया	२.	सेवा से	भवेत्	९.	होता है (जो)
भगवतः,	४.	भगवान्	तीव्रः	७.	उत्कट
कूटस्थस्य	३.	नित्य निरञ्जन	पादयोः	६.	चरणों में
मधुद्विषः ।	५.	मधुसूदन के	व्यसन	१०.	आवागमन के कष्ट को
			अर्दनः ।	११.	मिटा देता है

श्लोकार्थ—जिन सन्तों की सेवा से नित्य निरञ्जन भगवान् मधुसूदन के चरणों में उत्कट अनुराग होता है, जो अनुराग आवागमन के कष्ट को मिटा देता है।

विंशः श्लोकः

दुरापा ह्यल्पतपसः सेवा वैकुण्ठवर्त्मसु ।
यत्रोपगीयते नित्यं देवदेवो जनार्दनः ॥२०॥

पदच्छेद—

दुरापा हि अल्प तपसः, सेवा वैकुण्ठ वर्त्मसु ।
यत्र उपगीयते नित्यम् देवदेवः जनार्दनः ॥

शब्दार्थ—

दुरापा	७.	दुर्लभ है	वर्त्मसु ।	४.	कराने वाले (उनकी)
हि	६.	अत्यन्त	यत्र	८.	जिनके यहाँ
अल्प	१.	कम	उपगीयते	१२.	कीर्तन गान होता रहता है
तपसः,	२.	पुण्य वाले लोगों को (भी)	नित्यम्,	९.	सदा
सेवा	५.	भक्ति	देव देवः	१०.	देवाधिदेव
वैकुण्ठ	३.	भगवत्प्राप्ति	जनार्दनः ॥	११.	भगवान् श्री हरि का

श्लोकार्थ—कम पुण्य वाले लोगों को भी भगवत्प्राप्ति कराने वाले उन महात्माओं की भक्ति अत्यन्त दुर्लभ है, जिनके यहाँ सदा देवाधिदेव भगवान् श्री हरि का कीर्तन गान होता रहता है।

एकविंश: श्लोक:

सृष्ट्वाग्रे महदादीनि सविकाराण्यनुक्रमात् ।
तेभ्यो विराजमुद्धृत्य तमनु प्राविशद्विभुः ॥२१॥

सृष्ट्वा अग्रे महत् आदीनि, सविकाराणि अनुक्रमात् ।
तेभ्यः विराजम् उद्धृत्य, तम् अनु प्राविशत् विभुः ॥

७	रच कर	तेभ्यः	८.	उनके अंशों से
२.	सृष्टि के प्रारम्भ में	विराजम्	९.	विराट् शरीर को
४.	महान्	उद्धृत्य	१०.	उत्पन्न किया
५.	इत्यादि (तत्त्वों को और)	तम्	१२.	उसमें (स्वयं)
६.	उनके विकारों को	अनु	११.	तत्पश्चात्
३.	क्रमशः	प्राविशत्	१३.	प्रवेश किया था
		विभुः ॥	१.	भगवान् ने

गवान् ने सृष्टि के प्रारम्भ में क्रमशः महान् इत्यादि तत्त्वों को और उनके च कर, उनके अंशों से विराट् शरीर को उत्पन्न किया, तत्पश्चात् उसमे कया था।

द्वाविंश: श्लोक:

यमाहुराद्यं पुरुषं सहस्राङ्घ्र्यूरुबाहुकम् ।
यत्र विश्व इमे लोकाः सविकासं समासते ॥२२॥

यम् आहुः आद्यम् पुरुषम्, सहस्र अङ्घ्रि ऊरु बाहुकम् ।
यत्र विश्वे इमे लोकाः, सविकासम् समासते ॥

१.	जिन्हें (हम)	बाहुकम् ।	५.	बाहों से युक्त
८.	कहते हैं (तथा)	यत्र	९.	जिसमें
६.	आदि	विश्वे	११.	सम्पूर्ण
७.	पुरुष	इमे	१०.	यह
२.	हजारों	लोकाः,	१२.	ब्रह्माण्ड
३.	चरणों	सविकासम्	१३.	विस्तार के सा
४.	जाँघों और	समासते ॥	१२.	स्थित है

जिन्हें हम हजारों चरणों, जाँघों और बाहों से युक्त आदि पुरुष कहते हैं त सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड विस्तार के साथ स्थित है ।

त्रयोविंश: श्लोक:

यस्मिन् दशविधः प्राणः सेन्द्रियार्थेन्द्रियस्त्रिवृत् ।
त्वयेरितो यतो वर्णास्तद्विभूतीर्वदस्व नः ।।२३।।

यस्मिन् दशविधः प्राणः, स इन्द्रिय अर्थ इन्द्रियः त्रिवृत् ।
त्वया ईरितः यतः वर्णाः, तद् विभूतीः वदस्व नः ।।

१.	जिस (विराट् पुरुष) में	**त्वया, ईरितः**	८.	भगवान् से, प्रेरणा पाक
२.	दस प्रकार की	**यतः**	९.	जिस विराट् पुरुष से
३.	प्राण वायु	**वर्णाः,**	१०.	ब्राह्मणादि चारों वर्ण उ हुये हैं
५.	और			
४.	इन्द्रियों के, विषय	**तद्**	११.	उस विराट् की
६.	इन्द्रियाँ (तथा)	**विभूतीः**	१२.	ब्राह्मादि विभूतियों को
७.	त्रिविध अन्तःकरण स्थित हैं (तथा)	**वदस्व**	१४.	बताइये
		नः ।।	१३.	हमें

.स विराट् पुरुष में दस प्रकार की प्राण वायु, इन्द्रियों के विषय और इन्द्रियाँ तथा त्रि न्त करण स्थित हैं तथा भगवान् से प्रेरणा पाकर जिस विराट् पुरुष से ब्राह्मणादि र्ण उत्पन्न हुये हैं; उस विराट् की ब्राह्मादि विभूतियों को हमें बताइये।

चतुर्विंश: श्लोक:

यत्र पुत्रैश्च पौत्रैश्च नप्तृभिः सह: गोत्रजैः ।
प्रजा विचित्राकृतय आसन् याभिरिदं ततम् ।।२४।।

यत्र पुत्रैः च पौत्रैः च, नप्तृभिः सह गोत्रजैः ।
प्रजाः विचित्र आकृतयः, आसन् याभिः इदम् ततम् ।।

१.	जिस (विराट् शरीर) में	**गोत्रजैः ।**	७.	कुटुम्बियों के
२.	पुत्र	**प्रजाः**	११.	जीव
४.	और	**विचित्र**	९.	तरह-तरह के
३.	पौत्र	**आकृतयः,**	१०.	रूप वाले
६.	तथा	**आसन्**	१२.	विद्यमान हैं
५.	नाती	**याभिः**	१३.	जिन से
८.	साथ	**इदम्,ततम् ।।**	१४.	यह ब्रह्माण्ड, व्याप्त है

.स विराट् शरीर में पुत्र, पौत्र और नाती तथा कुटुम्बियों के साथ तरह-तरह के रूप ीव विद्यमान हैं, जिनसे यह सारा ब्रह्माण्ड व्याप्त है।

पञ्चविंशः श्लोकः

प्रजापतीनां स पतिश्चक्लृपे कान् प्रजापतीन् ।
सर्गांश्चैवानुसर्गांश्च मनून्मन्वन्तराधिपान् ।।२५।।

पदच्छेद—

प्रजापतीनाम् सः पतिः, चक्लृपे कान् प्रजापतीन् ।
सर्गान् च एव अनुसर्गान् च, मनून् मन्वन्तर अधिपान् ।।

शब्दार्थ—

प्रजापतीनाम्	१.	ब्रह्मादि प्रजापतियों के	**च**	७.	तदनन्तर (आप)
सः	३.	वे भगवान्	**एव**	१४.	भी (वर्णन करें)
पतिः,	२.	स्वामी	**अनुसर्गान्**	९.	बाद की सृष्टि
चक्लृपे	६.	उत्पन्न किये	**च,**	१०.	और
कान्	४.	किन-किन	**मनून्**	१३.	मनुओं का
प्रजापतीन् ।	५.	प्रजापतियों को	**मन्वन्तर**	११.	मन्वन्तरों के
सर्गान्	८.	प्रधान सृष्टि	**अधिपान् ।**	१२.	अधिपति

श्लोकार्थ—ब्रह्मादि प्रजापतियों के स्वामी वे भगवान् किन-किन प्रजापतियों को उत्पन्न किये ? तदनन्तर आप प्रधान सृष्टि, बाद की सृष्टि और मन्वन्तरों के अधिपति मनुओं का भी वर्णन करें।

षड्विंशः श्लोकः

एतेषामपि वंशांश्च वंशानुचरितानि च ।
उपर्यधश्च ये लोका भूमेर्मित्रात्मजासते ।।२६।।

पदच्छेद—

एतेषाम् अपि वंशान् च, वंश अनुचरितानि च ।
उपरि अधः च ये लोकाः, भूमेः मित्रात्मज आसते ।।

शब्दार्थ—

एतेषाम्	२.	इन मनुओं के	**उपरि**	१०.	ऊपर
अपि	३.	भी	**अधः**	१२.	नीचे
वंशान्	४.	वंशों का	**च**	११.	और
च	५.	और	**ये, लोकाः,**	१३.	जो, चौदह भुवन
वंश	६.	उनके वंश में उत्पन्न	**भूमेः**	९.	पृथ्वी के
अनुचरितानि	७.	राजाओं के चरित्रों का	**मित्रात्मज**	१.	हे मैत्रेय जी !
च ।	८.	तथा	**आसते ।।**	१४.	हैं (उनका भी वर्णन करें)

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! इन मनुओं के भी वंशों का और उनके वंश में उत्पन्न राजाओं के चरित्रों का तथा पृथ्वी के ऊपर और नीचे जो चौदह भुवन हैं, उनका भी वर्णन करें।

सप्तविंशः श्लोकः

तेषां संस्थां प्रमाणं च भूर्लोकस्य च वर्णय ।
तिर्यङ्मानुषदेवानां सरीसृपपतत्त्रिणाम् ।
वद नः सर्गसंव्यूहं गार्भस्वेदद्विजोद्भिदाम् ।।२७।।

तेषाम् संस्थाम् प्रमाणम् च, भूर्लोकस्य च वर्णय ।
तिर्यक् मानुष देवानाम्, सरीसृप पतत्त्रिणाम् ।
वद नः सर्ग संव्यूहम्, गार्भ स्वेद द्विज उद्भिदाम् ।।

१.	उन लोकों के	सरीसृप	११.	रेंगने वाले सांप
६.	स्थिति का	पतत्त्रिणाम्,	१२.	पक्षियों तथा
४.	विस्तार	वद	२०.	बतावें
५.	और	नः	१९.	हमें
३.	पृथ्वी लोक के	सर्ग	१७.	सृष्टि का
२.	तथा	संव्यूहम्,	१८.	रहस्य
७.	वर्णन करें	गार्भ	१३.	जरायुज
८.	पशु-पक्षी	स्वेद	१४.	स्वेदज
९.	मनुष्य	द्विज	१५.	अण्डज (और)
१०.	देवताओं के (और)	उद्भिदाम् ।।	१६.	उद्भिज्ज (जीवों के

न लोकों के तथा पृथ्वी लोक के विस्तार और स्थिति का वर्णन करें। पशु-पक्षी वताओं के और रेंगने वाले सांप, पक्षियों तथा जरायुज, स्वेदज, अण्डज और ोवों की सृष्टि का रहस्य हमें बतावें।

अष्टाविंशः श्लोकः

गुणावतारैर्विश्वस्य सर्गस्थित्यप्ययाश्रयम् ।
सृजतः श्रीनिवासस्य व्याचक्ष्वोदारविक्रमम् ।।२८।।

गुण अवतारैः विश्वस्य, सर्ग स्थिति अप्यय आश्रयम् ।
सृजतः श्रीनिवासस्य, व्याचक्ष्व उदार विक्रमम् ।।

८.	प्रधान	आश्रयम् ।	६.	के लिये
९.	अवतार (ब्रह्मा, विष्णु और महादेव की)	सृजतः	१.	सृष्टि करते समय
		श्रीनिवासस्य,	७.	भगवान् श्री हरि
२.	संसार की	व्याचक्ष्व	१२.	वर्णन करें
३.	उत्पत्ति	उदार	१०.	कल्याणकारी
४.	पालन (और)	विक्रमम् ।।	११.	लीलाओं का
५.	संहार			

ृष्टि करते समय संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये भगवान् श्री हरि अवतार ब्रह्मा, विष्णु और महादेव की कल्याणकारी लीलाओं का वर्णन करें।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

वर्णाश्रमविभागांश्च रूपशीलस्वभावत: ।
ऋषीणां जन्मकर्मादि वेदस्य च विकर्षणम् ।।२६।।

वर्ण आश्रम विभागान् च, रूप शील स्वभावत: ।
ऋषीणाम् जन्म कर्म आदि, वेदस्य च विकर्षणम् ।।

५.	ब्रह्माणादि वर्णों और	**ऋषीणाम्**	८.	ऋषियों की
६.	ब्रह्मचर्यादि आश्रमों के	**जन्म**	६.	उत्पत्ति और
७.	विभागों को	**कर्म**	१०.	(उनके) कार्य कलाप
३	और	**आदि,**	११.	इत्यादि को
१	(आप हमें) स्वरूप	**वेदस्य**	१३.	वेद के
२	आचरण	**च**	१२.	तथा
४	स्वभाव के अनुसार	**विकर्षणम्।।**	१४.	विस्तार को (बतावें)

हमें स्वरूप, आचरण और स्वभाव के अनुसार ब्राह्मणादि वर्णों और ब्रह्म
रमो के विभागों को, ऋषियों की उत्पत्ति और उनके कार्य-कलाप इत्यादि को तथ
स्तार को बतावें ।

त्रिंश: श्लोक:

यज्ञस्य च वितानानि योगस्य च पथ: प्रभो ।
नैष्कर्म्यस्य च सांख्यस्य तन्त्रं वा भगवत्स्मृतम् ।।३०।।

यज्ञस्य च वितानानि, योगस्य च पथ: प्रभो ।
नैष्कर्म्यस्य च सांख्यस्य, तन्त्रम् वा भगवत् स्मृतम् ।।

२	यज्ञ के	**नैष्कर्म्यस्य**	८.	निष्काम कर्म
४	और	**च**	६.	और
३.	विस्तार को	**सांख्यस्य,**	१०.	सांख्य शास्त्र को
५	योग के	**तन्त्रम्**	१४.	नारद पाञ्चरात्र संहि
७.	तथा	**वा**	११.	एवम्
६.	मार्ग को	**भगवत्**	१२.	भगवान् के द्वारा
१.	हे स्वामिन् ! (आप)	**स्मृतम् ।।**	१३.	कही गई.

ामिन् ! आप यज्ञ के विस्तार को और योग के मार्ग तथा निष्काम कर्म और
त्र को एवं भगवान् के द्वारा कही गई नारद पाञ्चरात्र संहिता को भी बतावें ।

एकत्रिंशः श्लोकः

पाखण्डपथवैषम्यं प्रतिलोमनिवेशनम् ।
जीवस्य गतयो याश्च यावतीर्गुणकर्मजाः ॥३१॥

पाखण्ड पथ वैषम्यम्, प्रतिलोम निवेशनम् ।
जीवस्य गतयः याः च, यावतीः गुण कर्मजाः ॥

१	पाखण्डियों के मत के	**जीवस्य**	८.	प्राणियों की
२	प्रचार से	**गतयः**	११.	दशायें हैं (उनका वर्णन क
३	उत्पन्न होने वाली विषमता	**याः, च,**	९.	जैसी, और
४	नीच वर्ण के पुरुष से उच्च वर्ण की स्त्री में उत्पन्न संतान की	**यावतीः**	१०.	जितनी
		गुणं	६.	धर्म
		कर्मजाः ॥	७.	कर्म से उत्पन्न होने वाली
५	स्थिति (और)			

ण्डियों के मत के प्रचार से उत्पन्न होने वाली विषमता, नीचवर्ण के पुरुष से उच्च व स्त्री में उत्पन्न सन्तान की स्थिति और धर्म-कर्म से उत्पन्न होने वाली प्राणियों की जैस जितनी दशायें हैं, उनका भी वर्णन करें ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

धर्मार्थकाममोक्षाणां निमित्तान्यविरोधतः ।
वार्ताया दण्डनीतेश्च श्रुतस्य च विधिं पृथक् ॥३२॥

धर्म अर्थ काम मोक्षाणाम्, निमित्तानि अविरोधतः ।
वार्तायाः दण्डनीतेः च, श्रुतस्य च विधिम् पृथक् ॥

१.	धर्म	**वार्तायाः**	७.	वाणिज्य
२.	अर्थ	**दण्डनीतेः**	९.	राजनीति
३.	काम और	**च**	८.	और
४	मोक्ष के	**श्रुतस्य**	११.	वेद-शास्त्र के अध्ययन की
६.	साधनों को	**च**	१०.	तथा
५.	परस्पर सहयोगी	**विधिम्**	१२.	रीति को (भी)
		पृथक् ॥	१३.	अलग-अलग (बतावें),

अर्थ काम और मोक्ष के परस्पर सहयोगी साधनों को, वाणिज्य और राजनीति त शास्त्र के अध्ययन की रीति को भी अलग-अलग बतावें ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

श्राद्धस्य च विधिं ब्रह्मन् पितृणां सर्गमेव च ।
ग्रहनक्षत्रताराणां, कालावयवसंस्थितिम् ।।३३।।

पदच्छेद—

श्राद्धस्य च विधिम् ब्रह्मन्, पितृणाम् सर्गम् एव च ।
ग्रह नक्षत्र ताराणाम्, काल अवयव संस्थितिम् ।।

शब्दार्थ—

श्राद्धस्य	२.	श्राद्ध की	**च ।**	७.	तथा
च	४.	और	**ग्रह**	१०.	ग्रह
विधिम्	३.	विधि का	**नक्षत्र**	११.	नक्षत्र और
ब्रह्मन्,	१.	हे परम ज्ञानी शुकदेव जी !	**ताराणाम्,**	१२.	तारागणों की
पितृणाम्	५.	पितृगणों की	**काल**	८.	काल
सर्गम्	६.	सृष्टि का	**अवयव**	६.	चक्र में
एव	१४.	भी (वर्णन करें)	**संस्थितिम् ।।**	१३.	स्थिति का

श्लोकार्थ—हे परम ज्ञानी शुकदेव जी ! श्राद्ध की विधि का और पितृगणों की सृष्टि का तथा काल-चक्र में ग्रह, नक्षत्र और तारागणों की स्थिति का भी वर्णन करें।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

दानस्य तपसो वापि यच्चेष्टापूर्तयोः फलम् ।
प्रवासस्थस्य यो धर्मो, यश्च पुंस उतापदि ।।३४।।

पदच्छेद—

दानस्य तपसः वा अपि, यत् च इष्टा पूर्तयोः फलम् ।
प्रवासस्थस्य यः धर्मः, यः च पुंसः उत आपदि ।।

शब्दार्थ—

दानस्य, तपसः	१.	दान, तपस्या	**फलम् ।**	६.	फल है
वा	७.	तथा	**प्रवासस्थस्य**	८.	परदेश में गये हुये
अपि,	१३.	(उसे) भी	**यः, धर्मः,**	१०.	जो, धर्म है
यत्	५.	जो	**यः**	१२.	जो (धर्म है)
च	३.	और	**च**	१४.	बतावें
इष्टा	२.	यज्ञानुष्ठान	**पुंसः**	६.	मनुष्य का
पूर्तयोः	४.	कूप आदि के निर्माण का	**उत, आपदि ।।**	११.	अथवा, विपत्ति में

श्लोकार्थ—दान, तपस्या, यज्ञानुष्ठान और कूप आदि के निर्माण का जो फल है तथा परदेश में गये हुये मनुष्य का जो धर्म है अथवा विपत्ति में जो धर्म है; उसे भी बतावें।

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

येन वा भगवांस्तुष्येद्धर्मयोनिर्जनार्दनः ।
सम्प्रसीदति वा येषामेतदाख्याहि चानघ ।।३५।।

पदच्छेद—

येन वा भगवान् तुष्येत्, धर्म योनिः जनार्दनः ।
सम्प्रसीदति वा येषाम्, एतद् आख्याहि च अनघ ।।

शब्दार्थ—

यन वा	६.	जिस साधन से	**सम्प्रसीदति**	१०.	प्रसन्न होते हैं
भगवान्	४.	भगवान्	**वा**	८.	तथा
तुष्येत्,	७.	प्रसन्न होते हैं	**येषाम्**	९.	जिस पर
धर्म	२.	धर्म के	**एतद्**	११.	उसे
योनिः	३.	मूल कारण	**आख्याहि**	१३.	बतावें
जनार्दनः ।	५.	जनार्दन	**च**	१२.	भी
			अनघ ।।	१.	हे निष्पाप शुकदेव जी !

श्लोकार्थ—हे निष्पाप शुकदेव जी ! धर्म के मूल कारण भगवान् जनार्दन जिस साधन से प्रसन्न होते हैं तथा जिस पर प्रसन्न होते हैं; उसे भी बतावें ।

षट्त्रिंश: श्लोक:

अनुव्रतानां शिष्याणां पुत्राणां च द्विजोत्तम ।
अनापृष्टमपि ब्रूयुर्गुरवो दीनवत्सलाः ।।३६।।

पदच्छेद—

अनुव्रतानाम् शिष्याणाम्, पुत्राणाम् च द्विजोत्तम ।
अनापृष्टम् अपि ब्रूयुः, गुरवः दीनवत्सलाः ।।

शब्दार्थ—

अनुव्रतानाम्	४.	आज्ञाकारी	**अनापृष्टम्**	८.	बिना पूछे
शिष्याणाम्,	५.	शिष्यों को	**अपि**	९.	ही (हित की बात)
पुत्राणाम्	७.	पुत्रों को	**ब्रूयुः,**	१०.	बताते हैं
च	६.	और	**गुरवः**	३.	गुरुजन
द्विजोत्तम ।	१.	हे मुनिवर !	**दीनवत्सलाः ।।**	२.	दीन-दुखियों के प्रेमी

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! दीन दुःखियों के प्रेमी गुरुजन आज्ञाकारी शिष्यों को और पुत्रों को बिना पूछे ही हित की बात बताते हैं ।

सप्तत्रिंश: श्लोक:

तत्त्वानां भगवंस्तेषां कतिधा प्रतिसंक्रमः ।
तत्रेमं क उपासीरन् क उ स्विदनुशेरते ।।३७।।

तत्त्वानाम् भगवन् तेषाम्, कतिधा प्रतिसंक्रमः ।
तत्र इमम् कः उपासीरन्, कः उ स्वित् अनुशेरते ।।

३.	महदादि तत्त्वों में	इमम्	८.	इन भगवान् की
१.	हे भगवन् !	कः	७.	कौन तत्त्व
२.	उन	उपासीरन्,	६.	सेवा करता है
४.	कितने प्रकार की	कः	११.	कौन तत्त्व
५.	अवस्थायें हैं	उ स्वित्	१०.	तथा
६.	उन में	अनुशेरते ।।	१२.	विलीन हो जाता

हे भगवन् ! उन महदादि तत्त्वों में कितने प्रकार की अवस्थाये हैं । उनमें कौ भगवान् की सेवा करता है तथा कौन तत्त्व विलीन हो जाता है ।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

पुरुषस्य च संस्थानं स्वरूपं वा परस्य च ।
ज्ञानं च नैगमं यत्तद् गुरुशिष्यप्रयोजनम् ।।३८।।

पुरुषस्य च संस्थानम्, स्वरूपम् वा परस्य च ।
ज्ञानम् च नैगमम् यत् तद्, गुरु शिष्य प्रयोजनम् ।।

२.	जीव का	ज्ञानम्,	९.	ज्ञान, और
१.	तथा	च नैगमम्	८.	उपनिषद् का
३.	आकार-प्रकार	यत्	१२.	जो
६.	स्वरूप	तद्	१४.	उसका (भी वर्णन
४.	और	गुरु	१०.	गुरु
५.	परमेश्वर का	शिष्य	११.	शिष्य का
७.	तथा	प्रयोजनम् ।।	१३.	सम्बन्ध है

तथा जीव का आकार-प्रकार और परमेश्वर का स्वरूप तथा उपनिषद् का ज्ञान शिष्य का जो म्सबन्ध है; उसका भी वर्णन करें ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

निमित्तानि च तस्येह प्रोक्तान्यनघ सूरिभिः ।
स्वतो ज्ञानं कुतः पुंसां भक्तिर्वैराग्यमेव वा ।।३९।।

निमित्तानि च तस्य इह, प्रोक्तानि अनघ सूरिभिः ।
स्वतः ज्ञानम् कुतः पुंसाम्, भक्तिः वैराग्यम् एव वा ।।

५.	उपाय	**स्वतः**	१३. अपने आप
७	नहीं तो	**ज्ञानम्**	९. ज्ञान
४.	उस (परम पुरुषार्थ मोक्ष) के	**कुतः**	१५. कैसे (हो सकता है)
२.	इस संसार मे	**पुंसाम्,**	८. मनुष्यों को
६.	बताये गये हैं	**भक्तिः**	१०. भक्ति
१	हे पवित्रात्मन् !	**वैराग्यम्**	१२. वैराग्य
३.	विद्वानों के द्वारा	**एव**	१४. ही
		वा ।।	११. अथवा

पवित्रात्मन् ! इस संसार में विद्वानो के द्वारा उस परम पुरुषार्थ मोक्ष के उपाय नही तो मनुष्यों को ज्ञान, भक्ति अथवा वैराग्य अपने आप ही कैसे हो सकता है

चत्वारिंशः श्लोकः

एतान्मे पृच्छतः प्रश्नान् हरेः कर्मविवित्सया ।
ब्रूहि मेऽज्ञस्य मित्रत्वादजया नष्टचक्षुषः ।।४०।।

एतान् मे पृच्छतः प्रश्नान्, हरेः कर्म विवित्सया ।
ब्रूहि मे अज्ञस्य मित्रत्वात्, अजया नष्ट चक्षुषः ।।

१२.	इन	**ब्रूहि**	१४. उत्तर देवें
१०.	मेरे द्वारा	**मे**	४. मुझ
११.	पूछे गये	**अज्ञस्य**	५. अज्ञानी के (आप)
१३.	प्रश्नों का	**मित्रत्वात्,**	६. सुहृद हैं (अतः)
७.	श्रीहरि की	**अजया**	१. माया-मोह के कार
८.	लीला	**नष्ट**	३. समाप्त हो गई है
९.	जानने की इच्छा से	**चक्षुषः ।।**	२. (मेरी) ज्ञान दृष्टि

या-मोह के कारण मेरी ज्ञान दृष्टि समाप्त हो गई है। मुझ अज्ञानी के आप श्रीहरि की लीला जानने की इच्छा से मेरे द्वारा पूछे गये इन प्रश्नों का उत्तर

एकचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ ।
जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ॥४१॥

सर्वे वेदाः च यज्ञाः च, तपः दानानि च अनघ ।
जीव अभय प्रदानस्य, न कुर्वीरन् कलाम् अपि ॥

२.	चारों, वेद	जीव, अभय	७.	जीवों को, मोक्ष पद
३.	और, यज्ञ	प्रदानस्य,	८.	दिलाने वाले साधन के
४.	तथा, तपस्या	न	११.	नहीं
६.	दान आदि कर्म	कुर्वीरन्	१२.	बराबरी कर सकते है
५.	एवम्	कलाम्	९.	सोलहवें भाग की
१.	हे पुण्यात्मन् !	अपि ॥	१०	भी

पुण्यात्मन् ! चारों वेद और यज्ञ तथा तपस्या एवं दान आदि कर्म जीवों को मो
लाने वाले साधन के सोलहवें भाग की भी बराबरी नहीं कर सकते हैं ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

स इत्थमापृष्टपुराणकल्पः, कुरुप्रधानेन मुनिप्रधानः ।
प्रवृद्धहर्षो भगवत्कथायां, सञ्चोदितस्तं प्रहसन्निवाह ॥४२॥

सः इत्थम् आपृष्ट पुराण कल्पः, कुरु प्रधानेन मुनि प्रधानः ।
प्रवृद्ध हर्षः भगवत् कथायाम्, सञ्चोदितः तम् प्रहसन् इव आह ॥

१४.	मैत्रेय जी	प्रवृद्ध	१२.	अत्यन्त
५.	इस प्रकार	हर्षः	१३.	प्रसन्न होते हुये
८.	पूछी थी	भगवत्	९.	भगवान् श्री हरि की
६.	पुराणों की	कथायाम्,	१०.	कथा सुनाने की
७.	कथा	सञ्चोदितः	११.	प्रार्थना से
१.	कुरुवंश में	तम्	१७.	उन विदुर जी से
२.	प्रधान विदुर जी ने	प्रहसन्	१५.	मुसकराते हुये
४.	महर्षि मैत्रेय से	इव	१६.	से
३.	मुनियों में श्रेष्ठ	आह ॥	१८.	बोले

रुवंश में प्रधान विदुर जी ने मुनियों में श्रेष्ठ महर्षि मैत्रेय से इस प्रकार पुराणों
छी थी । तदनन्तर भगवान् श्री हरि की कथा सुनाने की प्रार्थना से अत्यन्त प्रसन्न
त्रेय जी मुसकराते हुये से उन विदुर जी से बोले ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे सप्तमः अध्याय ॥ ७ ॥

तृतीय: स्कन्ध.

अथ अष्टम: अध्याय:

प्रथम: श्लोक:

सत्सेवनीयो बत पूरुवंशो यल्लोकपालो भगवत्प्रधानः ।
बभूविथेहाजितकीर्तिमालां पदे पदे नूतनयस्यभीक्ष्णम् ॥१॥

सत् सेवनीयः बत पूरुवंशः, यद् लोकपालः भगवत् प्रधानः ।
बभूविथ इह अजित कीर्ति मालाम्, पदे-पदे नूतनयसि अभीक्ष्णम् ॥

३.	संतों के	बभूविथ	८.	जन्म लिये हैं (आप)
४.	सेवा करने योग्य है	इह	६.	इस संसार में
१.	अहोभाग्य है कि	अजित	१०.	भगवान् श्री हरि की
२.	राजा पूरु का वंश	कीर्ति,मालाम्,	११.	यशोमयी, माला को
५.	क्योंकि (उसमें)	पदे-पदे	१२.	पग-पग पर
७.	(साक्षात्) यमराज ही	नूतनयसि	१४.	नई बना रहे हैं
६.	भगवान् के, प्रधान भक्त(आप)	अभीक्ष्णम् ॥	१३.	नित

भाग्य है कि राजा पूरु का वंश संतों के सेवा करने योग्य है, क्योंकि उसमें भग
न भक्त आप साक्षात् यमराज ही जन्म लिये है। आप इस संसार में भगवान् श्र
यशोमयी माला को पग-पग पर नित नई बना रहे हैं।

द्वितीय: श्लोक:

सोऽहं नृणां क्षुल्लसुखाय दुःखं महद्गतानां विरमाय तस्य ।
प्रवर्तये भागवतं पुराणं यदाह साक्षाद्भगवानृषिभ्यः ॥२॥

सः अहम् नृणाम् क्षुल्ल सुखाय दुःखम्, महत् गतानाम् विरमाय तस्य ।
प्रवर्तये भागवतम् पुराणम्, यद् आह साक्षात् भगवान् ऋषिभ्यः ॥

७.	अब, मैं	प्रवर्तये	१०.	प्रारम्भ करता हूँ
४.	मनुष्यों के	भागवतम्,	८.	श्रीमद्भागवत
१.	क्षुद्र विषय सुख के लिये	पुराणम्,	६.	महापुराण की (कथा)
२.	महान्, दुःख में	यद्	११.	जिसे
३.	पड़े हुये	आह	१४.	कहा था
६.	विनाश करने के लिये	साक्षात्,भगवान्	१२.	स्वयं, भगवान् अनन्त
५.	उस दुःख का	ऋषिभ्यः ॥	१३.	सनकादि ऋषियों से

द्र विषय सुख के लिये महान् दुःख में पड़े हुये मनुष्यों के उस दुःख का विनाश क
रये अब मैं श्रीमद्भागवत महापुराण की कथा प्रारम्भ करता हूँ, जिसे स्वयं भगवान्
सनकादि ऋषियों से कहा था।

तृतीय: श्लोक:

आसीनमुर्व्यां भगवन्तमाद्यं सङ्कर्षणं देवमकुण्ठसत्त्वम् ।
विवित्सवस्तत्त्वमतः परस्य कुमारमुख्या मुनयोऽन्वपृच्छन् ।।३।।

पदच्छेद—

आसीनम् उर्व्याम् भगवन्तम् आद्यम्, सङ्कर्षणम् देवम् अकुण्ठ सत्त्वम् ।
विवित्सवः तत्त्वम् अतः परस्य, कुमार मुख्याः मुनयः अन्वपृच्छन् ।।

शब्दार्थ—

आसीनम्	७.	बैठे हुये थे	**विवित्सवः**	११.	जानने की इच्छा से
उर्व्याम्	६.	पाताल लोक में	**तत्त्वम्**	१०.	स्वरूप को
भगवन्तम्	४.	भगवान्	**अतः**	८.	उन से
आद्यम्,	२.	आदि	**परस्य,**	९.	परमात्मा के
सङ्कर्षणम्	५.	अनन्त	**कुमार, मुख्याः**	१२.	सनकादि, प्रधान
देवम्	३.	देव	**मुनयः**	१३.	ऋषियों ने
अकुण्ठ, सत्त्वम् ।	१.	अखण्ड, ज्ञान वाले	**अन्वपृच्छन् ।।**	१४.	प्रश्न किया था

श्लोकार्थ—अखण्ड ज्ञान वाले, आदि देव भगवान् अनन्त पाताल लोक में बैठे हुये थे। परमात्मा के स्वरूप को जानने की इच्छा से सनकादि प्रधान ऋषियों किया था।

चतुर्थ: श्लोक:

स्वमेव धिष्ण्यं बहु मानयन्तं यं वासुदेवाभिधमामनन्ति ।
प्रत्यग्धृताक्षाम्बुजकोशमीषदुन्मीलयन्तं विबुधोदयाय ।।४।।

पदच्छेद—

स्वम् एव धिष्ण्यम् बहु मानयन्तम्, यम् वासुदेव अभिधम् आमनन्ति ।
प्रत्यम् धृत अक्ष अम्बुज कोशम् ईषत्, उन्मीलयन्तम् विबुध उदयाय ।।

शब्दार्थ—

स्वम्	१.	(वे) अपने	**प्रत्यम् धृत**	९.	बिल्कुल बन्द किये
एव	३.	ही	**अक्ष**	१०.	(अपने) नेत्रों को
धिष्ण्यम्	२.	आधार परमात्मा की	**अम्बुज, कोशम्**	८.	कमल, कोश के सम
बहु, मानयन्तम्,	४.	मानसिक, पूजा कर रहे थे	**ईषत्,**	१३.	कुछ,
यम्, वासुदेव	५.	जिन्हें, वासुदेव	**उन्मीलयन्तम्**	१४.	खोल कर (देखा)
अभिधम्	६.	नाम से	**विबुध**	११.	ज्ञानी जनों के
आमनन्ति ।	७.	जाना जाता है (उन्होंने)	**उदयाय ।।**	१२.	आनन्द के लिये

श्लोकार्थ—वे अपने आधार परमात्मा की ही मानसिक पूजा कर रहे थे, जिन्हें वासुदेव नाम जाता है। उन्होंने उस समय कमल कोश के समान बिल्कुल बन्द किये हुये अप ज्ञानी जनों के आनन्द के लिये कुछ खोल कर देखा।

पञ्चमः श्लोकः

स्वर्धुन्युदार्द्रैः स्वजटाकलापैरुपस्पृशन्तश्चरणोपधानम् ।
पद्मं यदर्चन्त्यहिराजकन्याः सप्रेम नानाबलिभिर्वरार्थाः ।।५।।

स्वर्धुनी उद आर्द्रैः स्व जटा कलापैः, उपस्पृशन्तः चरण उपधानम् ।
पद्मम् यद् अर्चन्ति अहिराज कन्याः, सप्रेम नाना बलिभिः वरार्थाः ।।

१.	(उन मुनियों ने) गंगा जी के	पद्मम्	७.	(उस) कमल का
२	जल से, गीले	यद्, अर्चन्ति	१४.	जिसकी, पूजा करती
३.	अपने, जटा	अहिराज	९.	नागराज की
४	जूट से	कन्याः,	१०.	कुमारियाँ
८.	स्पर्श किया	सप्रेम	१३.	प्रेमपूर्वक
५.	उनके चरणों की	नाना, बलिभिः	१२.	अनेकों; उपहारो से
६	चौकी के रूप में स्थित	वरार्थाः ।।	११.	मनोरथ की प्राप्ति

मुनियों ने गंगा जी के जल से गीले अपने जटा-जूट से उनके चरणों की चौकी स्थित उस कमल का स्पर्श किया, नागराज की कुमारियाँ मनोरथ की प्राप्ति को उपहारों से प्रेमपूर्वक जिसकी पूजा करती हैं।

षष्ठः श्लोकः

मुहुर्गृणन्तो वचसानुरागस्खलत्पदेनास्य कृतानि तज्ज्ञाः ।
किरीटसाहस्रमणिप्रवेकप्रद्योतितोद्दामफणासहस्रम् ।।६।।

मुहुः गृणन्तः वचसा अनुराग, स्खलत् पदेन अस्य कृतानि तज्ज्ञाः ।
किरीट साहस्र मणि प्रवेक, प्रद्योतित उद्दाम फणा सहस्रम् ।।

६	बार-बार	किरीट	११.	मुकुटों की
७	गान कर रहे थे (उस समय)	साहस्र	१०.	हजारों
५.	वाणी से (उनका)	मणि	१२.	मणियों की
३	प्रेम के कारण	प्रवेक,	१३.	किरणों से
४.	गद्गद, अक्षरों वाली	प्रद्योतित	१४.	चमक रहे थे
१	उनकी, लीलाओं के	उद्दाम	८.	(उनके) उठे हुये
२	जानकार मुनिगण	फणा, सहस्रम् ।।	९.	हजारों, फन

ी लीलाओं के जानकार, मुनिगण प्रेम के कारण गद्गद अक्षरों वाली वाणी -बार यशोगान कर रहे थे। उस समय उनके उठे हुये हजारों फन हजारो मु ायो की किरणों से चमक रहे थे।

सप्तमः श्लोकः

प्रोक्तं किलैतद्भगवत्तमेन निवृत्तिधर्माभिरताय तेन ।
सनत्कुमाराय स चाह पृष्टः सांख्यायनायाङ्ग धृतव्रताय ।।७।।

प्रोक्तम् किल एतद् भगवत्तमेन, निवृत्ति धर्म अभिरताय तेन ।
सनत्कुमाराय सः च आह पृष्टः, सांख्यायनाय अङ्ग धृत व्रताय ।।

७.	कहा था, यह प्रसिद्ध है	सः	१०.	उन सनकादिकों ने
६	यह भागवत पुराण	च	८.	तदनन्तर
२	भगवान् अनन्त ने	आह	१४.	सुनाया था
३	निष्काम, धर्म में	पृष्टः,	१३.	पूछने पर (यह पुराण)
४	परायण	सांख्यायनाय	१२.	सांख्यायन ऋषि को
१.	उन	अङ्ग	६.	हे तात !
५.	सनत् कुमार जी से	धृत, व्रताय ।।	११.	कठिन व्रत, करने वाले

भगवान् अनन्त ने निष्काम धर्म में परायण सनत्कुमार जी से .यह भागवत पुराण यह प्रसिद्ध है । तदनन्तर हे तात ! उन सनकादिकों ने कठिन व्रत करने वाले सांख्यायन ऋषि को पूछने पर यह पुराण सुनाया था ।

अष्टमः श्लोकः

सांख्यायनः पारमहंस्यमुख्यो विवक्षमाणो भगवद्विभूतीः ।
जगाद सोऽस्मद्गुरवेऽन्विताय पराशरायाथ बृहस्पतेश्च ।।८।।

सांख्यायनः पारमहंस्य मुख्यः, विवक्षणमाणः भगवत् विभूतीः ।
जगाद सः अस्मद् गुरवे अन्विताय, पराशराय अथ बृहस्पतेः च ।।

४.	सांख्यायन ऋषि ने	सः	३.	उन
१.	परम हंसों में	अस्मद्, गुरवे	८.	हमारे, गुरु (और अपने
२.	प्रधान	अन्विताय,	६.	आज्ञाकारी शिष्य
७.	कहने की इच्छा में	पराशराय	१०.	पराशर मुनि को
५.	भगवान् की	अथ	१३.	यह कथा
६.	लीलाओं को	बृहस्पतेः	१२.	बृहस्पति जी को
४.	सुनायी	च ।।	११.	तथा

हंसों में प्रधान उन सांख्यायन ऋषि ने भगवान् की लीलाओं को कहने की इच्छा से हमारे गुरु और अपने आज्ञाकारी शिष्य पराशर मुनि को तथा बृहस्पति जी को यह कथा सुनायी थी ।

सोऽहं तवैतत्कथयामि वत्स श्रद्धालवे नित्यमनुव्रताय ।९।

पदच्छेद

प्रोवाच मह्यम् स दयालु उक्तः मुनि पुलस्त्येन पुराणम् आद्यम् ।
सः अहम् तव एतत् कथयामि ,वत्स, श्रद्धालवे नित्यम् अनुव्रताय ।।

शब्दार्थ—

प्रोवाच	९.	सुनाया था	आद्यम् ।	६.	(यह) श्रीमद्भागवत
मह्यम्	८.	मुझे	सः, अहम्	११.	अब, मैं
सः	२.	उन	तव, एतत्	१५.	तुम्हें, यह
दयालुः	१.	कृपालु	कथयामि	१६.	सुना रहा हूँ
उक्तः,	५.	कहने पर	वत्स,	१०.	हे तात !
मुनिः	३.	पराशर मुनि ने	श्रद्धालवे	१२.	श्रद्धा रखने वाले (और)
पुलस्त्येन	४.	पुलस्त्य जी के	नित्यम्	१३.	सदा
पुराणम्	७.	पुराण	अनुव्रताय ।।	१४.	आज्ञाकारी

श्लोकार्थ—कृपालु उन पराशर मुनि ने पुलस्त्य जी के कहने पर यह श्रीमद्भागवत पुराण मुझे सुनाया था । हे तात ! अब मैं श्रद्धा रखने वाले और सदा आज्ञाकारी तुम्हें यह सुना रहा हूँ ।

दशमः श्लोकः

उदाप्लुतं विश्वमिदं तदाऽऽसीद् यन्निद्रयामीलितदृङ् न्यमीलयत् ।
अहीन्द्रतल्पेऽधिशयान एकः कृतक्षणः स्वात्मरतौ निरीहः ।।१०।।

पदच्छेद—

उद् आप्लुतम् विश्वम् इदम् तदा आसीत्, यद् निद्रया अमीलित दृक् न्यमीलयत् ।
अहीन्द्र तल्पे अधिशयानः एकः, कृत क्षणः स्वात्म रतौ निरीहः ।।

शब्दार्थ—

उद्, आप्लुतम्	४	जल में, डूबा हुआ	न्यमीलयत् ।	१४.	(नेत्रों को) बन्द किये हुये
विश्वम्	३.	ब्रह्माण्ड	अहीन्द्र, तल्पे	१०.	सर्पराज की, शय्या पर
इदम्	२.	यह (सम्पूर्ण)	अधिशयानः	१२.	सोये हुये
तदा	१.	सृष्टि के पूर्व	एकः,	११.	अकेले
आसीत्, यद्	५.	था, उसमें	कृत क्षणः	८.	तल्लीन (और)
निद्रया	१३.	योग निद्रा से	स्वात्मरतौ	७.	आत्मानन्द में
अमीलित, दृक्	६.	अखण्ड, ज्ञान वाले	निरीहः ।।	९.	इच्छा से रहित (परमात्मा

श्लोकार्थ—सृष्टि के पूर्व यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जल में डूबा हुआ था । उसमें अखण्ड ज्ञान वाले, आत्मानन्द में तल्लीन और इच्छा से रहित परमात्मा सर्पराज की शय्या पर अकेले सोये हुये योग निद्रा से नेत्रों को बन्द किये हुये थे ।

उवास तस्मिन् सलिले पदे स्वे यथानलो दारुणि रुद्धवीर्यः ॥११॥

पदच्छेद

स अन्त शरीरे अर्पित भूत सूक्ष्म कालात्मिकाम शक्तिम उदीरयाण ।
उवास तस्मिन् सलिले पदे स्वे, यथा अनल. दारुणि रुद्ध वीर्य. ॥

शब्दार्थ—

सः	५. उस (परमात्मा) ने	उवास	१६.	निवास किया था
अन्तः, शरीरे	६. (अपने) शरीर के, अन्दर	तस्मिन्,सलिले	१५.	उस, जल में
अर्पित	९. लीन करके (तथा)	पदे	१४.	आश्रय
भूत	७. पंच महाभूतों और	स्वे,	१३.	अपने
सूक्ष्मः,	८. सूक्ष्म शरीरों को	यथा, अनलः	१	जैसे, अग्नि
कालात्मिकाम्	१०. काल स्वरूप	दारुणि	२.	लकड़ी में
शक्तिम्	११. शक्ति को	रुद्ध	४.	छिपाये रहता है(उसी
उदीरयाणः ।	१२. जाग्रत रखते हुये	वीर्यः ॥	३.	अपनी शक्ति को

श्लोकार्थ—जैसे अग्नि लकड़ी में अपनी शक्ति को छिपाये रहता है, उसी प्रकार उस परमात्मा शरीरे के अन्दर पंचमहाभूतों और सूक्ष्म शरीरों को लीन करके तथा काल-स्वरूप श जाग्रत रखते हुये अपने आश्रय उस जल में निवास किया था ।

द्वादश : श्लोकः

चतुर्युगानां च सहस्रमप्सु स्वपन् स्वयोदीरितया स्वशक्त्या ।
कालाख्ययाऽऽसादितकर्मतन्त्रो लोकानपीतान्ददृशे स्वदेहे ॥१२॥

पदच्छेद—

चतुर्युगानाम् च सहस्रम् अप्सु, स्वपन् स्वया उदीरितया स्व शक्त्या ।
काल आख्यया आसादित कर्म तन्त्रः, लोकान् अपीतान् ददृशे स्व देहे ॥

शब्दार्थ—

चतुर्युगानाम्	२. चतुर्युगों तक	काल, आख्यया	५.	काल, नाम की
च	४. पश्चात् (परमात्मा) ने	आसादित	१०.	प्राप्त करके
सहस्रम्	१. एक हजार	कर्म तन्त्रः,	९.	कर्म की अधीनता क
अप्सु, स्वपन्	३. जल में, सोये रहने के	लोकान्	१३.	सभी लोकों को
स्वया	६. स्वयं	अपीतान्	१२.	स्थित
उदीरितया	७. जाग्रत	ददृशे	१४.	देखा था
स्व, शक्त्या ।	८. अपनी, शक्ति के द्वारा	स्व, देहे ॥	११.	अपने, शरीर में

श्लोकार्थ—एक हजार चतुर्युगों तक जल में सोये रहने के पश्चात् परमात्मा ने काल नाम की स्वय अपनी शक्ति के द्वारा कर्म की अधीनता को प्राप्त करके अपने शरीर में स्थित सभ को देखा था ।

त्रयोदशः श्लोकः

तस्यार्थसूक्ष्माभिनिविष्टदृष्टेरन्तर्गतोऽर्थो रजसा तनीयान् ।
गुणेन कालानुगतेन विद्धः सूष्यंस्तदाभिद्यत नाभिदेशात् ॥१३॥

पदच्छेद—
तस्य अर्थ सूक्ष्म अभिनिविष्ट दृष्टेः, अन्तर्गतः अर्थः रजसा तनीयान् ।
गुणेन काल अनुगतेन विद्धः, सूष्यन् तदा अभिद्यत नाभि देशात् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस (परमात्मा) ने	**तनीयान् ।**	१२.	सूक्ष्म
अर्थ	३.	तत्त्वों में	**गुणेन**	१०.	गुण से
सूक्ष्म	२.	सूक्ष्म शरीरादि	**काल,अनुगतेन**	८.	काल से, सम्बन्धित
अभिनिविष्ट	५.	लगाई	**विद्धः,**	११.	युक्त
दृष्टेः,	४.	(अपनी) दृष्टि	**सूष्यन्**	१४.	उत्पन्न होकर
अन्तर्गतः	७.	(उनके) अन्दर स्थित	**तदा**	६.	उस समय
अर्थः	१३.	तत्त्व	**अभिद्यत**	१६.	बाहर निकला
रजसा	९.	रजो	**नाभि देशात् ॥**	१५.	नाभि स्थान से

श्लोकार्थ—उस परमात्मा ने सूक्ष्म शरीरादि तत्त्वों में अपनी दृष्टि लगाई। उस समय उनके अन्त काल से सम्बन्धित और रजोगुण से युक्त सूक्ष्म तत्त्व उत्पन्न होकर नाभि स्थान निकला।

चतुर्दशः श्लोकः

स पद्मकोशः सहसोदतिष्ठत् कालेन कर्मप्रतिबोधनेन ।
स्वरोचिषा तत्सलिलं विशालं विद्योतयन्नर्क इवात्मयोनिः ॥१४॥

पदच्छेद—
सः पद्म कोशः सहसा उदतिष्ठत्, कालेन कर्म प्रतिबोधनेन ।
स्वरोचिषा तत् सलिलम् विशालम्, विद्योतयन् अर्कः इव आत्मयोनिः ॥

शब्दार्थ—

सः	४.	वह	**स्वरोचिषा**	१०.	अपने प्रकाश से
पद्म कोशः	५.	कमल कोश	**तत्**	११.	उस
सहसा	६.	एकाएक	**सलिलम्**	१३	जलराशि को
उदतिष्ठत्,	७	ऊपर उठ गया (तदनन्तर)	**विशालम्,**	१२.	विशाल
कालेन	३.	काल के प्रभाव से	**विद्योतयन्**	१४.	प्रकाशित कर दिया
कर्म	१.	कर्म को	**अर्कः, इव**	९	सूर्य के, समान
प्रतिबोधनेन ।	२.	जगाने वाले	**आत्मयोनिः ॥**	८.	स्वयं उत्पन्न (कमल

श्लोकार्थ—कर्म को जगाने वाले काल के प्रभाव से वह कमल कोश एकाएक ऊपर उठ गया। स्वयम् उत्पन्न कमल ने सूर्य के समान अपने प्रकाश से उस विशाल जल राशि को कर दिया।

पञ्चदशः श्लोकः

तल्लोकपद्मं स उ एव विष्णुः प्रावीविशत्सर्वगुणावभासम् ।
तस्मिन् स्वयं वेदमयो विधाता स्वयम्भुवं यं स्म वदन्ति सोऽभूत् ॥१५॥

पदच्छेद—

तद् लोक पद्मम् सः उ एव विष्णुः, प्रावीविशत् सर्वगुण अवभासम् ।
तस्मिन् स्वयम् वेदमयः विधाता, स्वयम्भुवम् यम् स्म वदन्ति सः अभूत् ॥

शब्दार्थ—

तद्, लोक	३. लोक उत्पादक, उस		स्वयम्	१२. अपने आप
पद्मम्, सः उ	४. कमल में, स्वयम्		वेदमयः	९. वेद मूर्ति
एव	६. ही		विधाता,	११. ब्रह्मा जी
विष्णुः,	५. भगवान् विष्णु		स्वयम्भुवम्	१५ स्वयम्भू
प्रावीविशत्	७. प्रवेश कर गये (तदनन्तर)		यम्	१४. जिन्हें (हम)
सर्व गुण	१. सभी गुणों को		स्म वदन्ति	१६. कहते हैं
अवभासम् ।	२. प्रकाशित करने वाले		सः	१०. वे
तस्मिन्	८. उसमें से		अभूत् ॥	१३. प्रकट हुये

श्लोकार्थ—सभी गुणों को प्रकाशित करने वाले लोक उत्पादक उस कमल में स्वयं भगवा प्रवेश कर गये। तदनन्तर उसमें से वेदमूर्ति वे ब्रह्मा जी अपने आप प्रकट हुये, स्वयम्भू कहते हैं।

षोडशः श्लोकः

तस्यां स चाम्भोरुहकर्णिकायामवस्थितो लोकमपश्यमानः ।
परिक्रमन् व्योम्नि विवृत्तनेत्रश्चत्वारि लेभेऽनुदिशं मुखानि ॥१६॥

पदच्छेद—

तस्याम् सः च अम्भोरुह कर्णिकायाम्, अवस्थितः लोकम् अपश्यमानः ।
परिक्रमन् व्योम्नि विवृत्त नेत्रः, चत्वारि लेभे अनुदिशम् मुखानि ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	१. उस		परिक्रमन्	१३. (गर्दन) घुमायी
सः	८. उन ब्रह्मा जी ने		व्योम्नि	९. आकाश में
च	५ तथा		विवृत्त	११. फाड़ कर
अम्भोरुह	२. कमल की		नेत्रः	१०. आँख
कर्णिकायाम्,	३. गद्दी पर		चत्वारि	१४. (उस समय उन्हों
अवस्थितः	४. बैठे हुये		लेभे	१६. प्राप्त किया
लोकम्	६. लोक को		अनुदिशम्	१२. चारों दिशाओं में
अपश्यमानः ।	७. नहीं देखते हुये		मुखानि ॥	१५. मुखों को

श्लोकार्थ—उस कमल की गद्दी पर बैठे हुये तथा लोक को नहीं देखते हुये उन ब्रह्मा जी ने आँख फाड़ कर चारों दिशाओं में गर्दन घुमायी उस समय उन्होंने चार मुर किया।

सप्तदशः श्लोकः

तस्माद्युगान्तश्वसनावघूर्णजलोर्मिचक्रात्सलिलाद्विरूढम् ।
उपाश्रितः कञ्जमु लोकतत्त्वं नात्मानमद्धाविददादिदेवः ॥१७॥

पदच्छेद—
तस्मात् युगान्त श्वसन अवघूर्ण, जल ऊर्मि चक्रात् सलिलात् विरूढम् ।
उपाश्रितः कञ्जम् उ लोक तत्त्वम् न आत्मानम् अद्धा अविदत् आदिदेवः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	४.	(उठ रही थी) उस	कञ्जम् उ	८.	कमल में
युगान्त, श्वसन	१.	प्रलय काल की, वायु के	लोक तत्त्वम्	७.	ब्रह्माण्ड स्वरूप
अवघूर्ण, जल	२.	झकोरों से जल में	न	१३.	नहीं
ऊर्मि, चक्रात्	३.	उत्ताल तरंग, मालायें	आत्मानम्	११.	अपने विषय मे
सलिलात्	५.	जल से	अद्धा	१२.	कुछ भी
विरूढम् ।	६.	ऊपर उठे हुये	अविदत्	१४	समझ पा रहे थे
उपाश्रितः	९.	बैठे हुये	आदिदेवः ॥	१०.	ब्रह्मा जी (उस स

श्लोकार्थ—प्रलय काल की वायु के झकोरों से जल में उत्ताल तरंग मालायें उठ रही थी से ऊपर उठे हुये ब्राह्माण्ड स्वरूप कमल में बैठे हुये ब्रह्मा जी उस समय अपने वि भी नहीं समझ पा रहे थे ।

अष्टादशः श्लोकः

क एष योऽसावहमब्जपृष्ठ एतत्कुतो वाब्जमनन्यदप्सु ।
अस्ति ह्यधस्तादिह किञ्चनैतदधिष्ठितं यत्र सता नु भाव्यम् ॥१८॥

पदच्छेद—
कः एषः यः असौ अहम् अब्ज पृष्ठे, एतत् कुतः वा अब्जम् अनन्यत् अप्सु ।
अस्ति हि अधस्तात् इह किञ्चन एतत्, अधिष्ठितम् यत्र सता नु भाव्यम् ॥

शब्दार्थ—

कः	४.	कौन हूँ	अस्ति	१८.	है
एषः, यः	१.	यह, जो	हि	१६.	भली-भाँति
असौ, अहम्	३.	वह, मैं	अधस्तात्, इह	१०.	इसके, नीचे
अब्ज, पृष्ठे,	२.	कमल के, ऊपर (बैठा है)	किञ्चन	११.	कोई न कोई
एतत्	७.	यह	एतत्,	१५.	यह (कमल)
कुतः	९.	कहाँ से (उत्पन्न हुआ)	अधिष्ठितम्	१७.	स्थित
वा	५.	तथा	यत्र	१४.	जिस पर
अब्जम्	८.	कमल	सता, नु	१२.	सद्वस्तु, अवश्य
अनन्यत्, अप्सु ।	६.	जल में, आधार रहित	भाव्यम् ॥	१३.	होनी चाहिये

श्लोकार्थ—यह जो कमल के ऊपर बैठा है, वह मैं कौन हूँ ? तथा जल में आधार रहित यह से उत्पन्न हुआ ? इसके नीचे कोई न कोई सद्वस्तु अवश्य होनी चाहिये, जिस प भली-भाँति स्थित है ।

एकोनविंशः श्लोकः

स इत्थमुद्वीक्ष्य तदब्जनालनाडीभिरन्तर्जलमाविवेश ।
नार्वाग्गतस्तत्खरनालनालनाभिं विचिन्वंस्तदविन्दताजः ॥१९॥

सः इत्थम् उद्वीक्ष्य तद् अब्ज नाल, नाडीभिः अन्तर्जलम् आविवेश ।
न अर्वाक् गतः तत् खरनाल नाल, नाभिम् विचिन्वन् तद् अविन्दत् अजः ॥

२.	वे	अर्वाक्, गतः	११.	समीप में, जाकर (भी)
१.	इस प्रकार, विचार करके	तत्, खरनाल	८.	उस, कमल नाल के
४.	उस, कमल	नाल, नाभिम्	९.	आधार स्वरूप, नाभि
५.	नाल के, सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा	विचिन्वन्	१०.	खोजते-खोजते
६.	जल के अन्दर	तद्	१२.	उसे
७.	प्रवेश कर गये (तथा)	अविन्दत्	१४.	पा सके
१३	नहीं	अजः ॥	३.	ब्रह्मा जी

प्रकार विचार करके वे ब्रह्मा जी उस कमल नाल के सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा जल के
श कर गये तथा उस कमल नाल के आधार स्वरूप नाभि को खोजते-खोजते समी
कर भी उसे नहीं पा सके ।

विंशः श्लोकः

तमस्यपारे विदुरात्मसर्गं विचिन्वतोऽभूत्सुमहांस्त्रिणेमिः ।
यो देहभाजां भयमीरयाणः परिक्षिणोत्यायुरजस्य हेतिः ॥२०॥

तमसि अपारे विदुर आत्मसर्गम्, विचिन्वतः अभूत् सुमहान् त्रिणेमिः ॥
यः देहभाजाम् भयम् ईरयाणः, परिक्षिणोति आयुः अजस्य हेतिः ॥

३.	अन्धकार में	यः	९.	जो
२	घोर	देहभाजाम्	११.	शरीरधारी जीवों में
१.	हे विदुर जी !	भयम्,ईरयाणः,	१२.	भय, उत्पन्न करता हुअ
४	अपने उत्पत्ति स्थान को	परिक्षिणोति	१४.	(क्रमशः) नष्ट करता
५	खोजते-खोजते	आयुः	१३.	(उनकी) आयु को
८.	बीत गया	अजस्य	६.	ब्रह्मा जी का
:।७.	बहुत बड़ा, समय	हेतिः ॥	१०.	समय-चक्र

दुर जी ! घोर अन्धकार में अपने उत्पत्ति स्थान को खोजते-खोजते ब्रह्मा जी का
समय बीत गया, जो समय-चक्र शरीरधारी जीवों में भय उत्पन्न करता हुआ
यु को क्रमशः नष्ट करता है ।

एकविंश: श्लोक:

ततो निवृत्तोऽप्रतिलब्धकामः स्वधिष्ण्यमासाद्य पुनः स देवः ।
शनैर्जितश्वासनिवृत्तचित्तो न्यषीददारूढसमाधियोगः ।।२१।

पदच्छेद—

ततः निवृत्तः अप्रतिलब्ध कामः, स्वधिष्ण्यम् आसाद्य पुनः सः देवः ।
शनैः जित श्वास निवृत्त चित्तः, न्यषीदत् आरूढ समाधियोगः ।।

शब्दार्थ—

ततः, निवृत्तः	४.	वहाँ से, लौट आये	शनैः	८.	धीरे-धीरे
अप्रतिलब्ध	३.	विफल हो जाने के कारण	जित	१०.	रोक कर (तथा)
कामः,	२.	मनोरथ के	श्वास	९.	श्वास को
स्वधिष्ण्यम्	६.	अपने स्थान (कमल) में	निवृत्त, चित्तः,	११.	मन को, विषयों
आसाद्य	७.	आकर	न्यषीदत्	१४	स्थित हो गये
पुनः	५.	फिर	आरूढ	१२.	संकल्प पूर्वक
सः, देवः ।	१.	वे, ब्रह्मा जी	समाधियोगः ।।	१३.	समाधि में

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी मनोरथ के विफल हो जाने के कारण वहां से लौट गये । फिर अपने में आकर, धीरे-धीरे श्वास को रोक कर तथा मन को विषयों से हटा कर समाधि में स्थित हो गये ।

द्वाविंश: श्लोक:

कालेन सोऽजः पुरुषायुषाभिप्रवृत्तयोगेन विरूढबोधः ।
स्वयं तदन्तर्हृदयेऽवभातमपश्यतापश्यत यन्न पूर्वम् ।।२२।।

पदच्छेद—

कालेन सः अजः पुरुष आयुषा अभि, प्रवृत्त योगेन विरूढ बोधः ।
स्वयम् तद् अन्तर्हृदये अवभातम्, अपश्यत अपश्यत यद् न पूर्वम् ।।

शब्दार्थ—

कालेन	२.	काल तक	स्वयम्	१२.	अपने आप
सः, अजः	५.	उन, ब्रह्मा जी को	तद्	११.	उस आधार को
पुरुष, आयुषा	१.	मनुष्य की, पूर्ण आयु के बराबर	अन्तर्हृदये	१३.	हृदय देश में
अभि, प्रवृत्त	३.	किये गये	अवभातम्,	१४.	प्रकाशमान
योगेन	४.	समाधियोग के द्वारा	अपश्यत	१५.	देखा
विरूढ	७.	हुआ (तदन्तर उन्होंने)	अपश्यत	१०.	देखा था
बोधः ।	६.	ज्ञान	यद्, न	९.	जिस आधार को
			पूर्वम् ।।	८.	पहले

श्लोकार्थ—मनुष्य की पूर्ण आयु के बराबर काल तक किये गये समाधियोग के द्वारा उन ज्ञान हुआ । तदनन्तर उन्होंने पहले जिस आधार को नहीं देखा था, उस आध आप अपने हृदय देश में प्रकाशमान देखा ।

त्रयोविंशः श्लोकः

मृणालगौरायतशेषभोगपर्यङ्क एकं पुरुषं शयानम् ।
फणातपत्रायुतमूर्धरत्नद्युभिर्हतध्वान्तयुगान्ततोये ॥२३॥

मृणाल गौर आयत शेष भोग, पर्यङ्के एकम् पुरुषम् शयानम् ।
फण आतपत्र अयुत मूर्धरत्न, द्युभिः हत ध्वान्त युगान्त तोये ॥

३.	कमल नाल के समान	आतपत्र	९.	छत्र के समान
४.	सफेद (और), विशाल	अयुत	१०.	(उठे हुए) दस हजार
५	शेषनाग के, शरीर की	मूर्ध	१२.	फणों की
६.	शय्या पर, अकेले	रत्न, द्युभिः	१३.	मणियों के, प्रकाश से
८.	पुरुषोत्तम भगवान् को(देखा)	हत ध्वान्त	१४.	अन्धकार दूर हो रहा थ
७.	सोये हुये	युगान्त	१.	प्रलय काल के
११.	फणों के	तोये ॥	२.	जल में (ब्रह्मा जी ने)

य काल के जल में ब्रह्मा जी ने कमल के समान सफेद और विशाल शेष नाग के शरी
या पर अकेले सोये हुये पुरुषोत्तम भगवान् को देखा । उनके ऊपर छत्र के समान उठे
हजार फणों की मणियों के प्रकाश से अन्धकार दूर हो रहा था ।

चतुर्विंशः श्लोकः

प्रेक्षां क्षिपन्तं हरितोपलाद्रेः सन्ध्याभ्रनीवेरुरुरुक्ममूर्ध्नः ।
रत्नोदधारौषधिसौमनस्य वनस्रजो वेणुभुजाङ्घ्रिपाङ्घ्रेः ॥२४॥

प्रेक्षाम् क्षिपन्तम् हरित उपल अद्रेः, सन्ध्या अभ्र नीवेः उरु रुक्म मूर्ध्नः ।
रत्न उदधारा ओषधि सौमनस्य, वनस्रजः वेणु भुज अङ्घ्रिप अङ्घ्रेः ॥

१४	शोभा को	मूर्ध्नः ।	५.	(मस्तक का) मुकुट
१५	लज्जित कर रहे थे	रत्न, उदधारा	८.	मणि, जल प्रपात
१	श्याम वर्ण मरकत	ओषधि, सौमनस्य	९.	ओषधि (और), पुष्पो
२	मणि के, पर्वत की	वन स्रज,:	७.	वन माला
४	सायंकालीन, मेघ की	वेणु	११.	बांसों की (तथा)
३.	कमर का पीत पट्ट	भुज	१०.	भुज दण्ड
६.	उत्तम, सुवर्ण की	अङ्घ्रिप	१३.	वृक्षों की
		अङ्घ्रेः ॥	१२.	(उनके) चरण

ान् का श्याम वर्ण मरकत मणि के पर्वत की; कमर का पीत पट्ट सायंकालीन मेघ
क का मुकुट उत्तम सुवर्ण की; वनमाला मणि, जल प्रपात, औषधि और पुष्पों
दण्ड बांसों की तथा उनके चरण वृक्षों की शोभा को लज्जित कर रहे थे ।

पञ्चविंशः श्लोकः

आयामतो विस्तरतः स्वमान-देहेन लोकत्रयसंग्रहेण ।
विचित्रदिव्याभरणांशुकानां कृतश्रियापाश्रितवेषदेहम् ॥२५॥

पदच्छेद—

आयामतः विस्तरतः स्वमान, देहेन लोकत्रय संग्रहेण ।
विचित्र दिव्य आभरण अंशुकानाम्, कृत श्रिया अपाश्रित वेष देहम् ॥

शब्दार्थ—

आयामतः	३.	लम्बाई (और)	दिव्य	११.	अलौकिक
विस्तरतः	४.	चौड़ाई में	आभरण	१२.	आभूषण (तथा)
स्वमान,	२.	अपने परिमाण से	अंशुकानाम्,	१३.	वस्त्रों को भी
देहेन	१.	(भगवान् का) शरीर	कृतश्रिया	१४.	सुशोभित करने वाला था
लोकत्रय	५.	त्रलोकी को	अपाश्रित	९.	सुसज्जित था (तथापि वह)
संग्रहेण ।	६.	समेटे हुये था	वेष	८.	पीताम्बर से
विचित्र	१०.	अद्भुत (और)	देहम् ॥	७.	(यद्यपि वह) शरीर

श्लोकार्थ—भगवान् का शरीर अपने परिमाण से लम्बाई और चौड़ाई में त्रलोकी को समेटे हुये थ यद्यपि वह शरीर पीताम्बर से सुसज्जित था तथापि वह अद्भुत और अलौकिक आभू. तथा वस्त्रों को भी सुशोभित करने वाला था ।

षड्विंशः श्लोकः

पुंसां स्वकामाय विविक्तमार्गैरभ्यर्चतां कामदुघाङ्घ्रिपद्मम् ।
प्रदर्शयन्तं कृपया नखेन्दुमयूखभिन्नाङ्गुलिचारुपत्रम् ॥२६॥

पदच्छेद—

पुंसाम् स्व कामाय विविक्त मार्गैः, अभ्यर्चताम् कामदुघ अङ्घ्रि पद्मम् ।
प्रदर्शयन्तम् कृपया नख इन्दु, मयूख भिन्न अङ्गुलि चारु पत्रम् ॥

शब्दार्थ—

पुंसाम्	५.	भक्त जनों को (भगवान्)	प्रदर्शयन्तम्	९.	दर्शन दे रहे थे
स्व	१.	अपने	कृपया	८.	कृपा पूर्वक
कामाय	२.	मनोरथ की सिद्धि के लिये	नख, इन्दु,	१३.	नखरूप, चन्द्रमा की
विविक्त, मार्गैः,	३.	भिन्न-भिन्न, पद्धतियों से	मयूख,	१४.	किरणों से
अभ्यर्चताम्	४.	पूजा करने वाले	भिन्न	१५.	स्पष्ट दिखाई दे रहे थे
कामदुघ	६.	(अपने) कामना पूरक	अङ्गुलि	११.	अंगुलि
अङ्घ्रि, पद्मम् ।	७.	चरण, कमलों का	चारु	१०.	(जिनके) मनोहर
			पत्रम् ।	१२.	दल

श्लोकार्थ—अपने मनोरथ की सिद्धि के लिये भिन्न-भिन्न पद्धतियों से पूजा करने वाले भक्त जनों भगवान् अपने कामना-पूरक-चरण कमलों का कृपापूर्वक दर्शन दे रहे थे, जिनके मनो अंगुलिदल नखरूप चन्द्रमा की किरणों से स्पष्ट दिखाई दे रहे थे ।

सप्तविंशः श्लोकः

मुखेन लोकार्तिहरस्मितेन परिस्फुरत्कुण्डलमण्डितेन ।
शोणायितेनाधरबिम्बभासा प्रत्यर्हयन्तं सुनसेन सुभ्र्वा ॥२७॥

मुखेन लोक आर्तिहर स्मितेन, परिस्फुरत् कुण्डल मण्डितेन ।
शोणायितेन अधर बिम्ब भासा, प्रत्यर्हयन्तम् सुनसेन सुभ्र्वा ॥

१.	(उस समय अपने) मुख से	**शोणायितेन**	८.	लाल
२	संसार के	**अधर बिम्ब**	९.	ओठों की
३.	कष्ट को दूर करने वाली	**भासा,**	१०.	चमक से
४.	मुसकान से	**प्रत्यर्हयन्तम्**	१३.	सम्मान करते हुये (देखा)
५.	चमकदार	**सुनसेन**	११.	सुन्दर नासिका से (और)
६.	कुण्डलों की	**सुभ्र्वा ॥**	१२.	सुन्दर भौंहों से (भक्तों का)
७	शोभा से			

समय अपने मुख से संसार के कष्ट को दूर करने वाली मुस्कान से, चमकदार कुण्डल शोभा से, लाल ओठों की चमक से, सुन्दर नासिक से और सुन्दर भौंहों से भक्तो ान करते हुये भगवान् को मैंने देखा ।

अष्टाविंशः श्लोकः

कदम्बकिञ्जल्कपिशङ्गवाससा स्वलंकृतं मेखलया नितम्बे ।
हारेण चानन्तधनेन वत्स श्रीवत्सवक्षःस्थलवल्लभेन ॥२८॥

कदम्ब किञ्जल्क पिशङ्ग वाससा, सु अलंकृतम् मेखलया नितम्बे ।
हारेण च अनन्त धनेन वत्स, श्रीवत्स वक्षःस्थल वल्लभेन ॥

३.	कदम्ब पुष्प के	**हारेण**	११.	हार
४	केसर के समान	**च**	१२.	और
५.	पीले	**अनन्तधनेन**	१०.	अमूल्य
६.	वस्त्र से (और)	**वत्स,**	१.	हे तात ! (भगवान्)
८.	अत्यन्त सुशोभित थे	**श्रीवत्स**	१३.	श्रीवत्स की सुनहरी रेखा
७.	(सोने की) करधनी से	**वक्षःस्थल**	९.	(उनकी) छाती में
२.	कटिभाग में	**वल्लभेन ॥**	१४.	प्यारी शोभा हो रही थी

ात ! भगवान् कटि भाग में कदम्ब पुष्प के केसर के समान पीले वस्त्र से और सोने धनी से अत्यन्त सुशोभित थे । उनकी छाती में अमूल्य हार और श्रीवत्स की सुनह की प्यारी शोभा हो रही थी ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

परार्ध्यकेयूरमणिप्रवेकपर्यस्तदोर्दण्डसहस्रशाखम् ।
अव्यक्तमूलं भुवनाङ्घ्रिपेन्द्रमहीन्द्रभोगैरधिवीतवल्शम् ॥२९॥

पदच्छेद—
परार्ध्य केयूर मणि प्रवेक, पर्यस्त दोर्दण्ड सहस्र शाखम् ।
अव्यक्त मूलम् भुवन अङ्घ्रिपेन्द्र, महीन्द्र भोगैः अधिवीत वल्शम् ॥

शब्दार्थ—

परार्ध्य	६.	बहुमूल्य	अव्यक्त, मूलम्	२.	अज्ञात, मूल वाले
केयूर	७.	बाजूबन्द (और)	भुवन	३.	संसार रूपी
मणि	९.	मणियों से	अङ्घ्रिपेन्द्र,	४.	चन्दन वृक्ष के समा
प्रवेक,	८.	उत्तम	महीन्द्र	१२.	नागराज के
पर्यस्त	१०.	विभूषित थे	भोगैः	१३.	फण
दोर्दण्ड	५.	(भगवान् के) भुजदण्ड	अधिवीत	१४.	लिपटे हुये थे
सहस्र, शाखम् ।	१.	हजारों, शाखाओं वाले (तथा)	वल्शम् ॥	११.	उनके कन्धों पर

श्लोकार्थ—हजारों शाखाओं वाले तथा अज्ञात मूल वाले संसार रूपी चन्दन वृक्ष के समान भ
भुजदण्ड बहुमूल्य बाजूबन्द और उत्तम मणियों से विभूषित थे। उनके कन्धों पर
के फण लिपटे हुये थे।

त्रिंशः श्लोकः

चराचरौको भगवन्महीध्रमहीन्द्रबन्धुं सलिलोपगूढम् ।
किरीटसाहस्रहिरण्यशृङ्गमाविर्भवत्कौस्तुभरत्नगर्भम् ॥३०॥

पदच्छेद—
चराचर ओकः भगवत् महीध्र, महीन्द्र बन्धुम् सलिल उपगूढम् ।
किरीट साहस्र हिरण्य शृङ्गम्, आविर्भवत् कौस्तुभरत्न गर्भम् ॥

शब्दार्थ—

चराचर	१.	जड़-चेतन रूप संसार के	किरीट	९.	मुकुट (मानो)
ओकः	२.	आश्रय (तथा)	साहस्र	८.	(शेषनाग के) हजा
भगवत्	४.	(वे) भगवान्	हिरण्य	१०.	उसके सुवर्ण
महीध्र,	७.	पर्वत के समान (लग रहे थे)	शृङ्गम्,	११.	शिखर हों (और)
महीन्द्र, बन्धुम्	३.	शेषनाग के, बन्धु	आविर्भवत्	१४.	निकला हुआ (रत्न
सलिल	५.	जल से	कौस्तुभरत्न	१२.	कौस्तुभ मणि
उपगूढम् ।	६.	घिरे हुये	गर्भम् ॥	१३.	(उसके) अन्दर से

श्लोकार्थ—जड़ चेतन रूप संसार के आश्रय तथा शेषनाग के बन्धु वे भगवान् जल से घिरे
राज के समान लग रहे थे। शेषनाग के हजारों फणों के मुकुट मानो उसके सुव
हों और कौस्तुभ मणि उसके अन्दर से निकला हुआ रत्न हो।

एकत्रिंश: श्लोक:

निवीतमाम्नायमधुव्रतश्रिया स्वकीर्तिमय्या वनमालया हरिम् ।
सूर्येन्दुवाय्वग्न्यगमं त्रिधामभिः परिक्रमत्प्राधनिकैर्दुरासदम् ।।३१।।

पदच्छेद—

निवीतम् आम्नाय मधुव्रत श्रिया, स्वकीर्तिमय्या वनमालया हरिम् ।
सूर्य इन्दु वायु अग्नि अगमम् त्रिधामभिः, परिक्रमत् प्राधनिकैः दुरासदम् ।।

शब्दार्थ—

निवीतम्	७.	सुशोभित थे	सूर्य, इन्दु	८.	(उनके समीप) सूर्य, चन्द्रमा
आम्नाय	२.	वेदरूपी	वायु, अग्नि	९.	वायु, (और), अग्नि भी
मधुव्रत	३.	भौंरों की	अगमम्	१०.	नहीं पहुँच सकते थे
श्रिया,	४.	गुंजार वाली	त्रिधामभिः,	११.	(वे) त्रिलोकी में
स्वकीर्तिमय्या	५.	अपनी कीर्तिमयी	परिक्रमत्	१२.	विचरण करने वाले
वनमालया	६.	वनमाला से	प्राधनिकैः	१३.	चक्र सुदर्शन से भी
हरिम् ।	१.	वे भगवान्	दुरासदम् ।।	१४.	दुर्लभ थे

श्लोकार्थ—वे भगवान् वेद रूपी भँवरों की गुंजार वाली अपनी कीर्तिमयी वनमाला से सुशोभित थे उनके समीप सूर्य, चन्द्रमा, वायु और अग्नि भी नहीं पहुँच सकते थे । वे त्रिलोकी में विचरण करने वाले चक्र सुदर्शन से भी दुर्लभ थे ।

द्वात्रिंश: श्लोक:

तर्ह्येव तन्नाभिसरः सरोजमात्मानमम्भः श्वसनं वियच्च ।
ददर्श देवो जगतो विधाता नातः परं लोकविसर्गदृष्टिः ।।३२।।

पदच्छेद—

तर्हि एव तत् नाभिसरः सरोजम्, आत्मानम् अम्भः श्वसनम् वियत् च ।
ददर्श देवः जगतः विधाता, न अतः परम् लोक विसर्ग दृष्टिः ।।

शब्दार्थ—

तर्हि एव	५.	उस समय	ददर्श	१३.	देखा
तत्	६.	उन (भगवान्) के	देवः	४.	ब्रह्मा जी ने
नाभिसरः	७.	नाभिरूपी सरोवर के	जगतः, विधाता	३.	लोक के रचयिता
सरोजम्,	८	कमल को	न	१५.	नहीं (दिखाई दिया)
आत्मानम्	९.	अपने को	अतः, परम्	१४.	(उन्हें)इसके, सिवाय और कु
अम्भः, श्वसनम्	१०.	जल को, वायु को	लोक, विसर्ग	१.	संसार की, रचना करने की
वियत्	१२.	आकाश को	दृष्टिः ।।	२.	इच्छा वाले
च ।	११.	और			

श्लोकार्थ—संसार की रचना करने की इच्छा वाले, लोक के रचयिता ब्रह्मा जी ने उस समय उन भगवा के नाभिरूपी सरोवर के कमल को, अपने को, जल को, वायु को और आकाश को देखा उन्हें इसके सिवाय और कुछ नहीं दिखाई दिया ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

स कर्मबीजं रजसोपरक्तः प्रजाः सिसृक्षन्नियदेव दृष्ट्वा ।
अस्तौद्विसर्गाभिमुखस्तमीड्यमव्यक्तवर्त्मन्यभिवेशितात्मा ।।३३।।

पदच्छेद—

सः कर्म बीजम् रजसा उपरक्तः, प्रजाः सिसृक्षन् इयत् एव दृष्ट्वा ।
अस्तौत् विसर्ग अभिमुखः तम् ईड्यम्, अव्यक्त वर्त्मनि अभिवेशित आत्मा ।।

शब्दार्थ—

सः	५.	वे ब्रह्मा जी	**अस्तौत्**	१८.	स्तुति करने लगे
कर्मबीजम्	६.	सृष्टि के कारण रूप में	**विसर्ग**	१०.	सृष्टि करने की
रजसा	१.	रजोगुण से	**अभिमुखः**	११.	इच्छा से
उपरक्तः,	२.	व्याप्त (अतएव)	**तम्**	१६.	उन
प्रजाः	३.	प्रजाओं की	**ईड्यम्,**	१७.	परम पूजनीय भगवान् की
सिसृक्षन्	४.	सृष्टि करने की इच्छा वाले	**अव्यक्त**	१२.	श्रीहरि के अज्ञात
इयत्	७.	इन्हीं पाँच	**वर्त्मनि**	१३.	स्वरूप में
एव	८.	तत्त्वों को	**अभिवेशित**	१५.	लगा कर
दृष्ट्वा ।	९.	देखकर	**आत्मा ।।**	१४.	चित्त को

श्लोकार्थ—रजोगुण से व्याप्त अतएव प्रजाओं की सृष्टि करने की इच्छा वाले वे ब्रह्मा जी सृष्टि के कारण रूप में कमल, जल, आकाश, वायु और अपना शरीर इन्हीं पाँच तत्त्वों को देखकर सृष्टि करने की इच्छा से श्रीहरि के अज्ञात स्वरूप में चित्त को लगा कर उन परम पूजनीय भगवान् की स्तुति करने लगे ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे अष्टमः अध्यायः ।।८।।

तृतीयः स्कन्धः

अथ नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—ज्ञातोऽसि मेऽद्य सुचिरान्ननु देहभाजां, न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् ।
नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि तन्न शुद्धं, मायागुणव्यतिकराद्यदुरुर्विभासि ॥१॥

पदच्छेद—ज्ञातः असि मे अद्य सुचिरात् ननु देहभाजाम्, न ज्ञायते भगवतः गतिः इति अवद्यम् ।
न अन्यत् त्वत् अस्ति भगवन् अपि तद् न शुद्धम्, माया गुण व्यतिकरात् यद् उरुः विभासि ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातः असि	४.	ज्ञात हुए हैं	अन्यत्, त्वत्	९.	भिन्न कोई वस्तु, आपसे
मे	३.	मुझे	अस्ति	११.	है
अद्य सुचिरात्	२	आज बहुत समय के बाद	भगवन्	१.	हे भगवान् ! (आप)
ननु	१७.	ही	अपि, तद्	१२.	तथा जो है, वह
देह भाजाम्,	६.	शरीर धारियों को	न, शुद्धम्,	१३.	नहीं, है सत्य
न ज्ञायते	८.	नहीं ज्ञान होता है	माया गुण	१५.	माया के सत्त्वादि गुणों के
भगवतः गतिः	७.	आपके स्वरूप का	व्यतकरात्	१६.	सम्बन्ध से (आप)
इति अवद्यम्।	५.	यह दुर्भाग्य है (कि)	यद्	१४.	क्योंकि
न	१०.	सत् नहीं	उरुः विभासि॥	१८.	उनमें दिखाई देते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप आज बहुत समय के बाद मुझे ज्ञात हुए हैं । यह दुर्भाग्य है कि शरीर धारियों को आपके स्वरूप का ज्ञान नहीं होता । आपके अतिरिक्त कोई वस्तु सत् नहीं तथा जो है वह सत्य नहीं है, क्योंकि माया के सत्त्वादि गुणों के सम्बन्ध से आप ही उन वस्रूपों में दिखाई देते हैं ।

द्वितीयः श्लोकः

रूपं यदेतदवबोधरसोदयेन, शश्वन्निवृत्ततमसः सदनुग्रहाय ।
आदौ गृहीतमवतारशतैकबीजं, यन्नाभिपद्मभवनादहमाविरासम् ॥२॥

पदच्छेद—रूपम् यद् एतद् अवबोध रस उदयेन, शश्वत् निवृत्त तमसः सद् अनुग्रहाय ।
आदौ गृहीतम् अवतार शत एक बीजम्, यत् नाभि पद्म भवनात् अहम् आविरासम् ॥

शब्दार्थ—

रूपम्	२.	स्वरूप है (वह)	आदौ गृहीतम्	९.	प्रारम्भ में धारण किया है
यद् एतद्	१.	(आपका) जो यह	अवतार	११.	अवतारों का
अवबोध रस	३.	ज्ञान शक्ति के	शत	१०.	(यह स्वरूप) सैकड़ों
उदयेन	४.	प्रकाशित रहने के कारण	एक बीजम्	१२.	प्रधान कारण (है)
शश्वत्	५.	सदा	यद् नाभिपद्म	१३.	जिसके नाभिकमल के
निवृत्त	७.	दूर रहता है	भवनात्	१४.	मध्य से
तमसः	६.	अज्ञान से	अहम्	१५	मैं
सद् अनुग्रहाय।	८.	सन्तों पर कृपा करने के लिए	आविरासम् ॥	१६.	प्रकट हुआ हूँ

श्लोकार्थ—आपका जो यह स्वरूप है, वह ज्ञान शक्ति के प्रकाशित रहने के कारण सदा अज्ञान से दूर रहता है । आपने सन्तों पर कृपा करने के लिए सृष्टि के प्रारम्भ में इसे धारण किया है । यह स्वरूप सैकड़ों अवतारों का प्रधान कारण है, जिसके नाभि कमल के मध्य से मैं प्रकट हुआ हूँ ।

तृतीयः श्लोकः

नातः परं परम यद्भवतः स्वरूप—मानन्दमात्रमविकल्पमविद्धवर्चः ।
पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन्, भूतेन्द्रियात्मकमदस्त उपाश्रितोऽस्मि।।३।।

पदच्छेद—न अतः परम् परम यद् भवतः स्वरूपम्, आनन्द मात्रम् अविकल्पम् अविद्ध वर्चः ।
पश्यामि विश्वसृजम् एकम् अविश्वम् आत्मन्, भूत इन्द्रिय आत्मकम् अदः ते उपाश्रितः अस्मि ।।

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं (मानता हूँ)	विश्वसृजम्	१०.	विश्वकी रचना करने वाले
अतः, परम्	७.	इससे, भिन्न	एकम्	१४.	अद्वितीय रूप को
परम	१.	हे परमात्मन् !	अविश्वम्	१३.	(इस) अलौकिक (और)
यद्, भवतः	२.	जो, आपका	आत्मन्	९.	हे भगवन् !
स्वरूपम्,	६.	स्वरूप है (उसे मैं)	भूत	११.	पञ्च महाभूतों एवं
अनन्द, मात्रम्	३.	आनन्द, घन	इन्द्रिय आत्मकम्	१२.	इन्द्रियों के आश्रय
अविकल्पम्	४.	भेद रहित (तथा)	अदः	१७.	इस रूप की
अविद्ध, वर्चः।	५.	अखण्ड, तेजोमय	ते	१६	आपके
पश्यामि	१५.	देख रहा हूँ (अतः मैं)	उपाश्रितः, अस्मि ।।	१८.	शरण में, हूँ

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! जो आपका आनन्द-घन, भेद-रहित तथा अखण्ड तेजोमय स्वरूप है, उसे मैं इससे भिन्न नहीं मानता हूँ। हे भगवन् ! विश्व की रचना करने वाले पञ्च महाभूतों एवं इन्द्रियों के आश्रय इस अलौकिक और अद्वितीय रूप को देख रहा हूँ। अतः मैं आपके इस रूप की शरण में हूँ।

चतुर्थः श्लोकः

तद्वा इदं भुवनमङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नो दर्शितं त उपासकानाम् ।
तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं, योऽनादृतो नरकभाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ।।४।।

पदच्छेद—तद् वा इदम् भुवन मङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नः दर्शितम् ते उपासकानाम् ।
तस्मै नमः भवगते अनुविधेम तुभ्यम्, यः अनादृतः नरक भाग्भिः असत् प्रसङ्गैः ।।

शब्दार्थ—

तद् वा, इदम्	८	वह रूप, अब	तस्मै	१५.	उस
भुवन मङ्गल	१.	लोक कल्याणकारिन् !	नमः	१७.	प्रणाम
मङ्गलाय	५.	कल्याण के लिए	भगवते	१६.	स्वरूप को
ध्याने	७.	समाधि में	अनुविधेम	१८.	निवेदन करते हैं
स्म	६.	ही	तुभ्यम्	१४.	(हम) आपके
नः	३.	हम	यः	१२.	जिस रूप का
दर्शितम्	९.	दिखलाया (है)	अनादृतः	१३.	अनादर करते हैं
ते	२.	आपने	नरकः भाग्भिः	११.	पाप के, भागी (जीव)
उपासकानाम् ।	४.	भक्तों के	असत्प्रसङ्गैः।।	१०.	विषयों में आसक्त (अतः)

श्लोकार्थ—लोक कल्याणकारी हे भगवन् ! आपने हम भक्तों के कल्याण के लिए ही समाधि में अब वह रूप दिखलाया है। विषयों में आसक्त, अतः पाप के भागी जीव जिस रूप का अनादर करते हैं हम आपके उस स्वरूप को प्रणाम निवेदन करते हैं।

पञ्चमः श्लोकः

ये तु त्वदीयचरणाम्बुजकोशगन्धं, जिघ्रन्ति कर्णविवरैः श्रुतिवातनीतम् ।
भक्त्या गृहीतचरणः परया च तेषां, नापैषि नाथ हृदयाम्बुरुहात्स्वपुंसाम् ॥५॥

पदच्छेद—ये तु त्वदीय चरण अम्बुज कोश गन्धम्, जिघ्रन्ति कर्ण विवरैः श्रुति वात नीतम् ।
भक्त्या गृहीत चरणः परया च तेषाम्, न अपैषि नाथ हृदय अम्बुरुहात् स्व पुंसाम् ॥

शब्दार्थ—

ये तु	१.	जो लोग	गृहीत	१३	बाँध रक्खे हैं
त्वदीय, चरण	४.	आपके, चरण	चरणः	१२.	(आपके) चरणों को
अम्बुज, कोश	५.	कमल, कोश की	परया	१०	परा
गन्धम्,	६.	सुगन्ध रूप कथा को	च	९.	और
जिघ्रन्ति	८.	ग्रहण करते हैं	तेषाम्,	१५.	उन
कर्ण, विवरैः	७.	कानों के, छिद्रों से	न, अपैषि	१८.	नहीं, दूर होते हैं
श्रुति, वात	२.	वेद रूप, वायु के द्वारा	नाथ	१४.	हे स्वामिन् ! आप
नीतम् ।	३.	लाई गयी	हृदय, अम्बुरुहात्	१७.	हृदय कमल से
भक्त्या	११.	भक्ति के बन्धन से	स्व, पुंसाम् ॥	१६.	अपने, भक्त जनों के

श्लोकार्थ—जो लोग वेद रूप वायु के द्वारा लाई गयी आपके चरण-कमल कोश की सुगन्ध रूप क
को कानों के छिद्रों से ग्रहण करते हैं और परा-भक्ति के बन्धन से आपके चरणों को ब
रक्खे हैं; हे स्वामिन् ! आप अपने उन भक्त जनों के हृदय कमल से दूर नहीं होते हैं।

षष्ठः श्लोकः

तावद्भयं द्रविणगेहसुहृन्निमित्तं, शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः ।
तावन्ममेत्यसदवग्रह आर्तिमूलं, यावन्न तेऽङ्घ्रिमभयं प्रवृणीत लोकः ॥६॥

पदच्छेद—तावत् भयम् द्रविण गेह सुहृद् निमित्तम्, शोकः स्पृहा परिभवः विपुलः च लोभः
तावत् मम इति असत् अवग्रहः आर्तिमूलम्, यावत् न ते अङ्घ्रिम् अभयम् प्रवृणीत लोकः

शब्दार्थ—

तावत्	८.	तभी तक (उसे)	मम, इति	१९.	मैं मेरा, इस प्रकार का
भयम्	११	डर	असत् अव ग्रहः	२०.	दुष्ट, विचार (रहता है)
द्रविण, गेह	९.	धन, घर और	आर्ति, मूलम्,	१८.	दुःख का, कारण
सुहृद्,निमित्तम्	१०.	बान्धवों के, कारण होने वाला	यावत्	१.	जब तक
शोकः, स्पृहा	१२.	शोक, लालसा	न	६.	नहीं
परिभवः	१३.	अनादर	ते,	४.	आपके
विपुलः	१५.	बहुत बड़ी	अङ्घ्रिम्	५	चरणों की
च	१४.	और	अभयम्	३.	अभय देने वाले
लोभः ।	१६.	लालच (बनी रहती है)	प्रवृणीत	७.	शरण लेता है
तावत्	१७	(तथा) तभी तक	लोकः ॥	२.	मनुष्य

श्लोकार्थ—जब तक मनुष्य अभय देने वाले आपके चरणों की शरण नहीं लेता है, तभी तक उसे धन,
और बान्धवों के कारण होने वाला डर, शोक, लालसा, अनादर और बहुत बड़ी लालच
रहती है तथा तभी तक दुःख का कारण मैं-मेरा इस प्रकार का दुष्ट विचार बना रहता

सप्तमः श्लोकः

दैवेन ते हतधियो भवतः प्रसङ्गात्, सर्वाशुभोपशमनाद्विमुखेन्द्रिया ये ।
कुर्वन्ति कामसुखलेशलवाय दीना, लोभाभिभूतमनसोऽकुशलानि शश्वत् ॥७॥

पदच्छेद—दैवेन ते हत धियः भवतः प्रसङ्गात्, सर्व अशुभ उपशमनात् विमुख इन्द्रियाः ये ।
कुर्वन्ति काम सुख लेश लवाय दीनाः, लोभ अभिभूत मनसः अकुशलानि शश्वत् ॥

शब्दार्थ—

दैवेन, ते	८.	भाग्य ने उनकी	ये ।	१	जिन लोगों का
हत	१०.	मार दी है	कुर्वन्ति	१८.	करते रहते हैं
धियः	९.	मति	काम, सुख	१५	काम, सुख के लिए
भवतः	५.	आपकी	लेश लवाय	१४.	तनिक मात्र
प्रसङ्गात्,	६.	भक्ति से	दीनाः,	११.	बेचारे (वे लोग)
सर्व, अशुभ	३.	सब प्रकार के, अमंगलों को	लोभ, अभिभूत	१३.	लोभ से ग्रस्त होकर
उपशमनात्	४.	शान्त करने वाली	मनसः	१२.	मन में
विमुख	७	दूर रहता है	अकुशलानि	१७	पापों को
इन्द्रियाः	२.	अन्तःकरण	शश्वत् ॥	१६.	सदा

श्लोकार्थ—जिन लोगों का अन्तःकरण सब प्रकार के अमंगलों को शान्त करने वाली आपकी भक्ति
रहता है, भाग्य ने उनकी मति मार दी है। बेचारे वे लोग मन में लोभ से ग्रस्त होकर
मात्र काम सुख के लिए सदा पापों को करते रहते हैं।

अष्टमः श्लोकः

क्षुत्तृट्त्रिधातुभिरिमा मुहुरर्द्यमानाः, शीतोष्णवातवर्षैरितरेतराच्च ।
कामाग्निनाच्युतरुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतो मन उरुक्रम सीदते मे ॥८॥

पदच्छेद—क्षुत् तृट् त्रिधातुभिः इमाः मुहुः अर्द्यमानाः, शीत उष्ण वात वर्षैः इतरेतरात् च ।
काम अग्निना अच्युत रुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतः मनः उरुक्रम सीदते मे ।

शब्दार्थ—

क्षुत्, तृट्	४.	भूख, प्यास	अच्युत	१.	हे भगवन् !
त्रिधातुभिः	५.	वात, पित्त और कफ से	रुषा	१३.	क्रोध से
इमाः	३.	इस प्रजा को	च	११.	और
मुहुः,अर्द्यमानाः	१४.	बार-बार, पीड़ित होते हुए	सुदुर्भरेण	१२.	असहनीय
शीत, उष्ण	६.	सर्दी, गर्मी	सम्पश्यतः	१५.	देखकर
वात, वर्षैः	७.	हवा और वर्षा से	मनः	१७.	मन
इतरेतरात्	८.	परस्पर एक दूसरे से	उरुक्रम	२.	हे त्रिविक्रम !
च ।	९.	तथा	सीदते	१८.	बड़ा खिन्न होता है
काम अग्निना	१०.	कामनाओं की आग से	मे ॥	१६.	मेरा

श्लोकार्थ—हे भगवन् त्रिविक्रम ! इस प्रजा को भूख, प्यास, वात, पित्त और कफ से; सर्दी, ग
और वर्षा से; परस्पर एक दूसरे से तथा कामनाओं की आग से और असहनीय क्रोध
बार पीडित होते हुए देखकर मेरा मन बड़ा खिन्न होता है।

तावन्न संसृतिरसौ प्रतिसंक्रमेत, व्यर्थापि दुःखनिवहं वहती क्रियार्था ।।९।।

पदच्छेद— यावत् पृथक्त्वम् इदम् आत्मनः इन्द्रिय अर्थ माया बलम् भगवतः जनः ईश पश्येत् ।
तावत् न संसृतिः असौ प्रतिसंक्रमेत व्यर्था अपि दुःख निवहम् वहती क्रिया अर्था ।।

शब्दार्थ—

यावत्	३.	जब तक	तावत्	११	तब तक (उसके)
पृथक्त्वम्	९.	भेद को	न	१३.	नहीं
इदम्	८.	इस	संसृतिः	१२.	जन्म-मरण का चक्र
आत्मनः	७.	अपने	असौ	१६.	यह (संसार)
इन्द्रिय, अर्थ,	४.	इन्द्रिय और विषयों के	प्रतिसंक्रमेत,	१४.	समाप्त होता
माया, बलम्	५.	जाल में, फँसकर	व्यर्था	१७.	मिथ्या है (फिर भी)
भगवतः	६.	भगवान् से	अपि	१५.	यद्यपि
जनः	२.	मनुष्य	दुःख, निवहम्	१९.	दुःखों के समूह को
ईश	१.	हे स्वामिन् !	वहती	२०.	उत्पन्न करता रहता है
पश्येत् ।	१०.	स्थापित किये रहता है	क्रिया, अर्था ।।	१८.	कर्म के फल भोग के लिए

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! मनुष्य जब तक इन्द्रिय और विषयों के जाल में फँसकर भगवान् से अ
इस भेद को स्थापित किये रहता है, तब तक उसके जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होत
यद्यपि यह संसार मिथ्या है, फिर भी कर्म फल के भोग के लिए यह दुःखों के समूह को उत्प
करता रहता है ।

दशमः श्लोकः

अह्न्यापृतार्तकरणा निशि निःशयाना, नानामनोरथधिया क्षणभग्ननिद्राः ।
दैवाहतार्थरचना ऋषयोऽपि देव, युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति ।।१०।।

पदच्छेद—अह्नि आपृत आर्त करणाः निशि निःशयाना, नाना मनोरथ धिया क्षण भग्न निद्राः ।
दैव आहत अर्थ रचनाः ऋषयः अपि देव, युष्मत् प्रसङ्ग विमुखाः इह संसरन्ति ।।

शब्दार्थ—

अह्नि	७.	(वे लोग) दिन के	दैव	१६.	भाग्य से
आपृत	८.	कामों से	आहत	१८.	असफल हो जाते हैं
आर्त, करणाः	९	अशान्त, चित्त (और)	अर्थ, रचनाः	१७.	अर्थ सिद्धि के सारे उपाय
निशि	१०.	रात में	ऋषयः, अपि	२.	ऋषि लोग, भी
निःशयानाः,	११.	अचेत सोये रहते हैं	देव	१.	हे भगवन् !
नाना, मनोरथ	१३.	अनेक, कामनाओं से	युष्मत्, प्रसंग	३.	आपके, कथा प्रसंग से
धिया	१२.	(उस समय भी) मन में	विमुखाः	४.	दूर रहने के कारण
क्षण, भग्न	१५.	पल-पल में टूटती रहती है	इह	५.	इस संसार में
निद्राः ।	१४.	(उनकी) नींद	संसरन्ति ।।	६.	भटकते रहते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सामान्य जन क्या, ऋषि लोग भी आपके कथा प्रसंग से दूर रहने के कारण
संसार में भटकते रहते हैं। वे लोग दिन के कामों से अशान्त-चित्त और रात में अ
होकर सोये रहते हैं। उस समय भी मन में अनेक कामनाओं से उनकी नींद पल-पल
टूटती रहती है और भाग्य से अर्थसिद्धि के सारे उपाय असफल हो जाते हैं।

यद्धिया त उरुगाय विभावयन्ति, तत्तद्वपु प्रणयसे सदनुग्रहाय ।।११

पदच्छद त्वम भाव योग परिभावित हृत सरोजे आस्से श्रुत ईक्षित पथ ननु नाथ पुसाम ।
यद यद धिया ते उरुगाय विभावयन्ति तद तद वपु प्रणयसे सत अनुग्रहाय ।।

शब्दार्थ—

त्वम्, भाव योग	४.	आप, भक्ति योग से	यद् यद्	१२.	जिस-जिस
परिभावित	५.	निर्मल	धिया	१३.	भावना से
हृत्, सरोजे,	७.	हृदय, कमल में	ते	११.	वे (भक्त जन)
आस्से	६.	विराजमान रहते है	उरुगाय	१०.	अनन्त कीर्ति हे भगवन् !
श्रुत	२.	वेदादि शास्त्रों से	विभावयन्ति	१४.	(आपका) ध्यान करते हैं
ईक्षित, पथः	३.	ज्ञात, स्वरूप वाले	तद् तद्, वपुः	१७.	उस-उस, रूप को
ननु	८.	अवश्य	प्रणयसे	१८.	धारण करते हैं
नाथ	१.	हे स्वामिन् !	सत्	१५.	सन्तों पर
पुंसाम् ।	६.	भक्तों के	अनुग्रहाय ।।	१६	कृपा करने के लिए (आप)

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! वेदादि शास्त्रों से ज्ञात स्वरूप वाले आप भक्ति योग से निर्मल भक्तों के हृदय-कमल में अवश्य विराजमान रहते हैं । अनन्तकीर्ति हे भगवन् ! वे भक्त जन जिस-जिस भावन से आपका ध्यान करते हैं, सन्तों पर कृपा करने के लिए आप उस-उस रूप को धारण करते है

द्वादशः श्लोकः

नातिप्रसीदति तथोपचितोपचारै--राराधितः सुरगणैर्हृदि बद्धकामैः ।
यत्सर्वभूतदयया सदलभ्ययैको, नानाजनेष्ववहितः सुहृदन्तरात्मा ।।१२।।

पदच्छेद—न अति प्रसीदति तथा उपचित उपचारैः, आराधितः सुर गणैः हृदि बद्ध कामैः ।
यत् सर्व भूत दयया असत् अलभ्यया एकः, नाना जनेषु अवहितः सुहृद् अन्तरात्मा ।।

शब्दार्थ—

न	८.	नही	यत्	१०.	जितना
अति प्रसीदति	६.	प्रसन्न होते हैं	सर्वभूत	१२.	सभी प्राणियों पर
तथा	७.	उतना	दयया	१३.	दया करने से (प्रसन्न होते है)
उपचित	४.	अर्पित विविध	असत्, अलभ्यया	११.	दुर्जनों को, दुर्लभ
उपचारैः,	५.	पूजा सामग्रियों से	एकः,	१५.	एकमात्र
आराधितः	६.	पूजित होने पर (भी आप)	नाना, जनेषु	१४.	सभी जीवों के
सुर गणैः	३.	देवताओं के द्वारा	अवहितः	१७.	(उनमें) स्थित
हृदि	१.	हृदय में	सुहृद्	१६.	मित्र हैं (और)
बद्धकामैः ।	२.	कामना लिए हुए	अन्तरात्मा ।।	१८.	(उनकी) आत्मा (हैं)

श्लोकार्थ—हृदय में कामना लिए हुए देवताओं के द्वारा अर्पित विविध पूजा सामग्रियों से पूजित होने पर भी आप उतना प्रसन्न नहीं होते, जितना दुर्जनों को दुर्लभ सभी प्राणियों पर दया करने से प्रसन्न होते हैं । आप सभी जीवों के एकमात्र मित्र हैं और उनमें स्थित उनकी आत्मा हैं ।

त्रयोदशः श्लोकः

पुंसामतो विविधकर्मभिरध्वराद्यै—र्दानेन चोग्रतपसा व्रतचर्यया च ।
आराधनं भगवतस्तव सत्क्रियार्थो, धर्मोऽर्पितः कर्हिचिद् ध्रियते न यत्र ।।१३

पदच्छेद— **पुंसाम् अतः विविध कर्मभिःअध्वर आद्यैः, दानेन च उग्र तपसा व्रत चर्यया च ।**
आराधनम् भगवतः तव सत् क्रिया अर्थः, धर्मः अर्पितः कर्हिचित् ह्रियते न यत्र ।।

शब्दार्थ—

पुसाम्	१६.	मनुष्यों के	भगवतः	१४.	भगवान् की
अतः	६.	इसलिए	तव	१३.	आप
विविध, कर्मभिः	८.	अनेक, अनुष्ठानों से	सत् क्रिया	१७.	उत्तम, कर्म का
अध्वर, आद्यैः,	७.	यज्ञ, यागादि	अर्थः,	१८.	फल (है)
दानेन, च	९.	दान, और	धर्मः	३.	धर्म का
उग्र, तपसा	१०.	कठोर, तप से	अर्पितः	२.	समर्पण किये हुए
व्रत, चर्यया	१२.	व्रतों को, करने से	कर्हिचित्	४.	कभी
च ।	११.	तथा	ह्रियते, न	५.	नाश नहीं होता है
आराधनम्	१५.	आराधना ही	यत्र ।।	१.	जिस परमात्मा को

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा को समर्पण किये हुये धर्म का कभी नाश नहीं होता, इसलिए यज्ञ-या अनेक अनुष्ठानों से, दान और कठोर तप से तथा व्रतों को करने से आप भगवान् की आरा ही मनुष्यों के उत्तम कर्म का फल है ।

चतुर्दशः श्लोकः

शश्वत्स्वरूपमहसैव निपीतभेद—मोहाय बोधधिषणाय नमः परस्मै ।
विश्वोद्भवस्थितिलयेषु निमित्तलीला—रासाय ते नम इदं चकृमेश्वराय ।।१४

पदच्छेद— **शश्वत् स्वरूप महसा एव निपीत भेद, मोहाय बोध धिषणाय नमः परस्मै ।**
विश्व उद्भव स्थिति लयेषु निमित्त लीला, रासाय ते नमः इदम् चकृम ईश्वराय ।।

शब्दार्थ—

शश्वत्	३.	सदा	स्थिति, लयेषु	९.	पालन और संहार के
स्वरूप महसा एव	१.	अपने स्वरूप के प्रकाश से ही	निमित्त लीला,	१०.	प्रयोजन से लीला का
निपीत	४.	दूर कर देने वाले (तथा)	रासाय ते	११.	खेल करने वाले, आप
भेद मोहाय	२.	भेद बुद्धि और अज्ञान को	नमः	१४.	प्रणाम
बोध धिषणाय	५.	ज्ञान के आश्रय (आप)	इदम्	१३.	यह
नमः	७.	नमस्कार है	चकृम	१५.	निवेदन करते हैं
परस्मै ।	६.	परमात्मा को	ईश्वराय ।।	१२.	परमेश्वर को (हम)
विश्व उद्भव	८.	जगत् की उत्पत्ति			

श्लोकार्थ—अपने स्वरूप के प्रकाश से ही भेद-बुद्धि और अज्ञान को सदा दूर कर देने वाले तथा ज्ञा आश्रय आप परमात्मा को नमस्कार है । जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रयोज लीला का खेल करने वाले आप परमेश्वर को हम यह प्रणाम निवेदन करते हैं ।

ते नैकजन्मशमलं सहसैव हित्वा, संयान्त्यपावृतमृतं तमजं प्रपद्ये ॥१५॥

पदच्छेद यस्य अवतार गुण कर्म विडम्बनानि, नामानि ये असु विगमे विवशा गृणन्ति ।
ते न एक जन्म शमलम सहसा एव हित्वा मयान्ति अपावृतम ऋतम तम अजम प्रपद्य ॥

शब्दार्थ—

यस्य, अवतार	४.	जिस भगवान् के, अवतार की	जन्म, शमलम्	१०.	जन्मों के, पाप से
गुण, कर्म	५.	कीर्ति और, लीलाओं को	सहसा, एव	११.	तत्काल, ही
विडम्बनानि,	६.	बताने वाले	हित्वा,	१२.	मुक्त होकर
नामानि	७.	नामों का	संयान्ति	१५.	प्राप्त करते है
ये, असु	१.	जो लोग, प्राण	अपावृतम्	१३.	(माया के) आवरण से रहित
विगमे	२.	छोड़ते समय	ऋतम्	१४.	सत्यलोक को
विवशाः	३.	विवश होकर (भी)	तम्	१६	(मैं) उस
गृणन्ति ।	८.	उच्चारण करते हैं	अजम्	१७.	अजन्मा (भगवान् की)
ते, न एक	९.	वे लोग, अनेकों	प्रपद्ये ॥	१८.	शरण लेता हूँ

श्लोकार्थ—जो लोग प्राण छोड़ते समय विवश होकर भी जिस भगवान् के अवतार की कीर्ति और लीलाओं को बताने वाले नामों का उच्चारण करते हैं; वे लोग अनेकों जन्मों के पाप से तत्काल ही मुक्त होकर माया के आवरण से रहित सत्यलोक को प्राप्त करते हैं। मैं उस अजन्मा भगवान् की शरण लेता हूँ।

षोडशः श्लोकः

यो वा अहं च गिरिशश्च विभुः स्वयं च, स्थित्युद्भवप्रलयहेतव आत्ममूलम् ।
भित्त्वा त्रिपाद्ववृध एक उरुप्ररोहस्, तस्मै नमो भगवते भुवनद्रुमाय ॥१६॥

पदच्छेद—यः वा अहम् च गिरिशः च विभुः स्वयम् च, स्थिति उद्भव प्रलय हेतवः आत्म मूलम् ।
भित्त्वा त्रिपाद् ववृधे एकः उरु प्ररोहः, तस्मै नमः भगवते भुवन द्रुमाय ॥

शब्दार्थ—

यः	३.	जो	भित्त्वा	१४.	बँट कर
वा	५.	जो	त्रिपाद्	१३.	तीन प्रधान शाखाओं में
अहम्, च	४.	मैं हूँ, और	ववृधे	१५.	फैले हुए हैं
गिरिशः, च	६.	महादेव हैं, तथा	एकः	१२.	अकेले ही
विभुः	९.	भगवान् विष्णु हैं (उनके)	उरु, प्ररोहः,	११.	अनेक, शाखाओं वाले (आप)
स्वयम्	८.	साक्षात्	तस्मै	१७.	उस आप
च,	७.	जो	नमः	१९.	नमस्कार है
स्थिति, उद्भव	१.	(संसार के) पालन, उत्पत्ति	भगवते	१८.	भगवान् को
प्रलय, हेतवः	२.	(और) संहार का, कारण	भुवन, द्रुमाय ॥	१६.	विश्व, वृक्ष के रूप में
आत्म, मूलम् ।	१०.	आप ही, मूल कारण हैं			

श्लोकार्थ—संसार के पालन, उत्पत्ति और संहार का कारण जो मैं हूँ और जो महादेव हैं तथा जो साक्षात् भगवान् विष्णु हैं, उनके आप ही मूल कारण हैं। अनेक शाखाओं वाले आप अकेले ही तीन प्रधान शाखाओं में बँटकर फैले हुए हैं। विश्व वृक्ष के रूप में उस आप भगवान् को नमस्कार है

सप्तदश: श्लोक:

लोको विकर्मनिरत: कुशले प्रमत्त:, कर्मण्ययं त्वदुदिते भवदर्चने स्वे ।
यस्तावदस्य बलवानिह जीविताशां, सद्यश्छिनत्त्यनिमिषाय नमोऽस्तु तस्मै ॥१७॥

पदच्छेद—लोक: विकर्म निरत: कुशले प्रमत्त:, कर्मणि अयम् त्वद् उदिते भवत् अर्चने स्वे ।
य: तावत् अस्य बलवान् इह जीवित आशाम्, सद्य: छिनत्ति अनिमिषाय नम: अस्तु तस्मै ॥

शब्दार्थ—

लोक:	८.	संसार	य: तावत्	१०.	जो, किन्तु
विकर्म, निरत:	९.	कुकर्म में, लगा हुआ है	अस्य	१२.	इस संसारी जीव की
कुशले	४.	कल्याण कारी	बलवान्	११.	शक्तिमान् भगवान् काल
प्रमत्त:,	६.	प्रमादी होकर	इह	१३.	संसार में
कर्मणि	५.	कर्म को करने में	जीवित,आशाम्	१४.	जीने की, आशा को
अयम्	७.	यह	सद्य:, छिनत्ति	१५.	शीघ्रता से, काट रहा है
त्वद्, उदिते	१.	आपके द्वारा, बताये गये	अनिमिषाय	१७.	आप काल रूप को
भवत् अर्चने	२.	आपकी, आराधना रूप	नम:, अस्तु	१८.	नमस्कार, है
स्वे ।	३.	अपने	तस्मै ॥	१६.	उस

श्लोकार्थ—आपके द्वारा बताये गये आपकी आराधना रूप अपने कल्याणकारी कर्म को करने में प्रमादी होकर यह संसार कुकर्म में लगा हुआ है; किन्तु जो शक्तिमान् भगवान् काल इस संसारी जीव के संसार में जीने की आशा को शीघ्रता से काट रहा है, उस आप कालरूप परमात्मा को नमस्कार है

अष्टादश: श्लोक:

यस्माद्बिभेम्यहमपि द्विपरार्धधिष्ण्यम्, अध्यासित: सकललोकनमस्कृतं यत् ।
तेपे तपो बहुसवोऽवरुरुत्समानस्, तस्मै नमो भगवतेऽधिमखाय तुभ्यम् ॥१८॥

पदच्छेद— यस्मात् बिभेमि अहम् अपि द्विपरार्ध धिष्ण्यम्, अध्यासित: सकल लोक नमस्कृतम् यत् ।
तेपे तप: बहु सव: अवरुरुत्समान:, तस्मै नम: भगवते अधिमखाय तुभ्यम् ॥

शब्दार्थ—

यस्मात्, बिभेमि	७.	जिस काल से, डरता हूँ	तप:	१०.	तपस्या का
अहम्, अपि	६.	मैं, भी	बहु सव:	९.	अनेकों वर्षों तक (मैंने)
द्विपरार्ध, धिष्ण्यम्	२.	दो परार्धवर्ष स्थायी	अवरुरुत्समान:,	८.	(उसे) रोकने की इच्छा से
अध्यासित:	५.	स्वामी	तस्मै	१३.	उस
सकल, लोक	३.	सारे, विश्व से	नम:	१६.	नमस्कार है
नमस्कृतम्	४.	वन्दित है (उसका)	भगवते	१५.	भगवान् को (मेरा)
यत् ।	१.	जो सत्यलोक	अधिमखाय	१२.	(मेरे) तप के साक्षी
तेपे	११.	अनुष्ठान किया	तुभ्यम् ॥	१४.	आप

श्लोकार्थ—जो सत्यलोक दो परार्ध वर्ष तक स्थायी और सारे विश्व से वन्दित है, उसका स्वामी मैं भी जिस काल से डरता हूँ, उसे रोकने की इच्छा से अनेकों वर्षों तक मैंने तपस्या का अनुष्ठान किया, मेरे तप के साक्षी उस आप भगवान् को मेरा नमस्कार है ।

एकोनविंशः श्लोकः

तिर्यङ्मनुष्यविबुधादिषु जीवयोनि—ष्वात्मेच्छयाऽऽत्मकृतसेतुपरीप्सया यः ।
रेमे निरस्तरतिरप्यवरुद्धदेहस्, तस्मै नमो भगवते पुरुषोत्तमाय ।।१९।।

पदच्छेद—तिर्यक् मनुष्य विबुध आदिषु जीव योनिषु, आत्म इच्छया आत्म कृत सेतु परीप्सया यः ।
रेमे निरस्त रतिः अपि अवरुद्ध देहः, तस्मै नमः भगवते पुरुषोत्तमाय ।।

शब्दार्थ—

तिर्यक्, मनुष्य	५.	पशु-पक्षी, मनुष्य	निरस्त रतिः	११.	विषय सुख से रहित होकर
विबुध, आदिषु	६.	देवता, इत्यादि अनेक	अपि	१०.	और
जीव, योनिषु,	७.	जीवों की, योनियों में	अवरुद्ध	९.	धारण किया
आत्म, इच्छया	४.	अपनी, इच्छा से	देहः,	८.	अवतार
आत्म, कृत	२.	अपने द्वारा, बनाई गयी	तस्मै	१३.	उन
सेतु, परीप्सया	३.	धर्म-मर्यादा की, रक्षा के लिए	नमः	१६.	नमस्कार है
यः ।	१.	जिन्होंने	भगवते	१५.	भगवान् को
रेमे	१२	(उसमें) विहार किया	पुरुषोत्तमाय ।।	१४.	पुरुषोत्तम

श्लोकार्थ—जिन्होंने अपने द्वारा बनाई गयी धर्म-मर्यादा की रक्षा के लिए अपनी इच्छा से पशु-पक्षी, मनुष्य, देवता इत्यादि अनेक जीवों की योनियों में अवतार धारण किया और विषय-सुख से रहित होकर उसमें विहार किया। उन पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार है।

विंशः श्लोकः

योऽविद्ययानुपहतोऽपि दशार्धवृत्त्या, निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः ।
अन्तर्जलेऽहिकशिपुस्पर्शानुकूलाम्, भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन् ।।२०।।

पदच्छेद –यः अविद्यया अनुपहतः अपि दशार्ध वृत्त्या, निद्राम् उवाह जठरी कृत लोक यात्रः ।
अन्तर् जले अहि कशिपु स्पर्श अनुकूलाम्, भीम ऊर्मि मालिनि जनस्य सुखम् विवृण्वन् ।।

शब्दार्थ—

यः	१.	जिन्होंने	अन्तर् जले	१२.	जल के अन्दर
अविद्यया	८.	योगमाया से	अहि, कशिपु	१४.	शेषनाग की, शय्या पर
अनुपहतः, अपि	९.	दूर रहकर भी	स्पर्श अनुकूलाम्	१३.	सुखदायी कोमल
दशार्ध, वृत्त्या,	७.	पाँच, शक्तियों वाली	भीम, ऊर्मि	१०.	भयंकर, तरंग
निद्राम्	१५.	योग निद्रा का	मालिनि	११.	मालाओं वाले समुद्र के
उवाह	१६.	आश्रय लिया था	जनस्य	४.	(उन) जीवों को
जठरी कृत	३.	उदर में रखकर	सुखम्	५.	सुख
लोक यात्रः ।	२.	सभी जीवों को	विवृण्वन् ।।	६.	पहुँचाते हुए

श्लोकार्थ—जिन्होंने सभी जीवों को उदर में रखकर उन जीवों को सुख पहुँचाते हुए एवं (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) पाँच शक्तियों वाली योगमाया से दूर रहकर भी भयंकर तरंग मालाओं वाले समुद्र के जल के अन्दर शेषनाग की सुखदायी कोमल शय्या पर योगनिद्रा का आश्रय लिया था।

तस्मै नमस्त उदरस्थभवाय योग निद्रावसानविकसन्नलिनेक्षणाय ॥२१॥

पदच्छद यद नाभि पद्म भवनात अहम आसम ईड्य लोक त्रय उपकरण यद अनुग्रहेण ।
तस्मै नम ते उदरस्थ भवाय योग निद्रा वसान विकसत नलिन ईक्षणाय ।

शब्दार्थ—

यद्, नाभि	६	जिनके, नाभि	नमः	१८	नमस्कार है
पद्म, भवनात्	७.	कमल के, मध्य	ते	१७.	आपको
अहम्	५.	मैं	उदरस्थ	१०.	उदर में रखने वाले (त
आसम्	८	उत्पन्न हुआ	भवाय	९.	सभी जीवों को
ईड्य,	१.	हे पूजनीय भगवन् !	योग, निद्रा	११.	योग, माया का
लोक त्रय	३.	तीनों लोकों की	अवसान	१२.	अन्त हो जाने से
उपकरणः	४.	सृष्टि का कारण	विकसत्	१३.	विकसित
यद्, अनुग्रहेण ।	२.	जिनकी, कृपा से	नलिन	१४.	कमल
तस्मै	१६.	उन	ईक्षणाय ॥	१५.	नयन

श्लोकार्थ—हे पूजनीय भगवन ! जिनकी कृपा से तीनों लोकों की सृष्टि का कारण मैं जिनके कमल के मध्य उत्पन्न हुआ; सभी जीवों को उदर में रखने वाले तथा योग-माय अन्त हो जाने से विकसित कमल नयन उन आपको नमस्कार है ।

द्वाविंश: श्लोकः

सोऽयं समस्तजगतां सुहृदेक आत्मा, सत्त्वेन यन्मृडयते भगवान् भगेन ।
तेनैव मे दृशमनुस्पृशताद्यथाहम्, स्रक्ष्यामि पूर्ववदिदं प्रणतप्रियोऽसौ ॥२२॥

पदच्छेद—सः अयम् समस्त जगताम् सुहृद् एकः आत्मा, सत्त्वेन यद् मृडयते भगवान् भगेन ।
तेन एव मे दृशम् अनुस्पृशतात् यथा अहम्, स्रक्ष्यामि पूर्ववत् इदम् प्रणत प्रियः असौ ॥

शब्दार्थ—

सः अयम्	५.	वे ही, ये	भगेन ।	९.	ऐश्वर्य से
समस्त, जगताम्	१.	सम्पूर्ण, प्राणियों के	तेन एव	१३.	उसी ज्ञान और ऐश्वर से
सुहृद्	३.	मित्र (और)	मे, दृशम्	१४.	मेरी, बुद्धि को
एकः	२.	एकमात्र	अनुस्पृशतात्	१५.	युक्त करें
आत्मा,	४.	आत्मा	यथा, अहम्,	१६.	जिससे, मैं
सत्त्वेन	८.	ज्ञान (और)	स्रक्ष्यामि	१९.	रचना कर सकूँ
यद्	७.	जिस	पूर्ववत्,	१७.	पूर्वकल्प के समान
मृडयते	१०.	सुख पहुँचाते हैं	इदम्	१८.	इस विश्व की
भगवान्	६.	भगवान्	प्रणत, प्रियः	११.	शरणागत, वत्सल
			असौ ॥	१२.	वे भगवान्

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण प्राणियों के एकमात्र मित्र और आत्मा वे ही ये भगवान् जिस ज्ञान और ऐश्वर्य से पहुँचाते हैं, शरणागत-वत्सल वे भगवान् उसी ज्ञान और ऐश्वर्य से मेरी बुद्धि को युक्त जिससे मैं पूर्वकल्प के समान इस विश्व की रचना कर सकूँ ।

तस्मिन् स्वविक्रममिद सृजतोऽपि चेतो, युञ्जीत कर्मशमलं च यथा विजह्याम् ।२.
पदच्छेद एष प्रपन्न वरद रमया आत्म शक्त्या यद् यद करिष्यति गृहीत गुण अवतार ।
तस्मिन स्व विक्रमम इदम सृजत अपि चेत युञ्जीत कर्म शमलम च तथा विजह्याम

शब्दार्थ—

एषः	२.	ये भगवान्	इदम्	९.	यह
प्रपन्न, वरदः	१.	भक्तों के, वरदायक	सृजतः	१३.	सृष्टि करते समय
रमया	४.	लक्ष्मी जी के साथ	अपि	११.	भी
आत्म शक्त्या,	३.	अपनी शक्ति	चेतः	१४.	(मेरे) मन को
यद् यद्	७.	जो-जो कर्म	युञ्जीत	१५.	प्रेरित करें
करिष्यति	८.	करेंगे	कर्म	१९.	कर्म से
गृहीत	६.	लेकर	शमलम्	१८.	सृष्टि के बाधक
गुणअवतारः।	५.	कलावतार	च	१७.	कि (मैं)
तस्मिन्	१२.	उन्हीं में से एक है	यथा	१६.	जिससे
स्व विक्रमम्	१०.	मेरा कर्म	विजह्याम् ॥	२०.	दूर रह सकूँ

श्लोकार्थ—भक्तों के वरदायक ये भगवान् अपनी शक्ति लक्ष्मी जी के साथ कलावतार लेकर जो-जो करेंगे; यह मेरा कर्म भी उन्हीं में से एक है। ये भगवान् सृष्टि करते समय मेरे मन प्रेरित करें; जिससे कि मैं सृष्टि के बाधक कर्म से दूर रह सकूँ।

चतुर्विंशः श्लोकः

नाभिह्रदादिह सतोऽम्भसि यस्य पुंसो, विज्ञानशक्तिरहमासमनन्तशक्तेः ।
रूपं विचित्रमिदमस्य विवृण्वतो मे, मारीरिषीष्ट निगमस्य गिरां विसर्गः ॥२४॥

पदच्छेद—नाभि ह्रदात् इह सतः अम्भसि यस्य पुंसः, विज्ञान शक्तिः अहम् आसम् अनन्त शक्तेः ।
रूपम् विचित्रम् इदम् अस्य विवृण्वतः मे, (मा रीरिषीष्ट निगमस्य गिराम् विसर्गः ॥

शब्दार्थ—

नाभि, ह्रदात्	६.	नाभि, सरोवर से	रूपम्	१२.	स्वरूप का
इह	१.	इस (प्रलय कालीन)	विचित्रम्	११.	अद्भुत
सतः	३.	विद्यमान (एवम्)	इदम्	१०.	इस
अम्भसि	२.	जल में	अस्य	९.	(वे भगवान्) संसार के
यस्य, पुंसः,	५.	जिस, परम पुरुष के	विवृण्वतः, मे	१३.	विस्तार करते समय, मे
विज्ञान शक्तिः	७.	(उसकी) ज्ञान शक्ति के रूप में	मा रीरिषीष्ट	१६.	नष्ट न होने दें
अहम्, आसम्	८.	मैं, उत्पन्न हुआ हूँ	निगमस्य	१४.	वेद की
अनन्त, शक्तेः ।	४.	असीम, शक्ति सम्पन्न	गिराम् विसर्गः ॥	१५.	वाणी के उच्चारण को

श्लोकार्थ—इस प्रलय कालीन जल में विद्यमान एवं असीम शक्ति सम्पन्न जिस परम पुरुष के सरोवर से उसकी ज्ञान शक्ति के रूप में मैं उत्पन्न हुआ हूँ; वे भगवान् ससार के इस स्वरूप का विस्तार करते समय मेरी वेद की वाणी के उच्चारण को नष्ट न होने दें।

उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषाद, माध्व्या गिरापनयतात्पुरुष पुराण ।

पदच्छेद स असौ अदभ्र करुण भगवान विवृद्ध प्रेम स्मितेन नयन अम्बुरुहम विजृम्भन ।
उत्थाय विश्व विजयाय च न विषादम माध्व्या गिरा अपनयतात पुरुष पुराण ॥

शब्दार्थ—

सः	१. अब	**विश्व विजयाय**	१२. जगत् की सृष्टि के
असौ	५. वे	**च**	११. तथा
अदभ्र, करुणः	२. अपार, करुणामय	**नः**	१४. हमारे
भगवान्, विवृद्ध,	६. भगवान्, परम	**विषादम्,**	१५. अज्ञान को
प्रेम, स्मितेन	७. प्रेम भरी, मुस्कान के साथ	**माध्व्या, गिरा**	१३. (अपनी) मधुर, वा
नयन, अम्बुरुहम्	८. (अपने) नेत्र, कमल को	**अपनयतात्**	१६. दूर करें
विजृम्भन् ।	९. खोलते हुए	**पुरुषः**	४. पुरुष
उत्थाय	१०. उठें	**पुराणः ॥**	३. आदि

श्लोकार्थ—अब अपार करुणामय, आदि पुरुष वे भगवान् परम प्रेम भरी मुस्कान के साथ अ
कमल को खोलते हुये उठें तथा जगत् की सृष्टि के लिए अपनी मधुर वाणी से हमारे
को दूर करें ।

षड्विंश: श्लोक:

मैत्रेय उवाच—

स्वसम्भवं निशाम्यैवं तपोविद्यासमाधिभिः ।
यावन्मनोवचः स्तुत्वा विरराम स खिन्नवत् ॥२६॥

पदच्छेद— **स्व सम्भवम् निशाम्य एवम्, तपः विद्या समाधिभिः ।**
यावत् मनः वचः स्तुत्वा, विरराम सः खिन्नवत् ॥

शब्दार्थ—

स्व	३. अपनी	**यावत्**	११. शक्ति भर
सम्भवम्	४. उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का	**मनः**	९. मन और
निशाम्य	५. दर्शन करके (तथा)	**वचः**	१०. वाणी से (उनकी)
एवम्	१. इस प्रकार	**स्तुत्वा**	१२. स्तुति करके
तपः	६ तपस्या	**विरराम**	१४. विराम ले लिये
विद्या	७. ज्ञान और	**सः**	२. ब्रह्मा जी
समाधिभिः ।	८. समाधि के द्वारा	**खिन्नवत् ॥**	१३. उदासीन की भाँति

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्मा जी अपनी उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का दर्शन करके तथा तपस्या,
समाधि के द्वारा मन और वाणी से उनकी शक्ति भर स्तुति करके उदासीन की भाँ
ले लिये ।

सप्तविंश: श्लोक:

अथाभिप्रेतमन्वीक्ष्य ब्रह्मणो मधुसूदनः ।
विषण्णचेतसं तेन कल्पव्यतिकराम्भसा ॥२७॥

पदच्छेद—

अथ अभिप्रेतम् अन्वीक्ष्य, ब्रह्मणः मधुसूदनः ।
विषण्ण चेतसम् तेन, कल्प व्यतिकर अम्भसा ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	विषण्ण	१०.	दुःखी देखा
अभिप्रेतम्	४.	तात्पर्य	चेतसम्	९.	(उन्हें) मन में
अन्वीक्ष्य	५.	समझ लिया (और)	तेन	६.	उस
ब्रह्मणः	३.	ब्रह्मा जी का	कल्प व्यतिकर	७.	प्रलयकालीन
मधुसूदनः ।	२.	भगवान् मधुसूदन ने	अम्भसा ॥	८.	जल से

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् मधुसूदन ने ब्रह्मा जी का तात्पर्य समझ लिया और उस प्रलयकालीन जल से उन्हें मन में दुःखी देखा ।

अष्टाविंश: श्लोक:

लोकसंस्थानविज्ञान, आत्मनः परिखिद्यतः ।
तमाहागाधया वाचा, कश्मलं शमयन्निव ॥२८॥

पदच्छेद—

लोक संस्थान विज्ञाने, आत्मनः परिखिद्यतः ।
तम् आह अगाधया वाचा, कश्मलम् शमयन् इव ॥

शब्दार्थ—

लोक	२.	संसार की	आह	१२.	बोले
संस्थान	३.	रचना के	अगाधया	९.	गम्भीर
विज्ञाने,	४.	ज्ञान के विषय में	वाचा	१०.	वाणी में
आत्मनः	१.	(ब्रह्मा जी) मन में	कश्मलम्	६.	(उनके) कष्ट को
परिखिद्यतः ।	५.	दुःखी हो रहे थे	शमयन्	७.	शान्त करते हुए
तम्	११.	उनसे	इव ॥	८.	से (भगवान्)

श्लोकार्थ—ब्रह्माजी मन में संसार की रचना के ज्ञान के विषय में दुःखी हो रहे थे । उनके कष्ट को शान्त करते हुये से भगवान् गम्भीर वाणी में उनसे बोले ।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

च—

मा वेदगर्भ गास्तन्द्रीं सर्ग उद्यममावह ।
तन्मयाऽऽपादितं ह्यग्रे यन्मां प्रार्थयते भवान् ।।२६।।

मा वेदगर्भ गा: तन्द्रीम्, सर्गे उद्यमम् आवह ।
तद् मया आपादितम् हि अग्रे, यद् माम् प्रार्थयते भवान् ।।

३.	न	मया	१३.	मैंने
१.	हे ब्रह्मा जी !	आपादितम्	१६.	पूर्ण कर दिया है
४.	करें (और)	हि	१५.	ही
२.	आलस्य	अग्रे	१४.	पहले
५	सृष्टि करने में	यद्	१०.	जो कुछ
६.	प्रयास	माम्	९.	मुझसे
७.	करें	प्रार्थयते	११.	चाह रहे हैं
१२.	उसे	भवान् ।।	८.	आप

ह्मा जी ! आप आलस्य न करें और सृष्टि करने में प्रयास करें। आप मुझसे रहे हैं, उसे मैंने पहले ही पूर्ण कर दिया है।

त्रिंश: श्लोक:

भूयस्त्वं तप आतिष्ठ, विद्यां चैव मदाश्रयाम् ।
ताभ्यामन्तर्हृदि ब्रह्मन्, लोकान् द्रक्ष्यस्यपावृतान् ।।३०।।

भूय: त्वम् तप: आतिष्ठ, विद्याम् च एव मद् आश्रयाम् ।
ताभ्याम् अन्तर् हृदि ब्रह्मन्, लोकान् द्रक्ष्यसि अपावृतान् ।।

३	फिर से	आश्रयाम् ।	७.	आश्रित (भागवत
२.	आप	ताभ्याम्	११.	उन दोनों से (आप
४.	तपस्या का	अन्तर्	१३.	अन्दर
१०.	अनुष्ठान करें	हृदि	१२.	(अपने) हृदय के
८.	ज्ञान का	ब्रह्मन्,	१.	हे ब्रह्मा जी !
५.	और	लोकान्	१४.	सभी लोकों को
९.	ही	द्रक्ष्यसि	१६.	देखेंगे।
६	मेरे	अपावृतान्	१५.	स्पष्ट रूप से

ह्मा जी ! आप फिर से तपस्या का और मेरे आश्रित भागवत ज्ञान का ही अनुष्ठ दोनों से आप अपने हृदय के अन्दर सभी लोकों को स्पष्ट रूप से देखेंगे।

एकत्रिंशः श्लोकः

तत आत्मनि लोके च भक्तियुक्तः समाहितः ।
द्रष्टासि मां ततं ब्रह्मन् मयि लोकांस्त्वमात्मनः ॥३१॥

पदच्छेद—

ततः आत्मनि लोके च, भक्ति युक्तः समाहितः ।
द्रष्टासि माम् ततम् ब्रह्मन्, मयि लोकान् त्वम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	माम्	६.	मुझे (तथा)
आत्मनि	८	अपने में	ततम्	१३.	व्याप्त
लोके	६.	ब्रह्माण्ड में	ब्रह्मन्,	२.	हे ब्रह्मा जी !
च	७.	और	मयि	१०.	मेरे में
भक्ति, युक्तः	४.	भक्ति से, युक्त होकर	लोकान्	११.	ब्रह्माण्ड को (और)
समाहितः ।	५.	समाधि द्वारा	त्वम्	३.	आप
द्रष्टासि	१४.	देखेंगे	आत्मनः ॥	१२.	अपने को

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे ब्रह्मा जी ! आप भक्ति से युक्त होकर समाधि द्वारा ब्रह्माण्ड में और अपने में मुझे तथा मेरे में ब्रह्माण्ड को और अपने को व्याप्त देखेंगे ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

यदा तु सर्वभूतेषु दारुष्वग्निमिव स्थितम् ।
प्रतिचक्षीत मां लोको जह्यात्तर्ह्येव कश्मलम् ॥३२॥

पदच्छेद—

यदा तु सर्व भूतेषु, दारुषु अग्निम् इव स्थितम् ।
प्रतिचक्षीत माम् लोकः, जह्यात् तर्हि एव कश्मलम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जिस समय	स्थितम्।	६.	विद्यमान
तु	१.	तथा	प्रतिचक्षीत	११.	देखता है
सर्व	७.	सभी	माम्	१०.	मुझे
भूतेषु	८.	प्राणियों में	लोकः	३.	प्राणी
दारुषु	४.	काष्ठ में विद्यमान	जह्यात्	१४.	मुक्त हो जाता है
अग्निम्	५.	अग्नि के	तर्हि एव	१२.	उसी समय (वह)
इव	६.	समान	कश्मलम् ॥	१३.	पाप से

श्लोकार्थ—तथा जिस समय प्राणी काष्ठ में विद्यमान अग्नि के समान सभी प्राणियों में विद्यमान मुझे देखता है; उसी समय वह पाप से मुक्त हो जाता है ।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

यदा रहितमात्मानं भूतेन्द्रियगुणाशयैः ।
स्वरूपेण मयोपेतं पश्यन् स्वाराज्यमृच्छति ।।३३।।

यदा रहितम् आत्मानम्, भूत इन्द्रिय गुण आशयैः ।
स्वरूपेण मया उपेतम्, पश्यन् स्वाराज्यम् ऋच्छति ।।

१.	जब (मनुष्य)	स्वरूपेण	८.	रूप को
६.	हीन	मया	९.	मुझसे
७.	अपनी आत्मा के	उपेतम्	१०.	अभिन्न
२.	पंच महाभूत	पश्यन्	११.	समझता है (
३.	इन्द्रिय	स्वाराज्यम्	१२.	मोक्ष पद को
४.	सत्त्वादि गुण (और)	ऋच्छति ।।	१३.	प्राप्त करता
५.	अन्तःकरण से			

मनुष्य पंचमहाभूत, इन्द्रिय, सत्त्वादिगुण और अन्तःकरण से हीन अपनी
मुझसे अभिन्न समझता है; तब वह मोक्ष पद प्राप्त करता है ।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

नानाकर्मवितानेन प्रजा बह्वीः सिसृक्षतः ।
नात्मावसीदत्यस्मिंस्ते वर्षीयान्मदनुग्रहः ।।३४।।

नाना कर्म वितानेन, प्रजाः बह्वीः सिसृक्षतः ।
न आत्मा अवसीदति अस्मिन् ते, वर्षीयान् मद् अनुग्रहः ।।

१.	विविध	आत्मा	८.	आत्मा
२.	कर्मों के	अवसीदति	१०.	खिन्न होती
३.	परिणाम से	अस्मिन्	११.	इसमें
५.	प्रजाओं की	ते	७.	आपकी
४.	अनेक प्रकार की	वर्षीयान्	१३.	बहुत बड़ी
६.	सृष्टि करते समय	मद्	१२.	मेरी
९.	नहीं	अनुग्रहः ।।	१४.	कृपा है

वध कर्मों के परिणाम से अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि करते समय
त्र नहीं होती है, इसमें मेरी बहुत बड़ी कृपा है ।

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

ऋषिमाद्यं न बध्नाति, पापीयांस्त्वां रजोगुणः ।
यन्मनो मयि निर्बद्धं, प्रजाः संसृजतोऽपि ते ।।३५।।

ऋषिम् आद्यम् न बध्नाति पापीयान्, त्वाम् रजोगुणः ।
यद् मनः मयि निर्बद्धम्, प्रजाः संसृजतः अपि ते ।।

२.	मन्त्र द्रष्टा	यद्	८.	क्योंकि
१.	प्रथम	मनः	१३.	चित्त
६.	नहीं	मयि	१४.	मेरे में
७.	बांधते हैं	निर्बद्धम्,	१५.	लगा रहता है
४.	पाप के	प्रजाः	९.	प्रजाओं की
३.	आपको	संसृजतः	१०.	सृष्टि करते सम
५.	रजोगुण	अपि	११.	भी
		ते ।।	१२.	आपका

न मन्त्रद्रष्टा आपको पाप के रजोगुण नहीं बाँधते हैं, क्योंकि प्रजाओं की
य भी आपका चित्त मेरे में लगा रहता है।

षट्त्रिंश: श्लोक:

ज्ञातोऽहं भवता त्वद्य दुर्विज्ञेयोऽपि देहिनाम् ।
यन्मां त्वं मन्यसेऽयुक्तं भूतेन्द्रियगुणात्मभिः ।।३६।।

ज्ञातः अहम् भवता तु अद्य, दुर्विज्ञेयः अपि देहिनाम् ।
यद् माम् त्वम् मन्यसे अयुक्तम्, भूत इन्द्रिय गुण आत्मभिः ।।

८.	जान लिया है	यद्	९.	क्योंकि
७.	मुझे	माम्	११.	मुझे
३.	आपने	त्वम्	१०.	आप
१.	तथा	मन्यसे	१६.	मानते हैं
२.	आज	अयुक्तम्	१५.	रहित
५.	अज्ञात होने पर	भूत, इन्द्रिय	१२.	पंचमहाभूत,
६.	भी	गुण	१३.	सत्त्वादि गुण
४.	देहधारियों से	आत्मभिः ।।	१४.	अन्तःकरण से

था आज आपने देहधारियों से अज्ञात होने पर भी मुझे जान लिया है। क्य
ंच महाभूत, इन्द्रिय, सत्त्वादि गुण और अन्तःकरण से रहित मानते हैं।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तुभ्यं मद्विचिकित्सायामात्मा मे दर्शितोऽबहिः ।
नालेन सलिले मूलं पुष्करस्य विचिन्वतः ॥३७॥

पदच्छेद—

तुभ्यम् मद् विचिकित्सायाम्, आत्मा मे दर्शितः अबहिः ।
नालेन सलिले मूलम्, पुष्करस्य विचिन्वतः ॥

शब्दार्थ—

तुभ्यम्	१०.	आपको	अबहिः ।	११.	अन्तःकरण में
मद्	१.	मेरे विषय में	नालेन	३.	कमल नाल के सहारे
विचिकित्सायाम्	२.	संदेह होने पर (आप)	सलिले	४.	जल में
आत्मा	९.	स्वरूप	मूलम्	६.	जड़ को
मे	८.	मैंने अपना	पुष्करस्य	५.	कमल की
दर्शितः	१२.	दिखाया था	विचिन्वतः ॥	७.	ढूँढते रहे उस समय

श्लोकार्थ—मेरे विषय में संदेह होने पर आप कमल नाल के सहारे जल में कमल की जड़ ढूँढते रहे। उस समय मैंने अपना स्वरूप आपको अन्तःकरण में दिखाया था।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

यच्चकर्थाङ्ग मत्स्तोत्रं मत्कथाभ्युदयाङ्कितम् ।
यद्वा तपसि ते निष्ठा स एष मदनुग्रहः ॥३८॥

पदच्छेद—

यद् चकर्थ अङ्ग मत् स्तोत्रम्, मत् कथा अभ्युदय अङ्कितम् ।
यद् वा तपसि ते निष्ठा, सः एषः मत् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

यद्	६.	जो	यद्	११.	जो
चकर्थ	९.	की है	वा	१०.	अथवा
अङ्ग	१.	हे तात ब्रह्मा जी ! तुमने	तपसि	१२.	तपस्या में
मत्	७.	मेरी	ते	१३.	तुम्हारी
स्तोत्रम्,	८.	स्तुति	निष्ठा,	१४.	श्रद्धा है
मत्	२.	मेरी	सः	१५.	सो
कथा	३.	कथा के	एषः	१६.	यह (भी)
अभ्युदय	४.	वैभव से	मत्	१७.	मेरी
अङ्कितम् ।	५.	युक्त	अनुग्रहः ॥	१८.	कृपा (का फल है)

श्लोकार्थ—हे तात ब्रह्मा जी ! तुमने मेरी कथा के वैभव से युक्त जो मेरी स्तुति की है अथवा जो तपस्या में तुम्हारी श्रद्धा है, सो यह भी मेरी कृपा का ही फल है।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्रीतोऽहमस्तु भद्रं ते, लोकानां विजयेच्छया।
यदस्तौषीर्गुणमयं, निर्गुणं माऽनुवर्णयन् ॥३९॥

पदच्छेद—

प्रीतः अहम् अस्तु भद्रम् ते, लोकानां विजय इच्छया।
यद् अस्तौषीः गुणमयम्, निर्गुणम् मा अनुवर्णयन् ॥

शब्दार्थ—

प्रीतः	११.	प्रसन्न हूँ (अतः)	इच्छया।	३.	इच्छा से (तुमने)
अहम्	१०.	(उससे) मैं	यद्	४.	जो (मेरी)
अस्तु	१४.	हो	अस्तौषीः	५.	स्तुति की है
भद्रम्	१३.	कल्याण	गुणमयम्,	८.	सगुण रूप में
ते,	१२.	तुम्हारा	निर्गुणम्	७.	निर्गुण का
लोकानाम्	१.	लोकों की	मा	६.	(तथा) मुझ
विजय	२.	रचना की	अनुवर्णयन्।	९.	वर्णन किया है

श्लोकार्थ—लोकों की रचना की इच्छा से तुमने जो मेरी स्तुति की है तथा मुझ निर्गुण का सगुण रूप में वर्णन किया है; उससे मैं प्रसन्न हूँ; अतः तुम्हारा कल्याण हो।

चत्वारिंशः श्लोकः

य एतेन पुमान्नित्यं, स्तुत्वा स्तोत्रेण मां भजेत्।
तस्याशु सम्प्रसीदेयं, सर्वकामवरेश्वरः ॥४०॥

पदच्छेद—

यः एतेन पुमान् नित्यम्, स्तुत्वा स्तोत्रेण माम् भजेत्।
तस्य आशु सम्प्रसीदेयम्, सर्व काम वर ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	भजेत्।	८.	भजन करता है
एतेन	४.	इस	तस्य	१२.	उसके ऊपर
पुमान्	२.	पुरुष	आशु	१३.	शीघ्र ही
नित्यम्	३.	प्रतिदिन	सम्प्रसीदेयम्	१४.	प्रसन्न होता हूँ
स्तुत्वा	६.	स्तुति करके	सर्व, काम	९.	सभी, कामनाओं
स्तोत्रेण	५.	स्तोत्र से	वर	१०.	(और) वरदानों को
माम्	७.	मेरा	ईश्वरः॥	११.	(देने में) समर्थ (मैं)

श्लोकार्थ—जो पुरुष प्रतिदिन इस स्तोत्र से स्तुति करके मेरा भजन करता है, सभी कामनाओं और वरदानों को देने में समर्थ है मैं उसके ऊपर शीघ्र ही प्रसन्न होता हूँ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

पूर्तेन तपसा यज्ञैर्दानैर्योगसमाधिना ।
राद्धं निःश्रेयसं पुंसां मत्प्रीतिस्तत्त्वविन्मतम् ॥४१॥

पूर्तेन तपसा यज्ञैः, दानैः योग समाधिना ।
राद्धम् निःश्रेयसम् पुंसाम्, मत् प्रीतिः तत्त्ववित् मतम् ॥

३.	कुँआ आदि के निर्माण से	निःश्रेयसम्	१०.	परम कल्याण
४.	तपस्या से	पुंसाम्,	८.	मनुष्यों को
५	यज्ञ, दान से (और)	मत्	११.	मेरी
६	योग	प्रीतिः	१२.	प्रसन्नता (ही है)
७.	समाधि से	तत्त्ववित्	१.	तत्त्ववेत्ता विद्वान
६	प्राप्त होने वाला	मतम् ॥	२.	(यह) मत (है कि

वेत्ता विद्वानों का यह मत है कि कूँआ आदि के निर्माण से, तपस्या से, यज्ञ-
-समाधि से मनुष्यों को प्राप्त होने वाला परम कल्याण मेरी प्रसन्नता ही है ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अहमात्माऽऽत्मनां धातः प्रेष्ठः सन् प्रेयसामपि ।
अतो मयि रतिं कुर्याद्देहादिर्यत्कृते प्रियः ॥४२॥

अहम् आत्मा आत्मानाम् धातः, प्रेष्ठः सन् प्रेयसाम् अपि ।
अतः मयि रतिम् कुर्यात्, देह आदिः यत् कृते प्रियः ॥

६.	(वह) मैं	अतः	१३.	इसलिए
१२.	आत्मा हूँ	मयि	१४.	मुझसे
११.	सभी प्राणियों का	रतिम्	१५.	प्रेम
१.	हे ब्रह्मा जी !	कुर्यात्,	१६	करना चाहिए
६	प्रिय	देह	२.	शरीर
१०.	होता हुआ	आदिः	३.	इत्यादि
७.	स्त्री-पुत्रादि प्रियों का	यत्कृते	४.	जिसके लिए
८	भी	प्रियः ।	५.	प्रिय (हैं)

ह्मा जी ! शरीर इत्यादि जिसके लिए प्रिय हैं, वह मैं स्त्री-पुत्रादि प्रियों
हुआ सभी प्राणियों का आत्मा हूँ । इसलिए मुझसे प्रेम करना चाहिए ।

त्रिचत्वारिंश: श्लोक:

सर्ववेदमयेनेदमात्मनाऽऽत्माऽऽत्मयोनिना ।
प्रजाः सृज यथापूर्वं याश्च मय्यनुशेरते ॥४३॥

पदच्छेद— सर्व वेद मयेन इदम्, आत्मना आत्मा आत्म योनिना ।
प्रजाः सृज यथा पूर्वम्, याः च मयि अनुशेरते ॥

शब्दार्थ—

सर्व वेद	४.	चारों वेदों से	प्रजाः	१२.	(उन) जीवों की
मयेन	५.	युक्त	सृज	१४.	सृष्टि करें
इदम्	७.	इस विश्व की	यथा पूर्वम्	१३.	पूर्वकल्प के समान
आत्मना	६.	अपने स्वरूप से	याः	६.	जो
आत्मा	१.	आप	च	८.	और
आत्म	२.	स्वयम्	मयि	१०.	मुझमें
योनिना,	३.	उत्पन्न (एवं)	अनुशेरते ॥	११.	लीन हैं

श्लोकार्थ—आप स्वयम् उत्पन्न एवं चारों वेदों से युक्त अपने स्वरूप से इस विश्व की औ
लीन हैं, उन जीवों की भी पूर्वकल्प के समान सृष्टि करें ।

चतुश्चत्वारिंश: श्लोक:

मैत्रेय उवाच—

तस्मा एवं जगत्स्रष्ट्रे प्रधानपुरुषेश्वरः ।
व्यज्येदं स्वेन रूपेण कञ्जनाभस्तिरोदधे ॥४४॥

पदच्छेद— तस्मै एवम् जगत् स्रष्ट्रे, प्रधान पुरुष ईश्वरः ।
व्यज्य इदम् स्वेन रूपेण, कञ्जनाभः तिरोदधे ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	६.	उन ब्रह्मा जी को	व्यज्य	६.	बताकर
एवम्	७.	इस प्रकार	इदम्	८.	यह रहस्य
जगत्	४	विश्व के	स्वेन	१०.	अपने
स्रष्ट्रे	५.	रचयिता	रूपेण	११.	नारायण रूप से
प्रधान	१.	प्रकृति (और)	कञ्जनाभः	३.	भगवान् कमलना
पुरुष ईश्वरः ।	२.	पुरुष के स्वामी	तिरोदधे ॥	१२.	अन्तर्धान हो गये

श्लोकार्थ—प्रकृति और पुरुष के स्वामी भगवान् कमलनाभ विश्व के रचयिता उन ब्रह्मा
प्रकार यह रहस्य बताकर अपने नारायण रूप से अन्तर्धान हो गये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे नवमः अध्यायः ॥ ६ ॥

तृतीयः स्कन्धः

अथ दशमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

अन्तर्हिते भगवति ब्रह्मा लोकपितामहः ।
प्रजाः ससर्ज कतिधा दैहिकीर्मानसीर्विभुः ।।१।।

अन्तर्हिते भगवति, ब्रह्मा लोक पितामहः ।
प्रजाः ससर्ज कतिधा, दैहिकोः मानसीः विभुः ।।

२.	अन्तर्धान हो जाने पर	प्रजाः	१०.	जीवों की
१.	भगवान् नारायण के	ससर्ज	११.	रचना की
६.	ब्रह्मा जी ने	कतिधा	९.	कितने प्रका
३.	संसार के	दैहिकीः	७.	अपने शरीर
४.	पितामह	मानसीः	८.	मन से
		विभुः ।।	५.	भगवान्

ुर जी ने पूछा, हे मैत्रेय जी ! भगवान् नारायण के अन्तर्धान हो जा
तामह भगवान् ब्रह्मा जी ने अपने शरीर से और मन से कितने प्रका
वना की ।

द्वितीयः श्लोकः

ये च मे भगवन् पृष्टास्त्वय्यर्था बहुवित्तम ।
तान् वदस्वानुपूर्व्येण छिन्धि नः सर्वसंशयान् ।।२।।

ये च मे भगवन् पृष्टाः, त्वयि अर्थाः बहुवित्तम ।
तान् वदस्व आनुपूर्व्येण, छिन्धि नः सर्व संशयान् ।।

४.	जिन	तान्	९.	उन्हें
११.	और	वदस्व	१०.	बतावें
७.	मुझे	आनुपूर्व्येण	८.	क्रम से
२.	हे मैत्रेय जी !	छिन्धि	१५.	दूर करे
६.	पूछा है	नः	१२.	हमारे
३.	आप से (मैंने)	सर्व	१३.	सभी
५.	प्रश्नों को	संशयान् ।।	१४.	सन्देहों को
१.	विद्वानों में श्रेष्ठ			

ाद्वानों में श्रेष्ठ हे मैत्रेय जी ! आपसे मैंने जिन प्रश्नों को पूछा है, मुझे क्र
ौर हमारे सभी सन्देहों को दूर करें ।

तृतीयः श्लोकः

सूत उवाच—

एवं संचोदितस्तेन क्षत्त्रा कौषारवो मुनिः ।
प्रीतः प्रत्याह तान् प्रश्नान् हृदिस्थानथ भार्गव ॥३॥

पदच्छेद—

एवम् संचोदितः तेन, क्षत्त्रा कौषारवः मुनिः ।
प्रीतः प्रत्याह तान् प्रश्नान्, हृदि स्थान् अथ भार्गव ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इस प्रकार	**प्रत्याह**	१४.	उत्तर देने लगे
संचोदितः	५.	कहने पर	**तान्**	१२.	उन
तेन	२.	उन	**प्रश्नान्**	१३.	प्रश्नों का
क्षत्त्रा	३.	विदुर जी के द्वारा	**हृदि**	१०.	हृदय में
कौषारवः	७.	मैत्रेय जी	**स्थान्**	११.	स्थित
मुनिः	६.	मुनिवर	**अथ**	९.	तदनन्तर
प्रीतः	८.	प्रसन्न हुये	**भार्गव ।**	१.	हे शौनक जी !

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! उन विदुर जी के द्वारा इस प्रकार कहने पर मुनिवर मैत्रेय जी बहुत प्रसन्न हुये तदनन्तर हृदय में स्थित उन प्रश्नों का उत्तर देने लगे ।

चतुर्थः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

विरिञ्चोऽपि तथा चक्रे दिव्यं वर्षशतं तपः ।
आत्मन्यात्मानमावेश्य यदाह भगवानजः ॥४॥

पदच्छेद—

विरिञ्चः अपि तथा चक्रे, दिव्यम् वर्ष शतम् तपः ।
आत्मनि आत्मानम् आवेश्य, यद् आह भगवान् अजः ॥

शब्दार्थ—

विरिञ्चः, अपि	५.	ब्रह्मा जी ने, भी	**आत्मनि**	७.	परमात्मा में
तथा	६.	उसी प्रकार से	**आत्मानम्**	८.	अपनी आत्मा को
चक्रे	१४.	की थी	**आवेश्य**	९.	लगा कर
दिव्यम्	१०.	दिव्य	**यद्**	३.	जो
वर्ष	१२.	वर्ष तक	**आह**	४.	कहा था
शतम्	११.	एक सौ	**भगवान्**	२.	भगवान् श्री हरि ने
तपः	१३.	तपस्या	**अजः ॥**	१.	अजन्मा

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् श्री हरि ने जो कहा था ब्रह्मा जी ने भी उसी प्रकार से परमात्मा में अपनी आत्मा को लगा कर दिव्य एक सौ वर्ष तक तपस्या की थी ।

पञ्चमः श्लोकः

तद्विलोक्याब्जसम्भूतो वायुना यदधिष्ठितः ।
पद्मम्भश्च तत्कालकृतवीर्येण कम्पितम् ।।५।।

पदच्छेद—

तद् विलोक्य अब्जः सम्भूतः, वायुना यद् अधिष्ठितः ।
पद्मम् अम्भः च तत् काल, कृत वीर्येण कम्पितम् ।।

शब्दार्थ—

तद्	५.	उस	**पद्मम्**	१०.	कमल को
विलोक्य	१४.	देखा	**अम्भः**	१२.	जल को
अब्जः	१.	कमल से	**च**	११.	और
सम्भूतः	२.	उत्पन्न (तथा)	**तत्**	९.	उस
वायुना	८.	वायु के कारण	**काल कृत**	६.	प्रलय काल से उत्पन्न
यद्	३.	उसी कमल पर	**वीर्येण**	७.	प्रबल
अधिष्ठितः	४.	बैठे हुये (ब्रह्मा जी ने)	**कम्पितम् ।।**	१३.	काँपते हुये

श्लोकार्थ—कमल से उत्पन्न तथा उसी कमल पर बैठे हुये ब्रह्मा जी ने उस प्रलय काल से उत्पन्न प्रबल वायु के उस कमल को और जल को काँपते हुये देखा।

षष्ठः श्लोकः

तपसा ह्येधमानेन विद्यया चात्मसंस्थया ।
विवृद्धविज्ञानबलो न्यपाद् वायुं सहाम्भसा ।।६।।

पदच्छेद—

तपसा हि एधमानेन, विद्यया च आत्म संस्थया ।
विवृद्ध विज्ञान बलः न्यपात्, वायुम् सह अम्भसा ।।

शब्दार्थ—

तपसा	५.	तपस्या से	**विवृद्ध**	१.	महान्
हि	१०.	ही	**विज्ञान**	२.	आत्म ज्ञान से
एधमानेन	४.	बढ़ती हुई	**बलः**	३	शक्तिमान् (ब्रह्मा जी ने)
विद्यया	९.	ज्ञान से	**न्यपात्**	१४.	पी लिया
च	६.	और	**वायुम्**	१३.	उस वायु को
आत्म	७.	आत्मा में	**सह**	१२.	साथ
संस्थया ।	८.	स्थित	**अम्भसा ।।**	११.	जल के

श्लोकार्थ—महान् आत्मज्ञान से शक्तिमान् ब्रह्मा जी ने बढ़ती हुई तपस्या से और आत्मा में स्थित ज्ञान से ही जल के साथ उस वायु को पी लिया।

सप्तमः श्लोकः

तद्विलोक्य वियद्व्यापि पुष्करं यदधिष्ठितम् ।
अनेन लोकान् प्राग्लीनान् कल्पितास्मीत्यचिन्तयत् ॥७॥

तद् विलोक्य वियद् व्यापि, पुष्करम् यद् अधिष्ठितम् ।
अनेन लोकान् प्राक् लीनान्, कल्पितास्मि इति अचिन्तयत् ॥

४	उसे	अनेन	१०.	इस कमल से ही
७	देखकर	लोकान्	१३.	लोकों की
५	आकाश तक	प्राक्	११.	पूर्व कल्प में
६	फैला हुआ	लीनान्	१२.	लीन हुये
२.	कमल पर	कल्पितास्मि	१४.	रचना करूँगा
१	(ब्रह्मा जी) जिस	इति	८.	(उन्होंने) यह
३	बैठे थे	अचिन्तयत् ॥	९.	विचार किया (कि)

जी जिस कमल पर बैठे थे, उसे आकाश तक फैला हुआ देख कर उन्होंने यह
ा कि इस कमल से ही पूर्वकल्प में लीन हुये लोकों की रचना करूँगा ।

अष्टमः श्लोकः

पद्मकोशं तदाऽऽविश्य भगवत्कर्मचोदितः ।
एकं व्यभाङ्क्षीदुरुधा त्रिधा भाव्यं द्विसप्तधा ॥८॥

पद्म कोशम् तदा आविश्य, भगवत् कर्म चोदितः ।
एकम् व्यभाङ्क्षीत् उरुधा, त्रिधा भाव्यम् द्विसप्तधा ॥

५.	कमल के	एकम्	८.	एक (कमल को)
६.	मध्य में	व्यभाङ्क्षीत्	१०.	विभक्त किया (जिसे
४	तब	उरुधा	१२.	अनेक भागों में (भी
७	प्रवेश करके	त्रिधा	९.	(भूः, भुवः, स्वः) तीन
१	भगवान् श्री हरि के द्वारा	भाव्यम्	१३.	बाँटा जा सकता है
२	सृष्टि कर्म में	द्विसप्त धा ॥	११.	चौदह भागों में (अ
३.	प्रेरित (ब्रह्मा जी ने)			

ान् श्री हरि के द्वारा सृष्टि कर्म में प्रेरित ब्रह्मा जी ने तब कमल के मध्य में प्रवे
एक कमल को भूः, भुवः और स्वः तीन भागों में विभक्त किया, जिसे चौदह
ा अनेक भागों में भी बाँटा जा सकता है ।

नवमः श्लोकः

एतावाञ्जीवलोकस्य संस्थाभेदः समाहृतः ।
धर्मस्य ह्यनिमित्तस्य विपाकः परमेष्ठ्यसौ ॥९॥

पदच्छेद—

एतावान् जीव लोकस्य संस्था भेदः समाहृतः ।
धर्मस्य हि अनिमित्तस्य विपाकः परमेष्ठी असौ ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	४.	इन्हीं	**धर्मस्य**	८.	धर्म करने वाला
जीव	२.	जीव	**हि**	९.	तो
लोकस्य	१.	संसारी	**अनिमित्तस्य**	७.	निष्काम
संस्था	३.	मर्त्यलोक, अन्तरिक्ष और स्वर्गलोक	**विपाकः**	१२.	निवास करता है
			परमेष्ठी	११.	सत्यरूप ब्रह्म लोक में
भेदः	५.	तीन स्थानों में	**असौ ॥**	१०.	उस महः, जनः, तपः (और)
समाहृतः ।	६.	निवास करते हैं			

श्लोकार्थ—संसारी जीव मर्त्यलोक, अन्तरिक्ष और स्वर्ग लोक इन्हीं तीन स्थानों में निवास करते हैं। निष्काम धर्म करने वाला तो उस महः, जनः, तपः और सत्यरूप ब्रह्मलोक में निवास करता है।

दशमः श्लोकः

विदुर उवाच—

यदात्थ बहुरूपस्य हरेरद्भुतकर्मणः ।
कालाख्यं लक्षणं ब्रह्मन् यथा वर्णय नः प्रभो ॥१०॥

पदच्छेद—

यद् आत्थ बहुरूपस्य, हरेः अद्भुत कर्मणः ।
काल आख्यम् लक्षणम् ब्रह्मन्, यथा वर्णय नः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यद्	७.	जिस	**आख्यम्**	९.	नाम की
आत्थ	११.	बताया था	**लक्षणम्**	१०.	शक्ति को
बहुरूपस्य	५.	विश्वरूप	**ब्रह्मन्**	१.	ब्रह्मज्ञानी
हरेः	६.	श्रीहरि की	**यथा**	१२.	उसका
अद्भुत	३.	अलौकिक	**वर्णय**	१४.	वर्णन करें
कर्मणः ।	४.	लीलाधारी (और)	**नः**	१३.	हम से
काल	८.	काल	**प्रभो ॥**	२.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी हे प्रभो ! आपने अलौकिक लीलाधारी और विश्वरूप श्री हरि की जिस काल नाम की शक्ति को बताया था, उसका हमसे वर्णन करें।

एकादशः श्लोक.

गुणव्यतिकराकारो निर्विशेषोऽप्रतिष्ठितः ।
पुरुषस्तदुपादानमात्मानं लीलयासृजत् ।।११।।

गुण व्यतिकर आकारः निर्विशेषः अप्रतिष्ठितः ।
पुरुषः तद् उपादानम् आत्मानम् लीलया असृजत् ।।

१.	सत्वादि गुणों के	पुरुषः	६	आदि पुरुष
२.	सम्बन्ध से	तद्	७.	उस काल शक्ति की
३.	साकार होने वाले	उपादानम्	८.	सहायता से
४.	निर्गुण	आत्मानम्	९.	अपने शरीर को
५.	अनादि और अनन्त	लीलया	१०.	खेल-खेल में ही
		असृजत् ।।	११	सृष्टि रूप में करते हैं ।

त्वादि गुणों के सम्बन्ध से साकार होने वाले निर्गुण, अनादि और अनन्त आदिपुरु
ल शक्ति की सहायता से अपने शरीर को खेल-खेल में ही सृष्टि रूप मे
रते हैं ।

द्वादशः श्लोकः

विश्वं वै ब्रह्मतन्मात्रं संस्थितं विष्णुमायया ।
ईश्वरेण परिच्छिन्नं कालेनाव्यक्तमूर्तिना ।।१२।।

विश्वम् वै ब्रह्म तन्मात्रम्, संस्थितम् विष्णु मायया ।
ईश्वरेण परिच्छिन्नम्, कालेन अव्यक्त मूर्तिना ।

१.	यह संसार	मायया ।	३.	माया से
५.	ही	ईश्वरेण	८.	ईश्वर ने
४.	ब्रह्म में	परिच्छिन्नम्	१२.	पृथक् रूप में प्रकट
६.	सूक्ष्म रूप से	कालेन	११.	काल की सहायता
७.	स्थित है	अव्यक्त	९.	निराकार
२.	श्री हरि की	मूर्तिना ।।	१०.	स्वरूप वाले

यह संसार श्री हरि की माया से ब्रह्म में ही सूक्ष्म रूप से स्थित है । ईश्वर ने उसे
स्वरूप वाले काल की सहायता से पृथक रूप में प्रकट किया है ।

त्रयोदशः श्लोकः

यथेदानीं तथाग्रे च पश्चादप्येतदीदृशम् ।
सर्गो नवविधस्तस्य प्राकृतो वैकृतस्तु यः ॥१३॥

यथा इदानीम् तथा अग्रे च, पश्चात् अपि एतद् ईदृशम् ।
सर्गः नवविधः तस्य, प्राकृतः वैकृतः तु यः ॥

२.	जैसा	ईदृशम् ।	९.	ऐसा ही (रहेगा)
३.	अब (है)	सर्गः	११.	सृष्टि
४	वैसा ही	नवविधः	१२.	नौ प्रकार की है
५.	पहले (था)	तस्य	१०.	इस जगत् की
६	और	प्राकृतः	१४.	प्राकृत
७	आगे भविष्य में	वैकृतः	१६.	वैकृत (कहलाती
८.	भी	तु	१५.	तथा
१.	यह संसार	यः ॥	१३.	जो

ससार जैसा अब है वैसा ही पहले था, और आगे भविष्य में भी ऐसा ही र
त् की सृष्टि नौ प्रकार की है, जो प्राकृत तथा वैकृत कहलाती है।

चतुर्दशः श्लोकः

कालद्रव्यगुणैरस्य त्रिविधः प्रतिसंक्रमः ।
आद्यस्तु महतः सर्गो गुणवैषम्यमात्मनः ॥१४॥

काल द्रव्य गुणैः अस्य, त्रिविधः प्रतिसंक्रमः ।
आद्यः तु महतः सर्गः, गुण वैषम्यम् आत्मनः ॥

२	काल	आद्यः	८.	पहली
३.	पञ्च महाभूत (और)	तु	७.	तथा
४	सत्त्वादि गुणों के कारण	महतः	१०.	महत्तत्त्व की है
१	इस संसार का	सर्गः	९.	सृष्टि
५	तीन प्रकार का	गुण	११.	सत्त्वादि गुणों की
६.	प्रलय होता है	वैषम्यम्	१२.	विषमता ही
		आत्मनः	१३.	उसका स्वरूप है

सार का काल, पञ्च महाभूत और सत्त्वादि गुणों के कारण तीन प्रकार का
था पहली सृष्टि महत्तत्त्व की है। सत्त्वादि गुणों की विषमता ही उस सृष्टि का

पञ्चदशः श्लोकः

द्वितीयस्त्वहमो यत्र द्रव्यज्ञानक्रियोदयः ।
भूतसर्गस्तृतीयस्तु तन्मात्रो द्रव्यशक्तिमान् ॥१५॥

द्वितीयः तु अहमः यत्र, द्रव्य ज्ञान क्रिया उदयः ।
भूत सर्गः तृतीयः तु, तन्मात्रः द्रव्य शक्तिमान् ॥

दूसरी सृष्टि	उदयः ।	८.	उत्पन्न होती हैं
तथा	भूतसर्गः	१०.	भूत सर्ग नाम से (है)
अहंकार तत्त्व की है	तृतीयः	९.	तीसरी सृष्टि
जिससे	तु	११.	जो
पञ्च महाभूत	तन्मात्रः	१४.	पञ्च तन्मात्रा स्वरूप (है)
ज्ञानेन्द्रिय (और)	द्रव्य	१२.	पञ्च महाभूतों की
कर्मेन्द्रिय	शक्तिमान् ॥	१३.	उत्पादक शक्ति से युक्त

ी सृष्टि अहंकार तत्त्व की है, जिससे पञ्च महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय उत्पन्न । तीसरी सृष्टि भूत सर्ग नाम से हैं, जो पञ्च महाभूतों की उत्पादक शक्ति से युक्त ात्रा स्वरूप है ।

षोडशः श्लोकः

चतुर्थ ऐन्द्रियः सर्गो यस्तु ज्ञानक्रियात्मकः ।
वैकारिको देवसर्गः पञ्चमो यन्मयं मनः ॥१६॥

चतुर्थः ऐन्द्रियः सर्गः, यः तु ज्ञान क्रिया आत्मकः ।
वैकारिकः देव सर्गः, पञ्चमः यन्मयम् मनः ॥

चौथी	आत्मकः ।	७.	स्वरूप है
इन्द्रियों की (है)	वैकारिकः	९.	सात्त्विक अहंकर से युक्त
सृष्टि	देव	१०.	देवताओं की
जो	सर्गः	११.	सृष्टि है
तथा	पञ्चमः	८.	पाँचवी
ज्ञानेन्द्रिय (और)	यन्मयम्	१२.	जिन देवताओं से युक्त
कर्मेन्द्रिय	मनः ॥	१३.	मन रहता है

थी सृष्टि इन्द्रियों की है, जो ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय स्वरूप हैं। पाँच क अहंकार से युक्त देवताओं की सृष्टि है, जिन देवताओं से युक्त मन रहता है।

सप्तदशः श्लोकः

षष्ठस्तु तमसः सर्गो यस्त्वबुद्धिकृतः प्रभो ।
षडिमे प्राकृताः सर्गा वैकृतानपि मे शृणु ।।१७।।

षष्ठः तु तमसः सर्गः, यः तु अबुद्धि कृतः प्रभो ।
षट् इमे प्राकृताः सर्गाः वैकृतान् अपि मे शृणु ।।

१.	छठी	प्रभो ।	६.	हे विदुर जी !
७.	इस प्रकार	षट्	९.	छः
३.	अविद्या (तामिस्र, अन्ध तामिस्र, तम, मोह और महा मोह) की है	इमे	८.	ये
		प्राकृताः, सर्गाः	१०.	प्राकृत सृष्टियाँ हैं
		वैकृतान्	११.	वैकृत नाम की सृ
२.	सृष्टि	अपि	१२.	भी
४.	जो, कि,	मे, शृणु	१३.	मुझ से, सुनो
५.	अज्ञान से, उत्पन्न (है)			

। सृष्टि अविद्या तामिस्र, अन्ध तामिस्र, तम, मोह और महामोह की है, जो उत्पन्न है। हे विदुर जी ! इस प्रकार ये छः प्राकृत सृष्टियाँ हैं, अब वैकृत ष्टियों को भी मुझ से सुनो।

अष्टादशः श्लोकः

रजोभाजो भगवतो लीलेयं हरिमेधसः ।
सप्तमो मुख्यसर्गस्तु षड्विधस्तस्थुषां च यः ।।१८।।

रजोभाजः भगवतः, लीला इयम् हरि मेधसः ।
सप्तमः मुख्य सर्गः तु, षड्विधः तस्थुषाम् च यः ।।

३.	रजोगुण से युक्त	मुख्य	१३.	प्रधान
४.	भगवान् श्री हरि की	सर्गः	१४.	सृष्टि है
६.	लीला (है)	तु	११.	वह
५.	यह	षड्विधः	८.	छः प्रकार की
२.	हरण करने वाले (तथा)	तस्थुषाम्	९.	स्थावर वृक्षों की
१.	पापों का	च	१०.	सृष्टि है
१२.	सातवीं	यः ।।	७.	इसमें जो

ो का हरण करने वाले तथा रजोगुण से युक्त भगवान् श्री हरि की यह लीला । छ प्रकार की स्थावर वृक्षों की सृष्टि है वह सातवीं प्रधान सृष्टि है।

एकोनविंशः श्लोकः

वनस्पत्योषधिलतात्वक्सारा वीरुधो द्रुमाः ।
उत्स्रोतसस्तमः प्राया अन्तःस्पर्शा विशेषिणः ॥१९॥

पदच्छेद—

वनस्पति ओषधि लता, त्वक्साराः वीरुधः द्रुमाः ।
उत् स्रोतसः तमः प्रायाः, अन्तः स्पर्शाः विशेषिणः ॥

शब्दार्थ—

वनस्पति	१.	गूलर, बड आदि वनस्पति	**उत्**	७.	ऊपर को बढ़ने वाले (तथा)
ओषधि	२.	धान, गेहूँ, चना आदि	**स्रोतसः**	८.	जड़ से आहार ग्रहण करनेवाले
लता	३.	पेड़ पर चढ़ने वाली गिलोयादि	**तमः**	९.	अज्ञान से
त्वक्साराः	४.	कठोर छाल वाले बाँस बेंतादि	**प्रायाः**	१०.	युक्त
वीरुधः	५.	जमीन पर फैलने वाले तरबूजादि	**अन्तः**	११.	अपने अन्दर
			स्पर्शाः	१२.	केवल स्पर्श नामक
द्रुमाः ।	६.	फल वाले वृक्ष(आम इत्यादि)	**विशेषिणः ॥**	१३.	विशेष गुण से युक्त होते हैं

श्लोकार्थ—गूलर, बड़ आदि वनस्पति; धान, गेहूँ, चना आदि अन्न; पेड़ पर चढ़ने वाली गिलोय आदि, कठोर छाल वाले बाँस बेंत आदि; जमीन पर फैलने वाले तरबूजादि, फल वाले वृक्ष आम इत्यादि, ऊपर को बढ़ने वाले तथा जड़ से आहार ग्रहण करने वाले अज्ञान से युक्त अपने अन्दर केवल स्पर्श नामक विशेष गुण से युक्त होते हैं।

विंशः श्लोकः

तिरश्चामष्टमः सर्गः सोऽष्टाविंशद्विधो मतः ।
अविदो भूरितमसो घ्राणज्ञा हृद्यवेदिनः ॥२०॥

पदच्छेद—

तिरश्चाम् अष्टमः सर्गः, सः अष्टाविंशत् विधः मतः ।
अविदः भूरि तमसः, घ्राणज्ञाः हृदि अवेदिनः ॥

शब्दार्थ—

तिरश्चाम्	३.	पशु-पक्षियों की (है)	**अविदः**	८.	काल के ज्ञान रहित
अष्टमः	१.	आठवीं	**भूरि**	९.	अधिक
सर्गः	२.	सृष्टि	**तमसः**	१०.	तमोगुण से युक्त
सः	४.	वह	**घ्राणज्ञाः**	११.	सूँघने से ज्ञान करने वाले
अष्टाविंशत	५.	अट्ठाइस	**हृदि**	१२.	विचार शक्ति से
विधः	६.	प्रकार की	**अवेदिनः ॥**	१३.	शून्य होते हैं
मतः ।	७.	मानी गई है			

श्लोकार्थ—आठवीं सृष्टि पशु-पक्षियों की है, वह अट्ठाइस प्रकार की मानी गई है। ये काल के ज्ञान रहित, अधिक तमोगुण से युक्त, सूँघकर ज्ञान करने वाले तथा विचार शक्ति से शून्य होते हैं

एकविंशः श्लोकः

गौरजो महिषः कृष्णः सूकरो गवयो रुरुः ।
द्विशफाः पशवश्चेमे अविरुष्ट्रश्च सत्तम ।।२१।।

पदच्छेद—

गौः अजः महिषः कृष्णः, सूकरः गवयः रुरुः ।
द्विशफाः पशवः च इमे, अविः उष्ट्रः च सत्तम ।।

शब्दार्थ—

गौः, अजः	२.	गाय, बकरा	पशवः	१४.	पशु हैं
महिषः	३.	भैंस	च	८.	और
कृष्णः	४.	कृष्णसार मृग	इमे	१२.	ये
सूकरः	५.	सूअर	अविः	९.	भेंड़
गवयः	६.	नील गाय	उष्ट्रः	११.	ऊँट
रुरुः ।	७.	रुरु मृग	च	१०.	तथा।
द्विशफाः	१३.	दो खुरों वाले	सत्तम ।।	१.	हे साधु श्रेष्ठ विदुर जी !

श्लोकार्थ—हे साधु श्रेष्ठ विदुर जी ! गाय, बकरा, भैंस, कृष्णसारमृग, सूअर, नील गाय, रुरु मृग और भेंड़ तथा ऊँट ये दो खुरों वाले पशु हैं ।

द्वाविंशः श्लोकः

खरोऽश्वोऽश्वतरो गौरः शरभश्चमरी तथा ।
एते चैकशफाः छत्तः शृणु पञ्चनखान् पशून् ।।२२।।

पदच्छेद—

खरः अश्वः अश्वतरः गौरः, शरभः चमरी तथा ।
एते च एक शफाः छत्तः, शृणु पञ्चनखान् पशून् ।।

शब्दार्थ—

खरः	१.	गदहा	एते	८	ये
अश्वः	२.	घोड़ा	च	११.	अब आप
अश्वतरः	३.	खच्चर	एकशफाः	९.	एक खुर वाले (पशु हैं)
गौरः	४.	गौर मृग	छत्तः	१०.	हे विदुर जी !
शरभः	५.	शरभ	शृणु	१४.	सुनें
चमरी	७.	चमरी गाय	पञ्चनखान्	१२.	पांच नखों वाले
तथा ।	६.	तथा	पशून् ।।	१३.	पशुओं को

श्लोकार्थ—गदहा, घोड़ा, खच्चर और मृग, शरभ तथा चमरी गाय ये एक खुर वाले पशु हैं । हे विदुर जी ! अब आप पांच नखों वाले पशुओं को सुनें ।

त्रयोविंशः श्लोकः

श्वा सृगालो वृको व्याघ्रो मार्जारः शशशल्लकौ ।
सिंहः कपिर्गजः कूर्मो गोधा च मकरादयः ।।२३।।

पदच्छेद—

श्वा सृगालः वृकः व्याघ्रः, मार्जारः शश शल्लकौ ।
सिंहः कपिः गजः कूर्मः, गोधा च मकर आदयः ।।

शब्दार्थ—

श्वा, सृगालः	१.	कुत्ता, गीदड़	कपिः	८.	बन्दर
वृकः	२.	भेड़िया	गजः	९.	हाथी
व्याघ्रः	३.	बाघ	कूर्मः	१०.	कछुआ
मार्जारः	४.	बिलाव	गोधा	११.	गोह
शश	५.	खरगोश	च	१२.	और
शल्लकौ ।	६.	साही	मकर	१३.	मगर
सिंहः	७.	सिंह	आदयः ।।	१४.	इत्यादि (पाँच नख वाले पशु हैं)

श्लोकार्थ—कुत्ता, गीदड़, भेड़िया, बाघ, बिलाव, खरगोश, शाही, सिंह, बन्दर, हाथी, कछुआ, गोह और मगर इत्यादि पाँच नख वाले पशु हैं ।

चतुर्विंशः श्लोकः

कङ्कगृध्रवटश्येनभासभल्लकबर्हिणः ।
हंससारसचक्राह्वकाकोलूकादयः खगा ।।२४।।

पदच्छेद—

कङ्क गृध्र वट श्येन, भास भल्लक बर्हिणः ।
हंस सारस चक्राह्वः, काक उलूक आदयः खगा ।।

शब्दार्थ—

कङ्क	१.	बगुला	हंस	८.	हंस
गृध्र	२.	गीध	सारस	९.	सारस
वट	३.	बटेर	चक्राह्व	१०.	चकवा
श्येन	४.	बाज	काक	११.	कौआ (और)
भास	५.	भास	उलूक	१२.	उल्लू
भल्लक	६.	भल्लूक	आदयः	१३.	इत्यादि जीव
बर्हिणः ।	७.	मोर	खगाः ।।	१४.	उड़ने वाले पक्षी हैं

श्लोकार्थ—बगुला, गीध, बटेर, बाज, भास, भल्लूक, मोर, हंस, सारस, चकवा, कौआ और उल्लू इत्यादि जीव उड़ने वाले पक्षी हैं ।

पञ्चविंश: श्लोक:

अर्वाक्स्रोतस्तु नवमः क्षत्तरेकविधो नृणाम् ।
रजोऽधिकाः कर्मपरा दुःखे च सुखमानिनः ॥२५॥

अर्वाक् स्रोतः तु नवमः, क्षत्तः एकविधः नृणाम् ।
रजः अधिकाः कर्म पराः, दुःखे च सुख मानिनः ॥

७. ऊपर से नीचे की ओर है	रजः	९.	रजोगुण से युक्त
६. (आहार का) प्रवाह	अधिकाः	८.	(ये मनुष्य) अधिकतर
५. तथा इनके	कर्म, पराः	१०.	कर्म के, पराधीन
३. नवीं सृष्टि	दुःखे	१२.	दु.खदाई विषयों में
१. हे विदुर जी !	च	११.	और
४. एक ही प्रकार की है	सुख	१३.	सुख
२. मनुष्यों की	मानिनः ॥	१४.	मानने वाले है

विदुर जी ! मनुष्यों की नवीं सृष्टि एक ही प्रकार की है, तथा इनके आहार का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर है, ये -मनुष्य अधिकतर रजोगुण से युक्त, कर्म के पराधीन और दुःखदाई विषयों में सुख मानने वाले हैं ।

षड्विंश: श्लोक:

वैकृतास्त्रय एवैते देवसर्गश्च सत्तम ।
वैकारिकस्तु यः प्रोक्तः कौमारस्तूभयात्मकः ॥२६॥

वैकृताः त्रयः एव एते, देव सर्गः च सत्तम ।
वैकारिकः तु यः प्रोक्तः, कौमारः तु उभय आत्मकः ॥

१०. वैकृत (सृष्टि कही जाती हैं)	वैकारिकः	४.	इन्द्रियों के देवताओं की सृष्टि
८. (तथा मनुष्य) ये तीनों	तु, यः	३.	तथा, जो
९. ही (सृष्टियाँ)	प्रोक्तः	५.	बताई गई है (वह)
७. ये स्थावर पशु	कौमारः	१२.	सनकादि कुमारों की सृष्टि
२. देवताओं की, सृष्टि	तु	११.	किन्तु
६. और	उभय	१३.	प्राकृत-वैकृत
१. साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी !	आत्मकः ॥	१४.	दोनों प्रकार की कहलाती है

साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! देवताओं की सृष्टि तथा जो इन्द्रियों के देवताओं की सृष्टि बताई गई है, वह और ये स्थावर, पशु तथा मनुष्य ये तीनों ही सृष्टियाँ वैकृत सृष्टि कही गई हैं, किन्तु सनकादि कुमारों की सृष्टि प्राकृत-वैकृत दो प्रकार की कहलाती है ।

सप्तविंशः श्लोकः

देवसर्गश्चाष्टविधो विबुधाः पितरोऽसुराः ।
गन्धर्वाप्सरसः सिद्धा यक्षरक्षांसि चारणाः ॥२७॥

पदच्छेद—

देव सर्गः च अष्ट विधः, विबुधाः पितरः असुराः ।
गन्धर्व अप्सरसः सिद्धाः, यक्ष रक्षांसि चारणाः ॥

शब्दार्थ—

देव	१३. देवताओं की		**असुराः ।**	३. असुर
सर्गः	१४. सृष्टि (है)		**गन्धर्व**	४. गन्धर्व
च	६. और		**अप्सरसः**	५. अप्सरायें
अष्ट	११. यह आठ		**सिद्धाः**	६. सिद्ध
विधः	१२. प्रकार की		**यक्ष**	७. यक्ष
विबुधाः	१. देवता		**रक्षांसि**	८. राक्षस
पितरः	२. पितर		**चारणाः ॥**	१०. चारण

श्लोकार्थ—देवता, पितर, असुर, गन्धर्व, अप्सरायें, सिद्ध, यक्ष, राक्षस और चारण यह आठ प्रकार की देवताओं की सृष्टि है ।

अष्टाविंशः श्लोकः

भूतप्रेतपिशाचाश्च विद्याध्राः किन्नरादयः ।
दशैते विदुराख्याताः सर्गास्ते विश्वसृक्कृताः ॥२८॥

पदच्छेद—

भूत प्रेत पिशाचाः च, विद्याध्राः किन्नर आदयः ।
दश एते विदुर आख्याताः,सर्गाः ते विश्वसृक् कृताः ॥

शब्दार्थ—

भूत, प्रेत	१. भूत, प्रेत		**एते**	१०. ये
पिशाचाः	२. पिशाच		**विदुर**	७. हे विदुर जी !
च	४. और		**आख्याताः**	१४. बताई गई हैं
विद्याध्राः	३. विद्याधर		**सर्गाः**	१२. सृष्टियाँ
किन्नर	५. किन्नर		**ते**	१३. आपको
आदयः ।	६. इत्यादि (भी) देव सृष्टियाँ हैं		**विश्वसृक्**	८. ब्रह्मा जी के द्वारा
दश	११. दस		**कृताः ॥**	९. बनाई गई

श्लोकार्थ—भूत, प्रेत, पिशाच, विद्याधर और किन्नर इत्यादि भी देव सृष्टियाँ हैं । हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के द्वारा बनाई गई ये दस सृष्टियाँ आपको बताई गई हैं ।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

अतः परं प्रवक्ष्यामि वंशान्मन्वन्तराणि च ।
एवं रजःप्लुतः स्रष्टा कल्पादिष्वात्मभूर्हरिः ।
सृजत्यमोघसङ्कल्प आत्मैवात्मानमात्मना ।।२९।।

अतः परम् प्रवक्ष्यामि, वंशान् मन्वन्तराणि च ।
एवम् रजः प्लुतः स्रष्टा, कल्प आदिषु आत्मभूः हरिः ।।
सृजति अमोघ सङ्कल्पः, आत्मा एव आत्मानम् आत्मना ।।

१.	हे विदुर जी ! अब	आदिषु	९.	प्रारम्भ में
२.	इसके बाद (आपको)	आत्मभूः	१३.	ब्रह्माजी के रूप
६.	बताऊँगा	हरिः ।	१७.	श्रीहरि
३.	राजवंशों को	सृजति	२१.	प्रकट करते है
५.	मन्वन्तरों को	अमोघ	१४.	सत्य
४.	और	सङ्कल्पः	१५.	संकल्प
७.	इस प्रकार	आत्मा	१६.	भगवान्
१०.	रजोगुण से	एव	२०.	ही
११.	व्याप्त	आत्मानम्	१९.	स्वयं अपने को
१२.	विश्व के रचयिता	आत्मना ।।	१८.	अपने से
८.	सृष्टि के			

विदुर जी ! अब इसके बाद आपको राजवंशों को और मन्वन्तरों को बताऊँगा ट के प्रारम्भ में रजोगुण से व्याप्त विश्व के रचयिता ब्रह्मा जी के रूप मे वान् श्रीहरि अपने से स्वयं अपने को ही प्रकट करते हैं ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
दशम. अध्यायः ।।१०।।

तृतीयः स्कन्धः

अथ एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

चरमः सद्विशेषाणामनेकोऽसंयुतः सदा ।
परमाणुः स विज्ञेयो नृणामैक्यभ्रमो यतः ।।१।।

चरमः सद् विशेषाणाम्, अनेकः असंयुतः सदा ।
परमाणुः सः विज्ञेयः, नृणाम् ऐक्य भ्रमः यतः ।।

५.	अन्तिम	परमाणुः	८.	परमाणु
३.	पृथ्वी आदि तत्त्वों के (जो)	सः	७.	वे
६.	सूक्ष्म रूप हैं	विज्ञेयः	६.	कहे जाते हैं
४.	अनेकों	नृणाम्	११.	मनुष्यों को
२.	अलग-अलग रहने वाले	ऐक्य, भ्रमः	१२.	एक समूह का, भ्रम होता
१.	हे विदुर जी ! हमेशा	यतः ।।	१०.	जिनसे

वदुर जी ! हमेशा अलग-अलग रहने वाले पृथ्वी आदि तत्त्वों के जो अनेकों अन्तिम सूक्ष् है, वे परमाणु कहे जाते हैं, जिनसे मनुष्यों को एक समूह का भ्रम होता है ।

द्वितीयः श्लोकः

सत एव पदार्थस्य स्वरूपावस्थितस्य यत् ।
कैवल्यं परममहानविशेषो निरन्तरः ।।२।।

सतः एव पदार्थस्य, स्वरूप अवस्थितस्य यत् ।
कैवल्यम् परम महान्, अविशेषः निरन्तरः ।।

३.	पृथ्वी आदि	कैवल्यम्	६.	समुदाय है
७.	उसे ही	परम	८.	परम
४.	तत्त्वों का	महान्	६.	महान् कहते हैं (वह)
१.	अपने रूप में	अविशेषः	१०.	सामान्य रूप है (और)
२.	स्थित	निरन्तरः ।।	११.	काल भेद से शून्य (होत
५.	जो			

पने रूप में स्थित पृथ्वी आदि तत्त्वों का जो समुदाय है, उसे ही परम महान् कहते हैं मान्य रूप है और काल भेद से शून्य होता है ।

तृतीयः श्लोकः

एवं कालोऽप्यनुमितः सौक्ष्म्ये स्थौल्ये च सत्तम ।
संस्थानभुक्त्या भगवानव्यक्तो व्यक्तभुग्विभुः ॥३॥

एवम् कालः अपि अनुमितः, सौक्ष्म्ये स्थौल्ये च सत्तम ।
संस्थान भुक्त्या भगवान्, अव्यक्तः व्यक्तभुक् विभुः ॥

१०.	इसी प्रकार	सत्तम ।	१.	साधु श्रेष्ठ हे विदुर
८.	काल में	संस्थान	४.	सृष्टि आदि में
९.	भी	भुक्त्या	५.	समर्थ
१४.	अनुमान किया जाता है	भगवान्	७.	भगवान्
११.	सूक्ष्मता	अव्यक्तः	६.	निराकार
१३.	स्थूलता का	व्यक्तभुक्	२.	सांसारिक पदार्थों के
१२.	और	विभुः ॥	३.	सर्व व्यापक (और)

साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! सांसारिक पदार्थों के भोक्ता, सर्व व्यापक और सृष्टि आदि में समर्थ निराकार भगवान् काल में भी इसी प्रकार सूक्ष्मता और स्थूलता का अनुमान किया जाता है।

चतुर्थः श्लोकः

स कालः परमाणुर्वै यो भुङ्क्ते परमाणुताम् ।
सतोऽवशेषभुग्यस्तु स कालः परमो महान् ॥४॥

सः कालः परमाणुः वै, यः भुङ्क्ते परमाणुताम् ।
सतः अविशेष भुक् यः तु, सः कालः परमः महान् ॥

५.	वह	अविशेष	१०.	सामान्य रूप में
२.	काल	भुक्	११.	व्याप्त रहने वाला
६.	परमाणु-काल	यः	१२.	जो
७.	कहलाता है	तु	८.	तथा
१.	जो	सः	१४.	वह
४.	व्याप्त रहता है	कालः	१३.	काल है
३.	परमाणु रूप में	परमः	१५.	परम
९.	पृथ्वी आदि तत्त्वों के	महान् ॥	१६.	महान् (है)

जो काल परमाणु रूप में व्याप्त रहता है, वह परमाणु-काल कहलाता है तथा पृथ्वी आदि तत्त्वों के सामान्य रूप में व्याप्त रहने वाला जो काल है, वह परम महान् है ।

पञ्चमः श्लोकः

अणुर्द्वौ परमाणू स्यात्त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः ।
जालार्करश्म्यवगतः खमेवानुपतन्नगात् ।।५।।

अणु द्वौ परमाणू स्यात्, त्रसरेणुः त्रयः स्मृतः ।
जाल अर्क रश्मि अवगतः, खम् एव अनुपतन् अगात् ।।

३.	एक अणु	जाल, अर्क	१२.	झरोखे से आती हुई, सूर्य क
१	दो	रश्मि	१३.	किरणों के प्रकाश में
२	परमाणुओं का	अवगतः	१४.	दिखाई देता है
४.	होता है	खम्	८.	(वह) आकाश में
६.	एक त्रसरेणु	एव	९.	ही
५.	तीन अणुओं का	अनुपतन्	१०.	उड़ता हुआ
७.	कहलाता है	अगात् ।।	११.	गतिशील रहता है (और)

रमाणुओं का एक अणु होता है, तीन अणुओं का एक त्रसरेणु कहलाता है। वह आका ो उड़ता हुआ गतिशील रहता है और झरोखे से आती हुई सूर्य की किरणों के प्रकाश ता-सा दिखाई देता है।

षष्ठः श्लोकः

त्रसरेणुत्रिकं भुङ्क्ते यः कालः स त्रुटिः स्मृतः ।
शतभागस्तु वेधः स्यात्तैस्त्रिभिस्तु लवः स्मृतः ।।६।।

त्रसरेणु त्रिकम् भुङ्क्ते, यः कालः सः त्रुटिः स्मृतः ।
शतभागः तु वेधः स्यात्, तैः त्रिभिः तु लवः स्मृतः ।।

२	त्रसरेणुओं को (पार करने में)	शतभागः	९.	सौगुने त्रुटि का
१.	तीन	तु	८.	तथा
५	लगता है	वेधः, स्यात्	१०.	एक वेध, होता है
३	(सूर्य के प्रकाश को) जितना	तैः	१२.	उन
४.	समय	त्रिभिः	१३.	तीन वेधों का
६.	वह, त्रुटि	तु	११.	और
७.	कहलाता है	लवः, स्मृतः ।।	१४.	एक लव, होता है

त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य के प्रकाश को जितना समय लगता है, वह सम कहलाता है तथा सौगुने त्रुटि का एक वेध होता है और उन तीन वेधों का एक ल ा है।

सप्तमः श्लोकः

निमेषस्त्रिलवो ज्ञेय आम्नातस्ते त्रयः क्षणः।
क्षणान् पञ्च विदुः काष्ठां लघु ता दश पञ्च च ।।७।।

पदच्छेद—

निमेषः त्रि लवः ज्ञेयः, आम्नातः ते त्रयः क्षणः।
क्षणान् पञ्च विदुः काष्ठाम्, लघु ताः दश पञ्च च ।।

शब्दार्थ—

निमेषः	२.	निमेष	**क्षणान्**	९.	क्षणों को
त्रि लवः	१.	तीन लव को	**पञ्च**	८.	पाँच
ज्ञेयः	३.	कहते हैं	**विदुः**	११.	कहते हैं
आम्नातः	७.	कहलाता है	**काष्ठाम्**	१०.	एक काष्ठा
ते	४.	उन	**लघु**	१४.	एक लघु होता है
त्रयः	५	तीन निमेषों का	**ताः, दशपञ्च**	१३.	उन, पन्द्रह काष्ठाओं का
क्षणः।	६.	एक क्षण	**च ।।**	१२.	और

श्लोकार्थ—तीन लव को निमेष कहते हैं। उन तीन निमेषों का एक क्षण कहलाता है। पाँच क्षणों को एक काष्ठा कहते हैं और उन पन्द्रह काष्ठाओं का एक लघु होता है।

अष्टमः श्लोकः

लघूनि वै समाम्नाता दश पञ्च च नाडिका।
ते द्वे मुहूर्तः प्रहरः षड्यामः सप्त वा नृणाम् ।।८।।

पदच्छेद—

लघूनि वै समाम्नाता, दशपञ्च च नाडिका।
ते द्वे मुहूर्तः प्रहरः, षड् यामः सप्त वा नृणाम् ।।

शब्दार्थ—

लघूनि	२.	लघु को	**मुहूर्तः**	८.	एक मुहूर्त (तथा)
वै	३.	ही	**प्रहरः**	१२.	एक प्रहर होता है (जो)
समाम्नाता	५.	कहते हैं	**षड्**	९.	छः
दश पञ्च	१.	पन्द्रह	**यामः**	१४.	चौथा भाग (है)
च	६.	और	**सप्त**	११.	सात (दण्डों) का
नाडिका।	४.	एक दण्ड	**वा**	१०.	अथवा
ते, द्वे	७.	उन, दो दण्डों का	**नृणाम् ।।**	१३.	मनुष्यों के (दिन व रात का)

श्लोकार्थ—पन्द्रह लघु को ही एक दण्ड कहते हैं और उन दो दण्डों का एक मुहूर्त तथा छः अथवा सात दण्डों का एक प्रहर होता है, जो मनुष्यों के दिन अथवा रात का चौथा भाग है।

नवमः श्लोकः

द्वादशार्धपलोन्मानं चतुर्भिश्चतुरङ्गुलैः ।
स्वर्णमाषैः कृतच्छिद्रं यावत्प्रस्थजलप्लुतम् ॥९॥

पदच्छेद—

द्वादश अर्ध पल उन्मानम्, चतुर्भिः चतुर् अङ्गुलैः ।
स्वर्ण माषैः कृत छिद्रम्, यावत् प्रस्थ जल प्लुतम् ॥

शब्दार्थ—

द्वादश अर्ध	१. छः	माषैः	५. मासे
पल	२. तोले ताँबे से निर्मित	कृत	१०. करने पर (उसमें)
उन्मानम्	३. पात्र में	छिद्रम्	९. छेद
चतुर्भिः	४. चार	यावत्	११. जितने समय में
चतुर्	७. एक चार	प्रस्थ	१२. एक पाव
अङ्गुलैः ।	८. अंगुल की (सलाई से)	जल	१३. पानी
स्वर्ण	६. सोने की	प्लुतम् ॥	१४. भर जावे (उतने समय को एक दण्ड कहते हैं)

श्लोकार्थ—छः तोले ताँबे से निर्मित पात्र में चार मासे सोने की एक चार अंगुल की सलाई से छेद करने पर उसमें जितने समय में एक पाव पानी भर जावे, उतने समय को सामान्य रूप से एक दण्ड कहते हैं ।

दशमः श्लोकः

यामाश्चत्वारश्चत्वारो मर्त्यानामहनी उभे ।
पक्षः पञ्चदशाहानि शुक्लः कृष्णश्च मानद ॥१०॥

पदच्छेद—

यामाः चत्वारः चत्वारः, मर्त्यानाम् अहनी उभे ।
पक्षः पञ्च दश अहानि, शुक्लः कृष्णः च मानद ॥

शब्दार्थ—

यामाः	४. प्रहर के	पक्षः	१०. एक पक्ष (होता है जो)
चत्वारः	२. चार	पञ्च दश	८. पन्द्रह
चत्वारः	३. चार	अहानि	९. दिन और रात का
मर्त्यानाम्	५. मनुष्यों के	शुक्लः	११. शुक्ल
अहनी	६. दिन-रात	कृष्णः	१३. कृष्ण (भेद से दो प्रकार का है)
उभे ।	७. दोनों होते हैं	च	१२. और
		मानद ॥	१. हे विदुर जी !

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! चार-चार प्रहर के मनुष्यों के दिन-रात दोनों होते हैं । पन्द्रह दिन और रात का एक पक्ष होता है, जो शुक्ल और कृष्ण भेद से दो प्रकार का है ।

एकादश: श्लोक:

तयोः समुच्चयो मासः पितृणां तदहर्निशम् ।
द्वौ तावृतुः षडयनं दक्षिणं चोत्तरं दिवि ।।११।।

तयोः समुच्चयः मासः, पितृणाम् तद् अहर्निशम् ।
द्वौ तौ ऋतुः षट् अयनम्, दक्षिणम् च उत्तरम् दिवि ।।

१. उन दोनों पक्षों का	**तौ**	७. उन
२. समूह	**ऋतुः**	९. एक ऋतु (और)
३. एक मास कहलाता है	**षट्**	१२. छः महीनों का
५. पितरों का	**अयनम्**	११. एक अयन होता है
४. वह मास	**दक्षिणम्, च**	१२. दक्षिणायन, और
६. एक दिन-रात होता है	**उत्तरम्**	१४. उत्तरायण (दो प्रक
८. दो महीनों की	**दिवि ।।**	१३. स्वर्ग के लिए

दोनों पक्षों का समूह एक मास कहलाता है। वह मास पितरों का एक दिन-र
उन दो महीनों का एक ऋतु और छः महीनों का एक अयन होता है।
णायन और स्वर्ग के लिए उत्तरायण दो प्रकार का है।

द्वादश: श्लोक:

अयने चाहनी प्राहुर्वत्सरो द्वादश स्मृतः ।
संवत्सरशतं नृणां परमायुर्निरूपितम् ।।१२।।

अयने च अहनी प्राहुः, वत्सरः द्वादश स्मृतः ।
संवत्सर शतम् नृणाम्, परम आयुः निरूपितम् ।।

२. दो अयन को (देवताओं का)	**संवत्सर**	१०. वर्ष
१. हे विदुर जी !	**शतम्**	९. (इसी मान से) सौ
३ एक दिन-रात	**नृणाम्**	८. मनुष्यों की
४. कहा गया है (जिसे)	**परम**	१२. अधिकतम
५. एक वर्ष (अथवा)	**आयुः**	११. आयु
६. बारह महीने	**निरूपितम् ।।**	१२. बतलाई गई है
७. कहते हैं		

दुर जी ! दो अयन को देवताओं का एक दिन-रात कहा गया है, जिसे एक व
ह महीने कहते हैं। इसी मान से मनुष्यों की सौ वर्ष आयु अधिकतम बतलाई

त्रयोदश: श्लोक:

ग्रहर्क्षताराचक्रस्थः परमाण्वादिना जगत् ।
संवत्सरावसानेन पर्येत्यनिमिषो विभुः ।।१३।।

ग्रह ऋक्ष तारा चक्रस्थः, परमाणु आदिना जगत् ।
संवत्सर अवसानेन, पर्येति अनिमिषः विभुः ।।

चन्द्रमादि ग्रह	जगत् ।	११.	बारह राशि रूप भुवन का
अश्विनी आदि नक्षत्र	संवत्सर	७.	वर्ष
(और) तारा	अवसानेन	८.	पर्यन्त काल में
मण्डल के अधिष्ठाता	पर्येति	१२.	एक भ्रमण करते हैं
परमाणु	अनिमिषः	६.	काल रूप भगवान् सूर्य
इत्यादि से लेकर	विभुः ।।	५.	सर्वव्यापी

ग्रह, अश्विनी आदि नक्षत्र और तारा मण्डल के अधिष्ठाता सर्वव्यापी काल रूप सूर्य वर्ष पर्यन्त काल में परमाणु इत्यादि से लेकर बारह राशिरूप भुवन का एक रते हैं ।

चतुर्दश: श्लोक:

संवत्सरः परिवत्सर इडावत्सर एव च ।
अनुवत्सरो वत्सरश्च विदुरैवं प्रभाष्यते ।।१४।।

संवत्सरः परिवत्सरः, इडावत्सरः एव च ।
अनुवत्सरः वत्सरः च, विदुर एवम् प्रभाष्यते ।।

सूर्य के सम्बन्ध से संवत्सर	अनुवत्सरः	८.	चन्द्र के सम्बन्ध से अनुवत्सर
सम्बन्ध से परिवत्सर	वत्सरः	१०.	नक्षत्र के सम्बन्ध से वत्सर
सम्बन्ध से इडावत्सर	च	९.	तथा
एवं (सवन के)	विदुर	१.	हे विदुर जी !
और (बृहस्पति के)	एवम्	२.	इस प्रकार (यह वर्ष ही)
	प्रभाष्यते ।।	११.	कहा गया है

जी ! इस प्रकार यह वर्ष ही सूर्य के सम्बन्ध से संवत्सर और बृहस्पति के सम्बन्ध से र एवं सवन के सम्बन्ध से इडावत्सर, चन्द्र के सम्बन्ध से अनुवत्सर तथा नक्षत्र के वत्सर कहा गया है ।

पञ्चदशः श्लोकः

यः सृज्यशक्तिमुरुधोच्छ्वसयन् स्वशक्त्या,
पुंसोऽभ्रमाय दिवि धावति भूतभेदः।
कालाख्यया गुणमयं क्रतुभिर्वितन्वंस्,
तस्मै बलिं हरत वत्सरपञ्चकाय ॥

यः सृज्य शक्तिम् उरुधा उच्छ्वसयन् स्व शक्त्या,
पुंसः अभ्रमाय दिवि धावति भूत भेदः।
काल आख्यया गुणमयम् क्रतुभिः वितन्वन्,
तस्मै बलिम् हरत वत्सर पञ्चकाय ॥

६.	जो भगवान् सूर्य	भेदः।	१६.	भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले
११.	अंकुर आदि उत्पादन	काल	७.	काल
१२.	शक्ति को	आख्यया	८.	नाम की
१३.	अनेक प्रकार से	गुण	२२.	स्वर्गादि
१४.	जीवनदान देते हैं	मयम्	२३.	फल को
९.	अपनी	क्रतुभिः	२१.	यज्ञों से उत्पन्न
१०.	शक्ति से	वितन्वन्,	२४.	प्रदान करते हैं
१७.	मनुष्यों के	तस्मै	३.	उन भगवान् सूर्य की
१८.	मोह को दूर करने के लिये	बलिम्	४.	भेंट चढ़ा कर
१९.	आकाश में	हरत	५.	पूजा करें
२०.	भ्रमण करते हैं तथा	वत्सर	२.	वत्सरों के निर्माता
१५.	पञ्च महाभूतों में	पञ्चकाय ॥	१.	हे विदुर जी ! आप पाँचों

विदुर जी ! आप पाँचों वत्सरों के निर्माता उन भगवान् सूर्य की भेंट चढ़ा कर पूजा करें, उ
भगवान् सूर्य काल नाम की अपनी शक्ति से अंकुर आदि उत्पादन शक्ति को अनेक प्रकार
जीवन दान देते हैं। पञ्च महाभूतों में भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले वे सूर्य भगवान् मनुष्यों के मो
को दूर करने के लिये आकाश में भ्रमण करते हैं तथा यज्ञों से उत्पन्न स्वर्गादि फल को प्रदा
करते हैं।

षोडश: श्लोक:

पितृदेव मनुष्याणामायुः परमिदं स्मृतम् ।
परेषां गतिमाचक्ष्व ये स्युः कल्पाद् बहिर्विदः ॥१६॥

पितृ देव मनुष्याणाम्, आयुः परम् इदम् स्मृतम् ।
परेषाम् गतिम् आचक्ष्व, ये स्युः कल्पाद् बहिः विदः ॥

पितर (और)	परेषाम्	१३.	उनकी
हे मुनिवर ! आपने देवता	गतिम्,आचक्ष्व	१४.	आयु, बतावें
मनुष्यों की	ये	८.	जो
आयु	स्युः	१२.	हैं
पूरी	कल्पाद्	९.	त्रिलोकी से
यह	बहिः	१०.	बाहर रहने वाले
बताई (अब)	विदः ॥	११.	सनकादि ज्ञानी मु

! आपने देवता, पितर और मनुष्यों की यह पूरी आयु बताई । अब जो
ने वाले सनकादि ज्ञानी मुनि जन हैं, उनकी आयु बतावें ।

सप्तदश: श्लोक:

भगवान् वेद कालस्य, गतिं भगवतो ननु ।
विश्वं विचक्षते धीरा योगराद्धेन चक्षुषा ॥१७॥

भगवान् वेद कालस्य, गतिम् भगवतः ननु ।
विश्वम् विचक्षते धीराः, योग राद्धेन चक्षुषा ॥

हे मैत्रेय जी ! आप	विश्वम्	१०.	सम्पूर्ण जगत् को
जानते हैं (क्योंकि)	विचक्षते	११	देखते हैं
काल की	धीराः	७.	ज्ञानी मुनिजन
गति को	योग, राद्धेन	८.	योग के द्वारा, प्राप
भगवान्	चक्षुषा ॥	९.	दिव्य दृष्टि से
भली भाँति			

जी ! आप भगवान् काल की गति को भली-भाँति जानते हैं, क्योंकि ज्ञा
ारा प्राप्त दिव्य दृष्टि से सम्पूर्ण जगत् को देखते हैं ।

अष्टादशः श्लोकः

कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
दिव्यैर्द्वादशभिर्वर्षैः सावधानं निरूपितम् ॥१८॥

कृतम् त्रेता द्वापरम् च, कलिः च इति चतुर्युगम् ।
दिव्यैः द्वादशभिः वर्षैः, सावधानम् निरूपितम् ॥

१.	हे विदुर जी ! सत्ययुग	**चतुर्युगम् ।**	७.	चारों युग
२.	त्रेता	**दिव्यैः**	९.	देवताओं के
३.	द्वापर	**द्वादशभिः**	१०.	बारह हजार
४.	और	**वर्षैः**	११.	वर्षों के बराबर
५.	कलि	**सावधानम्**	८.	संध्या और संध्यांश
६.	ये	**निरूपितम् ॥**	१२.	बताये गये हैं

दुर जी ! सत्ययुग; त्रेता, द्वापर और कलि ये चारों युग सन्ध्या और सन्ध्या ताओं के बाहर हजार वर्षों के बराबर बताये गये हैं ।

एकोनविंशः श्लोकः

चत्वारि त्रीणि द्वे चैकं, कृतादिषु यथाक्रमम् ।
संख्यातानि सहस्राणि द्विगुणानि शतानि च ॥१९॥

चत्वारि त्रीणि द्वे च एकम्, कृत आदिषु यथा क्रमम् ।
संख्यातानि सहस्राणि, द्विगुणानि शतानि च ॥

४.	चार	**क्रमम् ।**	३.	क्रमशः
५.	तीन	**संख्यातानि**	१०.	होते हैं
६.	दो	**सहस्राणि**	९.	हजार (दिव्य वर्ष)
७.	और	**द्विगुणानि**	१२.	दुगुने
८	एक	**शतानि**	१३.	सौ (दिव्य वर्ष होते
२.	सत्त्वादि चारों युगों में	**च ॥**	११.	तथा (उनके संध्य संध्यांशों में)
१.	इन			

सत्त्वादि चारों युगों में क्रमशः चार, तीन, दो और एक हजार दिव्य वर्ष होते ; सध्या और सन्ध्यांशों में उन संख्याओं से दुगुने सौ वर्ष होते हैं ।

विंशः श्लोकः

संध्यांशयोरन्तरेण यः कालः शतसंख्ययोः ।
तमेवाहुर्युगं तज्ज्ञा यत्र धर्मो विधीयते ॥२०॥

संध्या अंशयोः अन्तरेण, यः कालः शत संख्ययोः ।
तम् एव आहुः युगम् तज्ज्ञाः, यत्र धर्मः विधीयते ॥

३	युग के आरम्भ में (संध्या और)	तम्, एव	९.	उसे ही
		आहुः	११.	कहते हैं
४.	युग के अन्त में (संध्यांशों) के	युगम्	१०.	युग
५	बीच में	तज्ज्ञाः	८.	समय के जानकार
६.	जो	यत्र	१२.	जिसमें
७.	समय है	धर्मः	१३.	एक विशेष धर्म का
१.	(दिव्य वर्ष के) सैकड़ों की	विधीयते ॥	१४.	विधान होता है
२.	संख्या से युक्त			

वर्ष के सैकड़ों की संख्या से युक्त युग के आरम्भ में संध्या और युग के अन्त में दोनों के बीच में जो समय है, समय के जानकार उसे ही युग कहते हैं, जि ष धर्म का विधान होता है।

एकविंशः श्लोकः

धर्मश्चतुष्पान्मनुजान् कृते समनुवर्तते ।
स एवान्येष्वधर्मेण व्येति पादेन वर्धता ॥२१॥

धर्मः चतुष्पाद् मनुजान्, कृते समनुवर्तते ।
सः एव अन्येषु अधर्मेण, व्येति पादेन वर्धता ॥

३	धर्म	सः एव	६.	वही (धर्म)
४.	चारों चरण से	अन्येषु	७.	अन्य युगों में
२	मनुष्यों में	अधर्मेण	८.	अधर्म की
१.	सत्ययुग के	व्येति	११.	क्षीण होता जाता है
५	रहता है	पादेन	१०.	एक-एक चरण से
		वर्धता ॥	९.	वृद्धि होने के कारण

युग के मनुष्यों में धर्म चारों चरण से रहता है। वही धर्म अन्य युगों में अधर्म के कारण एक-एक चरण से क्षीण होता जाता है।

द्वाविंशः श्लोकः

त्रिलोक्या युगसाहस्रं बहिराब्रह्मणो दिनम् ।
तावत्येव निशा तात यन्निमीलति विश्वसृक् ॥२२॥

त्रिलोक्याः युग साहस्रम्, बहिः आब्रह्मणः दिनम् ।
तावती एव निशा तात, यत् निमीलति विश्वसृक् ॥

२. त्रिलोकी के		तावती	८. उतने
६. चतुर्युगी के बराबर		एव	९. ही (समय की)
५. एक हजार		निशा	१०. एक रात (होती है)
३. बाहर		तात	१. हे प्यारे विदुर जी
४. महर्लोक से ब्रह्मलोक तक		यत्	११. जिसमें
७. एक दिन (होता है)		निमीलति	१३. शयन करते हैं
		विश्वसृक् ॥	१२. जगत् के रचयिता

यारे विदुर जी ! त्रिलोकी के बाहर महर्लोक से ब्रह्मलोक तक ए र्युगी के बराबर एक दिन होता है तथा उतने ही समय की एक रात होती त के रचयिता ब्रह्मा जी शयन करते हैं ।

त्रयोविंशः श्लोकः

निशावसान आरब्धो लोककल्पोऽनुवर्तते ।
यावद्दिनं भगवतो मनून् भुञ्जंश्चतुर्दश ॥२३॥

निशा अवसाने आरब्धः, लोक कल्पः अनुवर्तते ।
यावत् दिनम् भगवतः, मनून् भुञ्जन् चतुर्दश ॥

१. रात के		यावत्	३. जब तक
२. बीतने पर		दिनम्	५. दिन रहता है (तब
८. प्रारम्भ		भगवतः	४. ब्रह्मा जी का
६. जगत् की		मनून्	११. मनु
७. सृष्टि का क्रम		भुञ्जन्	१२. भोग करते हैं
९. रहता है (उसमें)		चतुर्दशः	१०. चौदह

के बीतने पर जब तक ब्रह्मा जी का दिन रहता है, तब तक जगत् की सृष्टि म्भ रहता है, उसमें चौदह मनु भोग करते हैं ।

चतुर्विंशः श्लोकः

स्वं स्वं कालं मनुर्भुङ्क्ते साधिकां ह्येकसप्ततिम् ।
मन्वन्तरेषु मनवस्तद्वंश्या ऋषयः सुराः ।
भवन्ति चैव युगपत्सुरेशाश्चानु ये च तान् ॥२४॥

स्वम् स्वम् कालम् मनुः भुङ्क्ते, साधिकाम् हि एक सप्ततिम् ।
मन्वन्तरेषु मनवः, तद् वंश्याः ऋषयः सुराः ।
भवन्ति च एव युगपत्, सुरेशाः च अनु ये च तान् ॥

अपने अपने अधिकार का	ऋषयः सुराः ।	१०.	सप्तर्षि, देवता
काल तक	भवन्ति	१८.	रहते हैं
प्रत्येक मनु	च	११.	और
भोग करते हैं	एव	१७.	ही
कुछ अधिक ही	युगपत्	१६.	साथ-साथ
एकहत्तर चतुर्युगी से	सुरेशाः, च	१२.	इन्द्र तथा
प्रत्येक मन्वन्तरों में	अनु	१५.	अनुयायी (गन्धर्व
भिन्न-भिन्न मनु	ये, च	१३.	जो और
उनके वंशज राजा लोग	तान् ॥	१४.	उनके

ु एकहत्तर चतुर्युगी से कुछ अधिक ही काल तक अपने-अपने अधिकार का
: मन्वन्तरों में भिन्न-भिन्न मनु, उनके वंशज राजा लोग, सप्तर्षि, देवता
और उनके अनुयायी गन्धर्व आदि हैं, वे साथ-साथ ही रहते हैं ।

पञ्चविंशः श्लोक

एष दैनन्दिनः सर्गो ब्राह्मस्त्रैलोक्यवर्तनः ।
तिर्यङ्नृपितृदेवानां संभवो यत्र कर्मभिः ॥२५॥

एषः दैनन्दिनः सर्गः, ब्राह्मः त्रैलोक्यः वर्तनः ।
तिर्यङ् नृ पितृ देवानाम्, सम्भवः यत्र कर्मभिः ॥

यह	तिर्यङ्	९.	पशु-पक्षी
प्रतिदिन की	नृ, पितृ	१०.	मनुष्य, पितर औ
सृष्टि है	देवानाम्	११.	देवताओं की
ब्रह्मा जी की	सम्भवः	१२.	उत्पत्ति होती है
त्रिलोकी की	यत्र	५.	जिसमें
रचना होती है (इसमें)	कर्मभिः ॥	८.	अपने पूर्व कर्मानुस

जी की प्रतिदिन की सृष्टि है, जिसमें त्रिलोकी की रचना होती है । .
नुसार पशु-पक्षी, मनुष्य, पितर और देवताओं की उत्पत्ति होती है ।

षड्विंश: श्लोक:

मन्वन्तरेषु भगवान्, बिभ्रत्सत्त्वं स्वमूर्तिभिः ।
मन्वादिभिरिदं विश्वमवत्युदितपौरुषः ।।२६।।

मन्वन्तरेषु भगवान्, बिभ्रत् सत्त्वम् स्व मूर्तिभिः ।
मनु आदिभिः इदम् विश्वम्, अवति उदित पौरुषः ।।

१	(उन) मन्वन्तरों में	मनु आदिभिः	८.	मनु इत्यादि
२	(वे) भगवान्	इदम्	१०.	इस
६	धारण करके	विश्वम्	११.	जगत् की
५.	सत्त्वगुण को	अवति	१२.	रक्षा करते हैं
७	अपनी	उदित	४.	प्रकट करके (और)
९.	मूर्तियों से	पौरुषः ।।	३.	सृष्टि रचना रूप पराक्र

मन्वन्तरों में वे भगवान् सृष्टि रचना रूप पराक्रम को प्रकट करके और सत्त्वगु ण करके अपनी मनु इत्यादि मूर्तियों से इस जगत् की रक्षा करते हैं ।

सप्तविंश: श्लोक:

तमोमात्रामुपादाय प्रतिसंरुद्धविक्रमः ।
कालेनानुगताशेष आस्ते तूष्णीं दिनात्यये ।।२७।।

तमोमात्राम् उपादाय, प्रति संरुद्ध विक्रमः ।
कालेन अनुगत अशेषे, आस्ते तूष्णीम् दिन अत्यये ।।

८.	तमोगुण को	अनुगत	५.	हो जाने पर (वे भगवान
९.	स्वीकार करके	अशेषे	२.	ब्रह्मा जी के पूरे
७.	रोक करके (तथा)	आस्ते	११.	स्थित रहते हैं
६.	सृष्टि को	तूष्णीम्	१०.	निश्चेष्ट भाव से
१.	काल क्रम से	दिन	३.	दिन की
		अत्यये ।।	४.	समाप्ति

क्रम से ब्रह्मा जी के पूरे दिन की समाप्ति हो जाने पर वे भगवान् सृष्टि को रोक तमोगुण को स्वीकार करके निश्चेष्ट भाव से स्थित रहते हैं ।

अष्टाविंश: श्लोक:

तमेवान्वपिधीयन्ते लोका भूरादयस्त्रयः ।
निशायामनुवृत्तायां निर्मुक्तशशिभास्करम् ।।२८।।

तम् एव अनु अपिधीयन्ते, लोकाः भूः आदयः त्रयः ।
निशायाम् अनुवृत्तायाम्, निर्मुक्त शशि भास्करम् ।।

उन	**निशायाम्**	४.	ब्रह्मा जी की र
ही (भगवान् में)	**अनुवृत्तायाम्**	५.	हो जाने पर
लीन हो जाते हैं	**निर्मुक्त**	३.	रहित
लोक	**शशि**	१.	चन्द्रमा (और)
भूः भुवः स्वः	**भास्करम् ।।**	२.	सूर्य से
तीनों			

ौर सूर्य से रहित ब्रह्मा जी रात हो जाने पर भूः भुवः स्वः तीनो
ें लीन हो जाते हैं ।

एकोनत्रिंश: श्लोक:

त्रिलोक्यां दह्यमानायां शक्त्या सङ्कर्षणाग्निना ।
यान्त्यूष्मणा महर्लोकाज्जनं भृग्वादयोऽर्दिताः ।।२९।।

त्रिलोक्याम् दह्यमानायाम्, शक्त्या संङ्कर्षण अग्निना ।
यान्ति ऊष्मणा महर्लोकात्, जनम् भृगु आदयः अर्दिताः ।।

त्रिलोकी के	**यान्ति**	११.	चले जाते है
जलते रहने पर (उसके)	**ऊष्मणा**	६.	ताप से
शक्ति से	**महर्लोकात्**	९.	महर्लोक से
शेषनाग के मुख की	**जनम्**	१०.	जन लोक को
अग्नि रूप	**भृगु, आदयः**	८.	भृगु, इत्यादि म
	अर्दिताः ।।	७.	पीड़ित होकर

मुख की अग्नि रूप शक्ति से त्रिलोकी के जलते रहने पर उसके त
इत्यादि महर्षिगण महर्लोक से ऊपर जन लोक को चले जाते हैं ।

त्रिंश: श्लोक:

तावत्त्रिभुवनं सद्यः कल्पान्तैधितसिन्धवः ।
प्लावयन्त्युत्कटाटोपचण्डवातेरितोर्मयः ॥३०॥

तावत् त्रिभुवनम् सद्यः कल्पान्त एधित सिन्धवः ।
प्लावयन्ति उत्कट आटोप चण्ड वात ईरित ऊर्मयः ॥

१.	उस समय	प्लावयन्ति	१२.	डुबो देते हैं
१०.	त्रिलोकी को	उत्कट	८.	भयंकर
११.	तत् काल	आटोप	७.	ऊँची-ऊँची
४.	प्रलय काल की	चण्ड वात	५.	प्रचण्ड वायु से
२.	बढ़े हुये	ईरित	६.	उछलती हुई
३.	सातों समुद्र	ऊर्मयः ॥	९.	लहरों से

समय बढ़े हुये सातों समुद्र प्रलयकाल की प्रचण्ड वायु से उछलती हुई कर लहरों से त्रिलोकी को तत्काल डुबो देते हैं।

एकत्रिंश: श्लोक:

अन्तः स तस्मिन् सलिल आस्तेऽनन्तासनो हरिः ।
योगनिद्रानिमीलाक्षः स्तूयमानो जनालयैः ॥३१॥

अन्तः सः तस्मिन् सलिले, आस्ते अनन्त आसनः हरिः ।
योग निद्रा निमील अक्षः, स्तूयमानः जन आलयैः ॥

३.	भीतर	हरिः ।	५.	भगवान् श्रीहरि
४	वे	योग	९.	योग
१.	उस	निद्रा	१०.	निद्रा से
२.	जल के	निमिलाक्षः	११.	आँखें बन्द करके
१४.	शयन करते हैं	स्तूयमानः	८.	पूजित होते हुये
१२.	शेषनाग की	जन	६.	जनलोक के
१३.	शय्या पर	आलयैः ॥	७.	निवासी (महर्षि

जल के भीतर के भगवान् श्रीहरि जनलोक के निवासी महर्षियों से पूजि निद्रा से आँखें बन्द करके शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं।

द्वात्रिंश: श्लोक:

एवंविधैरहोरात्रैः कालगत्योपलक्षितैः ।
अपक्षितमिवास्यापि परमायुर्वयःशतम् ।।३२।।

पदच्छेद—

एवं विधैः अहोरात्रैः, कालगत्या उपलक्षितैः ।
अपक्षितम् इव अस्य अपि, परम आयुः वयः शतम् ।।

शब्दार्थ—

एवं विधैः	१.	इस प्रकार	अस्य	५.	उन (ब्रह्मा जी)
अहोरात्रैः	४.	दिन रात के हेर-फेर से	अपि	१०.	भी
कालगत्या	२.	काल की गति से	परम	८.	पूरी
उपलक्षितैः ।	३.	प्रतीत होने वाले	आयुः	९.	आयु
अपक्षितम्	११.	बीती हुई	वयः	७.	वर्ष की
इव	१२.	सी (दिखायी देती है)	शतम् ।।	६.	एक-सौ

श्लोकार्थ—इसी प्रकार काल की गति से प्रतीत होने वाले दिन-रात के हेर-फेर से उन ब्रह्मा जी की एक सौ वर्ष की पूरी आयु भी बीती हुई सी दिखायी देती है।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

यदर्धमायुषस्तस्य परार्धमभिधीयते ।
पूर्वः परार्धोऽपक्रान्तो ह्यपरोऽद्य प्रवर्तते ।।३३।।

पदच्छेद—

यद् अर्धम् आयुषः तस्य, परार्धम् अभिधीयते ।
पूर्वः परार्धः अपक्रान्तः, हि अपरः अद्य प्रवर्तते ।।

शब्दार्थ—

यद्	३.	जो	पूर्वः परार्धः	७.	उसमें पहला परार्ध
अर्धम्	४.	आधा भाग है उसे	अपक्रान्तः	८.	बीत चुका है
आयुषः	२.	आयु का	हि	९.	तथा
तस्य	१.	उन ब्रह्मा जी की	अपरः	१०.	दूसरा परार्ध
परार्धम्	५.	परार्ध	अद्य	११.	अब
अभिधीयते ।	६.	कहते हैं	प्रवर्तते ।।	१२.	चल रहा है

श्लोकार्थ– उन ब्रह्मा जी की आयु का जो आधा भाग है, उसे परार्ध कहते हैं, उसमें पहला परार्ध बीत चुका है, तथा दूसरा परार्ध अब चल रहा है।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

पूर्वस्यादौ परार्धस्य ब्राह्मो नाम महानभूत् ।
कल्पो यत्राभवद् ब्रह्मा शब्दब्रह्मेति यं विदुः ।।३४।।

पूर्वस्य आदौ परार्धस्य ब्राह्मः नाम महान् अभूत् ।
कल्पः यत्र अभवद् ब्रह्मा शब्द ब्रह्मेति यं विदुः ।।

१. पहले		कल्पः	७. कल्प
३. प्रारम्भ में		यत्र	९. जिसमें
२. परार्ध के		अभवद्	११. उत्पन्न हुये थे
४. ब्राह्म		ब्रह्मा	१०. ब्रह्मा जी
५. नाम का (एक)		शब्द	१३. शब्द ब्रह्म
६. बहुत बड़ा		ब्रह्मेति	१४. इस नाम से
८. हुआ था		यम्	१२. जिन्हें (पंडित ज
		विदुः	१५. जानते हैं

' परार्ध के प्रारम्भ में ब्रह्म नाम का एक बहुत बड़ा कल्प हुआ था। जिसमें
न्न हुये थे, जिन्हें पंडित जन शब्द ब्रह्म इस नाम से जानते हैं।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तस्यैव चान्ते कल्पोऽभूद्, यं पाद्ममभिचक्षते ।
यद्धरेर्नाभिसरस आसील्लोकसरोरुहम् ।।३५।।

तस्य एव च अन्ते कल्पः अभूत्, यम् पाद्मम् अभिचक्षते ।
यद् हरेः नाभि सरसः, आसीत् लोक सरोरुहम् ।।

२. उसी (परार्ध के)	यद्	९. जिसमें
१. तथा	हरेः	१०. भगवान् विष्णु
३. अन्त में	नाभिः	११. नाभि रूपी
४. दूसरा कल्प	सरसः	१२. सरोवर से
५. हुआ था	आसीत्	१५. उत्पन्न हुआ था
६. जिसे	लोक	१३. जगत् की सृष्टि
७. पाद्म कल्प	सरोरुहम् ।।	१४. कमल
८. कहते हैं		

' उसी परार्ध के अन्त में दूसरा कल्प हुआ था, जिसे पाद्म कल्प कहते है, जिस
ष्णु के नाभिरूप सरोवर से जगत् की सृष्टि का कारण कमल उत्पन्न हुआ। थ

षट्त्रिंश: श्लोक:

अयं तु कथितः कल्पो द्वितीयस्यापि भारत ।
वाराह इति विख्यातो यत्रासीत्सूकरो हरिः ॥३६॥

पदच्छेद—

अयम् तु कथितः कल्पः, द्वितीयस्य अपि भारत ।
वाराह इति विख्यातः, यत्र आसीत् सूकरः हरिः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	२.	यह	**वाराह**	८.	वाराह
तु	७.	जो	**इति**	९.	नाम से
कथितः	६.	चल रहा है	**विख्यातः**	१०.	प्रसिद्ध है
कल्पः	४.	पूर्व कल्प	**यत्र**	११.	जिसमें
द्वितीयस्य	३.	दूसरे परार्ध का	**आसीत्**	१४.	अवतार लिया था
अपि	५.	ही	**सूकरः**	१३.	सूकर रूप में
भारत ।	१.	हे विदुर जी !	**हरिः ॥**	१२.	भगवान् विष्णु ने

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! यह दूसरे परार्ध का पूर्व कल्प ही चल रहा है जो वाराह नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें भगवान् विष्णु ने सूकर रूप में अवतार लिया था ।

सप्तत्रिंश: श्लोक:

कालोऽयं द्विपरार्धाख्यो निमेष उपचर्यते ।
अव्याकृतस्यानन्तस्य अनादेर्जगदात्मनः ॥३७॥

पदच्छेद—

कालः अयम् द्विपरार्ध आख्यः, निमेषः उपचर्यते ।
अव्याकृतस्य अनन्तस्य, अनादेः जगत् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

कालः	४.	समय	**अव्याकृतस्य**	५.	अव्यक्त
अयम्	३.	यह	**अनन्तस्य,**	६.	अनन्त
द्विपरार्ध	१.	दो परार्ध	**अनादेः**	७.	अनादि (और)
आख्यः	२.	नाम से प्रसिद्ध	**जगत्**	८.	विश्व की
निमेषः	१०.	एक निमेष	**आत्मनः ॥**	९.	आत्मा (भगवान् विष्णु का)
उपचर्यते ।	११.	कहलाता है			

श्लोकार्थ—दो परार्ध नाम से प्रसिद्ध यह समय अव्यक्त, अनन्त, अनादि और विश्व की आत्मा भगवान् विष्णु का एक निमेष कहलाता है ।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

कालोऽयं परमाण्वादिर्द्विपरार्धान्त ईश्वरः ।
नैवेशितुं प्रभुर्भूम्न ईश्वरो धाममानिनाम् ॥३८॥

कालः अयम् परमाणु आदिः द्वि परार्ध अन्तः ईश्वरः ।
न एव ईशितुम् प्रभुः भूम्नः, ईश्वरः धाम मानिनाम् ॥

७.	काल	न एव	१०.	नहीं
५.	यह	ईशितुम्	९.	शासन करने मे
१.	परमाणु से	प्रभुः	११.	समर्थ है (किन्तु)
२.	लेकर	भूम्नः	८.	अनन्त परमात्मा
३.	दो परार्ध	ईश्वरः	१४.	शासक है
४.	तक फैला हुआ	धाम	१२.	शरीर
६.	सर्वसमर्थ	मानिनाम् ॥	१३.	धारण करने व का ही)

ाणु से लेकर दो परार्ध तक फैला हुआ यह सर्वसमर्थ काल अनन्त परमात्मा ने में समर्थ नहीं है, किन्तु शरीर धारण करने वाले जीवों का ही शासक है।

नवत्रिंश: श्लोक:

विकारैः सहितो युक्तैर्विशेषादिभिरावृतः ।
आण्डकोशो बहिरयं पञ्चाशत्कोटिविस्तृतः ॥३९॥

विकारैः सहितः युक्तैः, विशेष आदिभिः आवृतः ।
आण्ड कोशः बहिः अयम्, पञ्चाशत् कोटि विस्तृतः ॥

५.	एकादश इन्द्रिय आदि	आण्डकोशः	८.	ब्रह्माण्ड
६.	विकारों से युक्त	बहिः	९.	अन्दर से
१.	प्रकृति	अयम्	७.	यह
२.	महत्तत्व अहंतत्त्व	पञ्चाशत्	१०.	पचास
३.	और पंचतन्मात्राओं से	कोटि	११.	करोड़ योजन
४.	घिरा हुआ तथा	विस्तृतः ॥	१२.	फैला हुआ है

ते महत्तत्व, अहंतत्व और पञ्चतन्मात्राओं से घिरा हुआ तथा एकादश च महाभूत रूप सोलह विकारों से युक्त यह ब्रह्माण्ड अन्दर से पचास करोड़ ा है।

चत्वारिंश: श्लोक:

दशोत्तराधिकैर्यत्र प्रविष्टः परमाणुवत् ।
लक्ष्यतेऽन्तर्गताश्चान्ये कोटिशो ह्यण्डराशयः ।।४०।।

दश उत्तर अधिकैः यत्र, प्रविष्टः परमाणुवत् ।
लक्ष्यते अन्तर्गताः च अन्ये, कोटिशः हि अण्ड राशयः ।।

३.	दशगुने	**लक्ष्यते**	६.	दिखाई देते है
२.	एक के बाद एक	**अन्तर्गताः**	१३.	विद्यमान है
४.	बड़े (सात)	**च**	७.	और
१.	जिस ब्रह्माण्ड में	**अन्ये**	८.	दूसरे
५.	आवरण	**कोटिशः**	१०.	करोड़ों
१२.	परमाणु के समान	**हि**	११.	ही (ब्रह्माण्ड)
		अण्डराशयः ।।	९.	छोटे-छोटे

जिस ब्रह्माण्ड में एक के बाद एक दशगुने बड़े सात आवरण दिखायी देते ; छोटे-छोटे करोड़ों ही ब्रह्माण्ड परमाणु के समान विद्यमान हैं ।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ।
विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषस्य महात्मनः ।।४१।।

तद् आहुः अक्षरम् ब्रह्म, सर्व कारण कारणम् ।
विष्णोः धाम परम् साक्षात्, पुरुषस्य महात्मनः ।।

१.	उसे	**विष्णोः**	९.	भगवान् विष्णु
६.	कहते है (वही)	**धाम**	१२.	धाम है
४.	अविनाशी	**परम्**	११.	परम
५.	ब्रह्म	**साक्षात्**	१०.	साक्षात्
२.	सभी कारणों का	**पुरुषस्य**	७.	पुराण पुरुष
३.	आदि कारण	**महात्मनः ।।**	८.	परमात्मा

उसे सभी कारणों का आदि कारण अविनाशी ब्रह्म कहते हैं । वही पुराण पु भगवान् विष्णु का साक्षात् परम धाम है ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे एकादशः अध्यायः ।।११।।

तृतीयः स्कन्धः

अथ द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

इति ते वर्णितः क्षत्तः कालाख्यः परमात्मनः ।
महिमा वेदगर्भोऽथ यथास्राक्षीन्निबोध मे ।।1।।

इति ते वर्णितः क्षत्तः, काल आख्यः परमात्मनः ।
महिमा वेदगर्भः अथ, यथा अस्राक्षीत् निबोध मे ।।

२. इस प्रकार (मैंने)		**महिमा**	७. महिमा
३ आप को		**वेदगर्भः**	११. ब्रह्मा जी ने
८. सुनायी		**अथ**	९. अब (आप)
१. हे विदुर जी		**यथा**	१२. जिस प्रकार
४ काल		**अस्राक्षीत्**	१३. जगत् की सृष्टि
५. नाम के		**निबोध**	१४. सुनें
६ परमात्मा की		**मे ।।**	१०. मुझसे

दुर जी, इस प्रकार मैंने आपको काल नाम के परमात्मा की महिमा सुनाई
ो ब्रह्मा जी ने जिस प्रकार जगत् की सृष्टि की, उसे सुनें ।

द्वितीयः श्लोकः

ससर्जाग्रेऽन्धतामिस्रमथ तामिस्रमादिकृत् ।
महामोहं च मोहं च तमश्चाज्ञानवृत्तयः ।।2।।

ससर्ज अग्रे अन्धतामिस्रम्, अथ तामिस्रम् आदिकृत् ।
महामोहम् च मोहम् च, तमः च अज्ञान वृत्तयः ।।

२. सृष्टि की	**महामोहम्**	८. राग
२. सबसे पहले	**च**	९. और
५. अभिनिवेश	**मोहम्, च**	१०. अस्मिता तथा
६. तथा	**तमः, च**	११. अविद्या की
७. द्वेष	**अज्ञान**	३. अज्ञान की
१. ब्रह्मा जी ने	**वृत्तयः ।।**	४. पांच वृत्तियो (

जी ने सबसे पहले अज्ञान की पाँच वृत्तियों और अभिनिवेश, द्वेष,
अविद्या की सृष्टि की ।

तृतीयः श्लोकः

दृष्ट्वा पापीयसीं सृष्टिं नात्मानं बह्वमन्यत ।
भगवद्ध्यानपूतेन मनसान्यां ततोऽसृजत् ॥३॥

पदच्छेद—

दृष्ट्वा पापीयसीम्, सृष्टिम् न आत्मानम् बहु अमन्यत ।
भगवत् ध्यान पूतेन, मनसा अन्याम् ततः असृजत् ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	३. देखकर	**भगवत्**	९.	भगवान् के
पापीयसीम्	१. ब्रह्मा जी उस पापमयी	**ध्यान**	१०.	ध्यान से
सृष्टिम्	२. रचना को	**पूतेन**	११.	पवित्र
न	६. नहीं	**मनसा**	१२.	मन के द्वारा
आत्मानम्	४. अपने मन में	**अन्याम्**	१३.	दूसरी
बहु	५. बहुत	**ततः**	८.	तदनन्तर (उन्होंने)
अमन्यत ।	७. प्रसन्न हुये ।	**असृजत् ॥**	१४.	सृष्टि की

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी उस पापमयी रचना को देखकर अपने मन में बहुत प्रसन्न नहीं हुये।तद नन्तर उन्होंने भगवान् के ध्यान से पवित्र मन के द्वारा दूसरी सृष्टि की ।

चतुर्थः श्लोकः

सनकं च सनन्दं च सनातनमथात्मभूः ।
सनत्कुमारं च मुनीन्निष्क्रियानूर्ध्वरेतसः ॥४॥

पदच्छेद—

सनकम् च सनन्दम् च, सनातनम् अथ आत्म भूः ।
सनत्कुमारम् च मुनीन्, निष्क्रियान् ऊर्ध्व रेतसः ॥

शब्दार्थ—

सनकम्	३. सनक	**सनत्कुमारम्**	९.	सनत्कुमार (इन)
च	४. और	**च**	८.	और
सनन्दम्	५. सनन्दन	**मुनीन्**	१२.	मुनियों की (रचना की)
च	६. तथा	**निष्क्रियान्**	११.	निवृत्ति परायण
सनातनम्	७. सनातन	**उर्ध्व रेतसः ॥**	१०.	ब्रह्मनिष्ठ
अथ	१. तदनन्तर			
आत्म भूः ।	२. ब्रह्मा जी ने			

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्रह्मा जी ने सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार इन ब्रह्मनिष्ठ निवृत्ति परायण मुनियों की रचना की ।

पञ्चमः श्लोकः

तान् बभाषे स्वभूः पुत्रान् प्रजाः सृजत पुत्रकाः ।
तन्नैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणाः ।।५।।

पदच्छेद—

तान् बभाषे स्वभूः पुत्रान्, प्रजाः सृजत पुत्रकाः ।
तद् न ऐच्छत् मोक्ष धर्माणः, वासुदेव परायणाः ।।

शब्दार्थ—

तान्	२.	उन	**तद्**	१२.	(उन्होंने) सृष्टि करने की
बभाषे	४.	कहा	**न**	१३.	नहीं
स्वभूः	१.	ब्रह्मा जी ने	**ऐच्छत्**	१४.	इच्छा की
पुत्रान्	३.	पुत्रों से	**मोक्ष**	८.	निवृत्ति
प्रजाः	६.	सन्तान की	**धर्माणः**	९.	परायण (और)
सृजत	७.	सृष्टि करो (किन्तु)	**वासुदेव**	१०.	भगवान विष्णु के
पुत्रकाः ।	५.	हे पुत्रों ! तुम लोग	**परायणाः ।।**	११.	ध्यान में तत्पर होने से

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उन पुत्रों से कहा, हे पुत्रों ! तुम लोग सन्तान की सृष्टि करो, किन्तु निवृत्ति परायण और भगवान् के ध्यान में तत्पर होने से उन लोगों ने सृष्टि करने की इच्छा नहीं की ।

षष्ठः श्लोकः

सोऽवध्यातः सुतैरेवं प्रत्याख्यातानुशासनैः ।
क्रोधं दुर्विषहं जातं नियन्तुमुपचक्रमे ।।६।।

पदच्छेद—

सः अवध्यातः सुतैः एवम्, प्रत्याख्यात अनुशासनैः ।
क्रोधम् दुर्विषहम् जातम, नियन्तुम् उपचक्रमे ।।

शब्दार्थ—

सः	६.	वे ब्रह्मा जी (अपने)	**क्रोधम्**	९.	क्रोध को
अवध्यातः	५.	अपमानित	**दुर्विषहम्**	८.	असह्य
सुतैः	२.	संनकादिक पुत्रों के द्वारा	**जातम्**	७.	उत्पन्न
एवम्	१.	इस प्रकार	**नियन्तुम्**	१०.	वश में करने का
प्रत्याख्यात	४.	न मानने पर	**उपचक्रमे ।।**	११.	उद्योग करने लगे
अनुशासनैः ।	३.	आदेश			

श्लोकार्थ—इस प्रकार सनकादिक पुत्रों के द्वारा आदेश न मानने पर अपमानित वे ब्रह्मा जी अपने उत्पन्न असह्य क्रोध को वश में करने का उद्योग करने लगे ।

सप्तमः श्लोकः

धिया निगृह्यमाणोऽपि भ्रुवोर्मध्यात्प्रजापतेः ।
सद्योऽजायत तन्मन्युः कुमारो नीललोहितः ॥७॥

पदच्छेद—

धिया निगृह्यमाणः अपि भ्रुवोः मध्यात् प्रजापतेः ।
सद्यः अजायत तत् मन्युः कुमारः नीललोहितः ॥

शब्दार्थ—

धिया	१. बुद्धि से	**सद्यः**	११. तत्काल
निगृह्यमाणः	२. रोकने पर	**अजायत**	१२. प्रकट हो गया
अपि	३. भी	**तत्**	४. वह
भ्रुवोः	७. भौहों के	**मन्युः**	५. क्रोध
मध्यात्	८. बीच से	**कुमारः**	१०. बालक के रूप में
प्रजापतेः ।	६. ब्रह्माजी की	**नीललोहितः ॥**	९. कुछ नीले और लाल वर्ण के

श्लोकार्थ—बुद्धि से रोकने पर भी वह क्रोध ब्रह्माजी की भौहों के बीच से कुछ नीले और लाल वर्ण के बालक के रूप में तत्काल प्रकट हो गया ।

अष्टमः श्लोकः

स वै रुरोद देवानां पूर्वजो भगवान् भवः ।
नामानि कुरु मे धातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥८॥

पदच्छेद—

सः वै रुरोद देवानाम् पूर्वजः भगवान् भवः ।
नामानि कुरु मे धातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥

शब्दार्थ—

सः	४. वे	**नामानि**	११. नामकरण
वै	१. बालक के रूप में उत्पन्न	**कुरु**	१२. करें
रुरोद	७. रोने लगे (और कहने लगे)	**मे**	१०. मेरा
देवानाम्	२. देवताओं के	**धातः**	८. जगत् के रचयिता
पूर्वजः	३. अग्रज	**स्थानानि**	१४. निवास स्थान बतावें
भगवान्	५. भगवान्	**च**	१३. और
भवः ।	६. शंकर	**जगद्गुरो ॥**	९. हे जगत् पिता मह

श्लोकार्थ—बालक के रूप में उत्पन्न देवताओं के अग्रज वे भगवान् शंकर रोने लगे और कहने लगे, जगत् के रचयिता हे जगत् पितामह ! मेरा नामकरण करें और निवास स्थान बतावें ।

नवमः श्लोकः

इति तस्य वचः पाद्मो भगवान् परिपालयन् ।
अभ्यधाद् भद्रया वाचा मा रोदीस्तत्करोमिते ॥९॥

पदच्छेद—

इति तस्य वचः पाद्मः भगवान् परिपालयन् ।
अभ्यधात् भद्रया वाचा मा रोदीः तत् करोमि ते ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अभ्यधात्	९.	बोले
तस्य	२.	उस बालक के	भद्रया	७.	मंगलमयी सुन्दर
वचः	३.	वचन को	वाचा	८.	वाणी से
पाद्मः	६.	ब्रह्मा जी	मा	११.	मत
भगवान्	५.	भगवान्	रोदीः	१०.	रोओ
परिपालयन् ।	४.	मानते हुए	तत्	१३.	नामकरण
			करोमि	१४.	करता हूँ
			ते	१२.	तुम्हारा

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस बालक के वचन को मानते हुये भगवान् ब्रह्मा जी मंगलमयी सुन्दर वाणी से बोले, रोओ मत, तुम्हारा नामकरण करता हूँ ।

दशमः श्लोकः

यदरोदीः सुरश्रेष्ठ सोद्वेग इव बालकः ।
ततस्त्वामभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्र इति प्रजाः ॥१०॥

पदच्छेद—

यद् अरोदीः सुरश्रेष्ठ स उद्वेग इव बालकः ।
ततः त्वाम् अभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्रः इति प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

यद्	२.	क्योंकि (तुमने)	ततः	७.	इसलिये
अरोदीः	६.	रोदन किया है	त्वाम्	८.	तुम्हें
सुरश्रेष्ठ	१.	हे देवताओं में प्रधान	अभिधास्यन्ति	१३.	कहेंगे
स उद्वेगः	३	घबड़ाये हुये	नाम्ना	१२.	नाम से
इव	५.	समान	रुद्रः	१०.	रुद्र
बालकः ।	४.	बालक के	इति	११.	इस
			प्रजाः ॥	९.	लोग

श्लोकार्थ—हे देवताओं में प्रधान ! क्योंकि तुमने घबड़ाये हुए बालक के समान रोदन किया है । इसलिये तुम्हें लोग रुद्र इस नाम से कहेंगे ।

एकादशः श्लोकः

हृदिन्द्रियाण्यसुर्व्योम वायुरग्निर्जलं मही ।
सूर्यश्चन्द्रस्तपश्चैव स्थानान्यग्रे कृतानि मे ॥११॥

पदच्छेद—

हृदि इन्द्रियाणि असुः व्योम वायुः अग्निः जलम् मही ।
सूर्यः चन्द्रः तपः च एव स्थानानि अग्रे कृतानि मे ॥

शब्दार्थ—

हृदि	१.	हृदय	सूर्यः	६.	सूर्य
इन्द्रियाणि	२	इन्द्रिय	चन्द्रः	१०.	चन्द्रमा
असुः	३	प्राण	तपः	१२.	तपस्या
व्योम	४.	आकाश	च	११.	और
वायुः	५.	हवा	एव	१३.	इन
अग्निः	६.	आग	स्थानानि	१४.	स्थानों को (तुम्हारे लिये)
जलम्	७.	जल	अग्रे	१६.	पहले से ही
मही	८.	पृथ्वी	कृतानि	१७.	बना रखा है
			मे ॥	१५.	मैंने

श्लोकार्थ—हृदय, इन्द्रिय, प्राण, आकाश, पवन, आग, जल, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा और तपस्या इन स्थानों को तुम्हारे लिये मैंने पहले से ही बना रखा है।

द्वादशः श्लोकः

मन्युर्मनुर्महिनसो महाञ्छिव ऋतध्वजः ।
उग्ररेता भवः कालो वामदेवो धृतव्रतः ॥१२॥

पदच्छेद—

मन्युः मनुः महिनसः महान् शिवः ऋतध्वजः ।
उग्ररेताः भवः कालः वामदेवः धृतव्रतः ॥

शब्दार्थ—

मन्युः	१.	मन्यु	उग्ररेताः	७.	उग्ररेता
मनुः	२.	मनु	भवः	८.	भव
महिनसः	३.	महिनस	कालः	६.	काल
महान्	४.	महान्	वामदेवः	१०.	वामदेव (और)
शिवः	५.	शिव	धृतव्रतः	११.	धृतव्रत (तुम्हारे ये ११ नाम हैं)
ऋतध्वजः	६.	ऋतध्वज			

श्लोकार्थ—मन्यु, मनु, महिनस, महान्, शिव, ऋतध्वज, उग्ररेता, भव, काल, वामदेव और धृतव्रत तुम्हारे ये ग्यारह नाम हैं।

त्रयोदशः श्लोकः

धीर्वृत्तिरुशनोमा च नियुत्सर्पिरिलाम्बिका ।
इरावती सुधा दीक्षा रुद्राण्यो रुद्र ते स्त्रियः ॥१३॥

पदच्छेद—

धीः वृत्तिः उशना उमा च नियुत् सर्पिः इला अम्बिका ।
इरावती सुधा दीक्षा रुद्राण्यः रुद्र ते स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

धीः	२.	धी	**इरावती**	१०.	इरावती
वृत्तिः	३.	वृत्ति	**सुधा**	११.	सुधा
उशना	४.	उशना	**दीक्षा**	१३.	दीक्षा (ये ग्यारह)
उमा	५.	उमा	**रुद्राण्यः**	१४.	रुद्राणियाँ
च	१२.	और	**रुद्र**	१.	हे रुद्र
नियुत्	६.	नियुत्	**ते**	१५.	तुम्हारी
सर्पिः	७.	सर्पि	**स्त्रियः ॥**	१६.	पत्नियाँ हैं।
इला	८.	इला			
अम्बिका ।	९.	अम्बिका			

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! धी, वृत्ति, उशना, उमा, नियुत, सर्पि, इला, अम्बिका, इरावती, सुधा और दीक्षा ये ग्यारह रुद्राणियाँ तुम्हारी पत्नियाँ हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

गृहाणैतानि नामानि स्थानानि च सयोषणः ।
एभिः सृज प्रजा बह्वीः प्रजानामसि यत्पतिः ॥१४॥

पदच्छेद—

गृहाण एतानि नामानि स्थानानि च सयोषणः ।
एभिः सृज प्रजा बह्वीः प्रजानाम् असि यत् पतिः ॥

शब्दार्थ—

गृहाण	६.	स्वीकार करो (और)	**सृज**	१०	सृष्टि करो
एतानि	२.	इन	**प्रजा**	९.	जीवों की
नामानि	३	नामों को	**बह्वीः**	८.	बहुत से
स्थानानि	५.	स्थानों को	**प्रजानाम्**	१२.	प्रजाओं के
च	४.	और	**असि**	१४.	हो
सयोषणः	१.	(हे रुद्र! तुम) पत्नियों के साथ	**यत्**	११.	क्योंकि (तुम)
एभिः	७.	इनसे	**पतिः ॥**	१३.	स्वामी

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! तुम पत्नियों के साथ इन नामों को और स्थानों को स्वीकार करो, इनसे बहुत से जीवों की सृष्टि करो; क्योंकि तुम प्रजाओं के स्वामी हो।

पञ्चदशः श्लोकः

इत्यादिष्टः स गुरुणा भगवान्नीललोहितः ।
सत्त्वाकृतिस्वभावेन ससर्जात्मसमाः प्रजाः ॥१५॥

पदच्छेद—

इति आदिष्टः सः गुरुणा भगवान् नीललोहितः ।
सत्व आकृति स्व भावेन ससर्ज आत्म समाः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	ऐसी	**सत्व आकृति**	७.	बल, रूप (और)
आदिष्टः	३.	आज्ञा पाकर	**स्व भावेन**	८	स्वभाव से
स.	४.	वे	**ससर्ज**	१२.	रचना करने लगे
गुरुणा	१.	लोक पितामह ब्रह्मा जी से	**आत्म**	९.	अपने
भगवान्	५.	भगवान्	**समाः**	१०.	समान
नीललोहितः ।	६.	नीललोहित रुद्र	**प्रजाः ॥**	११.	प्रजाओं की

श्लोकार्थ—लोक पितामह ब्रह्माजी से ऐसी आज्ञा पाकर वे भगवान् नील लोहित रुद्र बल, रूप और स्वभाव से अपने समान प्रजाओं की रचना करने लगे ।

षोडशः श्लोकः

रुद्राणां रुद्रसृष्टानां समन्ताद् ग्रसतां जगत् ।
निशाम्यासंख्यशो यूथान् प्रजापतिरशङ्कत ॥१६॥

पदच्छेद—

रुद्राणाम् रुद्र सृष्टानाम् समन्ताद् ग्रसताम् जगत् ।
निशाम्य असंख्यशः यूथान् प्रजापतिः अशङ्कतः ॥

शब्दार्थ—

रुद्राणाम्	३.	रुद्रों को	**निशाम्य**	९.	देखकर
रुद्र	१.	भगवान रुद्र से	**असंख्यशः**	६.	अगणित
सृष्टानाम्	२.	निर्मित	**यूथान्**	७.	झुण्डों में
समन्ताद्	५.	चारों ओर से	**प्रजापतिः**	१०.	ब्रह्माजी को
ग्रसताम्	८.	भक्षण करते हुए	**अशङ्कतः ॥**	११.	बड़ी चिन्ता हुई
जगत्	४.	संसार का			

श्लोकार्थ—भगवान् रुद्र से निर्मित रुद्रों को संसार का चारों ओर से अगणित झुण्डों में भक्षण करते हुए देखकर ब्रह्माजी को बड़ी चिन्ता हुई ।

सप्तदशः श्लोकः

अलं प्रजाभिः सृष्टाभिरीदृशीभिः सुरोत्तम ।
मया सह दहन्तीभिर्दिशश्चक्षुर्भिरुल्बणैः ॥१७॥

पदच्छेद—

अलम् प्रजाभिः सृष्टाभिः ईदृशीभिः सुरोत्तम ।
मया सह दहन्तीभिः दिशः चक्षुभिः उल्बणैः ॥

शब्दार्थ—

अलम्	१०. अब मत करो	मया सह	४. मेरे साथ
प्रजाभिः	८. प्रजाओं की	दहन्तीभिः	६. जलाने वाली
सृष्टाभिः	९. सृष्टि	दिशः	५. सभी दिशाओं को
ईदृशीभिः	७. ऐसी	चक्षुर्भिः	३. नेत्रों से
सुरोत्तम ।	१. हे सुरश्रेष्ठ	उल्बणैः ॥	२. अपने भयंकर

श्लोकार्थ—हे सुरश्रेष्ठ ! अपने भयंकर नेत्रों से मेरे साथ सभी दिशाओं को जलाने वाली ऐसी प्रजाओं की सृष्टि अब मत करो ।

अष्टादशः श्लोकः

तप आतिष्ठ भद्रं ते सर्वभूतसुखावहम् ।
तपसैव यथापूर्वं स्रष्टा विश्वमिदं भवान् ॥१८॥

पदच्छेद—

तपः आतिष्ठ भद्रम् ते सर्वभूत सुख आवहम् ।
तपसा एव यथा पूर्वम् स्रष्टा विश्वम् इदम् भवान् ॥

शब्दार्थ—

तपः	६. तपस्या का	तपसा	८. तपस्या के प्रभाव से
आतिष्ठ	७. अनुष्ठान करो	एव	९. ही
भद्रम्	२. कल्याण हो	यथा	१४. जैसी
ते	१. हे रुद्र ! तुम्हारा	पूर्वम्	१३. पहले
सर्वभूत	३. सभी प्राणियों को	स्रष्टा	१५. रचना कर सकेंगे
सुख	४. सुख	विश्वम्	१२. संसार की
आवहम् ।	५. देने वाली	इदम्	११. इस
		भवान् ॥	१०. आप

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! तुम्हारा कल्याण हो सभी प्राणियों को सुख देने वाली तपस्या का अनुष्ठान करो । तपस्या के प्रभाव से ही आप इस संसार की पहले जैसी रचना कर सकेंगे ।

एकोनविंशः श्लोकः

तपसैव परं ज्योतिर्भगवन्तमधोक्षजम् ।
सर्वभूतगुहावासमञ्जसा विन्दते पुमान् ।।१९।।

तपसा एव परम् ज्योतिः भगवन्तम् अधोक्षजम् ।
सर्वभूत गुहा आवासम् अञ्जसा विन्दते पुमान् ।।

तपस्या से	**सर्वभूत**	४.	सभी प्राणियों के
ही	**गुहा**	५.	हृदय में
परम	**आवासम्**	६.	निवास करने वाले
ज्योतिस्वरूप	**अञ्जसा**	११.	सरलता से
भगवान् श्री हरि को	**विन्दते**	१२.	प्राप्त कर लेता है
इन्द्रियों से परे (और)	**पुमान् ।।**	१.	(हे रुद्र) मनुष्य

नुष्य तपस्या से ही सभी प्राणियों के हृदय में निवास करने वाले इन्द्रिय
ज्योति स्वरूप भगवान् श्री हरि को सरलता से प्राप्त कर लेता है ।

विंशः श्लोकः

एवमात्मभुवाऽऽदिष्टः परिक्रम्य गिरां पतिम् ।
बाढमित्यमुमामन्त्र्य विवेश तपसे वनम् ।।२०।।

एवम् आत्म भुवा आदिष्टः परिक्रम्य गिराम् पतिम् ।
बाढम् इति अमुम् आमन्त्र्य विवेश तपसे वनम् ।।

ऐसी	**बाढम्**	६.	ठीक है
ब्रह्मा जी से	**इति**	७.	इस प्रकार (कह क
आज्ञा पाकर	**अमुम्**	८.	उनसे
परिक्रमा करके (वे रुद्र)	**आमन्त्र्य**	९.	अनुमति लेकर (औ
वाणी के	**विवेश**	१३.	चले गये
स्वामी	**तपसे**	११.	तपस्या करने के लि
	वनम् ।।	१२.	वन में

स्वामी ब्रह्मा जी से ऐसी आज्ञा पाकर 'ठीक है' इस प्रकार कहकर उनसे
र उनकी परिक्रमा करके वे रुद्र तपस्या करने के लिए वन में चले गये ।

एकविंशः श्लोकः

अथाभिध्यायतः सर्गं दश पुत्राः प्रजज्ञिरे ।
भगवच्छक्तियुक्तस्य लोकसन्तानहेतवः ॥२१॥

पदच्छेद—

अथ अभिध्यायतः सर्गम् दश पुत्राः प्रजज्ञिरे ।
भगवत् शक्ति युक्तस्य लोक सन्तान हेतवः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	भगवत्	२.	भगवान् की
अभिध्यायतः	६.	संकल्प किया (और)	शक्ति	३.	शक्ति
सर्गम्	५.	सृष्टि करने का	युक्तस्य	४.	प्राप्त करके (ब्रह्मा जी ने)
दश	१०.	दस	लोक	७.	प्रजाओं की
पुत्राः	११.	मानस पुत्र	सन्तान	८.	वृद्धि में
प्रजज्ञिरे ।	१२.	उत्पन्न किये	हेतवः ॥	९.	कारण भूत

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् की शक्ति प्राप्त करके ब्रह्मा जी ने सृष्टि करने का संकल्प किया । और प्रजाओं की वृद्धि में कारण भूत दस मानस पुत्र उत्पन्न किये ।

द्वाविंशः श्लोकः

मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
भृगुर्वशिष्ठो दक्षश्च दशमस्तत्र नारदः ॥२२॥

पदच्छेद —

मरीचिः अत्रि अङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
भृगुः वशिष्ठः दक्षः च दशमः तत्र नारदः ॥

शब्दार्थ—

मरीचिः	१.	मरीचि	भृगुः	७.	भृगु
अत्रि	२.	अत्रि	वशिष्ठः	८.	वशिष्ठ
अङ्गिरसौ	३.	अङ्गिरा	दक्षः	९.	दक्ष
पुलस्त्यः	४.	पुलस्त्य	च	१०.	और
पुलह	५.	पुलह	दशमः	१२.	दसवें
क्रतुः ।	६.	क्रतु	तत्र	११.	उनमें
			नारदः ॥	१३.	नारद (थे)

श्लोकार्थ—मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वशिष्ठ, दक्ष और उनमें दसवें नारद थे ।

त्रयोविंशः श्लोकः

उत्सङ्गान्नारदो जज्ञे दक्षोऽङ्गुष्ठात्स्वयम्भुवः ।
प्राणाद् वसिष्ठः सञ्जातो भृगुस्त्वचि करात्क्रतुः ॥२३॥

पदच्छेद—

उत्संगात् नारदः जज्ञे, दक्षः अङ्गुष्ठात् स्वयम्भुवः ।
प्राणात् वशिष्ठः संजातः, भृगुः त्वचि करात क्रतुः ॥

शब्दार्थ—

उत्संगात्	२.	गोद से	**प्राणात्**	७.	उनके प्राण से
नारदः	३.	नारद (और)	**वशिष्ठः**	८.	वशिष्ठ
जज्ञे	६.	उत्पन्न हुए	**संजातः**	१३.	उत्पत्ति हुई
दक्षः	५.	दक्ष	**भृगुः**	१०.	भृगु (तथा)
अङ्गुष्ठात्	४.	अंगूठे से	**त्वचि**	९.	त्वचा से
स्वयम्भुवः ।	१.	ब्रह्मा जी की	**करात्**	११.	हाथ मे
			क्रतुः ॥	१२.	क्रतु (ऋषि) की

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी की गोद से नारद और अंगूठे से दक्ष उत्पन्न हुये; उनके प्राण से वशिष्ठ, त्वचा से भृगु तथा हाथ से क्रतु ऋषि की उत्पत्ति हुई।

चतुर्विंशः श्लोकः

पुलहो नाभितो जज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोर्ऋषिः ।
अङ्गिरा मुखतोऽक्ष्णोऽत्रिर्मरीचिर्मनसोऽभवत् ॥२४॥

पदच्छेद—

पुलहः नाभितः यज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोः ऋषिः ।
अङ्गिरा मुखतः अक्ष्णोः अत्रिः मरीचिः मनसः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

पुलहः	२.	पुलह (और)	**अङ्गिराः**	८.	अङ्गिरा
नाभितः	१.	(ब्रह्माजी की) नाभि से	**मुखतः**	७.	मुख से
जज्ञे	६.	उत्पन्न हुए (उनके)	**अक्ष्णोः**	९.	आँखों से
पुलस्त्यः	४.	पुलस्त्य	**अत्रिः**	१०.	अत्रि (और)
कर्णयोः	३.	कानों से	**मरीचिः**	१२.	मरीचि (ऋषि)
ऋषिः ।	५.	ऋषि	**मनसः**	११.	मन से
			अभवत् ॥	१३.	उत्पन्न हुए

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी की नाभि से पुलह और कानों से पुलस्त्य ऋषि उत्पन्न हुए; उनके मुख से अङ्गिरा, आँखो से अत्रि और मन से मरीचि ऋषि उत्पन्न हुये।

पञ्चविंश: श्लोक:

धर्म:स्तनाद्दक्षिणतो यत्र नारायणः स्वयम् ।
अधर्मः पृष्ठतो यस्मान्मृत्युर्लोकभयङ्करः ॥२५॥

धर्मः स्तनात् दक्षिणतः यत्र नारायणः स्वयम् ।
अधर्मः पृष्ठतः यस्मात् मृत्युः लोक भयंकरः ॥

३.	धर्म (उत्पन्न हुआ)	अधर्मः	८.	अधर्म (उत्पन्न हुआ)
२.	स्तन से	पृष्ठतः	७.	उनकी पीठ से
१.	ब्रह्माजी के दाहिने	यस्मात्	९.	जिससे
४.	जिसके यहाँ	मृत्युः	१२.	मृत्यु (उत्पन्न हुई)
६.	नारायणःने (अवतार लिया था)	लोक	१०.	संसार को
		भयंकरः ॥	११.	भयभीत करने वाली
५.	साक्षात् भगवान्			

ब्रह्मा जी के दाहिने स्तन से धर्म उत्पन्न हुआ, जिसके यहाँ साक्षात् भगवान् नार अवतार लिया था। उनकी पीठ से अधर्म उत्पन्न हुआ, जिससे संसार को भयभीत वाली मृत्यु उत्पन्न हुई।

षड्विंश: श्लोक:

हृदि कामो भ्रुवः क्रोधो लोभश्चाधरदच्छदात् ।
आस्याद्वाक्सिन्धवो मेढ्रान्निर्ऋतिः पायोरघाश्रयः ॥२६॥

हृदि कामः भ्रुवः क्रोधः, लोभः च अधर दच्छदात् ।
आस्यात् वाक् सिन्धवः मेढ्रात्,निर्ऋतिः पायोः अघ आश्रयः ॥

१.	(ब्रह्माजी के) हृदय से	आस्यात्	८.	मुख से
२.	काम	वाक्	९.	सरस्वती
३.	भौंहों से	सिन्धवः	११.	समुद्र
४.	क्रोध	मेढ्रात्	१०.	जननेन्द्रिय से
७.	लोभ	निर्ऋतिः	१६	निर्ऋति देवता (उत्प
१२.	और	पायोः	१३.	गुदा इन्द्रिय से
५.	नीचे के	अघ	१४.	पाप के
६.	होंठ से	आश्रयः ॥	१५.	आधार

ह्माजी के हृदय से काम, भौंहों से क्रोध, नीचे के होंठ से लोभ, मुख से वाणी की अधि परस्वती, जननेन्द्रिय से समुद्र और गुदा इन्द्रिय से पाप के आधार निर्ऋति देवता ए।

सप्तविंश: श्लोक:

छायायाः कर्दमो जज्ञे देवहूत्याः पतिः प्रभुः ।
मनसो देहतश्चेदं जज्ञे विश्वकृतो जगत् ॥२७॥

पदच्छेद —

छायायाः कर्दमः जज्ञे देवहूत्याः पतिः प्रभुः ।
मनसः देहतः च इदम् जज्ञे विश्वकृतः जगत् ॥

शब्दार्थ—

छायायाः	१.	उनकी छाया से	**मनसः**	८.	मन से
कर्दमः	५.	कर्दम ऋषि	**देहतः**	१०.	शरीर से
जज्ञे	६.	उत्पन्न हुये (इस प्रकार)	**च**	९.	और
देवहूत्या	२.	देवहूति के	**इदम्**	११.	यह
पतिः	३.	स्वामी	**जज्ञे**	१३.	उत्पन्न हुआ है
प्रभुः।	४.	भगवान्	**विश्वकृतः**	७.	ब्रह्मा जी के
			जगत् ॥	१२.	सारा संसार

श्लोकार्थ—उनकी छाया से देवहूति के स्वामी भगवान् कर्दम ऋषि उत्पन्न हुये, इस प्रकार ब्रह्मा जी के मन से और शरीर से यह सारा संसार उत्पन्न हुआ है।

अष्टाविंश: श्लोक:

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयम्भूर्हरतीं मनः ।
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इति नः श्रुतम् ॥२८॥

पदच्छेद—

वाचम् दुहितरम् तन्वीम् स्वयम्भूः हरतीम् मनः ।
अकामाम् चकमे क्षत्तः सकामः इति नः श्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

वाचम्	११	सरस्वती की	**आकामाम्**	९.	वासना से रहित
दुहितरम्	१०.	अपनी पुत्री	**चकमे**	१३.	इच्छा की थी
तन्वीम्	८.	सुन्दरी (तथा)	**क्षत्तः**	१.	हे विदुर जी
स्वयम्भूः	५.	ब्रह्मा जी ने	**सकामः**	१२.	कामभाव से
हरतीम्	७.	लुभाने वाली	**इति**	३.	ऐसा
मनः।	६.	मन को	**नः**	२.	हमने
			श्रुतम् ॥	४.	सुना है (कि)

श्लोकार्थ—हे विदुर जी! हमने ऐसा सुना है कि ब्रह्मा जी ने मन को लुभाने वाली सुन्दरी तथा वासना से रहित अपनी पुत्री सरस्वती की काम-भाव से इच्छा की थी।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः ।
मरीचिमुख्या मुनयो विश्रम्भात्प्रत्यबोधयन् ।।२९।।

तम् अधर्मे कृत मतिम् विलोक्य पितरम् सुताः ।
मरीचि मुख्याः मुनयः विश्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ।।

१.	उन्हें	**मरीचिः**	६.	मरीचि
२.	पाप का	**मुख्याः**	७.	इत्यादि प्रधान
३.	संकल्प करते	**मुनयः**	८.	मुनियों ने
४.	देखकर	**विश्रम्भात्**	१०.	विश्वास पूर्वक
९.	अपने पिता ब्रह्मा जी को	**प्रत्यबोधयन्।।**	११.	समझाया
५.	(उनके) पुत्र			

न्हें पाप का संकल्प करते देखकर उनके पुत्र मरीचि इत्यादि प्रधान मुनियों ने ह्मा जी को विश्वास पूर्वक समझाया।

त्रिंशः श्लोकः

नैतत्पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे ।
यत्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्याङ्गजं प्रभुः ।।३०।।

न एतत् पूर्वैः कृतम् तु अद्य न करिष्यन्ति च अपरे ।
यत् त्वम् दुहितरम् गच्छेः अनिगृह्य अङ्गजम् प्रभुः ।।

११.	नहीं	**अपरे**	१४.	आगे के दूसरे ब्रह्म
९.	ऐसा	**यत्**	५.	जो
१०.	पहले के (ब्रह्माओं ने)	**त्वम्**	१.	आप
१२.	किया है	**दुहितरम्**	७.	पुत्री के साथ
१५.	ऐसा	**गच्छेः**	८.	गमन करना चाहत
६.	आज	**अनिगृह्य**	४.	वश में न कर
१६	नहीं	**अङ्गजम्**	३.	काम को
१७	करेंगे	**प्रभुः ।।**	२.	समर्थ होने पर भी
१३.	और			

प समर्थ होने पर भी काम को वश में न कर जो आज पुत्री के साथ गमन क ऐसा पहले के ब्रह्माओं ने नहीं किया है और आगे के दूसरे ब्रह्मा भी ऐसा नहीं

एकत्रिंशः श्लोकः

तेजीयसामपि ह्येतन्न सुश्लोक्यं जगद्गुरो ।
यद्वृत्तमनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥३१॥

पदच्छेद—

तेजीयसाम् अपि हि एतत् न सुश्लोक्यम् जगद्गुरो ।
यद् वृत्ताम् अनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

तेजीयसाम्	२.	तेजस्वी लोगों को	**यद्**	८.	क्योंकि (उनके)
अपि	३.	भी	**वृत्तम्**	९.	आचरण का
हि	५.	बिल्कुल	**अनुतिष्ठन्**	१०.	अनुसरण करके
एतत्	४.	यह	**वै**	११.	ही
न	६.	नहीं	**लोकः**	१२.	संसार
सुश्लोक्यम्	७.	शोभा देता है	**क्षेमाय**	१३.	अपना कल्याण
जगद्गुरो ।	१.	हे लोक पितामह	**कल्पते**	१४.	करता है

श्लोकार्थ—हे लोक पितामह ! तेजस्वी लोगों को भी यह बिल्कुल शोभा नहीं देता है, क्योंकि उनके आचरण का अनुसरण करके ही संसार अपना कल्याण करता है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते य इदं स्वेन रोचिषा ।
आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्मं पातुमर्हति ॥३२॥

पदच्छेद—

तस्मै नमः भगवते यः इदम् स्वेन रोचिषा ।
आत्मस्थम् व्यञ्जयामास सः धर्मम् पातुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	१.	उस	**आत्मस्थम्**	५.	अपने में स्थित
नमः	३.	नमस्कार है	**व्यञ्जयामास**	९.	प्रकट किया
भगवते	२.	भगवान् को	**सः**	१०.	वे (ही)
यः	४.	जिन्होंने	**धर्मम्**	११.	धर्म की
इदम्	६.	इस जगत् को	**पातुम्**	१२.	रक्षा करने में
स्वेन	७.	अपने	**अर्हति ॥**	१३.	समर्थ हैं ।
रोचिषा ।	८.	तेज से			

श्लोकार्थ—उस भगवान् को नमस्कार है, जिन्होंने अपने में स्थित इस जगत् को अपने तेज से प्रकट किया है । वे ही धर्म की रक्षा करने में समर्थ हैं ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

स इत्थं गृणतः पुत्रान् पुरो दृष्ट्वा प्रजापतीन् ।
प्रजापतिपतिस्तन्वं तत्याज व्रीडितस्तदा ।
तां दिशो जगृहुर्घोरां नीहारं यद्विदुस्तमः ।।३३।।

सः इत्थम् गृणतः पुत्रान् पुरः दृष्ट्वा प्रजापतीन् ।
प्रजापति पतिः तन्वम् तत्याज व्रीडितः तदा ।
ताम् दिशः जगृहुः घोराम् नीहारम् यद् विदुः तमः ।।

३.	वे ब्रह्मा जी	तत्याज	१३.	छोड़ दिया
७.	ऐसा	व्रीडितः	१०.	लज्जित हुये (और
८.	कहते	तदा	११.	उसी समय
४.	(अपने) पुत्र	ताम्	१४.	उस
६.	अपने सामने	दिशः	१६.	दिशाओं ने
९.	देख	जगृहुः	१७.	ले लिया
५.	(मरीचि आदि)प्रजापतियों को	घोराम्	१५.	पापी शरीर को
१.	प्रजापतियों के	नीहारम्	२०.	कुहरा
२.	स्वामी	यद्	१८.	जिसे
१२.	अपने शरीर को	विदुः	२१.	कहते हैं
		तमः ।।	१९.	अन्धकारमय

जापतियों के स्वामी वे ब्रह्मा जी अपने पुत्र मरीचि आदि प्रजापतियों को अपने स
हते देख लज्जित हुये और उसी समय अपने शरीर को छोड़ दिया। उस पापी
दिशाओं ने ले लिया जिसे अन्धकारमय कुहरा कहते हैं।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

कदाचिद् ध्यायतः स्रष्टुर्वेदा आसंश्चतुर्मुखात् ।
कथंस्रक्ष्याम्यहं लोकान् समवेतान् यथा पुरा ।।३४।।

कदाचित् ध्यायतः स्रष्टुः वेदा आसन् चतुर्मखात् ।
कथम् स्रक्ष्यामि अहम् लोकान् समवेतान् यथा पुरा ।।

१.	एक बार	कथम्	९.	कैसे
३.	सोच रहे थे (कि)	स्रक्ष्यामि	१०.	रचना करूँ (उसी
२.	ब्रह्मा जी	अहम्	४.	मैं
१२.	चार वेद	लोकान्	८.	सभी लोकों की
१३.	प्रकट हुये	समवेतान्	७.	सुव्यवस्थित रूप से
११.	उनके चार मुखों से	यथा	६.	जैसे
		पुरा ।।	५.	पहले

क बार ब्रह्मा जी सोच रहे थे कि मैं पहले जैसे सुव्यवस्थित रूप से सभी लोक
चना करूँ, उसी समय उनके चारो मुखों से चार वेद प्रकट हुये।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

चातुर्होत्रं कर्मतन्त्रमुपवेदनयैः सह ।
धर्मस्य पादाश्चत्वारस्तथैवाश्रमवृत्तयः ॥३५॥

चातुर्होत्रम् कर्म तन्त्रम् उपवेद नयैः सह ।
धर्मस्य पादाः चत्वारः तथैव आश्रम वृत्तयः ॥

ब्रह्मा जी के मुखों से ही हवन कर्म	**धर्मस्य**	७.	धर्म के
कर्मकाण्ड का	**पादाः**	९.	चरण (और)
विस्तार	**चत्वारः**	८.	चारों
उपवेद	**तथैव**	१०.	उसी प्रकार
न्याय शास्त्र के	**आश्रम**	११.	चारों आश्रम (और उनकी
साथ	**वृत्तयः ॥**	१२.	आजीविका (उत्पन्न हुई)

े मुखों से ही हवन कर्म (होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा का कर्म) कर्मकाण्ड व न्याय शास्त्र के साथ उपवेद, धर्म के चारों चरण और उसी प्रकार चारों आश्र की आजीविका उत्पन्न हुई ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

स वै विश्वसृजामीशो वेदादीन् मुखतोऽसृजत् ।
यद् यद् येनासृजद् देवस्तन्मे ब्रूहि तपोधन ॥३६॥

सः वै विश्वसृजाम् ईशः वेद आदीन् मुखतः असृजत् ।
यद्-यद् येन असृजत् देवः तद् मे ब्रूहि तपोधनः ॥

उन ब्रह्मा जी ने	**यद्-यद्**	११.	जिस-जिस वेद को
जगत् के रचयिताओं के	**येन**	१०	जिस-जिस मुख से
स्वामी	**असृजत्**	१२.	रचा था
वेद	**देवः**	९.	ब्रह्मा जी ने अपने
इत्यादि शास्त्र	**तद्, मे**	१३.	उसे, मुझे
अपने मुख से	**ब्रूहि**	१४.	बतावें
उत्पन्न किये	**तपोधनः ॥**	१.	हे मुनिवर

र जगत् के रचयिताओं के स्वामी उन ब्रह्मा जी ने अपने मुख से वेद इत्यादि शास्त्र किये, ब्रह्मा जी ने अपने जिस-जिस मुख से जिस-जिस वेद को रचा था, उसे मु

सप्तत्रिंश: श्लोक:

ऋग्यजुःसामाथर्वाख्यान् वेदान् पूर्वादिभिर्मुखैः ।
शस्त्रमिज्यां स्तुतिस्तोमं प्रायश्चित्तं व्यधात्क्रमात् ॥३७॥

ऋग् यजुः साम अथर्व आख्यान् वेदान् पूर्व आदिभिः मुखैः ।
शस्त्रम् इज्याम् स्तुतिः स्तोमम् प्रायश्चित्तम् व्यधात् क्रमात् ॥

५.	ऋग्वेद	**शस्त्रम्**	११.	होता का कर्म
६.	यजुर्वेद	**इज्याम्**	१२.	अध्वर्यु का कर्म
७.	सामवेद (और)	**स्तुतिः**	१३.	उद्गाता का
८.	अथर्ववेद	**स्तोमम्**	१४.	कर्म (और)
९.	नाम के	**प्रायश्चित्तम्**	१५.	ब्रह्मा का कर्म (भी
१०.	चारों वेदों को (और)	**व्यधात्**	१६.	उत्पन्न किया
१.	(ब्रह्मा जी ने) अपने पूर्व	**क्रमात् ॥**	४.	क्रमशः
२.	दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के			
३.	मुख से			

ा जी ने अपने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के मुख से क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद र अथर्ववेद नाम के चारों वेदों को और होता का कर्म, अध्वर्यु का कर्म, उद्गात ा ब्रह्मा का कर्म भी उत्पन्न किया ।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

आयुर्वेदं धनुर्वेदं गान्धर्वं वेदमात्मनः ।
स्थापत्यं चासृजद् वेदं क्रमात्पूर्वादिभिर्मुखैः ॥३८॥

आयुर्वेदम् धनुर्वेदम् गान्धर्वम् वेदम् आत्मनः ।
स्थापत्यम् च असृजत् वेदम् क्रमात् पूर्व आदिभिः मुखैः ॥

६	चिकित्सा शास्त्र	**च**	१०.	और
७	युद्ध शास्त्र विद्या	**असृजत्**	१३.	उत्पन्न किया
८.	संगीत	**वेदम्**	१२.	शास्त्र को
९.	विद्या	**क्रमात्**	५.	क्रमशः
१	ब्रह्मा जी ने अपने	**पूर्व**	२.	पूर्व
११.	शिल्प	**आदिभिः**	३.	दक्षिण, पश्चिम औ
		मुखैः	४.	मुख से

ा जी ने अपने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के मुख से क्रमशः चिकित्सा-शा स्त्र, संगीत विद्या और शिल्प शास्त्र को उत्पन्न किया ।

नवत्रिंशः श्लोकः

इतिहासपुराणानि पञ्चमं वेदमीश्वरः ।
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनः ।।३९।।

पदच्छेद—

इतिहास पुराणानि पञ्चमम् वेदम् ईश्वरः ।
सर्वेभ्यः एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्व दर्शनः ।।

शब्दार्थ—

इतिहास	८.	महाभारतादि इतिहास (और)	**सर्वेभ्यः**	३.	अपने सब
पुराणानि	९.	पुराणों को	**एव**	४.	ही
पञ्चमम्	६.	पाँचवा	**वक्त्रेभ्यः**	५.	मुखों से
वेदम्	७.	वेद	**ससृजे**	१०.	बनाया
ईश्वरः ।	२.	ब्रह्मा जी ने	**सर्वदर्शनः ।।**	१.	सर्वदर्शी

श्लोकार्थ—सर्वदर्शी ब्रह्मा जी ने अपने सब ही मुखों से पाँचवां वेद महाभारतादि इतिहास और पुराणों को बनाया ।

चत्वारिंशः श्लोकः

षोडश्युक्थौ पूर्ववक्त्रात्पुरीष्यग्निष्टुतावथ ।
आप्तोर्यामातिरात्रौ च वाजपेयं सगोसवम् ।।४०।।

पदच्छेद—

षोडशी उक्थौ पूर्ववक्त्रात् पुरीषी अग्निष्टुतौ अथ ।
आप्तोर्याम अतिरात्रौ च वाजपेयम् स गोसवम् ।।

शब्दार्थ—

षोडशी	२.	षोडशी (और)	**आप्तोर्याम**	७.	आप्तोर्याम
उक्थौ	३.	उक्थ	**अतिरात्रौ**	९.	अतिरात्र तथा
पूर्ववक्त्रात्	१.	(ब्रह्मा जी के) पूर्वादि मुखों से क्रमशः	**च**	८.	और
			वाजपेयम्	१२.	वाजपेय यज्ञ (उत्पन्न हुये)
पुरीषी	४.	अग्निचयन	**स**	११.	सहित
अग्निष्टुतौ	६.	अग्निष्टोम	**गोसवम् ।।**	१०.	गोसव
अथ ।	५.	और			

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के पूर्वादि मुखों से क्रमशः षोडशी और उक्थ, अग्निचयन अग्निष्टोम आप्तोर्याम और अतिरात्र तथा गोसव सहित वाजपेय यज्ञ उत्पन्न हुये ।

एकचत्वारिंश: श्लोक:

विद्या दानं तपः सत्यं धर्मस्येति पदानि च ।
आश्रमांश्च यथासंख्यमसृजत्सह वृत्तिभिः ॥४१॥

विद्या दानम् तपः सत्यम् धर्मस्य इति पदानि च ।
आश्रमान् च यथा संख्यम् असृजत् सह वृत्तिभिः ॥

२.	विद्या	आश्रमान्	१०.	चारों आश्रमो क
३.	दान	च	६.	तथा
४.	तपस्या (और)	यथा	१३.	क्रम के
५.	सत्य	संख्यम्	१४.	अनुसार
१.	धर्म के	असृजत्	१५.	उत्पन्न किया
६.	ये चार	सह	१२.	साथ
७.	चरण हैं (ब्रह्मा जी ने)	वृत्तिभिः ॥	११.	वृत्तियों के
८.	इन्हें			

। के विद्या, दान, तपस्या और सत्य ये चार चरण हैं। ब्रह्मा जी ने इन्हें तथा च वृत्तियों के साथ क्रम के अनुसार उत्पन्न किया।

द्वाचत्वारिंश: श्लोक:

सावित्रं प्राजापत्यं च ब्राह्मं चाथ बृहत्तथा ।
वार्तासञ्चयशालीनशिलोञ्छ इति वै गृहे ॥४२॥

सावित्रम् प्राजापत्यम् च ब्राह्मम् च अथ बृहत् तथा ।
वार्ता सञ्चय शालीन शिलोञ्छ इति वै गृहे ॥

२.	तीन दिन का ब्रह्मचर्य व्रत	वार्ता	९.	कृषि कर्म
३.	एक वर्ष का ब्रह्मचर्य	सञ्चय	१०.	यज्ञ कर्म
४.	और	शालीन	११.	अयाचित वृत्ति
५.	वेदाध्ययन की समाप्ति तक का ब्रह्मचर्य व्रत	शिलोञ्छ	१२.	खेत में गिरे दानो निर्वाह करना
६.	तथा	इति	१३.	ये
१.	ब्रह्मचर्य आश्रम में	वै	१४.	ही
७	आजीवन ब्रह्मचर्य	गृहे ॥	१५.	गृहस्थाश्रम की व
८.	ये चार प्रकार के ब्रह्मचर्य व्रत हैं।			

।चर्य आश्रम में (सावित्रम्) तीन दिन का ब्रह्मचर्य व्रत (प्राजापत्यम्) एक वर्ष । और वेदाध्ययन की समाप्ति तक का ब्रह्मचर्य व्रत तथा आजीवन ब्रह्मचर्य ये ब्रह्मचर्य व्रत हैं। कृषि कर्म, यज्ञ कर्म, अयाचित वृत्ति खेत में गिरे दानों से ज रना ये ही गृहस्थाश्रम की वत्तियाँ हैं।

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

वैखानसा वालखिल्यौदुम्बराः फेनपा वने ।
न्यासे कुटीचकः पूर्वं बह्वोदो हंसनिष्क्रियौ ॥४३॥

वैखानसाः वालखिल्यः औदुम्बराः फेनपाः वने ।
न्यासे कुटीचकः पूर्वं बह्वोदो हंस निष्क्रियौ ॥

वैखानस	न्यासे	७.	सन्यास आश्रम मे
वालखिल्य	कुटीचकः	८.	कुटीचक
औदुम्बर (और)	पूर्वम्	६.	उसी प्रकार
फेनप (ये चार वृत्तियाँ है)	बह्वोदोः	९.	बहूदक
वानप्रस्थ आश्रम की	हंस	१०.	हंस (और)
	निष्क्रियौ ॥	११.	निष्क्रिय (ये चार

आश्रम की वैखानस, वालखिल्य, औदुम्बर और फेनप ये चार वृत्तियाँ
यास आश्रम में कुटीचक, बहूदक, हंस और निष्क्रिय ये चार वृत्तियाँ है ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्तथैव च ।
एवं व्याहृतयश्चासन् प्रणवो ह्यस्य दह्नतः ॥४४॥

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिः तथैव च ।
एवम् व्याहृतयः च आसन् प्रणवः हि अस्य दह्नतः ॥

(ब्रह्मा जी के मुख से उत्पन्न)	व्याहृतयः	८.	भूः भुवः स्वः मह
मोक्ष विद्या	च	९.	ये चार व्याहृतियाँ
कर्मकाण्ड	आसन्	१४.	उत्पन्न हुआ
कृषि, व्यापारादि	प्रणवः	१३.	ओंकार
राजनीति	हि	१०.	तथा
उसी प्रकार	अस्य	११.	उन ब्रह्मा जी के
और	दह्नतः ॥	१२.	हृदयाकाश से ही
एवम्			

के मुख से उत्पन्न मोक्ष विद्या, कर्मकाण्ड कृषि व्यापारादि, राजनीति
एवम् भूः भुवः स्वः महः ये चार व्याहृतियाँ तथा उन ब्रह्मा जी के हृदया
उत्पन्न हुआ ।

पञ्चचत्वारिंश: श्लोक:

तस्योष्णिगासील्लोमभ्यो गायत्री च त्वचो विभोः ।
त्रिष्टुम्मांसात्स्नुतोऽनुष्टुब्जगत्यस्थ्नः प्रजापतेः ।।४५।।

तस्य उष्णिक् आसीत् लोमभ्यः गायत्री च त्वचः विभोः ।
त्रिष्टुप् मांसात् स्नुतः अनुष्टुप् जगती अस्थनः प्रजापतेः ।।

३	उन	त्रिष्टुप्	११.	त्रिष्टुप् छन्द
६	उष्णिक् छन्द	मांसात्	१०.	मांस से
६	उत्पन्न हुआ	स्नुतः	१२.	स्नायु से
५	रोमों से	अनुष्टुप्	१३.	अनुष्टुप छन्द (औ
६	गायत्री छन्द	जगती	१५.	जगती छन्द
७	और	अस्थनः	१४.	अस्थियों से
८	त्वचा से	प्रजा	१.	प्रजा के
४	ब्रह्मा जी के	पतेः ।।	२.	स्वामी

: के स्वामी उन ब्रह्मा जी के रोमों से उष्णिक् छन्द और त्वचा से गायत्री त्रिष्टुप् छन्द, स्नायु से अनुष्टुप छन्द और अस्थियों से जगती छन्द उत्पन्न हुआ

षट्चत्वारिंश: श्लोक:

मज्जायाः पङ्क्तिरुत्पन्ना बृहती प्राणतोऽभवत् ।
स्पर्शस्तस्याभवज्जीवः स्वरो देह उदाहृतः ।।४६।।

मज्जायाः पङ्क्तिः उत्पन्नाः बृहती प्राणतः अभवत् ।
स्पर्शः तस्य अभवत् जीवः स्वरः देह उदाहृतः ।।

१	(ब्रह्मा जी की) मज्जा से	स्पर्शः	७.	क से लेकर म तक
२	पङ्क्ति छन्द	तस्य	८.	उनकी
३	उत्पन्न हुआ (और)	अभवत्	१०.	हुये (तथा)
५	बृहती छन्द	जीव	६.	जीवात्मा
४	प्राण से	स्वरः	११.	अ से लेकर औ त वर्ण
६	उत्पन्न हुआ			
		देह	१२	शरीर
		उदाहृतः ।।	१३.	कहे जाते हैं ।

ा जी की मज्जा से पंक्ति छन्द उत्पन्न हुआ और प्राण से बृहती छन्द उत्प
ः लेकर म तक के वर्ण उनकी जीवात्मा हुये तथा अ से लेकर औ तक के स्वर जाते हैं ।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

ऊष्माणमिन्द्रियाण्याहुरन्तःस्था बलमात्मनः ।
स्वराः सप्त विहारेण भवन्ति स्म प्रजापतेः ॥४७॥

ऊष्माणम् इन्द्रियाणि आहुः अन्तःस्था बलम् आत्मनः ।
स्वराः सप्त विहारेण भवन्ति स्म प्रजापतेः ॥

श, ष, स, ह वर्ण	**स्वराः**	१०	स्वर
(ब्रह्मा जी की) इन्द्रियाँ	**सप्त**	९.	सा,रे;गा,मा,पा,
ह (तथा)	**विहारेण**	८.	क्रीडा में
य, र, ल, व वर्ण (उनकी)	**भवन्ति स्म**	११	उत्पन्न हुये हैं
बल हैं	**प्रजापतेः**	७.	ब्रह्मा जी की
आत्मा के			

ह वर्ण ब्रह्मा जी की इन्द्रियाँ हैं तथा य, र, ल, व वर्ण उनकी आत्मा
की क्रीड़ा से सा, रे, गा, मा, पा, धा, नी सातों स्वर उत्पन्न हुये हैं।

अष्टाचत्वारिंशः श्लोकः

शब्दब्रह्मात्मनस्तस्य व्यक्ताव्यक्तात्मनः परः ।
ब्रह्मावभाति विततो नानाशक्त्युपबृंहितः ॥४८॥

शब्दब्रह्म आत्मनः तस्य व्यक्त अव्यक्त आत्मनः परः ।
ब्रह्म अवभाति विततः नाना शक्ति उपबृंहितः ॥

शब्द ब्रह्म	**ब्रह्म**	९.	शुद्ध निर्गुण ब्रह्म
स्वरूप होकर	**अवभाति**	१३.	प्रकाशित हो रहा
(हे तात) वे ब्रह्मा जी	**विततः**	८.	सर्वत्र व्याप्त
वैखरी रूप से व्यक्त	**नाना**	१०.	अनेकों
ओंकार रूप से अव्यक्त	**शक्ति**	११.	शक्तियों से
स्वरूप वाले हैं	**उपबृंहितः**	१२.	विकसित होकर
(उनसे) परे			

वे ब्रह्मा जी शब्द ब्रह्म स्वरूप होकर वैखरी रूप से व्यक्त, ओंकार रूप
ले हैं। उनसे परे सर्वत्र व्याप्त शुद्ध निर्गुण ब्रह्म अनेकों शक्तियों से विक
हो रहा है।

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

ततोऽपरामुपादाय स सर्गाय मनो दधे ।
ऋषीणां भूरिवीर्याणामपि सर्गमविस्तृतम् ॥४९॥

ततः अपराम् उपादाय सः सर्गाय मनः दधे ।
ऋषीणाम् भूरि वीर्याणाम् अपि सर्गम् अविस्तृतम् ॥

१	तदनन्तर	**ऋषीणाम्**	११.	मरीचि आदि ऋषियों
३.	दूसरा शरीर	**भूरि**	८.	अनन्त
४.	धारण करके	**वीर्याणाम्**	९.	शक्तिशाली होने पर
२.	ब्रह्मा जी	**अपि**	१०.	भी
५	सृष्टि के विषय में	**सर्गम्**	१२.	सृष्टि का
६.	विचार करने	**अविस्तृतम् ॥**	१३.	विस्तार नहीं हुआ था
७	लगे (क्योंकि)			

तर ब्रह्माजी दूसरा शरीर धारण करके सृष्टि के विषय में विचार करने लगे, तशक्ति शाली होने पर भी मरीचि आदि ऋषियों की सृष्टि का विस्तार नहीं हुआ।

पञ्चाशः श्लोकः

ज्ञात्वा तद्धृदये भूयश्चिन्तयामास कौरव ।
अहो अद्भुतमेतन्मे व्यापृतस्यापि नित्यदा ॥५०॥

ज्ञात्वा तद् हृदये भूयः चिन्तयामास कौरव ।
अहो अद्भुतम् एतद् मे व्यापृतस्यापि नित्यदा ॥

२	सृष्टि के अविस्तार को जानकर	**अहो**	११.	बड़ा
३.	ब्रह्मा जी के	**अद्भुतम्**	१२.	आश्चर्य है
४.	मन में	**एतद्**	१०.	यह
५.	पुनः	**मे व्यापृतस्य**	८.	मेरे सृष्टि रचना मे रहने पर
६.	चिन्ता उत्पन्न हुई (कि)	**अपि**	९.	भी
१.	हे विदुर जी !	**नित्यदा ॥**	७.	निरन्तर

दुर जी ! सृष्टि के अविस्तार को जानकर ब्रह्मा जी के मन में पुनः चिन्ता उत्पन्न नेरन्तर मेरे सृष्टि रचना में लगे रहने पर भी यह बड़ा आश्चर्य है ।

एकपञ्चाशः श्लोकः

न ह्येधन्ते प्रजा नूनं दैवमत्र विघातकम् ।
एवं युक्तकृतस्तस्य दैवं चावेक्षतस्तदा ॥५१॥

पदच्छेद—

न हि एधन्ते प्रजाः नूनम् दैवम् अत्र विघातकम् ।
एवम् युक्तकृतः तस्य दैवम् च अवेक्षतः तदा ॥

शब्दार्थ—

न हि	२	नही	एवम्	८.	इस प्रकार
एधन्ते	३.	विस्तार हो रहा है	युक्तकृतः	६.	तर्क करते हुये
प्रजाः	१	प्रजाओं का	तस्य	१०.	ब्रह्मा जी
नूनम्	६	ही	दैवम्	१२.	भाग्य
दैवम्	५.	दैव	च	१३.	पर
अत्र	४.	इसमे	अवेक्षत	१४.	विचार करने लगे
विघातकम् ।	७	विघ्न डाल रहा है ।	तदा	११.	उस समय

श्लोकार्थ—प्रजाओ का विस्तार नही हो रहा है, इसमे दैव ही विघ्न डाल रहा है । इस प्रकार तर्क करते हुये ब्रह्मा जी उस समय भाग्य पर विचार करने लगे ।

द्वापञ्चाशः श्लोकः

कस्य रूपमभूद् द्वेधा यत्कायमभिचक्षते ।
ताभ्यां रूपविभागाभ्यां मिथुनं समपद्यत ॥५२॥

पदच्छेद—

कस्य रूपम् अभूत् द्वेधा यत् कायम् अभिचक्षते ।
ताभ्याम् रूप विभागाभ्याम् मिथुनम् समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

कस्य	१.	ब्रह्मा जी का	ताभ्याम्	८	उस
रूपम्	२.	शरीर	रूप	६.	शरीर के
अभूत्	४.	विभक्त हो गया	विभागाभ्याम्	१०.	दोनों भागो से
द्वेधा	३.	दो भागों मे	मिथुनम्	११	स्त्री और पुरुष का जोडा
यत्	५.	जिसे	समपद्यत ॥	१२.	उत्पन्न हुआ ।
कायम्	६.	काय शब्द से			
अभिचक्षते	७.	कहा जाता है !			

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी का शरीर दो भागों में विभक्त हो गया, जिसे काय शब्द से कहा जाता है उस शरीर के दोनों भागों से स्त्री और पुरुष का जोडा उत्पन्न हुआ ।